निवेदन

यह महान् ग्रन्थ चौथी बार प्रकाशित हो रहा है। पहली बार स्वर्गीय बाबू ज्ञानचन्द्रजी जैनीने इसे लाहोरसे प्रकाशित किया था। दूसरी बार इसकी तीन हजार प्रतियाँ जैनग्रन्थरत्नाकर-कार्यालयके स्वामियोंने निर्णयसागर प्रेसमें बड़ी ही सुन्दरतासे प्रकाशित करके लागत-मात्र मूल्यसे वितरण की थीं। उसके बाद काशीसे बाबू पन्नालालजी चौधरीने इसे प्रकाशित किया। उनका संस्करण समाप्त हो जानेसे अब यह अनन्त-कीर्तिग्रन्थमालाकी ओरसे प्रकाशित किया जाता है।

हम चाहते थे कि यह संस्कारण भी सुन्दरतासे प्रकाशित किया जाय, महावीर प्रेसके व्यवस्थापक पं० फूलचन्द्रजी शास्त्रीने इसके लिए नया टाइप खरीदकर विश्वास भी दिलाया था कि सुन्दरतासे छापेंगे; परन्तु दुर्भाग्यसे उन्होंने अपने उत्तरदायित्वका खयाल न रखकर इसे जिस रूपमें छापकर दिया, वह पाठकोंके सामने है। अवश्य ही इसके लिए हम पाठकोंके निकट क्षमाप्रार्थी हैं।

हमें दुःख है कि ग्रन्थमें अशुद्धियाँ भी बहुत रह गई हैं और इसका कारण यह है कि प्रूफ संशोधन भी उक्त शास्त्रीजीके ऊपर छोड़ दिया गया था। ग्रन्थके अन्तमें मोटी मोटी अशुद्धियोंका शुद्धिपत्र लगा दिया गया है। उनके अतिरिक्त अक्षर मात्राओंकी भी अनेक अशुद्धियाँ हैं जिन्हें पाठक सुधारकर स्वाध्याय करनेकी कृपा करें।

निवेदक

रामप्रसाद जैन, उपमंत्री

विषय-सूची

प्रथम अधिकार

द्वितीय अधिकार

तीसरा अधिकार

नवाँ अधिकार

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२८	१६	कोड़ी	कोढ़ी
५३	१८	व्य ता	व्यक्तता
५६	४	अस्वाद	आस्वाद
१०१	९	भा	भाव
१०९	१२	सुख	सुखदुःख
१२५	१५	भेदविपर्यय	भेदाभेदविपर्यय
१२६	२२	यथार्थ	अयथार्थ
१२७	२०	भया मिथ्यादर्शन	भया मिथ्याज्ञान मिथ्यादर्शन
१३४	४	राग	द्वेष
१३५	५	राग	राग द्वेष
१४८	३	ब्रह्म अंधकार	अंधकार
१५०	८	शाश्वता ठहरया	शाश्वता न ठहरया
१५०	१०	कौन	कौन,
१५६	१६	ब्रह्म	ब्रह्मा
१५८	१९	जीवनींकै	जीवनिकै
१६३	६	न उपजेंगे	नए उपजेंगे
१८८	१७	पुरुषरहित	पुरुष प्रकृतिरहित
१९४	१३	अपरप	अपर
१९६	१३	'भट्ट' तौ	'भट्ट'
१९८	१६	मनरूप	ममरूप
२१०	१७	रैवताद्रो	रैवताद्रौ
२४४	१९	वंदनादि	चंदनादि
२६०	१०	भेरा	मेरा
२७०	१	विषा	विषैं
२७१	४	भट्टाविभट्टा	भट्टविभट्टा
२७९	३	भ्रमतें	भ्रमतैं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२८५	१०	लज्जभयगारवदो	लज्जाभयगारवदो
२९०	१४	जीवस्य	जीवश्च
२९०	१६	काहूकरि किया नाहीं	काहू करि नहीं किया नाहीं
२९२	१०	शीतका अधिकार	शीतका आधिक्य
२९४	४	नोमकर्मका	नोकर्मका
३०५	१६	शुभोपयोग	शुद्धोपयोग
३४०	७	वधका	बंधका
३४१	१५	उपसादि	उपवासादि
३४६	२	गुणकार	गुणाकार
३७२	१७	व्यवहार	व्याख्यान
३९६	५	विना मिथ्यात्व	विनय मिथ्यात्व
४०५	९	व्यहवार	व्यवहार
४५४	१६	परिणानिकी	परिणामनिकी
४७५	२०	तन्मुक्ता	तन्मुक्त्वा
४७६	२५	बंधकौ	बंधका
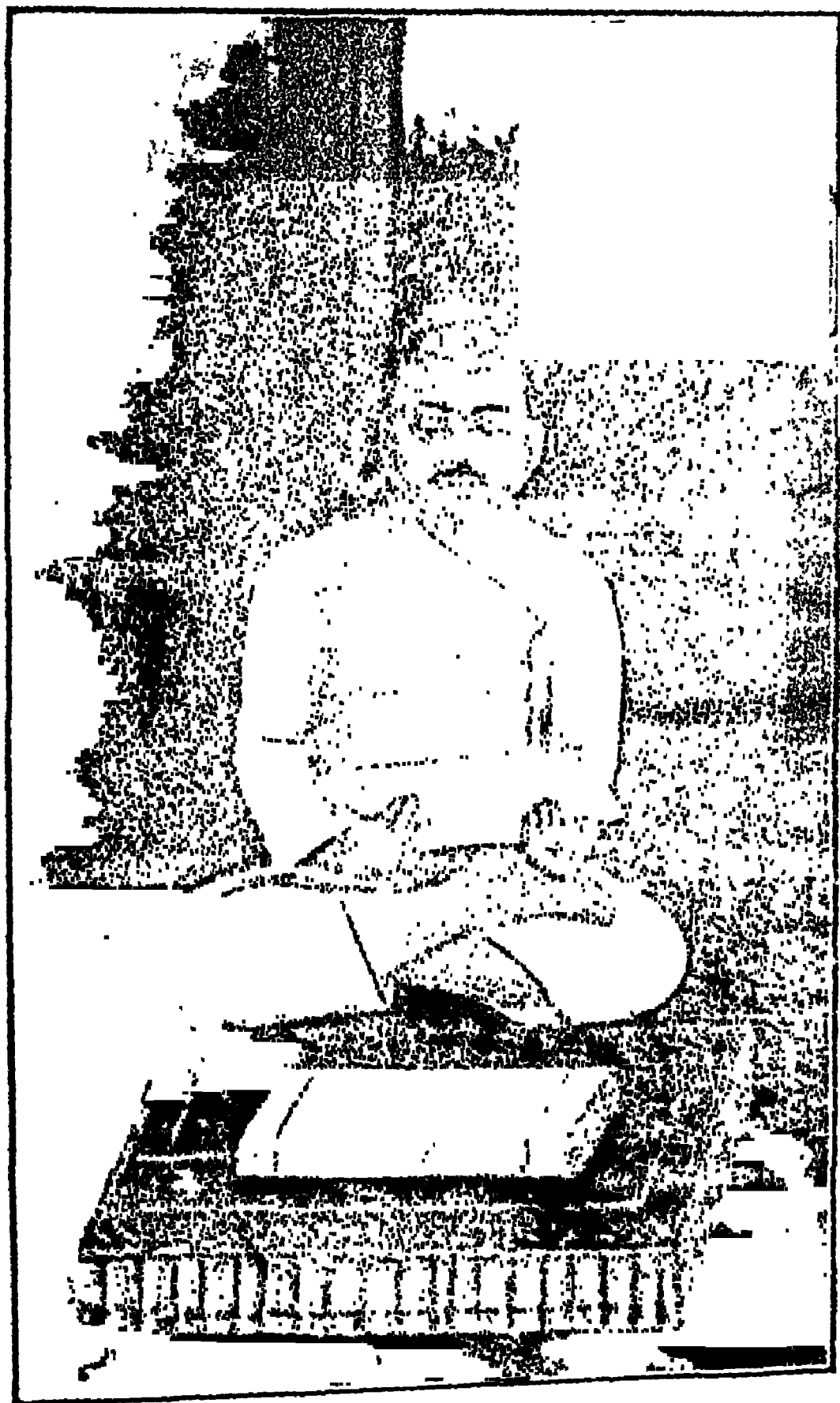
ग्रन्थकर्त्ता स्व० पं० टोडरमल्लजी

प्रस्तावना

आदिवक्तव्य.

प्रिय पाठक वृन्द ! यह अपूर्व ग्रंथ आपकी सेवामें सादर उपस्थित किया जाता है । यह कितने महत्वका स्थान है तथा इसके कर्ता किन २ अपूर्व गुणोंके धारक थे इस बातका स्थूल रूपसे परिज्ञान प्रस्तावना द्वारा सुलभ रीतिसे हो सकता है अतः उपयोगी समझकर इसे ग्रंथके साथ सम्बन्धित कर दिया है । इस ग्रंथमें ग्रन्थकर्ता कृत पहले कुछ पाठ छूटगये थे और वे ग्रंथके साथ अलग मुद्रित थे उनको यथास्थान सम्बन्धित कर दिया है तथा पहले कुछ ऐसी अशुद्धियां भी रह गईं थीं कि जिनकी सत्ता तीन संस्करणोंतक बराबर चली आरही थी इस-संस्करणमें उनको भी संशोधित कर शुद्धि पत्र लगा दिया है अतः इस संस्करणको जहांतक बना है वहांतक प्रमादस्थानसे बचानेकी कोशिश की है फिर भी दैववश कुछ त्रुटियां रह गईं हैं वे और कुछ निवेद्य विषय हैं वे आगे लिखित निवेदन द्वारा ज्ञातव्य हैं ।

ग्रंथकर्ताका और उनकी कृतिका सामान्य परिचय—

इस निकृष्ट कालमें जब संस्कृत प्राकृतके ज्ञानकी विशेष न्यूनता हो गई थी उससमय जैन धर्मके ग्रंथोंके पठनपाठनका एक तरहसे अभाव ही होगया था ऐसे समयमें स्वनामधन्य खंडेलवाल कुलभूषण दिगम्बर जैन धर्मके परम श्रद्धालु सातिशय बुद्धिके धारक श्रीमान् पंडित टोडरमलजीका उदय हुआ था। वह समय ऐसा नहीं था कि जिसमें सुलभतासे प्रचुर-

ग्रंथोंकी प्राप्तिका तथा उनके पठन पाठनका संयोग उनको मिलसकता हो। फिर भी उनके द्वारा की गई गोम्मटसार, लब्धिसार, क्षपणासार, त्रिलोकसार आदि टीका और उनकृत जो मोक्षमार्ग प्रकाश है उन सबका स्वाध्याय करनेसे विदित होता है कि उस समय इनसरीखा अनेक स्वमत परमत शास्त्रका ज्ञाता दिगम्बर जैन समाजमें तो क्या अन्य समाजमें भी शायद ही क्वचित् कोई होगा। दिगम्बर जैन समाजमें गोम्मटसार वगैरह ये एसे ग्रंथ हैं कि जिनका पठन पाठन एक विशेष बुद्धिके उत्कर्षमें और धारणाके उत्कर्षमें भी बड़ी कठिनताके साथ बनसकता है। क्योंकि बहुत विद्वज्जनसमुदायका अनुभवित कहना है कि गोम्मटसारके पठनका तो कुछ रहस्य उसी समय प्राप्त होसकता है जब कि आजन्म सर्व विषयका अभ्यास छोड़ कर उसीका अभ्यास बना रहे। जब गोम्मटसारके विषयका यह हाल है तो उससरीखे अन्य इनके टीकाकृत ग्रंथोंका भी यह हाल अवश्यही है। ऐसी दशामें उन ग्रंथोंके टीकाकार कितनी उत्कर्ष बुद्धिके धारक थे यह स्वयमेव अनुभवसे निश्चित होजाता है। आपने अपने स्वल्पजीवनमें इन महान् ग्रंथोंकी टीका ही लिखीं हैं केवल इतनाही नहीं है किंतु अपने उस समयके जीवनमें आपने अनेक मत मतान्तरो और अपने धर्मके सैकड़ों ग्रंथोंका सविशेषतासे पठनके साथ मार्मिक रीतिसे मनन किया है यह सब बात आपके मोक्ष मार्ग प्रकाशके मनन करनेसे ही स्वयमेव अवगत होती है। उनके टीका ग्रंथोंकी बात तो अलग रहने दीजिये क्योंकि उनका मार्मिक पठन और मनन तो उन्हीं सरीखे विशेष

बुद्धिशालियोंके भाग्यका विषय है। परंतु उनका सरल स्वल्प बुद्धिवालोंके लिये बनाया हुआ देशभाषामय जो यह मोक्षमार्ग प्रकाश है इसीकी मार्मिक गहराईके साथ सुशृंखलित संकलित और सुसंबद्ध रचनाको भी देखकर बुद्धिमानोंकी बुद्धि चकित होजाती है। इस ग्रंथको गहरी दृष्टिसे मनन करने पर मालूम हो जाता है कि यह ग्रंथ साधारण ग्रंथ नहीं है किंतु इस कोटिका एक अनूठाही महत्वपूर्ण ग्रंथराज है। तथा इसके कर्ता भी अनेक शास्त्रोंके मर्मज्ञ अपूर्व प्रतिभाशाली विद्वान् थे। इस ग्रंथका विषय सर्व हितकर और महान् गंभीराशयको लिये हुए है। तथा आदिसे लेकर जहांतक इसका निर्माण हुआ है वहांतक कहीं भी यह अपने विषयसे स्खलित नहीं है। किंतु सर्वांगरूपसे सुसंबद्ध और सुहावना है।

ग्रंथविषयक विशेष परिचय.

इस ग्रंथका विषय मुख्यतया वीतराग विज्ञानतारूप मोक्षमार्गको लेकर उस प्रसंगके अनेक श्रद्धा भाजन अकाट्य विषयोंको लिये हुए है।

इस ग्रंथमें जिस २ विषयका प्रतिपादन किया है उसको स्वयं शंका समाधानके साथ उत्तम विशद रीतिसे वर्णित किया है। तथा इसमें वीतराग विज्ञानताके मुख्य साधक सम्यक्त्वादि रत्नत्रयको सविस्तर सहायक सामिग्रीके साथ विशेषरूपसे वर्णित किया है। तथा उसके मुख्य विपक्षी मिथ्यात्वके स्वरूपविपर्यास कारणविपर्यास भेदाभेदविपर्यासरूप वेदान्त मीमांस सांख्य योग न्याय वैशेषिक

जैमिनीय चार्वाक बौद्ध मुसलमान मतका पूर्वपक्ष (शंका) और उत्तरपक्ष (समाधान) के साथ निरूपण किया है। इसी तरह केवल निश्चयावलंबी केवल व्यवहारावलंबी तथा केवल उभयावलंबी सूक्ष्म जैनाभासोंका खंडन कर और तत्वस्वरूपको समझाकर उनको संबोधा है। और वेदादि अन्य मतके शास्त्रोंसे जैन मतकी प्राचीनता और समीचीनताका बहुत सुंदर रीतिसे वर्णन किया है। तथा श्वेताम्बर जैन और ढूंढक जैनोंके सिद्धान्त आचरण आगमका बड़ी कुशलताके साथ खंडनकर निर्बाध जैनसिद्धान्त सदाचार और जैनागमके स्वरूपका प्रतिपादन किया है। प्रसंगोपात्त सिद्धान्त आचार नीति आदि ग्रंथोंके अनेक वाक्य प्रमाण रूपमें उद्धृत किये हैं। तथा मिथ्यात्वमें एकान्त विनय संशय विपरीत अज्ञान भेदरूप गृहीत मिथ्यात्व तथा अगृहीत मिथ्यात्व और उनके स्वामी, तथा सम्यक्त्व और उसके आज्ञा दिक दशभेद और उपशमादिक ३ भेद तथा उनके प्रभेद, और द्रव्यलिंगी, भावलिंगी, सम्यक्त्व मिथ्यात्वी आदिका अनेक हेतु और दृष्टान्तों द्वारा निरूपण किया है यह सब वर्णन इस ग्रंथका केवल सामान्य विषयमात्र प्रदर्शन करनेवाला ही है क्योंकि यह ग्रंथ दुर्भाग्यवश अपूर्ण है अपूर्ण ही क्यों शतांश भी नहीं है। क्योंकि

१. उनके द्वारा की गई पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी टीका भी अधूरी रह गई है इसका कारण यह मालूम पड़ता है कि–पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी टीका और मोक्षमार्ग प्रकाश इन दोनोंका निर्माण साथही साथ रहा होगा इसलिये दोनोंकी अपूर्णताका एकही कारण हो सकता है। भाषा शैलीके देखनेसे मालूम होता है कि पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी ९५ छंद पर्यंतकी टीका टोडरमलजी कृत है और बाकी टीका आनंदचंदजीके

इसमें रत्नत्रयके प्रथम रत्न सम्यग्दर्शनके वर्णनकी बिलकुल कुछ आरंभ दशाका अधूरा वर्णन है ऐसी दशामें नहीं कह सकते कि यह ग्रंथराज कितना बड़ा होता। फिर भी इतने मात्रमें जो कुछ वर्णन है वह अनेक विषयों पर प्रकाश डालनेवाला संक्षिप्त, सुसंबद्ध और आश्चर्यकारी है। इस तरह यह ग्रंथ अनेक विषय रत्नोंका उत्तम अगाध खजाना है इसके इन सर्व रत्नोंकी प्राप्ति तो इसके पूर्ण ज्ञानावगाहसे हो सकेगी तथा संक्षेपमें विषयानुक्रमणिकासे भी इसके संक्षिप्त विषयोंका ज्ञान हो सकेगा। फिर भी इसमें कुछ ऐसे विषय हैं जिनपर सर्व साधारणकी दृष्टि नहीं जा सकतीं इसलिये उन विषयोंमेंसे कुछ विषयोंपर किंचित् मार्मिक दृष्टिसे किया विवेचन इस प्रकार है—

मोक्षमार्ग प्रकाशके प्रतिपाद्य विषयपर कुछ प्रकाश—

मंगलाचरणमें–ग्रंथकर्ताने–वीतरागविज्ञानको नमस्कार किया है। वह कारण, स्वरूप और फलकी दृष्टिसे बहुतही समंजस है। वीतराग विज्ञानका अर्थ–रत्नत्रय तथा रत्नत्रयके धारक हो सकता है क्योंकि इस पदमें कर्मधारय बहुब्रीय आदि समास द्वारा ये अर्थ गर्भित हैं

पुत्र पं. दौलतरामजी कृत है। जिनवाणी प्रचारक कार्यालय कलकत्ताकी मुद्रित पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें पं. दौलतरामजीकी जगह पं. सत्यंधर-जीका नाम छपा है वह प्रमादसे छप गया है क्योंकि टोडरमलजीके बाद पुरुषार्थ सिद्ध्युपायकी टीका को पं. दौलतरामजीने पूर्ण किया है। यह बात उस पुरुषार्थसिद्ध्युपायके अन्तमें दी हुई प्रशस्तिसे स्पष्ट हो जाती है।

तथापि यहां शास्त्रसंबधित होनेसे प्रधानतया ज्ञान अर्थ है, समासमें वीतराग और वि उपसर्ग उस ज्ञानके विशेषण होनेसे—उसका संक्षेपमें रागद्वेषरहित विशिष्ट ज्ञान ऐसा अर्थ होता है और जिसकी सत्ता—भेदविज्ञानकी प्रारंभ दशासे लेकर केवल ज्ञानतक होती है इसके मंगलमय, और मंगलकरण, दो विशेषणों द्वारा अभेद और भेदविवक्षासे पापनिवृत्तिदानस्वरूप, सुखदानस्वरूप, और पापनिवृत्ति-दानकारण, सुखदानकारण ये चार अर्थ हो जाते हैं। और इसका फल महान् अरहंतादि पदकी प्राप्तिरूप कारणसापेक्ष कार्यदशासे स्थित है। ऐसे गुणकी नमस्कृति रत्नत्रयके प्रथम पाये रूप श्रद्धानकी अभिरुचि है।

मंगलाचरणके दूसरे दोहेमें—महाशब्द देहलीदीपकन्यायसे—मंगलका ग्रंथका और ग्रंथ बनाने रूप कार्यका पृथक् २ रूपसे विशेषण है। इसका तात्पर्य यह है कि यह वीतराग विज्ञानरूप मंगल महान् है और जिस शास्त्रमें यह शब्दात्मक भावात्मक—या उभयात्मक दृष्टिसे पाया जाता है वह ग्रंथ महान् होता है तथा उस ग्रंथका बनाने रूप कार्य भी महान् होता है। इन सबमें महत्ता क्यों है इस बातको ग्रंथकारने सूचित किया है कि—इनसे समाज (जीवसमुदाय) आत्मीक पदरूप मोक्षसुखको प्राप्त करता है।

ये ग्रंथकार श्री टोडलमलजीके दोनों दोहे अपने इष्टमें परमभक्तिके सूचक हैं तथा ग्रंथ बनाने रूप अपनी कृतिके अभिमान नाशके सूचक हैं। क्योंकि उनने इस बातको स्पष्ट शब्दोंमें सूचित किया है कि यह मेरी ग्रंथरूप कृति है वह मैंने बनाई है तथा मेरे पाण्डित्यसे

संपादित हुई है इस कारणसे महान् नहीं है किंतु इसमें सर्व कल्याण-कारक मंगलात्मक वीतराग विज्ञानता है इस लिये यह ग्रंथ और इसका कर्तृत्वकार्य महान् है।

स्वजन्यमंगल कृतिमें अहंकारजन्य दोषकी संभावना हो सकती थी उसको दूर करनेके लिये तथा उसमें आर्षवाक्यकी अविरुद्धतारूप सारता है इस बातको सूचित करनेके लिये पुनः प्राचीन मंगलका विधान किया है इस कृतिसे ग्रंथकारने ऋषिवाक्योंमें अपनी परम श्रद्धा सूचितकी है तथा इस बातको सूचित किया है कि मेरे मंगलाचरण रूपवाक्यसे लेकर समस्त ग्रंथमें आर्ष वाक्योंसे अविरुद्धता है। भावभंगीरूप यह आदिकी कृति इस ग्रंथमें आगे जाकर स्पष्ट हो जाती हैजहां कि उनने अपने मंतव्योंकी प्रमाणीकतामें आर्ष वाक्य उद्धृत किये हैं तथा वैसे ऋषिवाक्यअभिरुचिके अन्य दूसरे वाक्य भी उद्धृत किये हैं।

पत्र ७ में—परमेष्ट और परमेष्ठी दो शब्दोंका केवल शब्दकृत भेद है परंतु भावकृत भेद नहीं है इस बातको दिखानेके लिये ही— 'जातें जो सर्वोत्कृष्ट होय, ताका नाम परमेष्ट है। पंच जो परमेष्ठी तिनका समाहार समुदायका नाम पंचपरमेष्ठी जानना,' ऐसे वाक्य लिखे हैं। यह भेद सम्यग्दर्शन और सम्यक्श्रद्धान सरीखे शाब्दिक भेदके समान है भावकी अपेक्षासे दर्शन और श्रद्धानके समान परमेष्ट और परमेष्ठी एकार्थ हैं विवादके विषय नहीं हैं।

पत्र ११ में मंगलकी सफलता' सूचक विज्ञसम्मत समुचित युक्तियोंमें जो प्रथमही तर्कात्मक प्रश्नका `उत्तर दिया है वह एक

हृदयग्राही मनमोहक है कारण कि–अन्यमतियोंके ग्रंथोंमें ऐसे मंगलोंके न होने पर उनमें विघ्ननाश और ग्रंथ समाप्ति जो होती है वह तीव्र मोहमिथ्यात्वके कारणसे होती है क्योंकि उनग्रंथोंमें तीव्र मोहमिथ्यात्व संपादक विषयोंका ओतप्रोत है, जिस जगह जैसे उपादान और निमित्त कारण होंगे वहां वैसेही कार्य होंगे वीतरागरूप-मंगलतामें विषयपोषकतारूप शास्त्र सामिग्रीका सद्भाव अग्निको जलके समान सर्वथा विपरीत है। कदाचित् विषय पोषक शास्त्र-सामिग्रीके साथ वीतरागरूप द्रव्यमंगलके सहयोगमें विघ्नका अभाव और ग्रंथसमाप्ति देखी जाय तो वहां वह मंगल भक्तिभावशून्य छलसे निर्दिष्ट है इसलिये उसकी कारणता–समुत्पन्न वहां वह फल नहीं है किंतु ग्रंथकर्ताके हृदयस्थ अनेक वैसी भाव सामिग्रीं हैं। वास्तविक रीतिसे देखा जाय तो भाव सामिग्री ही कार्यकी साधक है द्रव्यसामिग्री तो उस भावकी साधक है क्योंकि द्रव्यावलंबनके विना भावकी स्थिति नहीं होती अतः भावस्थितिके साथ द्रव्यावलं-बितकार्य होते हैं वे उसके अनुकूलही होते हैं विपरीततामें वहां भाव-स्थितिका अभावही रहता है। यह न्यायनियमित ग्रंथकर्ताका संक्षिप्त समंजस आशय है।

पत्र २३–२४ में आत्मानुशासन आदि ग्रन्थोंके उद्धरणोंको देकर जो वक्ताके गुण वतलाये हैं–उनमें–आगमज्ञान, तत्वार्थश्रद्धान, और संयमभाव, ये तीन गुण मुख्य बतलाये हैं परंतु ये ज्ञान मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगीके भी होसकते हैं इसलिये इनमें परोपकारिताकी साधनता भलेही कुछ होसकती है परंतु स्वोपकारिताका नियम नहीं है।

क्योंकि इन तीन गुणका संबंध आभासताके रूपमें मिथ्यादृष्टिके भी होसकता है। इसलिये ग्रंथकारने इन तीन गुणोंके मुख्यत्वको गौणकर मुख्यमुख्यता आत्मरसके रसिया आत्मानुभवनमें बतलाई है इस केवल एक गुणके होनेसे उपर्युक्त तीन गुणके गोणत्वका अभाव होकर उनमें मुख्यता आजाती है तथा और सभी गुण कार्यकारी होजाते हैं और स्वोपकारिताके साथ परोपकारिता मुख्यतासे आजाती है क्योंकि स्वानुभवके सिवाय पूर्णज्ञानी (केवली) कभी हो नहीं सकता और केवलज्ञानदशाके विना पूर्ण परोपकारिता नहीं होसकती स्वोपकारिता तो फिर कोसों दूर है क्योंकि दिव्यध्वनिका सद्भाव केवलज्ञानदशामें ही है अन्यदशा अर्थात् मिथ्यादृष्टिकी दशामें नहीं है। यह कथन यहांपर एक मुख्य मार्मिक दृष्टिसे विमर्षित रूप वर्णित है।

पत्र ३२ में—जीवात्मा और कर्मका बंधान है वह अनादि है उसमें जो–इतरेतराश्रय दोष देकर प्रश्न उठाया गया है तथा उसका–समाधान सुमेरुके दृष्टान्त द्वारा किया गया है वह एक बहुतही मार्मिक है। इस प्रकरणमें आपने यह ध्वनित किया है कि वैभाविक परिणति मुख्यतया अनादि और सादिके भेदसे दो प्रकारकी होती है। जीव और कर्मका सम्बन्ध सुमेरु आदिके दृष्टान्तसे अनादि है। यहां इस दृष्टान्त और दार्ष्टान्तके सम्बन्धसे यह बात ध्वनित नहीं हो सकती है जिसको कि प्रश्नकर्ताने इतरेताश्रय दूषणयुक्त बतलाया है अर्थात् वह दूषण की बात यहां नहीं है कारण कि जो एक वस्तु कहीं दूषण होती है वह सर्वत्र दूषणही रूप हो ऐसी एकान्तपूर्ण बात यहां नहीं है किंतु कहीं कहीं वह भूषण भी हो जाती है जैसे पित्तज्वरवालेको—

मिष्टदुग्धं कटुक भासता है तो क्या सभीको वह कटुक भासता है अतः वह बात यहां नहीं है यही प्रकार यहां (इतरेतराश्रयमें) है अर्थात् इतरेतराश्रय वहां दूषण है जहां हमारे साध्यकी सिद्धि नहीं होती जैसे कि किसीके मतमें ज्ञान स्वप्रकाशक नहीं परप्रकाशक है स्वकाज्ञान उससे उत्पन्न हुए दूसरे ज्ञान द्वारा होता है और उसका भी ज्ञान तज्जन्य अगले ज्ञानसे होता है इस प्रकार अविश्रान्तिमें अन्य अन्यके आश्रय होनेसे मुख्यतया वह उस मुख्य साध्य ज्ञानका ज्ञान नहीं होने देता इस कारण वहां इतरेतराश्रय दूषण है। परंतु जीव और कर्मके सम्बन्धमें वह भूषण है क्योंकि इस सम्बन्धकी हमको अनादिता सिद्ध करनी है इसलिये वह अनादिताका विषय हमारा साध्य है और वह भूतकालीन इतर इतरका आश्रय होनेसे अनादि है अर्थात् उस अनदिताका अन्त सादितामें नहीं है यही हमारा मुख्य साध्य है अतः यहांपर प्रश्नकर्ताका दिया हुआ इतरे-तराश्रय दूषण दूषणरूपसे न ठहरकर भूषणरूप परिणत हो जाता है यह वात सुमेरुके दृष्टान्त द्वारा ग्रन्थकर्त्ताके कथनसे साधुरूप ध्वनित है।

पत्र ३४ में वादीने शंका की है कि मूर्तिक मूर्तिकका बंध हो सकता है अमूर्तिक मूर्तिकका बन्ध कैसे हो सकता है? इसका उत्तर देते हुए आपने सैद्धान्तिक विषयको युक्तिद्वारा बड़ेही मर्मके साथ प्रदर्शित किया है। सैद्धान्तिक विषय यह है कि बन्धअवस्थामें आत्माको व्यवहार नयसे मूर्तिक माना है और इसकी बन्धसापेक्ष मूर्तिकता अनादि कालसे है इस वातका समर्थन मेरुके दृष्टान्तसे

किया है इसविषयको प्रश्नकर्ताने नहीं समझा है इसलिये अथवा इस-विषय का विशेष खुलासा करने के लिये जो उत्तर दिया है उसका तात्पर्य सिर्फ इतनाही है कि अमूर्तिकका और मूर्तिका बंध नहीं होता बंध दशामें वह आत्मा मूर्तिक सूक्ष्म है, सूक्ष्मतो यों है कि उसके असली स्वभावकी वहां अव्यक्त सत्ता है और मूर्त यों है कि वह बंध सहित है। जिस जगह असली स्वभाव (अमूर्तीक भाव) प्रगट हो गया है वहां इसको बंध भी नहीं है। मूर्तका अर्थ इन्द्रिय ज्ञानगम्यत्व स्थूल है। और अमूर्तका अर्थ इन्द्रियज्ञानगम्य रहित सूक्ष्म है। सूक्ष्म भी जबतक बंधावस्थाके योग्य है तब तक बंधित है और जब उसमें वह अवस्था नहीं होती तब वह अबन्धित हो जाता है क्योंकि कारणके अभावसे कार्यका अभाव होता है जैसे जघन्य गुणी अबन्ध योग्य परमाणुका बंध नहीं है। भविष्यमें यहां बन्धन नहीं होगा यह बात दृष्टान्त (परमाणु) में नहीं परंतु दार्ष्टान्त (आत्मा) में यह बात है इसलिये ही पुद्गल और आत्मा जुदे जुदे द्रव्य हैं।

पत्र ९० में श्रीमान् ग्रंथकर्ता महोदयने—उच्च नीच कुलका विचार करते हुए एक ऐसा प्रकाश डाला है जिससे आज कल कुलके विषयमें जो विवाद चल रहा है वह सर्वथा दूर हो जाता है। आप लिखते हैं कि—" ऊंचा कुलका कोई निंद्य कार्य करै तो वह नीचा होइ जाय। अर नीचा कुलविषैं कोई श्लाघ्य कार्य करै तो वह ऊंचा होइ जाय। लोभादिकतैं नीचकुलवालेकी उच्च कुल-वाला सेवा करने लगि जाय। बहुरि कुल कितेक काल रहे? पर्याय

छूटे कुलकी पलटनि होइ जाय। तातैं ऊंचा नीचा कुल करि आपकों ऊंचा नीचा मानैं। ऊंचा कुलवालाकों नीचा होनेका भयका और नीच कुलवालाकों पाए हुए नीचपनेका दुख है।" यह सर्व कथन जिस वातको द्योतित करता है उसका स्पष्ट आशय यह है—वास्तवमें ऊंच नीच अवस्थाका नाश वर्तमान मनुष्य पर्याय छूटे विना नहीं होता। वर्तमान ऊंच नीच पर्यायमें नीच ऊंच कार्यजनित कर्मनिमित्तसे उच्चतासे नीचता और नीचतासे उच्चता कर्मकी बंध सत्व और उदय अवस्थासे हो सकती है परंतु वह अव्यक्तरूपमें अवस्थित है इसलिये वर्तमान पर्यायमें ही नीचके श्लाघ्य कार्यसे नीचतासे उच्चता हो गई यह निश्चय नहीं होता अत एव उच्च कार्य करनेवाले नीचको उच्चवर्णी अपनेमें सामिल करलें यह वन नहीं सकता। परंतु उच्चकुलीसे नीचताका कार्य होनेपर उसमें नीचता आजाती है क्योंकि सफेद वस्तुमें काला दाग स्पष्टतासे प्रतीत हो जाता है इसलिये उसमें उच्चापेक्षा नीचता स्पष्ट है इसीलिये वह उच्चकुलकी सत्तासे गिरा हुआ है। नीचकुली उच्चकार्य करनेसे यद्यपि नीच दशासे उन्नतिमें कर्मोदय दशासे समाविष्ट हुआ उच्च माना जा सकता है परंतु वह उच्चता कितनी दशामें है इसका व्यवहृतिमें कुछ निश्चय नहीं है इस कारण वह उन उच्चकुलियोंमें समाविष्ट नहीं हो सकता जिनका कि कुल परंपरासे शुद्ध है। अतः उसका उच्च कुलियोंमें समाविष्ट होनेका केवल एक पर्याय पलटनाही कारण रह जाता है और ऊंचसे नीच होनेके तथा ऊंचको नीचोंमें मिलनेके वर्तमान पर्याय और जन्मान्तरीय पर्याय ये दोनों ही कारण हो सकते हैं। इसका

असली तात्पर्य यह है कि नीचताके अंश उच्चतामें मिलनेसे उच्चताके अंशोंको भंग होनेके साधन हैं। और ऊंचताके अंश नीचतामें सम्मिलित होनेसे नीचताके अंशोंको उज्वल करनेके साधन हैं। अतः ऊंच नीच हो सकता है परंतु नीच ऊंच नहीं हो सकता. यही अभिप्राय श्रीटोडरमलजीके कथनका है। क्योंकि टोडरमलजी साहब स्पष्ट डंडेकी चोटसे सूचित कर रहे हैं—'ऊंचा कुलवालोंकौं नीचा होनेका भयका अर नीचा कुलवालाकौं पाए हुए नीचपनेका दुखही है, यहांपर यदि नीच अच्छे कर्म करनेसे उच्च होजाता तो उसके लिये ग्रंथकर्ता कुछ सुख भी सूचित करते सो किया नहीं क्योंकि अच्छे कर्म करनेसे उसकी वर्तमान पर्यायमें उच्चताकी श्रेणिमें गणना नहीं होती अतः उसकी इस पर्यायमें सुखदृष्टिका फल नहीं है इसीलिये उसके लिये दुख होना ही लिखा है। अब इस दुखसे छूटनेका साधन उसको केवल पर्याय बदलनेके दूसरा रहता नहीं इसीलिये उनने लिखा है 'बहुरि कुल केते काल रहै? पर्याय छूटे कुलकी पलटानि होइ जाय,' यह ग्रन्थकर्ताका यहां स्पष्ट अभिप्राय है युक्तिसे भी यह वात सिद्ध होती है उसका खुलासा ऊपर किया गया है।

अध्याय छह पत्र २५१ में कुदेवके पूजन और नमस्कार निषेधके प्रकरणसे—यह ध्वनित होता है कि जिस दशामें सम्यक्त्वके घातकी सम्भावना है वह दशा सर्वथा त्याज्य है परंतु चारित्रघातक चारित्र-मोहनीयकी सभी दशामें यह बात संभवित पूर्णरूपसे नहीं हो सकती। देव गुणअवस्थाजन्य और पर्यायअवस्थाजन्य दो प्रकारके होते हैं गुण-अवस्थाजन्य देव समय (धर्म) प्रवर्तक तीर्थंकर देव और तीर्थंकरा-

भास देव हैं यहां श्रद्धान प्रकरणमें मुख्यतया तीर्थंकराभासदेवकी ही स्तुति पूजा आदि निषद्ध है किंतु पर्यायआदि अन्य दशाश्रित देवत्वमें जो पूजनादिका निषेध है वह वहां केवल गुण दशाश्रित देवत्वबुद्धि भ्रमको दूर करनेकी अपेक्षासे हैं। यदि सर्वापेक्षाही यह बात होती तो राजाको भी नमस्कारआदि सम्यग्दृष्टिके व्यवहाराश्रित कर्म हैं वे नहीं बन सकते। परंतु २८० पेजमें श्रीमान् पंडित टोडर-मलजीने सम्यग्दृष्टि द्वारा राजाको नमस्कार बतलाया है इसलिये साफ जाहिर है कि चारित्रमोहकतामें इस विधिका विधान भी संभवित है किन्तु दर्शनमोहकतामें नहीं। अन्यथा देवत्व और गुरुत्व धर्मव्यवहृत राजा और मातापिता आदिमें सम्यग्दृष्टिकी नमस्कृतिसे सम्यत्वका घात होना चाहिये परंतु वहांपर वह बात नहीं होती इसलिये यह विषय विवेकसाध्य है।

पत्र ५००–५०१ में निमित्तकी अपेक्षासे सम्यक्त्व के दशभेद किये हैं वहां ग्रंथकारने आठ भेद कारण अपेक्षासे बतलाये हैं और दो भेद ज्ञानके सहकारीपनेसे बतलाये हैं। परंतु अवगाढ सम्यक्त्वको कारण अपेक्षा और ज्ञानसहकारीपनेकी अपेक्षासे दो रूपमें विभक्त किया है। इस तरह ११ भेद सम्यक्त्वके हो सकते हैं परंतु कारण अपेक्षामें आठही लिखे हैं इसलिये भेद तो १० ही माने हैं कारण अपेक्षामें यदि नवमां भेद और मान लेते तो ११ भेद होसकते थे परंतु ऐसा नहीं किया है उसका सबब यही है कि कारण और कार्यमें अभेद विवक्षा है क्योंकि अंगश्रुत अंगबाह्यश्रुत और श्रुत केवलीका श्रुत अभेद दृष्टिसे एक है। इसलिये आठ भेदोंमें इस

भेदका अन्तर्भाव कर लिया है। वास्तवमें अवगाढसम्यक्त्व श्रुत-केवलीके ही होता है गौणतासे अंग और अंगबाह्यताको निमित्त माना है क्योंकि द्वादशांग लिखा नहीं जाता परंतु उसका प्रमाण जरूर है अवबोध उसका क्षयोपशमऋद्धिविशेषसे होता है ग्रंथ-पठनादिरूप शैलीसे नहीं होता इसलिये यहां कारणअपेक्षामें गौणता है और ज्ञानसहकारित्वमें मुख्यता है। इसी बातको प्रगट करनेके लिये ग्रंथमें ऐसा संगठन किया है। इसी तरह राजवार्तिककारकी कथन शैलीसे परमावगाढ सम्यक्त्वमें तथा अर्थसम्यक्त्व आदिमें भी शब्दकृत भेद पडता है इसीलिये कुछ विरोध सरीखा मालूम होता है परंतु अपेक्षाकृत भेदसे वहां कुछ भी विरोध नहीं रहता, केवल वचन विन्यासका ही भेद है मुख्य अर्थजन्यभेद कुछ भी नही है। राजवार्तिकमें परमावगाढ सम्मक्त्वका विषय प्रारम्भसे निष्पन्न दशातक विवक्षित है और इस ग्रंथमें केवल निष्पन्न दशाही विवक्षित है। श्रोताकी आकाङ्क्ष्यदशामें दोनों हीं सत्य हैं। इसी प्रकार अर्थसम्यक्त्वमें भी जो विरोधसरीखा दीखता है उसका भी निराकरण होजाता है। क्योंकि वचनोंका वास्तविक विस्तार जैन शास्त्रोंमें है स्याद्वादरूपनयप्रमाणभंगकी अपेक्षा या द्वादशांगकी अपेक्षा सत्य समुचित निर्भ्रान्त वचन विस्तारिता यहीं है इसलिये वचनविस्ताररहित, यह राजवार्तिकका वाक्य और जैन शास्त्रके वचनविना यह मोक्षमार्ग प्रकाशका वाक्य शब्दअपेक्षासे भिन्न २ है परंतु भावमें ये दोनों वाक्य एक अर्थके वाचक होजाते हैं और अर्थका निमित्त दोनों ग्रंथोंमें कहा है इसलिये अभिप्रायमें कोई भेद

नहीं है केवल शब्दरचनामें भेद है वास्तवमें अभिप्रायजन्य एकता होने पर भी जो शास्त्रीय भेद है वह वचन रचनाका है नहीं तो एक अभिप्रायके सब शास्त्र एकही होजाँय भेदही न रहे। कहीं २ पर शब्दकृत एकता भी होजाय तो वह क्वचित् कदाचित् किसी विशेष कारण जन्य होसकती है। इसलिये उसको शास्त्रभेदमें कारणता नहीं है। इन निमित्तसापेक्ष सम्मक्त्वोंमें इसी प्रकार अन्यत्र भी विरोध प्रतिभासित होता हो तो इसीतरह विवक्षासे उसका परिहार होसकता है।

इस तरह यह ग्रंथ अनेक जगह गंभीराशयरूप खूबियोंसे भरा है इसका जैसा २ स्वाध्यायकलासे मनन किया जायगा तैसा २ सर्वत्र विशेषाशयरूप मननीय विशेष रत्नोंकी उपलब्धि का साधन हो सकेगा। यह उपर्युक्त विषयोंपर जो दृष्टि डाली गयी है वह एक साधारण अनवकाश दशाकी है इससे यह न समझना चाहिये कि एतावन्मात्रही चुने हुए गंभीराशयवाले विषय इसमें हैं। विशेष २ विद्वानोंको सर्वत्र ही यहां अनूठे गंभीराशयवाले विषय उपलब्ध हो सकेंगे क्योंकि यह गंभीराशयोंका जलधि है अतः इसकी विषयरत्नप्राप्ति विशेष अलोडनपर निर्भर है तथा छोटे बड़े पात्रके समान बुद्धिपात्रपर निर्भरित है अतः यह ग्रन्थ जैसा चाहिये तैसा सर्वांगसुन्दर है। ऐसा होकर भी यह अपूर्ण दशामें मिलता है यह एक दुर्भाग्य का विषय है।

ग्रंथकर्ताका विशेष परिचय—

इस ग्रंथके कर्ता कितने विद्वान थे इस विषयका उल्लेख तो इनके

टीका ग्रंथोंके अवलोकनसे तथा इस ग्रंथराजके अवलोकनसे ही हो जाता है फिर भी इनकी इन विषयोंमें कितनी एक जनश्रुतियां हैं जिनसे इनकी सदाचारता, शास्त्रस्वाध्यायतत्परता और सज्जनता. दयालुता आदि विशेष गुणोंका विशेष ज्ञान हो सकता है इसलिये कुछ जनश्रुतियोंसे ग्रंथकर्ताका और इस ग्रंथके अधूरे रह जानेका जो परिचय है वह निम्न प्रकार है।

श्रीमान् पंडित टोडरमल्लजी दिगम्बर जैनधर्मके प्रभावक एक विशिष्ठ महापुरुष थे आठ वर्षकी उमरसेही जैन समाजको आपकी. कुशाग्रबुद्धिका परिचय प्राप्त हो चुका था क्योंकि विना पढ़ायेही केवल सुनने मात्रसे आपने तत्वार्थ सूत्र आदि ग्रंथ कंठस्थ कर लिये. थे। छह महीनेमेंही आपने सिद्धान्त कौमुदी सरीखे क्लिष्ट और बड़े. व्याकरणको पढ़ लिया था। कुछ दिनोंमें ही अपनी कुशाग्रबुद्धिके. प्रभावसे षट्दर्शनके शास्त्र बौद्धशास्त्र और मुसलमानग्रंथ आदि अनेक मतमतांतरोंके शास्त्रोंका और पुस्तकोंका अध्ययन कर लिया था और श्वेताम्बरोंके आचारांगआदि सूत्र तथा अनेक उस संप्रदायके ग्रंथोंका अवलोकन किया था तथा इसीप्रकार ढूंढकमतके. भी सर्व शास्त्रोंके वे ज्ञाता थे। तथा व्याकरण न्याय गणित आदि अनेक उपयोगी ग्रंथोंका आपने अभ्यास किया था। तथा दिगम्बर जैनग्रंथोंमेंसे समयसार, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, नियमसार, गोम्मटसार, लब्धिसार, क्षपणासार, त्रिलोकसार, सटीकतत्वार्थसूत्र, अष्टपाहुड आत्मानुशासन, और श्रावकमुनिधर्मप्ररूपक अनेक शास्त्र. अनेक कथापुराण आदि बहुत शास्त्रोंका अभ्यास किया था तथा इन

सर्व शास्त्रोंके अभ्यासके कारण आपकी बुद्धि बहुतही प्रखर हो गई थी इसकारण शास्त्रसभा, व्याख्यानसभा तथा अन्य मतियोंके साथ वादविवादमें आप बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। इन सर्व कार्योंके साथ आपने जिन २ ग्रंथोंकी टीकायें लिखी हैं वे समाजमें प्रसिद्ध हैं। इन सभी प्रख्यातियोंके कारण आप राज्यके भी अतिप्रिय हो गये थे। राज्यके प्रिय होनेके कारण तथा पाण्डित्यप्रखरताके कारण अन्यधर्मी उनसे मत्सरभाव करने लग गये थे क्योंकि उनके सामने अन्यधर्मियोंके बड़े २ विद्वानोंको भी पराजित होना पड़ता था यद्यपि आप किसी भी विधर्मीका अनुपकार नहीं करते थे। वल्कि जहां तक बनता था उपकारही किया करते थे तथापि मत्सरी पुरुषोंका मत्सरजन्य कुकृत्य करनेका ही धर्म है वह यावत्मिथ्यात्वं मिथ्यात्वजन्य संस्कारसे दूषित रहताही है। इन लोगोंके मत्सर और वैरभावके कारणही उक्त पंडितजीका करीब २८ वर्षकी अवस्थामें शरीरान्त हो गया था। इस विषयकी जन-श्रुति ऐसी है कि विधर्मियोंने राजाके इष्टदेवकी प्रतिमा इनकी जेबमें डलवाकर प्रतिमाके अविनयरूप अपराधके आरोपणसे राजाको रुष्ट कर दिया था इसलिये राजाकी अनुचित आज्ञासे असमयमें उनका देहान्त होगया था। यद्यपि राजाको एकाएक उनके अपराध पर विश्वास नहीं हुआ था परंतु अन्य प्राणियोंकी प्राणरक्षाके खातिर उनने उस अपराधको अपने ऊपर सहर्ष स्वीकार कर लिया था राजाको असली क्रोधका कारण यही था कि इनने अन्यायियोंको निर्दोष सिद्धकर न्यायका खून किया है अतः क्रोधान्धसे आच्छादित होकर राजाने उनको अनुचित दण्ड दिया

था। आपका जीवनपर्यंत मुख्य ध्येय एक आत्मकल्याणके साथ पर-कल्याणकारी रहा है। अन्तरंगमें क्षयोपशमविशेषसे तथा बाह्यमें तर्कवितर्कके साथ अनेक शास्त्रोंके अध्ययनसे वीतरागभाव तथा विज्ञानभाव उनका इतना बढ़ गया था कि सांसारिक कार्योंसे आप बहुधा विरक्तही रहा करते थे और अपने धार्मिक कार्योंमें ऐसे तल्लीन रहा करते थे कि बाह्यजगतकी तथा आस्वाद्यपदार्थोंकी तरफ उनका कुछ भी ध्यान नहीं रहता था। इस विषयमें एक जनश्रुति ऐसी भी है कि जिस समयमें वे ग्रंथ निर्माण कर रहे थे उस समय छह माह तक इनकी माताजीने खाद्य पदार्थोंमें निमक नहीं डाला था छह महीनेके बाद उनका उपयोग शास्त्रनिर्माणकी तरफसे कुछ हटा तो एक दिन अपनी माजीसे बोले कि माजी आज आपने दालमें निमक क्यों नहीं डाला। माजी इस बातको सुनकर बोलीं कि मैं तो छह महीनेसे निमक नहीं डालती हूं। इसी प्रकार और भी उनकी धर्मप्रवृत्ति और शास्त्रकार्यकी अनेक जनश्रुति हैं। इन सबके लिखनेका तात्पर्य यह है कि ये अपने समयमें बड़े धर्मात्मा श्रेष्ठपरोपकारी, निरभिमान, और अद्वितीय विद्वान् थे इस दिगम्बर जैन समाजके दुर्भाग्यसेही ऐसे महात्माका अकालमृत्युसे असमयमें वियोग होगया। इस थोड़ी उमरमेंही आपने जो अनन्य उपकार किया है वह कृतज्ञसमाजके विस्मरणका स्थान नहीं है इसीलिये समाज आज भी आपका और आपके गुणोंका स्मरणकर परम संतुष्ट है। और आपकी जन्मजन्मान्तरीय हितैषिताका अभिकांक्षी है।

इतने बड़े प्रभावक पुरुषका परिचय जैनसमाज या अन्य समाज

इतनाही जानती है कि ये जयपुरके निवासी थे और खंडेलवाल जातिमें उत्पन्न हुए थे, और श्रीगोम्मटसार आदि ग्रंथके भाषाटीका कर्ता और मोक्षमार्ग प्रकाशके कर्ता थे, इसके अलावा आजतक उनके विषयका अधिक परिचय कुछ भी नहीं मिलता था।

उनने १८१८ विक्रम संवत्में गोम्मटसारकी टीका समाप्तकी और राजमल्ल साधर्मीकी प्रेरणासे इस ग्रंथकी टीका बनायी--इन दो बातोंका अधिक ज्ञान मुझे—श्रीयुत चि. न्यायतीर्थ पंडित गजाधर-लाल शास्त्री तथा काव्यतीर्थ श्रीयुत पंडित श्रीलालजीकृत मुद्रित जीवकाण्डकी प्रशस्तिसे हुआ है। इससे अधिक मुझे इनके विषयमें कुछ भी ज्ञान नहीं था तथा अन्य विद्वानोंने भी इस विषयमें विशेष प्रयत्न नहीं किया था तथा जिनने प्रयत्न भी किया तो वे इतने विषयके सिवाय ज्यादा सफल न हुए। मुझे इस विषयकी विशेष अभिकांक्षा थी कि उनका परिचय कुछ विशेष मिलै. नहीं तो कमसे कम इनके पिता पितामहका नाम आदि तो मिले। इसके लिये मैंने बहुत कुछ प्रयत्न किये परंतु मेरी आशा सफल न हुई अकस्मात् इस प्रशस्तिके लिखते समय यह मनमें आया कि श्रीमान् टोडरमलजीकी उस प्रशस्तिका बारीकीसे निरीक्षण करना चाहिये जिसमें कि उनने गोम्मटसारकी टीका बनानेका संवत् दिया है। लब्धिसारके अन्तमें उनकी लिखीं हुई प्रशस्ति देखी तो उसमें एक दोहाछंदके द्वारा पितामहका नाम रमापति और पिताका नाम जोगीदास दिया हुआमिला है और वह इस युक्तिसे दिया है कि जिसका अर्थ भावप्राण (चैतन्य अर्थ) होता है। दोहा निम्न प्रकार है—

रमापति स्तुतगुन जनक जाको जोगीदास ॥
सोई मेरो प्रान है धारै प्रगट प्रकाश ॥ ३८ ॥

संदृष्टिअधिकार पत्र २०४ ।

आगे चलकर चौपाई और सवैया छंदोंद्वारा—अपना सामान्य-विशेषनाम अपनी उत्पत्तिमें कुटुम्बका हर्ष देशका नाम अपनी बुद्धिका विकाश सामान्य विद्याभ्यास जैनग्रंथोंका अभ्यास गोम्मटसार लब्धिसार ग्रंथोंका ज्ञान हुआ इस बातका और इनकी टीकाका विधान किस निमित्तसे किस संवत् और किस मितीमें हुआ यह सब बात उनने प्रशस्तिमें बतलाई है ।

गोम्मट सारकी टीका आपने माघ सुदि पंचमीके दिन सम्वत् १८१८ में पूर्ण की ऐसा स्पष्ट विधान है । जिन छंदोंमें उपर्युक्त वर्णन है वे छंद निम्न प्रकार हैं ।

चौपाई

मै आतम अर पुद्गलस्कंध । मिलि कैं भयो परस्परबंध ।
सो असमान जाति पर्याय । उपजो मानुष नाम कहाय ॥ ३८ ॥

मातगर्भमें सो पर्याय करकें पूरण अंग सुभाय ।
बाहिर निकसि प्रकट जब भयो तब कुटुम्बको भेलो भयो ॥३९॥

नाम धर्यौ तिनि हर्षित होय टोडरमल्ल कहैं सबकोय ।
ऐसैं यह मानुष पर्याय बधतभयो निजकाल गमाय ॥ ४० ॥

देश ढुंढाहड माहिं महान नगर सवाई जयपुर धान ।
तामैं ताकौ रहनौ घनौ थोरो रहनो ओढै वनो ॥ ४१ ॥

सवैया

कर्मकौ क्षयोपशम होत भयो मेरे कछू
बुद्धि कौ विकाश तातैं विद्याभ्यास कर्यौ है
होनहारनीकौ तातैं ऐसाही बनाव वन्यो
नाना जैन ग्रंथनिमें ज्ञानविस्तर्यौ है
सार्थक गोम्मटसार लब्धिसार शास्त्रनिकौं
अर्थ अवभास्यौ तव ऐसौ भाव धर्यौ है
इनकी जो भाषाटीका ह्वै तौ तुच्छबुद्धि घनी
जानैं सारअर्थ जो प्रमाण अनुसर्यौ है ॥ ४६ ॥

चौपई

राजमल्ल साधर्मी एक धर्म सधैया सहित विवेक
सो नानाविधि प्रेरकभयो तब यहु उत्तम कारज थयो ॥ ४८ ॥
संवत्सर अष्टादशयुक्त अष्टादशशत लौकिक युक्त
माघ शुक्ल पंचम दिन होत भयोग्रंथ पूरन उद्योत ॥ ५० ॥

इस प्रशस्तिमैं आपने अपनी जातिका और गोत्रका तथा व्यवसायका कुछ भी उल्लेख नहीं किया है । तथापि उनकी जातिकी तो अनुगत प्रसिद्धि है कि आप दिगम्बर जैन खंडेलवाल जातिके भूषण थे गोत्रके वारेमें श्रीयुत चिरंजीलालजी गोधा जयपुर तथा कुंदनमलजी

सेवा पाडली आदि सज्जनोंद्वारा सुननेमें आया है कि भौंसा (बडजात्या) आपका गोत्र है आजीविका उनकी श्रीअमरचंदजी दीवानके आश्रयसे जयपुरराज्यदत्त संतुष्टि प्रद थी इस तरह १९ वीं सदीके इन अपूर्व प्रतिभाशाली विद्वान्का यह संक्षिप्त जीवन चरित्र है। इनके ग्रंथराज मोक्षमार्ग प्रकाशके अपूर्ण रहनेका कारण आपके असमयकी अकाल मृत्यु है यह एक दिगम्बर जैन समाजके दुर्भाग्यकाही बनाव है जिससे कि परम हितकर इस ग्रंथकी पूर्ण दशा हमारे दृष्टि गोचर नहीं है। फिर भी जो कुछ उपलब्ध है वह हमारे लिये अमूल्य रत्नके समान ग्राह्य हैं तथा रक्षा करने योग्य है और अध्ययन तथा मननरूप कार्यमें परिणमन योग्य है।

रामप्रसाद जैन–उपमंत्री
बम्बई.

——:o:——

यह प्रस्तावना मुंबई वैभव प्रेस मुंबईमें मुद्रित हुई।

नमः सिद्धेभ्यः ।

मोक्षमार्गप्रकाश ।

दोहा

मंगलमय मंगलकरण, वीतरागविज्ञान ।
नमौं ताहि जातैं भये, अरहंतादि महान ॥१॥

करि मंगल करिहौं महा, ग्रंथकरनको काज ।
जातैं मिलै समाज सुख, पावै निजपदराज ॥२॥

अथ मोक्षमार्गप्रकाशनाम शास्त्रका उदय हो है । तहां मंगल करिये है,—

णमो अरहंताणं । णमो सिद्धाणं । णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं । णमो लोए सव्वसाहूणं ।

यह प्राकृतभाषामय नमस्कार मंत्र है, सो महामंगलस्वरूप है । बहुरि याका संस्कृत ऐसा हो है,—

नमोऽर्हद्भ्यः । नमः सिद्धेभ्यः । नमः आचार्येभ्यः । नमः उपाध्यायेभ्यः । नमो लोके सर्वसाधुभ्यः । बहुरि याका अर्थ ऐसा है,—नमस्कार अरहंतनिके अर्थि, नमस्कार सिद्धनिके अर्थि, नमस्कार आचार्यनिके अर्थि, नमस्कार उपाध्यायनिके अर्थि, नमस्कार

लोकविषै सर्वसाधुनिके अर्थि, ऐसैं याविषै नमस्कार किया, तातैं याका नाम नमस्कारमंत्र है। अब इहां जिनकूं नमस्कार किया तिनका स्वरूप चितवन कीजिये है। जातैं स्वरूप जाने विना यह जाण्या नहीं जाय जो मैं कौनकौं नमस्कार करूं तब उत्तम फलकी प्राप्ति कैसे होय तहाँ प्रथम अरहंतनिका स्वरूप विचारिये है,—

जे गृहस्थपनौ त्यागि मुनिधर्म अंगीकार करि निजस्वभावसाधनतैं च्यारि घातिया कर्मनिकौं खिपाय अनंत चतुष्टयविराजमान भये। तहां अनंतज्ञानकरि तौ अपने अपने अनंत गुणपर्याय सहित समस्त जीवादि द्रव्यनिकौं युगपत् विशेषपनैंकरि प्रत्यक्ष जानै हैं। अनंतदर्शनकरि तिनकौं सामान्यपनै अवलोकै हैं। अनंतवीर्यकरि ऐसी [उपर्युक्त] सामर्थ्यकौं धारैं हैं। अनंतसुखकरि निराकुल परमानंदकौं अनुभवै हैं। बहुरि जे सर्वथा सर्वरागद्वेषादिविकारभावनिकरि रहित होइ शांतरसरूप परिणए हैं। बहुरि क्षुधा त्रिषा आदि समस्तदोषनितैं मुक्त होय देवाधिदेवपनाकौं प्राप्त भये हैं। बहुरि आयुध अंबरादिक वा अंग विकारादि जे काम क्रोधादिक निंद्यभावनिके चिन्ह, तिनकरि रहित जिनका परम औदारिक शरीर भया है। बहुरि जिनके वचननितैं लोकविषै धर्मतीर्थ प्रवर्तै है, ताकरि जीवनिका कल्याण हो है। बहुरि जिनकै लौकिक जीवनिकूं प्रभुत्व माननेके कारण अनेक अतिशय अर नानाप्रकार विभव तिनका संयुक्तपणा पाइये है। बहुरि जिनकौं अपना हितके अर्थि गणधर इंद्रादिक उत्तम जीव सेवै हैं। ऐसे सर्वप्रकार पूजनै योग्य श्रीअरहंत देव हैं, तिनकौं हमारा नमस्कार

होहु। अब सिद्धनिका स्वरूप ध्याइये है,-

जे गृहस्थअवस्था त्यागि मुनिधर्मसाधनतें च्यारि घातिकर्म-निका नाश भये अनंतचतुष्टय भाव प्रगट करि केतेक काल पीछें च्यारि अघाति कर्मनिका भी भस्म होतें परमऔदारिक शरीरकौं भी छोरि ऊर्ध्वगमन स्वभावतें लोकका अग्रभागविषै जाय विराज-मान भये। तहां जिनकै समस्त परद्रव्यनिका संबंध छूटनेतें मुक्त अवस्थाकी सिद्धि भई, बहुरि जिनकै चर्मशरीरतें किंचित् ऊन पुरुषाकारवत् आत्मप्रदेशनिका आकार अवस्थित भया, बहुरि जिनकै प्रतिपक्षी कर्मनिका नाश भया तातें समस्त सम्यक्त्व ज्ञान दर्शनादिक आत्मीक गुण संपूर्णपनें स्वभावकौं प्राप्त भये हैं, बहुरि जिनकै नोकर्मका संबंध दूर भया तातें समस्त अमूर्त्तत्वादिक आत्मीकधर्म प्रगट भये हैं। बहुरि जिनकै भावकर्मका अभाव भया तातें निराकुल आनंदमय शुद्धस्वभावरूप परिणमन हो है। बहुरि जिनका ध्यानकरि भव्य जीवनिकै स्वद्रव्यपरद्रव्यका अर उ-पाधिक भाव स्वभावनिका विज्ञान हो है, ताकरि सिद्धनिकै समान आप होनेका साधन हो है। तातें साधनेयोग्य जो अपना शुद्ध-स्वरूप ताके दिखावनेकौं प्रतिबिंब समान हैं। बहुरि जे कृतकृत्य भये हैं तातें ऐसें ही अनंत कालपर्यंत रहै हैं ऐसे निष्पन्न भये सिद्ध भगवान तिनकौं हमारा नमस्कार होहु। अब आचार्य उपाध्याय साधुनिका स्वरूप अवलोकिये है,—

जे विरागी होय समस्त परिग्रहकौं त्यागि शुद्धोपयोगरूप मुनिधर्म अंगीकार करि अंतरंगविषै तौ तिस शुद्धोपयोगकरि

आपकौं आप अनुभवै हैं परद्रव्यविषै अहंबुद्धि नाहीं धारै हैं बहुरि अपने ज्ञानादिकस्वभावनिहीकौं अपने मानै हैं। पर–भावनिविषै ममत्व न करैं हैं। बहुरि जे परद्रव्य वा तिनके स्वभाव ज्ञानविषै प्रतिभासै हैं तिनकौं जानै तो हैं परंतु इष्ट अनिष्ट मानि तिनविषै रागद्वेष नाहीं करै हैं। शरीरकी अनेक अवस्था हो है, बाह्य नाना निमित्त बनै हैं। परंतु तहां किछू भी सुखदु:ख मानते नाहीं। बहुरि अपने योग्य बाह्यक्रिया जैसें बनै है तैसें बनै है, खैंचिकरि तिनिकौं करते नाहीं। बहुरि अपने उपयोगकौं बहुत नाहीं भ्रमावै हैं। उदासीन होय निश्चल वृत्तिकौं धारै हैं। बहुरि कदाचित् मंदरागके उदयतैं शुभोपयोग भी हो है। तिसकरि जे शुद्धोपयोगके बाह्य साधन हैं तिनिविषै अनुराग करैं हैं परंतु तिस रागभावकौं हेय जानिकरि दूरि कीया चाहै हैं। बहुरि तीव्र कषायके उदयका अभावतैं हिंसादिरूप अशुभोपयोग परिणतिका तौ अस्तित्व ही रह्या नाहीं। बहुरि ऐसी अंतरंग अवस्था होतैं बाह्य दिगंबर सौम्यमुद्राके धारी भये हैं। शरी–रका सँवारना आदि विक्रियानिकरि रहित भये हैं। बनखंडादि विषै बसै हैं। अठाईस मूलगुणनिकौं अखंडित पालै हैं। बाईस परीसहनिकौं सहै हैं। बारह प्रकार तपनिकौं आदरैं हैं। कदाचित् ध्यानमुद्राधारि प्रतिमावत् निश्चल हो हैं। कदाचित् अध्ययनादि बाह्य धर्मक्रियानिविषै प्रवर्तै हैं। कदाचित् मुनिधर्मका सहकारी शरीरकी स्थितिके अर्थि योग्य आहार विहारादि क्रियानिविषै सावधान हो हैं। ऐसे जैनी मुनि हैं तिन सबनिकी ऐसी ही

अवस्था हो है। तिनिविषै जे सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रकी अधिकता करि प्रधानपदकौं पाय संघविषै नायक भये हैं। बहुरि जे मुख्यपनै तौ निर्विकल्प स्वरूपाचरण विषै ही मग्न हैं अर जो कदाचित् धर्मके लोभी अन्य जीवादिकनिकौं देखि रागअंशके उदयतैं करुणाबुद्धि होय तो तिनिकौं धर्मोपदेश देते हैं। जे दीक्षाग्राहक हैं तिनकौं दीक्षा देते हैं जे अपने दोष प्रगट करै हैं तिनकौं प्रायश्चित्त विधिकरि शुद्ध करै हैं। ऐसैं आचार अचरावनवाले आचार्य तिनकौं हमारा नमस्कार होहु। बहुरि जे बहुत जैन-शास्त्रनिके ज्ञाता होय संघविषै पठन पाठनके अधिकारी भये हैं, बहुरि जे समस्त शास्त्रनिका प्रयोजनभूत अर्थ जानि एकाग्र होय अपने स्वरूपकौं ध्यावै हैं। अर जो कदाचित् कषाय अंश-उदयतैं तहां उपयोग नाहीं थंभै है तौ तिन शास्त्रनिकौं आप पढै हैं वा अन्य धर्मबुद्धीनिको पढ़ावै हैं। ऐसैं समीपवर्ती भव्यनिको अध्ययन करावनहारे उपाध्याय तिनिकौं हमारा नमस्कार होहु। बहुरि इन दोय पदवीधारक विना अन्य समस्त जे मुनिपदके धारक हैं बहुरि जे आत्मस्वभावकौं साधै हैं। जैसैं अपना उपयोग परद्रव्यनिविषै इष्ट अनिष्टपनौ मानि फसै नाहीं वा भागै नाहीं तैसैं उपयोगको सधावै हैं। बहुरि बाह्यताके साधनभूत तपश्चरण आदि क्रियानिविषै प्रवर्त्तैं हैं। वा कदाचित् भक्तिवंदनादि कार्यनि-विषै प्रवर्त्तैं हैं ऐसे आत्मस्वभावके साधक साधु हैं तिनकौं हमारा नमस्कार होहु। ऐसैं इन अरहंतादिकनिका स्वरुप है सो वीतराग विज्ञानमय है। तिसहीकरि अरहंतादिक स्तुति योग्य महान

भये हैं तातैं जीव तत्त्वकरि तौ सर्व जीव समान हैं परंतु रागादिक विकारनिकरि वा ज्ञानकी हीनताकरि जीवनिंदा योग्य हो हैं। बहुरि रागादिककी हीनताकरि वा ज्ञानकी विशेषताकरि स्तुति योग्य हो हैं। सो अरहंत सिद्धनिकै तौ संपूर्ण रागादिककी हीनता अर ज्ञानकी विशेषता होनैकरि संपूर्ण वीतरागविज्ञान-भाव संभवै है। अर आचार्य उपाध्याय साधूनिकै एकोदेश रागा-दिककी हीनता अर ज्ञानकी विशेषता होनैकरि एकोदेश वीतराग विज्ञान भाव संभवै है। तातैं ते अरहंतादिक स्तुतियोग्य महान जानने। बहुरि ए अरहंतादिक पद हैं तिनविषै ऐसा जानना जो मुख्यपनै तो तीर्थंकरका अर गौणपनै सर्वकेवलीका अधिकार है। प्राकृतभाषाविषै **अरहंत** अर संस्कृतविषै **अर्हत्** ऐसा नाम जानना। बहुरि चौदहवां गुणस्थाके अनंतर समयतैं लगाय सिद्ध नाम जानना बहुरि जिनकौं आचार्यपद भया होय ते संघविषै रहौ वा एकाकी आत्मध्यान करौ वा एकाविहारी होहु वा आचार्यनिविषै भी प्रधानताकौं पाय गणधर पदवीके धारक होहु तिन सबनिका नाम आचार्य कहिये है बहुरि पठनपाठन तौ अन्यमुनि भी करै हैं परंतु जिनकैं आचार्यनिकरि उपाध्यायपद भया होय सो आत्मध्याना-दिक कार्य करतै भी उपाध्याय ही नाम पावै हैं। बहुरि जे पदवीधा रक नाहीं ते सर्व मुनि साधुसंज्ञाके धारक जानने। इहां ऐसा नियम नाहीं है जो पंचाचारनिकरि आचार्यपद हो है, पठनपाठनकरि उपाध्यायपद हो है, मूलगुण साधनकरि साधुपद हो है। जातैं ए तो क्रिया सर्व मुनिनिकैं साधारण हैं परंतु शब्द नयकरि तिनका

अक्षरार्थ तैसैं करिये है। समभिरूढनयकरि पदवीकी अपेक्षा ही आचार्यादिक नाम जानने। जैसैं शब्द नयकरि गमन करै सो गऊ कहिये सो गमन तौ मनुष्यादि भी करैं हैं परंतु समभिरूढनय-करि पर्याय अपेक्षा नाम है। तैसैं ही इहां समजना। इहां सिद्धनिके पहिलै अरहंतनिकौं नमस्कार किया सो कौन कारण ऐसा संदेह है। ताका समाधान,—

नमस्कार करिये है सो अपने प्रयोजन सधनेकी अपेक्षातैं करिये है सो अरहंतनितैं उपदेशादिकका प्रयोजन विशेष सिद्धि हो है तातैं पहले नमस्कार किया है। या प्रकार अरहंतादिकनिका स्वरूप चितवन किया। जातैं स्वरूप चितवन किये विशेष कार्य-सिद्धि हो है। बहुरि इनि अरहंतादिकनिकौं पंचपरमेष्ठी कहिये है-जातैं जो सर्वोत्कृष्ट होय ताका नाम परमेष्ट हैं। पंच जो परमेष्ठी तिनिका समाहार समुदायका नाम पंचपरमेष्ठी जानना। बहुरि वृषभ, अजित, शंभव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चंद्र-प्रभ, पुष्पदंत, शीतल, श्रेयान्, वासुपूज्य, विमल, अनंत, धर्म, शांति कुंथु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व, वर्द्धमान नामधारक चौवीस तीर्थंकर इस भरतक्षेत्रविषै वर्त्तमान धर्मतीर्थके नायक भये, गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण कल्याणकनिविषै इन्द्रादि-कनिकरि विशेष पूज्य होइ अब सिद्धालयविषै विराजै हैं तिनकौं हमारा नमस्कार होहु। बहुरि सीमंधर, युग्मंधर, बाहु, सुबाहु, संजातक, स्वयंप्रभ, वृषभानन, अनंतवीर्य, सूरप्रभ, विशालकीर्ति वज्रंधर, चंद्रानन, चंद्रबाहु, भुजंगम, ईश्वर, नेमिप्रभु, वीरसेन

महाभद्र, देवयश, अजितवीर्य नामधारक वीस तीर्थंकर पंचमेरु संबंधी विदेहक्षेत्रनिविषै अवार केवलज्ञानसहित विराजमान हैं तिनकौं हमारा नमस्कार होहु। यद्यपि परमेष्ठी पदविषै इनका गर्भितपना है तथापि विद्यमान कालविषै इनकौं विशेष जानि जुदा नमस्कार किया है। बहुरि त्रिलोकविषै जे अकृत्रिम जिनबिंब विराजैं हैं मध्यलोकविषै विधिपूर्वक कृत्रिम विराजे हैं जिनिके दर्शनादिकतैं स्वपरभेदविज्ञान हो है, कषायमंद होय शान्तभाव होय है। एक धर्मोपदेश विना अन्य अपने हितकी सिद्धि जैसैं तीर्थंकर केवलीके दर्शनादिकतैं होय तैसैं ही हो है तिनि जिनबिंबनिकौं हमारा नमस्कार होहु। बहुरि केवलीका दिव्यध्वनिकरि दिया उपदेश ताके अनुसार गणधरिकरि रचित अंगप्रकीर्णक तिनके अनुसार अन्य आचार्यादिकनिकरि रचे ग्रंथादिक हैं ते सर्व जिनवचन हैं स्याद्वादचिन्हकरि पहचानने योग्य हैं न्यायमार्गतैं अविरुद्ध हैं तातैं प्रमाणीक हैं जीवनिकौं तत्त्वज्ञानके कारण हैं तातैं उपकारी हैं तिनिकौं हमारा नमस्कार होहु। बहुरि चैत्या-लय, अर्जिका, उत्कृष्ट श्रावक आदि द्रव्य, अर तीर्थक्षेत्रादि क्षेत्र अर कल्याणककाल आदि काल, रत्नत्रय आदि भाव, जे मुझकरि नमस्कार करने योग्य हैं तिनकौं नमस्कार करौं हौं। अर जे किंचित् विनय करने योग्य हैं तिनिका यथायोग्य विनय करौं हौं। ऐसैं अपने इष्टनिका सन्मानकरि मंगल किया है। अब ए अरहंतादिक इष्ट कैसैं हैं सो विचार करिए है,—

जा करि सुख उपजै वा दुःखविनसै तिस कार्यका नाम प्रयोजन

है। बहुरि तिस प्रयोजनकी जाकरि सिद्धि होय सो ही अपना इष्ट है। सो हमारै इस अवसरविषै वीतरागविशेष ज्ञानका होना सो ही प्रयोजन है जातैं याकरि निराकुल सांचे सुखकी प्राप्ति हो है। अर सर्व आकुलतारूप दुःखका नाश हो है। बहुरि इस प्रयोजनकी सिद्धि अरहंतादिकनिकरि हो है। कैसैं सो विचारिए है,—

आत्माके परिणाम तीनप्रकार हैं, संक्लेश, विशुद्ध, शुद्ध। तहां तीव्रकषायरूप संक्लेश हैं, मंदकषायरूप विशुद्ध हैं, कषायरहित शुद्ध हैं। तहां वीतरागविशेष ज्ञानरूप अपने स्वभावके घातक जो हैं ज्ञानावरणादि घातियाकर्म, तिनिका संक्लेश परिणामकरि तौ तीव्रबंध हो है अर विशुद्ध परिणामकरि मंदबंध हो है वा विशुद्ध परिणाम प्रबल होय तौ पूर्वै जो तीव्र बंध भया था ताकौं भी मंद करै है। अर शुद्धपरिणामकरि बंध न हो है। केवल तिनकी निर्जरा ही हो है। सो अरहंतादिविषै स्तवनादि रूप भाव हो हैं सो कषायकी मंदता लिये हो हैं। तातैं विशुद्ध परिणाम हैं। बहुरि समस्त कषायभाव मिटावनेका साधन है, तातैं शुद्धपरिणामका कारण है सो ऐसा परिणाम करि अपना घातक घातिकर्मका हीनपनाके होनेतैं सहज ही वीतराग विशेषज्ञान प्रगट हो है। जितने अंशनिकरि वह हीन होय तितने अंशनिकरि यह प्रगट हो है। ऐसैं अरहंतादिक करि अपना प्रयोजन सिद्ध हो है। अथवा अरहंतादिकका आकार अवलोकना वा स्वरूप विचार करना वा वचन सुनना वा निकटवर्त्ती होना वा तिनकै अनुसार प्रवर्त्तना इत्यादि कार्य तत्काल ही निमित्तभूत होय रागादिकनिकौं हीन करै हैं। जीव

अजीवादिकका विशेषज्ञानकौं उपजावै हैं तातैं ऐसें भी अरहंतादिक करि वीतराग विशेषज्ञानरूप प्रयोजनकी सिद्धि हो है। इहां कोऊ कहै कि इनिकरि ऐसे प्रयोजनकी तौ सिद्धि ऐसैं हो है परंतु जाकरि इंद्रियजनित सुख उपजै दुःख विनशै ऐसे हू प्रयोजनकी सिद्धि इनिकरि हो है कि नाहीं। ताका समाधान,--

जो अरहंतादिविषै स्तवनादिरूप विशुद्ध परिणाम हो है ताकरि अघातिया कर्मनिकी साता आदि पुण्यप्रकृतिनिका बंध हो है। बहुरि जो वह परिणाम तीव्र होय तौ पूर्वै असाताआदि पापप्रकृति बँध थीं तिनिकौं भी मंद करै है अथवा नष्ट करि पुण्यप्रकृतिरूप परिणमावै है। बहुरि तिस पुण्यका उदय होतैं स्वयमेव इन्द्रिय सुखकौं कारण-भूत सामग्री मिलै है। अर पापका उदयदूरि होतैं स्वयमे दुःखकौं कारणभूत सामग्री दूर हो है। ऐसें इस प्रयोजनकी भी सिद्धि तिन-करि हो है। अथवा जैनशासनके भक्तदेवादिक हैं ते तिस भक्तपु-रुषकै अनेक इन्द्रियसुखकौं कारणभूत सामग्रीनिका संयोग करावै हैं। दुःखकौं कारणभूत सामग्रीनिकौंदूरि करै हैं। ऐसैं भी इस प्रयोजनकी सिद्धि तिन अरहंतादिकनिकरि हो है। परंतु इस प्रयोजनतैं किछू अपना हित होता नाहीं जातैं यह आत्मा कषायभावनितैं बाह्य सामग्रीनविषै इष्टअनिष्टपनौं मानै आप ही सुख-दुःखकी कल्पना करै है। विना कषाय बाह्य सामग्री किछू सुखदुः-खकी दाता नाहीं। बहुरि कषाय हैं सो सर्व आकुलतामय हैं तातैं इंद्रियजनितसुखकी इच्छा करनी दुःखतैं डरना सो यह भ्रम है। बहुरि इस प्रयोजनके अर्थि अरहंतादिककी भक्ति किए भी तीव्रकषाय

होनेकरि पापबंध ही हो है तातैं आपकौं इस प्रयोजनका अर्थी हो-
ना योग्य नाहीं । जातैं अरहंतादिककी भक्ति करतैं ऐसे प्रयोजन तौ
स्वयमेव ही सधै हैं । ऐसैं अरहंतादिक परम इष्ट मानने योग्य हैं ।
बहुरि ए अरहंतादिक ही परममंगल हैं । इनविषै भक्तिभाव भये पर-
ममंगल हो है । जातैं 'मंग ,कहिये सुख ताहि लाति कहिये देवै
अथवा मं कहिये पाप ताहि गाल्यति कहिये गालै ताका नाम मंगल
है सो तिनकरि पूर्वोक्त प्रकार दोऊ कार्यनिकी सिद्धि हो है । तातैं
तिनकै परममंगलपना संभवै है । इहां कोऊ पूछै कि प्रथम ग्रंथकी
आदिविषै मंगल कीया सौ कौन कारण ? ताकौ उत्तर,–
जो सुखस्यौं ग्रंथकी समाप्तिता होइ पापकरि कोऊ विघ्न न होइ
या कारण इहां प्रथम मंगल कीया है । इहां तर्क—जो अन्यमती
ऐसैं मंगल नाहीं करै हैं तिनकै भी ग्रंथकी समाप्तता अरि विघ्नका
नाश होंना देखिये है तहाँ कहा हेतु है । ताका समाधान,–
जो अन्यमती ग्रंथ करै हैं तिसविषैं मोहका तीव्र उदयकरि मिथ्यात्व
भावनिकौं पोषेत विपरीत अर्थनिकौं धरै हैं तातैं ताकी निर्विघ्न समा-
प्तता तौ ऐसैं मंगल किये विना ही होइ । जो ऐसे मंगलनिकरि मोह
मंद होजाय तौ वैसा विपरीत कार्य कैसैं बनै? ॥
बहुरि हम यह ग्रंथ करैं हैं तिसविषै मोहकी मंदता करि वीतराग तत्व-
ज्ञानकौं पोषते अर्थनिकौं धरैंगे ताकी निर्विघ्न समाप्तता ऐसैं मंगल कीये
ही होय जो ऐसैं मंगल न करैं तौ मोहका तीव्रपना रहै,तब ऐसा उत्तम
कार्य कैसैं बनै ? बहुरि वह कहै है जो ऐसैं तौ मानैंगे परंतु ऐसा मं-
गल न करै ताकै भी सुख देखिए है पापका उदय न देखिए है ।

अर कोऊ ऐसा मंगल करै है ताकै भी सुख न देखिए है पापका उ-
दय देखिए है तातैं पूर्वोक्त मंगलपना कैसैं वनै? ताकौं कहिये है,-

जो जीवनिकै संक्लेश विशुद्ध परिणाम अनेक जातिके हैं तिनिकरि
अनेक कालनिविषै पूर्वैं वंधे कर्म एक कालविषै उदय आवै हैं। तातैं
जैसैं जाकै पूर्वैं वहुत धनका संचय होय ताकै विनाकुमाए भी धन
देखिए अर देणा न देखिए है। अर जाकै पूर्वैं ऋण वहुत होय
ताकै धन कुमावते भी देणा देखिए है धन न देखिए है परंतु
विचार कीएतैं कुमावना धन होनैहीका कारण है
ऋणका कारण नाहीं। तैसैं ही जाकै पूर्वैं वहुत पुण्य बंध्या होइ ताकै
इहां ऐसा मंगल विना किए भी सुख देखिए है। पापका उदय न
देखिए है। बहुरि जाकै पूर्वैं वहुत पाप वंध्या होइ ताकै इहां ऐसा
मंगल किये भी सुख न देखिए है पापका उदय देखिए है। परंतु वि-
चार किएतैं ऐसा मंगल तौ सुखका ही कारण है पाप उदयका कार-
ण नाहीं। ऐसैं पूर्वोक्त मंगलका मंगलपना बनै है। बहुरि वह
कहै है कि यह भी मानी परंतु जिनशासनके भक्त देवादिक हैं तिनि
तिस मंगल करनेवालेकी सहायता न करी मंगल न करनेवालेको दंड
न दीया सो कौन कारण ताका समाधान, :—

जो जीवनिकै सुख दुख होनेका कारण आपना कर्मका उदय है ताहीकै
अनुसारी वाह्य निमित्त वनै है तातैं पापका जाकै उदय होइ ताकै सहा-
यताका निमित्त न बनै है। अर जाकै पुण्यका उदय होइ ताकै दंडका
निमित्त न वनै है। यह निमित्त कैसे बनै है सो कहिये है,-

जे देवादिक हैं ते क्षयोशपम ज्ञानतैं सर्वकौं युगपत् जानि

सकते नाहीं तातैं मंगल करनेवालेका जानना किसी देवादिककै काहू कालविषै हो है तातैं जो तिनिका जानपना न होइ तौ कैसैं सहाय करै वा दंड दे। अर जानपना होय तब आपकै जो अति मंदकषाय होइ तौ सहाय करनेके वा दंड देनेके परिणाम ही न होंइ। अर तीव्रकषाय होइ तौ धर्मानुराग होइ सकै नाहीं। बहुरि मध्य कषायरूप तिस कार्य करनेके परिणाम भये अर अपनी शक्ति नाहीं तौ कहा करै? ऐसैं सहाय करने वा दंड देनैका निमित्त नाही बनै है। जो अपनी शक्ति होय अर आपकै धर्मानुरागरूप मन्दकषायका उदयतैं तैसे ही परिणाम होंइ अर तिस समय अन्य जीविका धर्म अधर्मरूप कर्तव्य जानै तब कोई देवादिक किसी धर्मात्माकी सहाय करै वा किसी अधर्मीकौं दंड दे है। ऐसैं कार्य होनेका किछू नियम तौ है नाहीं। ऐसैं समाधान किया। इहां इतना जानना कि सुख होनेकी दुख होनेकी सहाय करावनेकी दुख द्यावनेकी जो इच्छा है सो कषायमय है तत्काल विषै वा आगामी कालविषै दुखदायक है। तातैं ऐसी इच्छाकूं छोरि हम तौ एक वीतराग विशेष ज्ञान होनेके अर्थी होइ अरहंतादिककौं नमस्कारादिरूप मंगल कीया है। ऐसैं मंगलाचरण करि अब सार्थक मोक्षमार्गप्रकाश नाम ग्रंथका उद्योत करै हैं। तह यह ग्रंथ प्रमाण है ऐसी प्रतीति जनावनेके अर्थि पूर्व अनुसारका स्वरूप निरूपण करै हैं, ...

अकारादि अक्षर हैं ते अनादिनिधन हैं काहूके किए नाहीं इनिका आकार लिखना तौ अपनी इच्छाके अनुसारि अनेक प्रकार

है परंतु बोलनेमैं आवे हैं ते अक्षर तौ सर्वत्र सर्वदा ऐसैं ही प्रवर्तै हैं सोई कह्या है,—सिद्धो वर्णसमाम्नायः। याका अर्थ यह जो अक्षरनिका संप्रदाय है सो स्वयंसिद्ध है। बहुरि जिन अक्षरनिकरि निपजे सत्यार्थके प्रकाशक पद तिनके समूहका नाम श्रुत है सो भी अनादिनिधन है। जैसैं 'जीव' ऐसा अनादिनिधन पद है सो जीवका जनावनहारा है। ऐसैं अपने अपने सत्य अर्थके प्रकाशक अनेक पद तिनका जो समुदाय सो श्रुत जानना। बहुरि जैसैं मोती तौ स्वयंसिद्ध हैं तिनविषै कोऊ थोरे मोतीनके कोऊ घने मोतीनके कोऊ किसी प्रकार कोऊ किसी प्रकार गूंथिकरि गहना बनावै है। तैसैं पद तौ स्वयंसिद्ध हैं तिनविषै कोऊ थोरे पदनिकौं कोऊ घने पदनिकौं कोऊ किसीप्रकार कोऊ किसीप्रकार गूंथि ग्रंथ बनावै है यहां मैं भी तिनि सत्यार्थ पदनिकौं मेरी बुद्धि अनुसारि गूंथि[1] ग्रंथ बनाऊं हूं सो मैं मेरी मतिकरि कल्पित झूटे अर्थके सूचक पद याविषै नाहीं गूंथूं हूं। तातैं यह ग्रंथ प्रमाण जानना। इहां प्रश्न—जो तिनि पदनिकी परंपराय इस ग्रंथ पर्यंत कैसैं प्रवर्तै है-ताका समधान,—

अनादितैं तीर्थंकर केवली होते आये हैं तिनिकै सर्वका ज्ञान हो है तातैं तिनि पदनिका वा तिनिके अर्थनिका भी ज्ञान हो है। बहुरि तिनि तीर्थंकर केवलिनिका जाकरि अन्य जीवनिकै पदनिका अर्थनिका ज्ञान होय ऐसा दिव्यध्वनिकरि उपदेश हो है। ताके अनुसारि

---

१ जोडकर वा लिखकरि।

गणधरदेव अंग प्रकीर्णकरूप ग्रंथ गूंथे हैं। बहुरि तिनके अनुसारि अन्य आचार्यादिक नाना प्रकार ग्रंथादिककी रचना करें हैं। तिनिकूं केई अभ्यासैं हैं केई कहै हैं केई सुनै हैं ऐसैं परंपराय मार्ग चल्या आवै है। सो अब इस भरतक्षेत्रविषै वर्तमान अवसर्पिणी काल है। तिस विषै चौवीस तीर्थंकर भए तिनिविषै श्रीवर्धमान नामा अंतिम तीर्थंकरदेव भया। सो केवलज्ञान विराजमान होइ जीवनिकों दिव्यध्वनिकरि उपदेश देता भया। ताके सुननेका निमित्त पाय गौतम नामा गणधर अगम्य अर्थनिकों भी जानि धर्मानुरागके वशतैं अंग प्रकीर्णकनिकी रचना करता भया। बहुरि वर्द्धमान स्वामि तौ मुक्त भए तहं पीछैं इस पंचम कालविषै तीन केवली भए गौतम १, सुधर्माचार्य २, जंबूस्वामी ३। तहां पीछैं कालदोषतैं केवलज्ञानी होनेका तौ अभाव भया। बहुरि केतेक काल तांई द्वादशांगके पाठी श्रुतकेवली रहे पीछैं तिनिका भी अभाव भया। बहुरि केतेक काल तांई थोरे अंगनिके पाठी रहे तिनने यह जान करि जो भविष्यत कालमैं हम सारिखे भी ज्ञानी न रहैंगे, तातैं ग्रन्थ रचना प्रारंभ करी अर द्वादशांगानुकूल प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोगके अनेक ग्रन्थ रचे। पीछैं तिनिका भी अभाव भया। तब आचार्यादिकनिकरि तिनिके अनुसारि बनाए ग्रन्थ वा अनुसारी ग्रन्थनिके अनुसारि बनाए ग्रंन्थ तिनिहीकी प्रवृत्ति रही। तिनिविषै कालदोषतैं दुष्टनिकरि कितेक ग्रंथनिकी व्युच्छित्ति भई वा महान् ग्रन्थनिका अभ्यासादि न होनेतैं व्युच्छित्ति भई। बहुरि कितेक महान् ग्रन्थ पाइए हैं तिनिका बुद्धिकी मंदतातैं अभ्यास होता नाहीं। जैसैं

दक्षिणमैं गोमट्टस्वामीके निकटि मूलविद्री नगरविषै धवल महाधवल जयधवल पाइए हैं। परंतु दर्शन मात्र ही हैं। बहुरि कितेक ग्रन्थ अपनी बुद्धिकरि अभ्यास करने योग्य पाइए हैं। तिनि विषै भी कितेक ग्रन्थनिका ही अभ्यास बनै है। ऐसैं इस निकृष्ट कालविषै उत्कृष्ट जैनमतका घटना तौ भया परंतु इस परंपरायकरि अब भी जैन शास्त्रविषै सत्य अर्थके प्रकाशनहारे पदनिका सद्भाव प्रवर्त्तै है। बहुरि हम इस कालविषै इहां अब मनुष्यपर्याय पाया सो इसविषै हमारै पूर्व संस्कारतैं वा भला होनहारतैं जैनशास्त्रनिविषै अभ्यास करनेका उद्यम होत भया। तातैं व्याकरण न्याय गणित आदि उपयोगी ग्रन्थनिका किंचित् अभ्यास करि टीकासहित समयसार पंचास्तिकाय प्रवचनसार नियमसार गोमट्टसार लब्धिसार त्रिलोकसार तत्त्वार्थसूत्र इत्यादि शास्त्र अर क्षपणासार पुरुषार्थसिध्युपाय अष्टपाहुड आत्मानुशासन आदि शास्त्र अर श्रावक मुनिका आचारके प्ररूपक अनेक शास्त्र अर सुष्टुकथासहित पुराणादि शास्त्र इत्यादि अनेक शास्त्र हैं तिनिविषै हमारै बुद्धि अनुसारि अभ्यास वर्तै है। तिसकरि हमारै हू किंचित् सत्यार्थ पदनिका ज्ञान भया है। बहुरि इस निकृष्ट समयविषै हम सारिखे मंदबुद्धीनितैं भी हीनबुद्धिके धारक घने जन अवलोकिए है। तिनिकौं तिनि पदनिके अर्थका ज्ञान होनेके अर्थि धर्मानुरागके वशतैं देशभाषामय ग्रन्थ करनेकी हमारै इच्छा भई है ताकरि हम ग्रंथ बनावे हैं सो याविषै भी अर्थसहित तिन ही पदनिका प्रकाशन हो है। इतना तौ विशेष है जैसैं प्राकृत संस्कृत शास्त्रनिकैविषै प्राकृत संस्कृत पद लिखिए है तैसैं इहां अपभ्रंश लिए वा यथार्थपनेकूंलिए

देशभाषारूप पद लिखिए हैं परंतु अर्थविषै व्यभिचार किछू नाहीं है ऐसैं इस ग्रंथपर्यन्त तिनि सत्यार्थ पदनिकी परंपराय प्रवर्तै है। इहां कोऊ पूछै कि परंपराय तौ हम ऐसैं जानी परन्तु इस परंपरायविषै सत्यार्थ पदनिहीकी रचना होती आई असत्यार्थ पद न मिले ऐसी प्रतीति हमकौं कैसैं होय। ताका समाधान—

असत्यार्थ पदनिकी रचना अति तीव्र कषाय भए विना बनै नाहीं। जातैं जिस असत्य रचनाकरि परंपराय अनेक जीवनिका महाबुरा होय आपकौं ऐसी महा हिंसाका फलकरि नर्क निगोदविषै गमन करना होइ सो ऐसा महाविपरीत कार्य तौ क्रोध मान माया लोभ अत्यन्त तीव्र भए ही होय। सो जैन धर्मविषै तौ ऐसा कषायवान होता नाहीं। प्रथम मूल उपदेशदाता तौ तीर्थंकर केवली भये सो तौ सर्वथा मोहके नासतैं सर्व कषायनिकरि रहित ही हैं। बहुरि ग्रन्थकर्त्ता गणधर वा आचार्य ते मोहका मन्द उदयकरि सर्व बाह्य अभ्यन्तर परिग्रहकौं त्यागि महा मंद कषायी भए हैं, तिनिकै तिस मंद कषायकरि किंचित् शुभोपयोगहीकी प्रवृत्ति पाइए है और कीछू प्रयोजन है नाहीं। बहुरि श्रद्धानी गृहस्थ भी कोऊ ग्रन्थ बनावै है सो भी तीव्रकषायी नाहीं है जो वाकै तीव्रकषाय होय तौ सर्वकषायनिका जिस तिस प्रकार नाश करणहारा जो जिनधर्म तिसविषै रुचि कैसैं होय अथवा जो मोहके उदयतैं अन्य कार्यनिकरि कषाय पोषै है तौ पोषौ परन्तु जिनआज्ञा भंगकरि अपना कषाय पोषै तौ जैनीपना रहता नाहीं ऐसैं जिनधर्म्मविषै ऐसा तीव्रकषायी कोऊ होता

नाहीं जो असत्य पदनिकी रचनाकरि परका अर अपना पर्याय पर्यायविषै बुरा करै। इहां प्रश्न,— जो कोउ जैनाभास तीव्रकषायी होय असत्यार्थ पदनिकौं जैन शास्त्रनिविषै मिलावै पीछैं ताकी परंपरा चली जाय तौ कहा करिये। ताका समाधान —

जैसैं कोऊ सांचे मोतीनिके गहनेविषै झूठे मोती मिलावै परंतु झलक मिलै नाहीं तातैं परीक्षाकरि पारखी ठिगावै भी नाहीं कोई भोला होय सो ही मोती नामकरि ठिगावै है। बहुरि ताकी परंपरा भी चलै नाही शीघ्र ही कोऊ झूंठे मोतीनिका निषेध करै है। तैसैं कोऊ सत्यार्थ पदनिके समूहरूप जैनशास्त्रनिविषै असत्यार्थ पद मिलावै परंतु जिनशास्त्रके पदनिविषै तौ कषाय मिटावनेका वा लौकिककार्य घटावनेका प्रयोजन है अर उस पापीनै जे असत्यार्थ पद मिलाए हैं तिनिविषै कषाय पोषनेका वा लौकिक कार्य साधनेका प्रयोजन है ऐसैं प्रयोजन मिलता नाहीं तातैं परीक्षाकरि ज्ञानी ठिगावते भी नाहीं कोई मूर्ख होय सो ही जैनशास्त्र नामकरि ठिगावै है बहुरि ताकी परंपरा भी चालै नाहीं शीघ्र ही कोऊ तिनि असत्यार्थ पदनिका निषेध करै है बहुरि ऐसे तीव्रकषायी जैनाभास इहां इस निकृष्ट कालविषै ही होय हैं उत्कृष्ट क्षेत्र काल बहुत हैं तिस विषै तौ ऐसे होते नाहीं तातैं जैनशास्त्रनिविषैं असत्यार्थ पदनिकी परंपरा चलै नाहीं ऐसा निश्चय करना! बहुरि वह कहै है कि कषायनिकरि तौ असत्यार्थ पद न मिलावै परंतुग्रन्थ करनेवालेकै क्षयोपशम ज्ञान है तातैं कोई अन्यथा अर्थ भासै ताकरि असत्यार्थ पद मिलावै ताकी तौ परंपरा चलै; ताका समाधान,—

मूल ग्रंथकर्ता तौ गणधरदेव हैं ते आप च्यारिज्ञानके धारक हैं अर साक्षात् केवलीका दिव्यध्वनिउपदेश सुनै हैं ताका अतिशयकरि सत्यार्थ हि भासै है।अर ताहीके अनुसारि ग्रंथ बनावैं हैं। सो उन ग्रन्थनिविषै तौ असत्यार्थ पद कैसैं गूथे जाय अर अन्य आचार्यादिक ग्रन्थ बनावै हैं ते भी यथायोग्य सम्यग्ज्ञानके धारक हैं। बहुरि ते तिनि मूल ग्रन्थनिका परंपराकरि ग्रन्थ बनावै हैं। बहुरि जिन पदनिका आपकौं ज्ञान न होइ तिनकी तो आप रचना करै नाहीं अर जिन पदनिका ज्ञान होय तिनिकौं सम्यग्ज्ञान प्रमाणतैं ठीक गूंथै है सो प्रथम तौ ऐसी सावधानीविषै असत्यार्थ पद गूंथे जाय नाहीं अर कदाचित् आपकौं पूर्व ग्रन्थनिके पदनिका अर्थ अन्यथा ही भासै अर अपने प्रमाणतामैं भी तैसैं ही आय जाय तौ याका किछू सारा[1] नहीं। परंतु ऐसैं कोईकौं भासै सबहीकौं तौ न भासै। तातैं जिनकौं सत्यार्थ भास्या होय ते ताका निषेधकरि परंपरा चलने देते नाहीं। बहुरि इतना जानना जिनकौं अन्यथा जाने जीवका बुरा होय ऐसा देव गुरु धर्मादिक वा जीवादिक तत्त्वनिकौं तौ श्रद्धानी जैनी अन्यथा जानै ही नाहीं इनिका तौ जैनशास्त्रनिविषै प्रसिद्ध कथन है अर जिनिकौं, भ्रमकरि अन्यथा जाने भी जिनकी आज्ञा माननेतैं जीवका बुरा न होय ऐसा कोई सूक्ष्म अर्थ हो तिनिविषै किसीकौं कोई अर्थ अन्यथा प्रमाणतामैं ल्यावै तौ भी ताका विशेष दोष नाहीं सो गोमट्टसारविषै कह्या है,—

---

[1] वश नहीं।

सम्माइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं अजाणमाणो गुरुणियोगा । १॥

याका अर्थ—सम्यग्दृष्टी जीव उपदेश्या सत्य प्रवचनकौं श्रद्धान करै है अर अजानमाण गुरुके नियोगतैं असत्यकौं भी श्रद्धान करै है ऐसा कह्या है। बहुरि हमारै भी विशेष ज्ञान नाहीं है। अर जिनआज्ञा भंग करनेका बहुत भय है परंतु इसही विचारके बलतैं ग्रन्थ करनेका साहस करते हैं सो इस ग्रन्थविषै जैसैं पूर्व ग्रन्थनिमें वर्नन है तैसैं ही वर्नन करैंगे। अथवा कहीं पूर्व ग्रन्थनिविषै सामान्य गूढ़ वर्नन है ताका विशेष प्रगटकरि वर्नन इहां करैंगे सो ऐसैं वर्नन करनेविषै मैं तौ बहुत सावधानी राखूंगा अर सावधानी करते भी कहीं सूक्ष्म अर्थका अन्यथा वर्नन होय जाय तौ विशेष बुद्धिमान् होय सो सँवारिकरि शुद्ध करियौ। यह मेरी प्रार्थना है। ऐसैं शास्त्र करनेका निश्चय किया है। अब इहां कैसे शास्त्र वांचने सुनने योग्य हैं अर तिनि शास्त्रनिके वक्ता श्रोता कैसे चाहिए सो वर्नन करिए है।

जे शास्त्र मोक्षमार्गका प्रकाश करैं तेई शास्त्र वांचने सुनने योग्य हैं जातैं जीव संसारविषै नाना दुःखनिकरि पीड़ित हैं। सो शास्त्ररूपी दीपककरि मोक्षमार्गकौं पावै तौ उस मार्गविषै आप गमनकरि उन दुःखनितैं मुक्त होइ सो मोक्षमार्ग एक वीतरागभाव है तातैं जिन शास्त्रनिविषै काहूप्रकार रागद्वेष मोह भावनिका निषेध करि वीतरागभावका प्रयोजन प्रगट किया होय तिनिही शास्त्रनिका वांचना सुनना उचित है। बहुरि जिन शास्त्रनिविषै श्रृंगार भोग कौतू-

हलादिक पोषि रागभावका अर हिंसायुद्धादिक पोषि द्वेषभावका अर अतत्त्वश्रद्धान पोषि मोहभावका प्रयोजन प्रगट किया होय ते शास्त्र नाहीं शस्त्र हैं। जातैं जिन राग द्वेष मोह भावनिकरि जीव अनादितैं दुखी भया तिनकी वासना जीवकै विना सिखाई ही थी। बहुरि इन शास्त्रनिकरि तिनही का पोषण किया भले होनेकी कहा शिक्षा दीनी। जीवका स्वभाव घात ही किया तातैं ऐसे शास्त्रनिका बांचना सुनना उचित नाहीं है। इहां बांचना सुनना जैसैं कह्या तैसैं ही जोड़ना सीखना सिखावना विचारना लिखावना आदि कार्य भी उपलक्षणकरि जानि लेनें। ऐसैं साक्षात् वा परंपराय-करि वीतरागभावकौं पोषैं ऐसे शास्त्र ही अभ्यास करने योग्य हैं।

अब इनिके वक्ताका स्वरूप कहिये है। प्रथम तौ वक्ता कैसा चाहिए जो जैन श्रद्धान विषै दृढ़ होय जातैं जो आप अश्रद्धानी होय तौ औरकौं श्रद्धानी कैसैं करै। श्रोता तौ आपहीतैं हीन-बुद्धिके धारक हैं तिनिकौं कोऊ युक्तिकरी श्रद्धानी कैसैं करै। अर श्रद्धान ही धर्मका मूल है। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै विद्याभ्यास करनेतैं शास्त्र बांचनेयोग्य बुद्धि प्रगट भई होय जातै ऐसी शक्ति विना वक्तापनेका अधिकारी कैसे होय। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जो सम्यग्ज्ञानकरि सर्व प्रकारके व्यवहार निश्चयादिरूप व्याख्यानका अभिप्राय पिछानता होय जातैं जो ऐसा न होय तौ कहीं अन्य प्रयोजन लिए व्याख्यानी होय ताका अन्य प्रयोजन प्रगटकरि विपरीत प्रवृत्ति करावै। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै जिन आज्ञा भंग करनेका बहुत भय होय।

जातैं जो ऐसा न होय तौ कोई अभिप्राय विचारि सूत्रविरुद्ध उपदेश देय जीवनिका बुरा करै। सो ही कह्या है—

बहुगुणविज्जाणिलयो असुत्तभासी तहावि मुत्तव्वो।
जह वरमणिजुत्तो वि हु विग्घयरो विसहरो लोए॥ १॥

याका अर्थ—जो बहुत क्षमादिक गुण अर व्याकरण आदि विद्याका स्थान है तथापि उत्सूत्रभाषी है तौ छोडने योग्य ही है जैसैं उत्कृष्टमणिसंयुक्त है तौ भी सर्प्प है सो लोकविषै विघ्नका ही करणहारा है। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै शास्त्र बांचि आजीवका आदि लौकिक कार्य साधनेकी इच्छा न होय। जातैं जो आशावान् होय तौ यथार्थ उपदेश देय सकै नाहीं वाकै तौ किछू श्रोतानिका अभिप्रायकै अनुसारि व्याख्यानकरि अपने प्रयोजन साधनेकाही साधन रहै अर श्रोतानितैं वक्ताका पद उंचा है परंतु वक्ता लोभी होय तौ वक्ता आधीन हो जाय श्रोता उंचे होय। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै तीव्र क्रोध मान न होय जातैं तीव्र क्रोधी मानीकी निंदा होय श्रोता तिसतैं डरते रहै तब तिसतैं अपना हित कैसैं करै। बहुरि वक्ता कैसा चाहिए जो आप ही नाना प्रश्न उठाय आप ही उत्तर करै अथवा अन्य जीव अनेक प्रकार करि बहुत विचारि प्रश्न करै तौ मिष्टवचनकरि जैसैं उनका संदेह दूरि होय, तैसैं समाधान करै। जातैं जो आपकै उत्तर देनेकी सामर्थ्य न होय तौ यों कहै याका मोकौं ज्ञान नाहीं किसी विशेष ज्ञानी सौं पूछकर मैं तिहारे ताँई उत्तर दूंगा। अथवा कोई समय पाय विशेष ज्ञानी तुमसों मिलै, तौ पूछकर अपना संदेह

दूर करना अर मोकौं हू वताय देना। जातैं ऐसा होय तौ अभि मान के वशतैं अपनी पंडिताई जनावनेकौं प्रकरण विरुद्ध अर्थ उपदेशैं। तातैं श्रोतानिका विरुद्ध श्रद्धान करने तैं बुरा होय जैन धर्मकी निंदा होय। जातैं जो ऐसा न होय तौ श्रोतानिका संदेह दूरि न होय तव कल्याण कैसैं होय अर जिनमतकी प्रभावना होय सकै नाहीं। वहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाकै अनीतिरूप लोकनिंद्य कार्यनिकी प्रवृत्ति न होय जातैं लोकनिंद्य कार्यनिकरि हास्यका स्थान होय जाय तव ताका वचन कौन प्रमाण करै जिनधर्मकौं लजावै। वहुरि वक्ता कैसा चाहिए जाका कुल हीन न होय अंगहीन न होय स्वरभंग न होय मिष्टवचन होय प्रभुत्व होय तातैं लोकविषै मान्य होय जातैं ऐसा न होय तौ ताकौं ववतापनकी महंतता सोभै नाहीं ऐसा वक्ता होय। वक्ताविषै ये गुण तौ अवश्य चाहिए सो ही आत्मानुशासनविषै कह्या है।

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परो निन्दया
ब्रूयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः॥ १॥

याका अर्थ—बुद्धिमान होय, जानै समस्त शास्त्रनिका रहस्य पाया होय, लोकमर्यादा जाकै प्रगट भई होय, आशा जाकै अस्त भई होय, कांतिमान् होय, उपशमी होय, प्रश्न किए पहले ही जानै उत्तर देख्या होय; वाहुल्यपनै प्रश्ननिका सहनहारा होय, प्रभु होय परकी वा परकरि आपकी निंदारहितपनाकरि परकें मनका हरनहारा

होय, गुणनिधान होय, स्पष्ट मिष्ट जाके वचन होंय, ऐसा सभाका नायक धर्मकथा कहै। बहुरि वक्ताका विशेष लक्षण ऐसा है जो याकै व्याकरण न्यायादिक वा बड़े बड़े जैनशास्त्रनिका विशेष ज्ञान होय तौ विशेषपनै ताकौं वक्तापनौं सोभै। बहुरि ऐसा भी होय अर अध्यात्मरसकरि यथार्थ अपने स्वरूपका अनुभवन जाकै न भया होय सो जिनधर्मका मर्म जानैं नाहीं पद्धतिहीकरि वक्ता होय है। अध्यात्मरसमय सांचा जिनधर्मका स्वरूप वाकरि कैसैं प्रगट किया जाय तातैं आत्मज्ञानी होय तौ सांचा वक्तापनौ होय जातैं प्रवचनसारविषै ऐसा कह्या है। आगमज्ञान तत्वार्थश्रद्धान संयम-भाव ये तीनौं आत्मज्ञानकरि शून्य कार्यकारी नाहीं। बहुरि दोहा पाहुडविषै ऐसा कह्या है—

पंडिय पंडिय पंडिय कण छोडि वितुस कंडिया।
पय अत्थं तुट्ठोसि परमत्थ ण जाणइ मूढोसि ॥ १ ॥

याका अर्थ। हे पांडे हे पांडे हे पांडे तैं कणछोडि तुस ही ग्रहण करै है तू अर्थ अर शब्दविषै संतुष्ट है परमार्थ न जानै है तातैं मूर्ख ही है ऐसा कह्या है अर चौदह विद्यानिविषैं भी पहलै अध्यात्मविद्या प्रधान कही है तातैं अध्यात्मरसका रसिया वक्ता है सो जिनध-र्म्मके रहस्यका वक्ता जानना। बहुरि जे बुद्धिऋद्धिके धारक हैं अवधि मनःपर्यय केवलज्ञानके धनी वक्ता हैं ते महावक्ता जानने। ऐसैं वक्तानिके विशेष गुण जानने. सो इन विशेष गुणनिका धारी वक्ताका संयोग मिलै तौ बहुत ही भला है अर न मिलै तौ श्रद्धानादिक गुणनिके धारी वक्तानिहीके मुखतैं शास्त्र

सुनना। याप्रकार गुनके धारी मुनि वा श्रावक तिनिकै मुखतैं तौ शास्त्र सुनना योग्य है अर पद्धतिबुद्धिकरि वा शास्त्र सुननेके लोभकरि श्रद्धानादि गुणरहित पापी पुरुषनिके मुखतैं शास्त्र सुनना उचित नाही। उक्तं च-

तं जिणआणपरेण धम्मो सो यव्व सुगुरुपासम्मि।
अह उचिओ सद्धाओ तस्सुवएसस्स कहगाओ॥ १॥

याका अर्थ—जो जिन आज्ञा माननेवेवै सावधान है ताकरि निर्ग्रन्थ सुगुरुहीकै निकटि धर्म्म सुनना योग्य है अथवा तिस सुगुरुहीके उपदेशका कहनहारा उचित श्रद्धानी श्रावक तातैं धर्म सुनना योग्य है। ऐसा जो वक्ता धर्म्मबुद्धिकरि उपदेशदाता होइ सो ही अपना अर अन्य जीवनिका भला करै है। अर जो कषायबुद्धिकरि उपदेश दे है सो अपना अर अन्य जीवनिका बुरा करै है ऐसा जानना। ऐसैं वक्ताका स्वरूप कह्या अब श्रोताका स्वरूप कहैं हैं—

भला होनहार है तातैं जिस जीवकै ऐसा विचार आवै मैं कौन हौं, अर कहां तैं आकर यहां जन्म धरया है अर मरि करि कहां जाउंगा। मेरा कहा स्वरूप है यह चरित्र कैसैं बनि रह्या है ए मेरै भाव हो हैं तिनिका कहा फल लागैगा जीव दुखी हो रहा है सो दुःख दूरि होनेका कहा उपाय है मुझकौं इतनी बातनिका ठीककरि किछू मेरा हित हो सो करना ऐसा विचारतैं उद्यमवंत भया है। बहुरि इस कार्यकी सिद्धि शास्त्र सुननेतैं होती जानि अतिप्रीतिकरि शास्त्र सुनै है किछू पूछना होइ सो पूछै है बहुरि गुरुनिकरि

कह्या अर्थकौं अपने अंतरंगविषै बारंबार विचारै है बहुरि अपने वि-
चारतैं सत्य अर्थनिका निश्चयकरि जो कर्तव्य होय ताका उद्यमी हो-
य है ऐसा तौ नवीन श्रोताका स्वरूप जानना । बहुरि
जैनधर्म्मके गाढ़े श्रद्धानी हैं अर नाना शास्त्र निश्चयादिक-
सुननेकरि जिनकी बुद्धि निर्मल भई है बहुरि व्यवहार
का स्वरूप नीकै जानि जिस अर्थकौं सुनै हैं ताकौं यथावत् नि-
श्चय जानि अवधारै हैं। बहुरि जब प्रश्न उपजै है तब अति
विनयवान होय प्रश्न करै हैं अथवा परस्पर अनेक प्रश्नोत्तरकरि
वस्तुका निर्णय करै हैं शास्त्राभ्यासविषै अति आसक्त हैं धर्म्मबुद्धि-
करि निंद्यकार्यनिके त्यागी भए हैं ऐसे शास्त्रनिके श्रोता चा
हिए । बहुरि श्रोतानिके विशेष लक्षण ऐसे हैं । जाके-
किछू व्याकरण न्यायादिकका वा बड़े जैन शास्त्रनिका ज्ञान होइ
तौ श्रोतापनौ विशेष सोभै है। बहुरि ऐसा भी श्रोता है अर
वाकै आत्मज्ञान न भया होय तौ उपदेशका मरम समझि सकै
नाहीं तातैं आत्मज्ञानकरि जो स्वरूपका आस्वादी भया है सो
जिनधर्म्मके रहस्यका श्रोता है। बहुरि जो अतिशयवंत बुद्धिकरि
वा अवधिमनःपर्ययकरि संयुक्त होय तौ वह महान् श्रोता
जानना। ऐसैं श्रोतानिके विशेष गुण हैं। ऐसे जिनशास्त्रनिके
श्रोता चाहिए। बहुरि शास्त्र सुननेतैं हमारा भला होगा ऐसों
बुद्धिकरि जो शास्त्र सुनै है परन्तु ज्ञानकी मन्दताकरि विशेष
समझै नाहीं तिनिकै पुण्यबंन्ध होय है। कार्य सिद्ध होता नाहीं।
बहुरि जे कुलप्रवृत्तिकरि वा सहज योग बननेकरि शास्त्र सुनै हैं वा

सुनै तौ हैं परन्तु किछू अवधारण करते नाहीं तिनकै परिणाम अनुसारि कदाचित् पुण्यबंन्ध हो है। कदाचित् पापबंध हो है। बहुरि जे मद मत्सर भावकरि शास्त्र सुनैं हैं वाद तर्क करनेंहीका जिनिका अभिप्राय है। बहुरि जे महंतताकै अर्थि वा किसी लोभादिकका प्रयोजनके अर्थि शास्त्र सुनै हैं। बहुरि जो शास्त्र तौ सुनै है परंतु सुहावता नाहीं ऐसे श्रोतानिकै केवल पापबन्ध ही हो है। ऐसा श्रोतानिका स्वरूप जानना। ऐसैं ही यथासंभव सीखना सिखावना आदि जिनिकै पाइए तिनिका भी स्वरूप जानना। या प्रकार शास्त्रका अर वक्ता श्रोताका स्वरूप कह्या सो उचित्त शास्त्रकौं उचित वक्ता होय वांचना उचित श्रोता होय सुनना योग्य है अब यह मोक्षमार्ग्गप्रकाश नाम शास्त्र रचिए है ताका सार्थकपना दिखाइए है----

इस संसार अटवीविषै समस्त जीव हैं ते कर्म्मनिमित्ततैं निपजे जे नानाप्रकार दुःख तिनकरि पीड़ित हो रहे हैं। बहुरि तहां मिथ्या अन्धकार व्याप्त होय रहा है। ताकरि तहांतैं मुक्त होनेका मार्ग पावते नाहीं तड़फि तड़फि तहां ही दुखःकौं सहैं हैं। बहुरि ऐसे जीवनिका भला होनेकौं कारण तीर्थंकर केवली भगवान् सो ही भया सूर्य ताका भया उदय ताकी दिव्यध्वनिरूपी किरणनिकरि तहांतैं मुक्तहोनेका मार्ग्ग प्रकाशित किया जैसैं सूर्यकै ऐसी इच्छा नाहीं जो मैं मार्ग प्रकाशूं परंतु सहज ही वाकी किरण फैलैं हैं ताकरि मार्गका प्रकाशन हो है तैसैं ही केवली वीतराग है तातैं ताकै ऐसी इच्छा नाहीं जो हम मोक्षमार्ग प्रगट करैं

परंतु सहज हीं अघातिकर्मनिका उदयकरि तिनिका शरीररूप पुद्गल दिव्यध्वनिरूप परिणमै है ताकरि मोक्षमार्गका प्रकाशन हो है। बहुरि गणधर देवनिकैं यहु विचार आया जहां केवली सूर्यका अस्तपना होइ तहां जीव मोक्षमार्गकौं कैसैं पावै अर मोक्षमार्ग पाए विना जीव दुःख सहैंगे ऐसी करुणाबुद्धिकरि अंग प्रकीर्णकादिरूप ग्रन्थ तेई भए महान् दीपक तिनिकाउद्योत किया। बहुरि जैसैं दीपकरि दीपक जोवनेतैं दीपकनिकी परंपरा प्रवर्तै तैसैं आचार्यादिकनिकरि तिन ग्रन्थनितैं अन्य ग्रंथ बनाए। बहुरि तिनिहूतैं किनिहू अन्य ग्रन्थ बनाए ऐसैं ग्रन्थनितैं ग्रन्थ होनेतैं ग्रन्थनिकी परंपरा वर्त्तै है। मैं भी पूर्वग्रन्थनितैं इस ग्रन्थकौं बनाऊं हूं। बहुरि जैसैं सूर्य वा सर्व दीपक हैं ते मार्गकौं एकरूप ही प्रकाशैं हैं तैसैं दिव्यध्वनि वा सर्व ग्रंथ हैं ते मोक्षमार्गकौं एकरूप ही प्रकाशै हैं। सो यह भी ग्रन्थ मोक्षमार्गकौं प्रकासै है। बहुरि जैसैं प्रकाशे भी नेत्ररहित वा नेत्रविकार सहित पुरुष हैं तिनिकूं मार्ग सूझता नाहीं तौ दीपककै तौ मार्गप्रकाशकपनेका अभाव भया नाहीं तैसैं प्रगट कीए भी जे मनुष्यज्ञानरहित हैं वा मिथ्यात्वादि विकारसहित हैं तिनिकूं मोक्षमार्ग सूझता नाहीं तौ ग्रन्थकै तौ मोक्षमार्गप्रकाशपनेका अभाव भया नाहीं। ऐसैं इस ग्रन्थका मोक्षमार्गप्रकाशक ऐसा नाम सार्थक जानना। इहां प्रश्न जो मोक्षमार्गके प्रकाशक पूर्व ग्रन्थ तौ थे ही तुम नवीन ग्रन्थ काहे कौं बनावो हौ। ताका समाधान—

जैसैं बड़े दीपकनिका तौ उद्योत बहुत तैलादिकका साधनतैं

रहै है जिनिकै बहुत ज्ञानादिककी शक्ति न होइ तिनिकौं स्तोक[1] दीपक जोइ दीजिये तौ वै उसका साधन राखि ताके उद्योततैं अपना कार्य करैं तैसैं बड़े ग्रन्थनिका तौ प्रकाश बहुत ज्ञानादिकका साधनतैं रहै है जिनिकै बहुत ज्ञानादिककी शक्ति नाहीं तिनिकूं स्तोक ग्रन्थ बनाय दीजिये तौ वै वाका साधन राखि ताके प्रकाशतैं अपना कार्य करैं। तातैं यह स्तोक सुगम ग्रन्थ बनाइए हैं। बहुरि इहां जो मैं यह ग्रन्थ बनाऊं हूं सो कषायनितैं अपना मान बधावनेकौं वा लोभ साधनेकौं वा यश होनेकौं वा अपनी पद्धति राखनेकौं नाहीं बनावौं हौं। जिनिकै व्याकरण न्यायादिकका वा नयप्रमाणादिकका वा विशेष अर्थनिका ज्ञान नाहीं तातैं तिनिकै बड़े ग्रन्थनिका अभ्यास तौ बनि सकै नाहीं। बहुरि कोई छोटे ग्रन्थनिका अभ्यास बनै तौ भी यथार्थ अर्थ भासै नाहीं। ऐसैं इस समयविषै मंदज्ञानवान् जीव बहुत देखिए है तिनिका भला होनेके अर्थि धर्मबुद्धितैं यह भाषामय ग्रन्थ बनावौं हौं, बहुरि जैसैं बड़े दरिद्रीकौं अवलोकनमात्र चिन्तामणिकी प्राप्ति होइ अर वह न अवलोकै बहुरि जैसैं कोढ़ीकूं अमृत पान करावै अर वह न करै तैसैं संसारपीड़ित जीवकौं सुगम मोक्षमार्गके उपदेशका निमित्त बनै अर वह अभ्यास न करै तौ वाके अभाग्यकी महिमा कौन करि सकै। वाका होनहारहीकौं विचारे अपने समता आवै। उक्तं च-

---

1 छोटा

साहीणे गुरुजोगे जे ण सुणंतीह धम्मवयणाई ।
ते धिट्ठदुट्ठचित्ता अह सुहडा भवभयविहूणा ॥१॥

स्वाधीन उपदेशदाता गुरुका योग जुड़े भी जे जीव धर्म्म वचननिकौं नाहीं सुनैं हैं ते धीठ हैं अर उनका दुष्टचित्त है अथवा जिस संसारभयतैं तीर्थंकरादिक डरे तिससंसार भयतैं रहित हैं ते बड़े सुभट हैं। बहुरि प्रवचनसारविषै भी मोक्षमार्गका अधिकार किया तहां प्रथम आगमज्ञान ही उपादेय कह्या सो इस जीवका तौ मुख्य कर्तव्य आगमज्ञान है। याकौं होतै तत्त्वनिका श्रद्धान हो है तत्त्वनिका श्रद्धान भए संयमभाव हो है अर तिस आगमतैं आत्मज्ञानकी भी प्राप्ति हो है तब सहज ही मोक्षकी प्राप्ति हो है। बहुरि धर्मके अनेक अंग है तिनविषै एक ध्यान विना यातैं ऊंचा और धर्मका अंग नाहीं है तातै जिसतिसप्रकार आगम अभ्यास करना योग्य है बहुरि इस ग्रंथका तौ बांचना सुनना विचारना घना सुगम है कोऊ व्याकरणादिकका भी साधन न चाहिए तातैं अवश्य याका अभ्यासविषै प्रवर्त्तौ तुम्हारा कल्यान होइगा।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै पीठबन्ध-प्ररूपक प्रथम अधिकार समाप्त भया ॥ १ ॥

दोहा ।

मिथ्याभाव अभावतैं, जो प्रगटै निजभाव ॥
सो जयवंत रहौ सदा, यह ही मोक्षउपाव ॥ १ ॥

अब इस शास्त्रविषै मोक्षमार्गका प्रकाश करिए है। तहां

बन्धनतैं छूटनेका नाम मोक्ष है। सो इस आत्माकै कर्मका बन्धन है तिस बन्धनकरि आत्मा दुखी होय रह्या है बहुरि · दुःख दूरि करनेहीका निरंतर उपाय भी रहै है परंतु सांचा उपाय पाए विना दुःख दूरि होता नाही अर दुःख सह्या ·. ज . नाहीं तातै यह जीव व्याकुल होय रह्या है ऐसे जीवकौं सम. दुःखका मूल कारन कर्मबन्धन है ताका अभावरूप मोक्ष सोई परम हित है। बहुरि याका सांचा उपाय करना सो ही कर्त्तव्य है तातैं इसहीका याकौं उपदेश दीजिए है। तहां जैसे ·.द्य है सो रोगसहित मनुष्योंको प्रथम तौ रोगका निदान बतावै। ऐसैं यह रोग भया है। बहुरि उस रोगके निमित्ततैं वाकै जो जो अवस्था होती होइ सो बतावै ताकरि वाकै निश्चय होइ जो मेरै ऐसा ही रोग है। बहुरि तिस रोगके दूरि करनेका उपाय अनेक प्रकार बतावै अर तिस उपायकी प्रतीति अनावै। इतना तौ वैद्यका बतावना है बहुरि जो वह रोगी ताका साधन करै तौ रोगतैं मुक्त होय अपना स्वभावरूप प्रवर्त्तै सो यह रोगीका कर्तव्य है। तैसें ही इहां कर्मबंधनयुक्त जीवकौं प्रथम तौ कर्मबंधनका निदान बताइए है ऐसें यह कर्मबंधन भया है। बहुरि उस कर्मबन्धनके निमित्ततैं याकै जो जो अवस्था होती है सो बताइए है। ताकरि जीवकै निश्चय होइ जो मेरै ऐसैं ही कर्मबन्धन है। बहुरि तिस कर्मबन्धनके दूरि होनेका उपाय अनेक प्रकार बताइए हैं अर तिस उपायकी याकौं प्रतीति अनाइए है इतना तौ शास्त्रका उपदेश है। बहुरि यह जीव

ताका साधन करै तौ कर्मबन्धतैं मुक्त होइ अपना स्वभाव रूप प्रवर्त्तै सो यह जीवका कर्तव्य है सो इहां प्रथम ही कर्म्म बन्धनका निदान बताइए है बहुरि कर्म्मबन्धन होनेतैं नाना उपाधिक भावनिविषै परिभ्रमणपनौं पाइए है एक रूप रहनौं न हो है तातैं कर्म्मबन्धनसहित अवस्थाका नाम संसार अवस्था है। सो इस संसार अवस्थाविषै अनन्तानन्त जीव हैं ते अनादिही--तैं कर्म्मबन्धन सहित हैं ऐसा नाहीं है जो जीव पहिलै न्यारा थ अर कर्म्म न्यारा था पीछैं इनका संयोग भया। तौ कैसैं है-जैसैं मेरुगिरि आदि अकृत्रिम स्कंधनिविषै अनंते पुद्गलपरमाणु अनादितैं एक बन्धनरूप हैं। पीछैं तिनमैं केई परमाणु भिन्न हो हैं केई नए मिले हैं। ऐसैं मिळना बिछुरना हुवा करै है। तैसें इस संसारविषै एक जीव द्रव्य अर अनंते कर्म्मरूप पुद्गळ परमाणु तिनिका अनादितैं एक बंधनरूप है पीछै तिनिमैं केई कर्म्मपरमाणु भिन्न हो हैं अर कई नए मिले हैं ऐसैं मिळना बिछुरना हुवा करै है। बहुरि इहां प्रश्न—जो पुद्गलपरमाणु तौ रागादिकके निमित्ततैं कर्म-रूप हो हैं अनादि कर्म्मरूप कैसें हैं ताका समाधान—

निमित्त तौ नवीन कार्य होय तिसविषैं ही संभव है। अनादि अवस्थाविषै निमित्तका किछू प्रयोजन नाहीं। जैसें नवीन पुद्गळ-परमाणूनिका बंधान तौ स्निग्ध रूक्ष गुणके अंशनकरि ही हो है अर मेरुगिरि आदि स्कन्धनिविषै अनादि पुद्गलपरमाणूनिका बन्धान है तहां निमित्तका कहा प्रयोजन है। तैसें नवीन परमाणूनिका कर्म्मरूप होना तौ रागादिकनि ही करि हो है अर अनादि पुद्गल-

परमाणूनिकी कर्म्मरूपही अवस्था है। तहां निमित्तका कहा प्रयोजन है? बहुरि जो अनादिविषै भी निमित्त मानिए तौ अनादिपना रहै नाहीं। तातैं कर्मका सम्बन्ध अनादि मानना। सो तत्त्वप्रदीपिका प्रवचनसार शास्त्रकी व्याख्याविषै जो सामान्यज्ञेयाधिकार है तहां कह्या है। रागादिकका कारण तौ द्रव्य कर्म है, अर द्रव्यकर्मका कारण रागादिक है। तब उहां तर्क करी जो ऐसें इतरेतराश्रयदोष लागै वह वाकै आश्रय वह वाकै आश्रय कहीं थंभाव नाहीं है, तब उत्तर ऐसा दिया है

नैवं अनादिप्रसिद्धद्रव्यकर्म्मसम्बन्धस्य तत्र हेतुत्वेनोपादानात्।

याका अर्थ—ऐसें इतरेतराश्रय दोष नाहीं है। जातैं अनादिका स्वयंसिद्ध द्रव्यकर्म्मका संबंध है ताका तहां कारणपनाकरि ग्रहण किया है। ऐसें आगममैं कह्या है। बहुरि युक्तितैं भी ऐसेंही संभवै है जो कर्म्मनिमित्त विना पहले जीवकै रागादिक कहिए तौ रागादिक जीवका निज स्वभाव होय जाय जातै परनिमित्त विना होई ताहीका नाम स्वभाव है। तातै कर्मका संबंध अनादि ही मानना। बहुरि इहां प्रश्न जो न्यारे न्यारे द्रव्य अर अनादितैं तिनिका संबंध कैसैं संभवै। ताका समाधान—

जैसैं ठेठिहीतैं जळ दूधका वा सोना किट्टिकका वा तुष कणका वा तैल तिलका संबंध देखिए है नवीन इनिका मिळाप भया नाहीं तैसैं अनादिहीसौं जीवकर्म्मका संबंध जानना नवीन इनिका मिळाप नाहीं भया। बहुरि तुम कही कैसैं संभवै? अना-

दितैं जैसैं केई जुदे द्रव्य हैं तैसैं केई मिले द्रव्य हैं इस संभवनैं विषै किछु विरोध तौ भासता नाहीं । बहुरि प्रश्न जो संबंध वा संयोग कहना तौ तब संभवे जब पहले जुदे होइ पीछैं मिलैं । इहां अनादि मिले जीव कर्म्मनिका संबंध कैसैं कह्या है । ताका समाधान—

अनादितैं तौ मिले थे परंतु पीछे जुदे भए तब जान्या जुदे थे तौ जुदे भए । तातैं पहले भी भिन्न ही थे । ऐसैं अनुमानकरि वा केवलज्ञानकरि प्रत्यक्ष भिन्न भासै हैं । तिसकरि तिनिका बंधान होतैं भिन्नपणा पाइए है । बहुरि तिस भिन्नताकी अपेक्षा तिनिका संबंध वा संयोग कह्या है जातैं नए मिलो वा मिले ही होहु भिन्न द्रव्यनिका मिलापविषै ऐसैं ही कहना संभवै है । ऐसैं इनि जीव-निका अर कर्म्मका अनादिसंबंध है । तहां जीव द्रव्य तौ देखने जाननेरूप चैतन्यगुणका धारक है । अर इन्द्रियगम्य न होने योग्य अमूर्त्तीक है । संकोचविस्तारशक्तिकौं लिए असंख्यातप्रदेशी एकद्रव्य है बहुरि कर्म्म है सो चेतनागुणरहित जड़ है अर मूर्त्तीक है अनंत पुद्गल परमाणूनिका पुंज है । तातैं एक द्रव्य नाहीं है । ऐसैं ए जीव अर कर्म्म हैं सो इनका अनादिसंबंध है तौ भी जीवका कोई प्रदेश कर्म्मरूप न हो है अर कर्म्मका कोइ परमाणु जीवरूप न हो है । अपने अपने लक्षणकौं धरें जुदे जुदे ही रहैं हैं । जैसैं सोना रूपाका एक स्कंध होइ तथापि पीतादि गुणनिकौं धरें सोना जुदा रहै है , स्वेतादि गुणनिकौं धरें रूपा जुदा रहै है, तैसैं जुदे जानने । इहां प्रश्न —जो मूर्त्तीक मूर्त्तीकका

तौ बंधान होना बनै अमूर्त्तीक मूर्तीकका बंधान कैसैं बनै। ताका समधान--

जैसैं अव्यक्त इंद्रियगम्य नाहीं ऐसे सूक्ष्मपुद्गल अर व्यक्त इंद्रियगम्य हैं ऐसे स्थूलपुद्गल तिनका बंधान होना मानिए है तैसैं इंद्रियगम्य होने योग्य नाहीं ऐसा अमूर्तीक आत्मा अर इंद्रिय गम्य होने योग्य मूर्तीककर्म्म इनका भी बंधान होना मानना। बहुरि इस बंधानविषै कोऊ किसीकौं करै तौ है नाहीं। यावत् बंधान रहै तावत् साथि रहै बिछुरै नाहीं अर कारणकार्यपना तिनिकै बन्या रहै इतना ही यहां बंधान जानना। सो मूर्तीक अमूर्तीककै ऐसैं बंधान होनेविषै किछू विरोध है नाहीं। या प्रकार जैसैं एक जीवकै अनादिकर्म्मसंबंध कह्या तैसैं ही जुदा जुदा अनंत जीवनकै जानना। बहुरि सो कर्म्म ज्ञानावरणादि भेदनिकरि आठ प्रकार है तहां च्यारि घातियाकर्म्मनिके निमित्ततैं तौ जीवके स्वभावका घात हो है तहां ज्ञानावरण दर्शनावरणकरि तौ जीवके स्वभाव दर्शन ज्ञान तिनिकी व्यक्तता नाहीं हो है तिनि कर्म्मनिका क्षयोपशमके अनुसारि किंचित् ज्ञान दर्शनकी व्यक्तता रहै है। बहुरि मोहनीयकरि जीवके स्वभाव नाहीं ऐसे मिथ्याश्रद्धान वा क्रोध मान माया लोभादिक कषाय तिनिकी व्यक्तता हो है। बहुरि अंतरायकरि जीवका स्वभाव दीक्षा लेनेकी समर्थतारूप वीर्य ताकी व्यक्तता न हो है ताका क्षयोपशमकै अनुसारि किंचित् शक्ति रहै है ऐसा घातिकर्म्मनिके निमित्ततैं जीवके स्वभावका घात अनादिहीतैं भया है ऐसैं नाही जो पहलैं तौ

स्वभावरूप शुद्ध आत्मा था पीछे कर्मनिमित्ततैं स्वभाव घातकरि अशुद्ध भया। इहां तर्क,—जो घात नाम तौ अभावका है सोजाका पहलै सद्भाव होय ताका अभाव कहना बनै इहां स्वभावका तौ सद्भाव है ही नाहीं घात किसका किया। ताका समाधान—

जीवविषै अनादिहीतैं ऐसी शक्ति पाइए है जो कर्मका निमित्त न होइ तौ केवलज्ञानादि अपने स्वभावरूप प्रवर्त्तै परंतु अनादिहीतैं कर्मका संबंध पाइए है तातैं तिस शक्तिका व्यक्तपना न भया सो शक्तिअपेक्षा स्वभाव है ताका व्यक्त न होने देनेकी अपेक्षा घात किया कहिए है। बहुरि च्यारि अघातिया कर्म हैं तिनिके निमित्ततैं इस आत्माकै बाह्य सामग्रीका संबंध बनै है तहां वेदनीयकरि तौ शरीरविषै वा शरीरतैं बाह्य नानाप्रकार सुख दुःखकौं कारण परद्रव्यनिका संयोग जुरै है अर आयुकरि अपनी स्थितिपर्यंत पाया शरीरका संबंध नाहीं छूटि सकै है। अर नामकरि गति जाति शरीरादिक निपजै हैं। अर गोत्रकरि ऊंचानीचा कुलकी प्राप्ति हो है ऐसैं अघातिकर्मनिकरि बाह्य समग्री भेली होय है ताकरि मोहकै उदयका सहकार होतैं जीव सुखी दुखी हो है। अर शरीरादिकनिके संबंधतैं जीवकैं अमूर्त्तत्वादि स्वभाव अपने स्वार्थकौं नाहीं करै है। जैसैं कोऊ शरीरकौं पकरै तौ आत्मा भी पकर्या जाय। बहुरि यावत् कर्मका उदय रहै तावत् बाह्य सामग्री तैसैं ही बनी रहै अन्यथा न होय सकै ऐसा इनि अघातिकर्मनिका निमित जानना। इहां कोऊ प्रश्न करै कि कर्म तौ जड़ हैं किछू बलवान नाहीं तिनिकरि

जीवकै स्वभावका घात होना वा बाह्य समाग्रीका मिलना कैसैं संभवै है। ताका समाधान—

जो कर्म्म आप कर्त्ता होय उद्यमकरि जीवके स्वभावकौं घातै बाह्य सामग्रीकौं मिलावै तब तौ कर्मकै चैतन्यपनौं भी चाहिए अर बलवानपनौं भी चाहिए सो तौ है नाहीं सहज ही निमित्त नैमित्तिक संबंध है। जब उन कर्म्मनिका उदयकाल होय तिस कालविषै आप ही आत्मा स्वभावरूप न परिणमै विभावरूप परिणमै वा अन्य द्रव्य हैं ते तैसैं ही संबंधरूप होय परिणमैं। जैसैं काहू पुरुषकै सिरपरि मोहनधूलि परी है तिसकरि सो पुरुष बावला भया तहां उस मोहनधूलिकै ज्ञान भी न था अर बावलापना भी न था अर बावलापना तिस मोहनधूलि ही करि भया देखिए है। मोहनधूलिका तौ निमित्त है अर पुरुष आप ही बावला हुवा परिणमै है। ऐसा ही निमित्त नैमित्तिक बनि रह्या है। बहुरि जैसैं सूर्यका उदयका कालविषै चकवा चकवीनिका संयोग होय तहां रात्रिविषै किसीनैं दोषबुद्धितैं जोरावरीकरि जुदे किए नाहीं। दिवसविषै काहूनैं करुणाबुद्धिकरि मिलाए नाहीं सूर्यउदयका निमित्तपाय आप ही मिलैं हैं अर सूर्यास्तका निमित्त पाय आपही विछुरै हैं ऐसा ही निमित्तनैमित्तिक बनि रह्या है। तैसैं ही कर्म्मका भी निमित्तनैमित्तिकभाव जानना। ऐसैं कर्म्मका उदयकरि अवस्था होय है बहुरि तहां नवीन बंध कैसैं होय है सो कहिए है,—

जैसैं सूर्यका प्रकाश है सो मेघपटलतैं जितना व्यक्त नाहीं तितनेका तौ तिसकालविषै अभाव है बहुरि तिस मेघपटलका

मंदपनातैं जेता प्रकाश प्रगट है सो तिस सूर्यके स्वभावका अंश है मेघपटलजनित नाहीं है। तैसैं जीवका ज्ञान दर्शन वीर्य स्वभाव है सो ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायके निमित्ततैं जितनें व्यक्त नाहीं तितनेंका तौ तिसकालविषैं अभाव है। बहुरि तिन कर्म्मनिका क्षयोपशमतैं जेता ज्ञान दर्शन वीर्य प्रगट है सो तिस जीवके स्वभावका अंश ही है कर्म्मजनित उपाधिक भाव नाहीं है। सो ऐसे स्वभावके अंशका अनादितैं लगाय कबहूं अभाव न हो है। याहीकरि जीवका जीवत्वपना निश्चय कीजिए है। जो यह देखनहार जाननहार शक्तिकौं धरें वस्तु है सो ही आत्मा है। बहुरि इस स्वभावकरि नवीन कर्म्मका बंध नाहीं है जातैं निज स्वभाव ही बंधका कारन होय तौ बंधका छूटना कैसैं होय। बहुरि तिन कर्म्मनिके उदयतैं जेता ज्ञान दर्शन वीर्य अभावरूप है ताकरि भी बंध नाहीं है जातैं आपहीका अभाव होतैं अन्यकौं कारन कैसैं होय। तातैं ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायके निमित्ततैं उपजे भाव नवीनकर्म्मबंधके कारन नाहीं। बहुरि मोहनीय कर्म्मकरि जीवकै अयथार्थश्रद्धानरूप तौ मिथ्यात्वभाव हो है वा क्रोध मान माया लोभादिक कषाय हो हैं ते यद्यपि जीवके अस्तित्वमय हैं जीवतैं जुदे नाहीं जीव ही इनिका कर्ता है जीवके परिणमनरूप ही ये कार्य हैं तथापि इनिका होना मोहकर्म्मके निमित्ततैं ही है कर्म्मनिमित्त दूर भए इनिका अभाव ही है तातैं ए जीवके निजस्वभाव नाहीं उपाधिकभाव हैं। बहुरि इनि भावनिकरि नवीनबंध हो है तातैं मोहके उदयतैं निपजे भाव

बंधके कारन हैं। बहुरि अघातिकर्म्मनिके उदयतैं बाह्य सामग्री मिलै है तिनिविषै शरीरादिक तौ जीवके प्रदेशनिसौं एक क्षेत्रावगाही होय एकबंधानरूप ही हो हैं। अर धन कुटुंबादिक आत्मातैं भिन्नरूप हैं सो ए सर्व बंधके कारन नाहीं हैं जातैं परद्रव्य बंधका कारन न होय। इनिविषै आत्माकै ममत्वादिरूप मिथ्यात्वादिभाव हो हैं सो इसका कारन जानना। बहुरि इतना जानना जो नामकर्म्मके उदयतैं शरीर वा वचन वा मन निपजै हैं तिनिकी चेष्टाके निमित्ततैं आत्माके प्रदेशनिका चंचलपना हो है। ताकरि आत्माकै पुद्गलवर्गणासौं एक बंधान होनेकी शक्ति हो है ताका नाम योग है। ताके निमित्ततैं समय समय प्रति कर्म्मरूप होनेयोग्य अनंत परमाणूनिका ग्रहण हो है। तहां अल्प योग होय तौ थोरे परमाणूनिका ग्रहण होय बहुत योग होय तौ घनें परमाणूनिका ग्रहण होय। बहुरि एकसमय जे पुद्गलपरमाणू ग्रहे तिनिविषै ज्ञानावरणादि मूलप्रकृति वा तिनिकी उत्तर प्रकृतीनिका जैसैं सिद्धांतविषै कह्या है तैसैं बवटारा हो है तिस वटवारा माफिक परमाणू तिनि प्रकृतीनिरूप आप ही परिणमै हैं। बिशेष इतना कि योग दोय प्रकार है शुभयोग अशुभयोग। तहां धर्मके अंगनिविषै मनवचनकायकी प्रवृत्ति भए तो शुभयोग हो है अर अधर्म्म अंगनिविषै तिनिकी प्रवृत्ति भए अशुभयोग हो है। सो शुभयोग होहु वा अशुभयोग होहु सम्यक्त्व पाए विना घातिया कर्मनिका तौ सर्वप्रकृतीनिका निरंतर बंध हुवा ही करै है कोई समय किसीभी प्रकृतिका बंध हुवा विना रहता नाहीं।

इतना विशेष है जो मोहनियकी हास्य शोक युगलविषै रति अरति युगलविषै तीनौं वेदनिविषै एकै काल एक एकही प्रकृतिका बंध हो है। अघातियानिकी प्रकृतिविषै शुभोपयोग होतैं सातावेदनीय आदि पुण्यप्रकृतीनिका बंध हो है। अशुभयोग होतैं असाता- वेदनीय आदि पाप प्रकृतीनिका बंध हो है। मिश्रयोग होतैं केई पुण्यप्रकृतीनिका केई पापप्रकृतीनिका बंध हो है। ऐसैं योगके निमित्ततैं कर्मका आगमन हो है। तातैं योग है सो आश्रव है। बहुरि याकरि ग्रहे कर्मपरमाणूनिका नाम प्रदेश है तिनिका बंध भया अर तिनिविषै मूल उत्तरप्रकृतीनिका विभाग भया तातैं योगनि- करि प्रदेशबंध वा प्रकृतिबंधका होना जानना। बहुरि मोहके उदयतैं मिथ्यात्व क्रोधादिक भाव हो हैं. तिनि सबनिका नाम सामान्यपनै कषाय है। ताकरि तिनि कर्मप्रकृतीनिकी स्थिति बंधै है सो जितनी स्थिति बंधै तिसविषै आबाधा काल छोड़ि तहां पीछैं यावत् बंधी स्थितिपूर्ण होय तावत् समय समय तिस प्रकृतिका उदय आया ही करै। सो देव मनुष्य तिर्यंचायु विना अन्य सर्व घा- तिया अघातिया प्रकृतीनिका अल्पकषाय होतैं थोरा स्थितिबंध होय बहुत कषाय होतैं घना स्थिति बंध होय। इनि तीन आयूनिका अल्पकषाय- तैं बहुत अर बहुत कषायतैं अल्प स्थितिबंध जानना। बहुरि तिस कषायहीकरि तिनि कर्मप्रकृतीनिविषै अनुभागशक्तिका विशेष हो है सो जैसा अनुभाग बंधै तैसा ही उदयकालविषै तिनि प्रकृतीनिका घना वा थोरा फल निपजै है। तहां घाति कर्मनिकी सर्व प्रकृतीनिविषै वा अघाति कर्मनिकी पाप प्रकृतीनिविषै तौ

अल्पकषाय होतैं थोरा अनुभाग बंधै है। बहुत कषाय होतैं घना अनुभाग बंधै है। बहुरि पुण्यप्रकृतीनिविषै अल्पकषाय होतैं घना अनुभाग बंधै है। बहुत कषाय होतैं थोरा अनुभाग बंधै है ऐसैं कषायनिकरि कर्मप्रकृतीनिकै स्थिति अनुभागका विशेष भया तातैं कषायनिकरि स्थितिबंध अनुभागबंधका होना जानना। इहां जैसैं बहुत भी मदिरा है अर ताविषै थोरे कालपर्यंत थोरी उन्मत्तता उपजावनेकी शक्ति है तौ वह मदिरा हीनपनाकौं प्राप्त है। बहुरि थोरी भी मदिरा है ताविषै बहुत कालपर्यंत घनी उन्मत्तता उपजावनेकी शक्ति है तौ वह मदिरा अधिकपनाकौं प्राप्त है तैसैं घने भी कर्मप्रकृतीनिके परमाणू हैं अर तिनिविषै थोरे कालपर्यंत थोरा फल देनेकी शक्ति है तौ ते कर्मप्रकृति हीनताकौं प्राप्त हैं। बहुरि थोरे भी कर्मप्रकृतिनिके परमाणू हैं अर तिनिविषै बहुत कालपर्यंत बहुत फल देनेकी शक्ति है तौ ते कर्मप्रकृति अधिकपनाकौं प्राप्त हैं तातैं योगनिकरि भया प्रकृतिबंध प्रदेशबंध बलवान् नाहीं। कषायनिकरि किया स्थितिबंध अनुभागबंध ही बलवान् है तातैं मुख्यपनै कषाय ही बंधका कारन जानना। जिनिकौं बंध न करना होय ते कषाय मति करौ।

बहुरि इहां कोऊ प्रश्न करै कि पुद्गलपरमाणू तौ जड़ हैं उनकै किछू ज्ञान नाहीं कैसैं यथायोग्य प्रकृतिरूप होय परिणमैं है ताका समाधान—

जैसैं भूखा होतैं मुखद्वारकरि ग्रह्याहुवा भोजनरूप पुद्गलपिंड सो मांस शुक्र शोणित आदि धातुरूप परिणमै है। बहुरि तिस

भोजनके परमाणूनिविषै यथायोग्य कोई धातुरूप थोरे कोई धातु-
रूप घने परमाणू हो हैं। बहुरि तिनिविषै कोई परमाणूनिका
संबंध घने काल रहै कोईनिका थोरे काल रहै। बहुरि तिनिपरमा-
णूनिविषै कोई तौ अपने कार्य निपजावनेकी शक्तिकौं बहुत धारै
हैं कोई स्तोकशक्तिकौं धरै हैं। सो ऐसैं होनेविषै कोऊ भोजन
रूप पुद्गलपिंडकै ज्ञान तौ नाहीं है जो मैं ऐसैं परिणमौं अर
और भी कोऊ परिणमावनहारा नाहीं है, ऐसा ही निमित्तनैमित्तिक
भाव बनि रह्या है ताकरि तैसैं ही परिणमन पाइए है। तैसैं ही
कषाय होतैं योगद्वारिकरि ग्रह्याहुवा कर्मवर्गणारूप पुद्गलपिंड सो
ज्ञानावरणादि प्रकृतिरूप परिणमै है। बहुरि तिनि कर्मपरमाणूनि-
विषै यथायोग्य कोई प्रकृतिरूप थोरे कोई प्रकृतिरूप घने परमाणू
होय हैं। बहुरि तिनिविषै कोई परमाणूनिका संबंध घने काल रहै
कोईनिका थोरे काल रहै। बहुरि तिनिपरमाणूनिविषै कोऊ तौ
अपने कार्य निपजावनेकी बहुत शक्ति धरै हैं कोऊ थोरी शक्ति
धरै हैं सो ऐसैं होनेविषै कोऊ कर्मवर्गणारूप पुद्गलपिंडकै ज्ञान
तौ नाहीं है जो मैं ऐसैं परिणमौं अर और भी कोई परिणमावन-
हारा है नाहीं ऐसा ही निमित्तनैमित्तिकभाव बनि रह्या है ताकरि
तैसैं ही परिणमन पाइए है। सो ऐसैं तौ लोकविषै निमित्त
नैमित्तिक घने ही बनि रहे हैं। जैसैं मंत्रनिमित्तकरि जलादिकविषै
रोगादिक दूरिकरनेकी शक्ति हो है वा कांकरी आदिविषै सर्पादि
रोकनेकी शक्ति हो है तैसैं ही जीवभावके निमित्तकरि पुद्गलपरमा-
णूनिविषै ज्ञानावरणादिरूप शक्ति हो है। इहां विचारकरि अपने

उद्यमतैं कार्य करै तौ ज्ञान चाहिए अर तैसा निमित्त बनै स्वयमेव तैसैं परिणमन होय तौ तहां ज्ञानका किछू प्रयोजन नाहीं। या प्रकार नवीनबंध होनेका विधान जानना। अब जे परमाणू कर्मरूप परिणमैं तिनका यावत् उदयकाल न आवै तावत् जीवके प्रदेशनिसैं एक क्षेत्रावगाहरूप बंधान रहै है। तहां जीवभावके निमित्तकरि केई प्रकृतिनिकी अवस्थाका पलटना भी होय जाय है। तहां केई अन्य प्रकृतिनिके परमाणू थे ते संक्रमणरूप होय अन्य प्रकृतीके परमाणू हो जाएँ। बहुरि केई प्रकृतीनिका स्थिति वा अनुभाग बहुत था सो अपकर्षण होयकरि थोरा हो जाय। बहुरि केई प्रकृतीनिका स्थिति वा अनुभाग थोरा था सो उत्कर्षण होयकरि बहुत हो जाय सो ऐसैं पूर्वं बंधे परमाणूनिकी भी जीव-भावका निमित्त पाय अवस्था पलटै है अर निमित्त न बनैं तौ न पलटै जैसेंके तैसे रहैं। ऐसैं सत्तारूप कर्म रहैं हैं। बहुरि जब कर्मप्रकृतीनिका उदयकाल आवै तब स्वयमेव तिनि प्रकृतीनिका अनुभागके अनुसारि कार्य बनै। कर्म तिनिका कार्यकौं निपजावता नाहीं। याका उदयकाल आए वह कार्य बनै है। इतना ही निमित्तनैमित्तिक संबंध जानना। बहुरि जिस समय फल निपज्या तिसका अनंतर समयविषै तिनि कर्मरूप पुद्गलनिकै अनुभाग शक्तिका अभाव होनेतैं कर्मत्वपनाका अभाव हो है। ते पुद्गल अन्यपर्यायरूप परिणमै हैं। याका नाम सविपाकनिर्ज्जरा है। ऐसैं समय समय प्रति उदय होय कर्म खिरै हैं कर्मत्वपना नास्ति भए पीछैं ते परमाणू तिस ही स्कंधविषै रहौ वा जुदे होइ जाहु किछू

प्रयोजन नाहीं। इहां इतना जानना,--इस जीवकै समय समय प्रति अनंत परमाणू बंधै हैं तहां एकसमयविषै बंधे परमाणू ते आबाधाकाल छोड़ि अपनी स्थितिके जेते समय होंहि तिनिविषै क्रमतैं उदय आवै हैं। बहुरि बहुतसमयविषै बंधे परमाणू जे एकसमयविषै उदय आवने योग्य हैं ते एकठे होय उदय आवै हैं। तिनि सब परमाणूनिका अनुभाग मिलै जेता अनुभाग होय तितना फल तिस कालविषै निपजै है। बहुरि अनेक समयनिविषै बंधे परमाणू बंधसमयतैं लगाय उदयसमयपर्यंत कर्मरूप अस्तित्वकौं धरें जीवसौं संबंधरूप रहैं। ऐसैं कर्मनिकी बंध उदय सत्तारूप अवस्था जाननी। तहां समय समयप्रति एक समयप्रबद्ध मात्र परमाणू बंधै हैं एक समयप्रबद्ध मात्र निर्जरै है। ड्योढगुणहानिकरि गुणित समयप्रबद्ध मात्र सदा काल सत्ता रहै है। सो इनि सबनिका विशेष आगैं कर्मअधिकारविषै लिखैंगे तहां जानना। बहुरि ऐसे यह कर्म है सो परमाणुरूप अनंत पुद्गलद्रव्यनिकरि निपजाया कार्य है तातैं याका नाम द्रव्यकर्म है। बहुरि मोहके निमित्ततैं मिथ्यात्व क्रोधादिरूप जीवका परिणाम हो है सो अशुद्ध भावकरि निपजाया कार्य है तातैं याका नाम भावकर्म हैं। सो द्रव्यकर्मके निमित्ततैं भावकर्म होय अर भावकर्मके निमित्ततैं द्रव्यकर्मका बंध होय। बहुरि द्रव्यकर्मतैं भावकर्म भावकर्मतैं द्रव्यकर्म ऐसै ही परस्पर कारणकार्यभावकरि संसारचक्रविषै परिभ्रमण हो हैं इतना विशेष जानना—तीव्रबंध होनेतैं वा संक्रमणादि होनेतैं वा एक काल—विषै बंध्या अनेककालविषै वा अनेककालविषै बंधे एककालविषै

उदय आवनेतैं काहू कालविषै तीव्रउदय आवै तब तीव्रकषाय होय तब तीव्र ही नवीनबंध होय अर काहूकालविषै मंद उदय आवै तब मंदकषाय होय तब मंद ही नवीनबंध होय। बहुरि तिनि तीव्रमंदकषायनिहीके अनुसारि पूर्वबंधे कर्मनिका भी संक्रमणादिक होय तौ होय। याप्रकार अनादितैं लगाय धाराप्रवाहरूप द्रव्यकर्म वा भावकर्मकी प्रवृत्ति जाननी बहुरि नामकर्मके उदयतैं शरीर हो है सो द्रव्यकर्मवत् किंचित् सुख दुःखकौं कारण है। तातैं शरीरकौं नोकर्म कहिए है। इहां नो शब्द ईषत्वाचक जानना। सो शरीर पुद्गलपरमाणूनिका पिंड है अर द्रव्यइंद्रिय वा द्रव्यमन अर श्वासोश्वास वचन ए भी शरीरहीके अंग हैं सो ए भी पुद्गलपरमाणूनिके पिंड जानने। सो ऐसैं शरीरकै अर द्रव्यकर्मसंबंध-सहित जीवकै एक क्षेत्रावगाहरूप बंधान हो है। जो शरीरका जन्म समयतैं लगाय जेती आपकी स्थिति होय तितने काल पर्यंत शरीरका संबंध रहै है। बहुरि आयु पूरण भए मरण हो है। तब तिस शरीरका संबंध छूटै है। शरीर आत्मा जुदे जुदे हो जाय हैं- बहुरि ताके अनंतर समयविषै वा दूसरै तीसरै चौथै समय जीव कर्मउदयके निमित्ततैं नवीन शरीर धारै है तहां भी अपने आयु-पर्यंत तैसैं ही संबंध रहै है। बहुरि मरण हो है तब तिससौं संबंध छूटै है। ऐसैं ही पूर्व शरीरका छोड़ना नवीनशरीरका ग्रहण करना अनुक्रमतैं हुवा करै है। बहुरि यह आत्मा यद्यपि असंख्यातप्रदेशी है तथापि संकोचविस्तारशक्तितैं शरीरप्रमाण ही रहै है, विशेष इतना,- समुद्घात होतैं शरीरतैं बाह्य भी आत्माके प्रदेश फैलैं

हैं। बहुरि अंतराळ समयविषै पूर्व शरीर छोड़या था तिस प्रमाण रहे हैं। बहुरि इस शरीरके अंगभूत द्रव्य इंद्रिय मन तिनिके सहायतैं जीवकै जानपनाकी प्रवृत्ति हो है। बहुरि शरीरकी अवस्थाकै अनुसारि मोहके उदयतैं सुखी दुखी हो है। कबहू तौ जीवकी इच्छाकै अनुसार शरीर प्रवर्त्तै है कबहू शरीरकी अवस्थाकै अनुसार जीव प्रवर्त्तै है कबहू जीव अन्यथा इच्छारूप प्रवर्तै है पुद्गल अन्यथा अवस्थारूप प्रवर्त्तै है ऐसैं इस नोकर्मकी प्रवृत्ति जाननी। तहां अनादितैं लगाय प्रथम तौ इस जीवकै नित्यनिगोदरूप शरीरका संबंध पाइए है। तहां नित्यनिगोद-शरीरकौं धरि आयु पूर्ण भए मरि बहुरि नित्यनिगोदशरीरहीकौं धारै है। बहुरि आयु पूर्ण करि मरि नित्यनिगोदशरीरहीकौं धारै है। याही प्रकार अनंतानंत प्रमाण लिए जीवराशि हैं सो अनादितैं तहां ही जन्ममरण किया करै हैं। बहुरि तहांतैं छै महिना अर आठ समयविषै छसै आठ जीव निकसै हैं ते निकसि अन्य पर्यायनिकौं धारै हैं। सो पृथ्वी जल अग्नि पवन प्रत्येकवनस्पतीरूप एकेंद्रिय पर्यायनिविषै वा बेंद्रिय तेइंद्रिय चौइंद्रियरूप पर्यायनिविषै वा नरक तिर्यंच मनुष्य देवरूप पंचें-द्रिय पर्यायनिविषै भ्रमण करै हैं। बहुरि तहां कितेक काल भ्रमण करि बहुरि निगोदपर्यायकौं पावै सो वाका नाम इतरनिगोद है। बहुरि तहां कितेक काल रहै तहांतैं निकसि अन्य पर्याय-निविषै भ्रमण करै है। तहां परिभ्रमण करनेका उत्कृष्ट काल पृथ्वी आदि स्थावरनिविषै असंख्यात कल्पमात्र है। बहुरि द्वींद्रियादि

पंचेंद्रियपर्यंत त्रसनिविषै साधिक दोयहजार सागर है । अर इत-रनिगोदविषै अढाई पुद्गलपरिवर्तनमात्र है सो यह अनंतकाल है। बहुरि इतरनिगोदतैं निकसि कोई स्थावरपर्याय पाय बहुरि निगोद जाय ऐसैं एकेंद्रियपर्यायनिविषै उत्कृष्ट परिभ्रमण काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन मात्र है। बहुरि जघन्य सर्वत्र एक अंत-र्मुहूर्तकाल है । ऐसैं घना तौ एकेंद्रियपर्यायनिका ही धरना है। अन्य पर्याय पावना काकतालीय न्यायवत् जानना । याप्रकार इस जीवकै अनादिहीतैं कर्मबंधनरूप रोग भया है।

इति कर्मबंधनिदानवर्णनम् ।

अब इस कर्मबंधनरूप रोगके निमित्ततैं जीवकी कैसी अवस्था होय रही है सो कहिए है। प्रथम इस जीवका स्वभाव चैतन्य है सो सबनिका सामान्यविशेषस्वरूपका प्रकाशनहारा है। जो उनका स्वरूप होय सो आपकौं प्रतिभासै है । तिसहीका नाम चैतन्य है । तहां सामान्यस्वरूप प्रतिभासनेका नाम दर्शन है। विशेष स्वरूप प्रतिभासनेका नाम ज्ञान है। सो ऐसे स्वभावकरि त्रिकालवर्त्ती सर्वगुणपर्यायसहित सर्व पदार्थनिकौं प्रत्यक्ष युग पत् विना सहाय देखै जानै ऐसी आत्माविषै शक्ति सदा काल है परंतु अनादितैं ज्ञानावरण दर्शनावरणका संबंध है ताके निमि-त्ततैं इस शक्तिका व्यक्तपना होना नाहीं तिनि कर्मनिका क्षयो-पशमतैं किंचित् मतिज्ञान वा श्रुतज्ञान पाइए है। अर कदाचित् अवधिज्ञान भी पाइए है। बहुरि अचक्षुदर्शन पाइए है अर कदा-चित् चक्षुदर्शन वा अवधिदर्शन भी पाइए है। सो इनिकी भी

प्रवृत्ति कैसैं है सो दिखाइए है। प्रथम तौ मतिज्ञान है सो शरीरके अंगभूत जे जीभ नासिका नेत्र कान स्पर्शन ए द्रव्यइंद्रिय अर हृदयस्थानविषै आठ पाँखडीका फूल्या कमलकै आकार द्रव्य-मन तिनिके सहायहीतै जानै है। जैसैं जाकी दृष्टिमंद होय सो अपने नेत्रकरि ही देखै है परंतु चसमा दीए ही देखै विना चसमैके देखि सकै नाहीं। तैसैं आत्माका ज्ञान मंद है सो अपने ज्ञानहीकरि जानै है परंतु द्रव्यइंद्रिय वा मनका संबंध भए ही जानै तिनि विना जानि सकै नाहीं। बहुरि जैसैं नेत्र तौ जैसाका तैसा है अर चसमाविषै किछू दोष भया होय तौ देखि सकै नाहीं अथवा थोरा दीसै अथवा औरका और दीसै तैसैं अपना क्षयोपशम तौ जैसाका तैसा है अर द्रव्यइंद्रिय मनके परमाणु अन्यथा परिणमे होंय तौ जानि सकै नाहीं अथवा थोरा जानै अथवा औरका और जानै। जातैं द्रव्यइंद्रिय वा मनरूप परिमाणूनिके परिणमनकै अनुसार ज्ञानका परिणमण होय है। ताका उदाहरण--जैसैं मनुष्यदिककै बाळ वृद्ध अवस्थाविषै द्रव्यइंद्रिय वा मन शिथिल होय तब जानपना भी शिथिल होय। बहुरि जैसैं शीत वायु आदिके निमित्ततैं स्पर्शनादि इंद्रियनिके वा मनके परमाणु अन्यथा होंय तव जानना न होय वा थोरा जानना होय वा अन्यथा जानना होय। बहुरि इस ज्ञानकै अर वाह्य द्रव्यनिकै भी निमित्तनैमित्तिक संबंध पाइए है ताका उदाहरण- जैसैं नेत्रइंद्रीकै अंधकारके परमाणु वा फूला आदिकके परमाणु पाषाणादिके परमाणु आदि आड़े आय जाएँ तौ देखि न सकै

बहुरि लालकाच आड़ा आवै तौ सब लाल ही दीसै हरितकाच आड़ा आवै तौ हरित दीखे ऐसैं अन्यथा जानना होय । बहुरि दूरिबीणि चसमा इत्यादि आड़ा आवै तौ बहुत दीखने लगि जाय प्रकाश जल काच इत्यादिकके परमाणु आड़े आवैं तौ भी जैसाका तैसा दीखै ऐसैं अन्य इंद्रिय वा मनकै भी यथासंभव—निमित्त नैमित्तिकपणा जानना। बहुरि मंत्रादिक प्रयोगतैं वा मदिरा-पानादिकतैं वा भूतादिकके निमित्ततैं न जानना वा थोरा जानना वा अन्यथा जानना हो है। ऐसैं यह ज्ञान बाह्यद्रव्यकै भी आधीन जानना। बहुरि इस ज्ञानकरि जो जानना हो है सो अस्पष्ट जान-ना हो है। दूरितैं कैसा ही जानै समीपतैं कैसा ही जानै तत्काल कै-सा ही जानै जानतै बहुत बार होजाय तब कैसा ही जानै काहूकौं संशयलिए जानै काहूकौं अन्यथा जानै काहूकौं किंचित् जानैं इत्या-दि रूपकरि निर्मल जानना होय सकै नाहीं। ऐसैं यह मतिज्ञान प-राधीनतालिए इंद्रियमनद्वारकरि प्रवर्तै है। तहां इंद्रियनिकरि तौ जि-तने क्षेत्रका विषय होय तितने क्षेत्रविषै जे वर्तमान स्थूल अपने जान-ने योग्य पुद्गलस्कंध होंय तिनहीकौं जानै। तिनिविषै जुदेजुदे इंद्रिय-निकरि जुदे जुदे कालविषै कोई स्कधके स्पर्शादिकका जानना हो है बहुरि मनकरि अपने जानने योग्य किंचिन्मात्र त्रिकालसंबंधी दूरिक्षेत्रवर्ती वा समीपक्षेत्रवर्ती रूपी अरूपी द्रव्य वा पर्याय तिनिकौं अत्यंत अस्पष्टपनै जानै है सो भी इंद्रियनिकरि जाका ज्ञान ना भया होय वा अनुमानादिक जाका किया होय तिसहीकौं जानि सकै है। बहुरि कदाचित् अपनी कल्पनाहीकरि असतकौं

जानै है। जैसैं सुपनेविषै वा जागतैं भी जे कदाचित् कहीं न पाइए ऐसे आकारादिक चिंतवै वा जैसैं नाहीं तैसैं मानै। ऐसैं मनकरि जानना होय। सो यह इंद्रिय वा मनद्वारकरि जो ज्ञान होय है ताका नाम मतिज्ञान है। तहां पृथ्वी जल अग्नि पवन वनस्पतीरूप एकेंद्रियनिकै स्पर्शहीका ज्ञान है। लट शंख आदि वेइंद्रिय जीवनिकै स्पर्श रसका ज्ञान है। कीड़ी मकोड़ा आदि ते-इंद्रिय जीवनिकै स्पर्श रस गंधका ज्ञान हैं। भ्रमर मक्षिका पतंगादिक चौइंद्रिय जीवनिकै स्पर्श रस गंध वर्णका ज्ञान है। मच्छ गऊ कवूतर इत्यादिक तिर्यंच अर मनुष्य देव नारकी यह पंचेंद्रिय हैं तिनिकै स्पर्श रस गंध वर्ण शब्दनिका ज्ञान है। बहुरि तिर्यंचनिविषै केई संज्ञी हैं केई असंज्ञी हैं। तहां संज्ञीनिकै मनजनित ज्ञान है असंज्ञीनिकै नाहीं है। बहुरि मनुष्य देव नारकी संज्ञी हैं तिनि सवनिकै मनजनित ज्ञान पाईए है ऐसैं मतिज्ञानकी प्रवृत्ति जाननी। बहुरि मतिज्ञानकरि जिस अर्थको जान्या होय ताके संबंधतैं अन्य अर्थकौं जाकरि जानिये सो श्रुतज्ञान है सो दोय प्रकार है। अक्षरात्मक १ अनक्षरात्मक २। तहां जैसैं 'घट' ए दोय अक्षर सुने वा देखे सो तौ मतिज्ञान भया तिनिकै संबंधतैं घटपदार्थका जानना भया सो श्रुतज्ञान भया। ऐसैं अन्य भी जानना सो यह तौ अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है। बहुरि जैसैं स्पर्शकरि शीतका जानना भया सो तौ मतिज्ञान है ताके संबंधतैं यह हितकारी नाहीं यातैं भागि जाना इत्यादिरूप ज्ञान भया सो श्रुतज्ञान है। ऐसैं अन्य भी जानना। यह अनक्षरात्मक

श्रुतज्ञान है। तहां एकेंद्रियादिक असंज्ञी जीवनिकै तौ अनक्षरात्मक ही श्रुतज्ञान है अवशेष संज्ञी पंचेंद्रिकै दोऊ हैं। सो यह श्रुतज्ञान है, सो अनेकप्रकार पराधीन जो मतिज्ञान ताकै भी आधीन है। वा अन्य अनेक कारणनिकै आधीन है तातैं महा पराधीन जानना। बहुरि अपनी मर्यादाकै अनुसार क्षेत्रकालका प्रमाण लिए रूपी पदार्थनिकौं स्पष्टपनैं जाकरि जानिये सो अवधिज्ञान है सो यह देव नारकीनिकै तौ सर्वकै पाइए है। अर संज्ञी पंचेंद्रिय तिर्यंच अर मनुष्यनिकै भी कोईकै पाइए है। असंज्ञीपर्यंत जीवनिकै यह होता ही नाहीं सो यह भी शरीरादिक पुद्गलनिकै आधीन है। बहुरि अवधिके तीन भेद हैं देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि ३। सो इनिविषै थोरा क्षेत्रकालकी मर्यादा लिए किंचिन्मात्र रूपी पदार्थकौं जाननहारा देशावधि है सो कोई जीवकै होय है। बहुरि परमावधि सर्वावधि अर मनःपर्यय ए ज्ञान मोक्षमार्गविषै प्रगटै हैं। केवलज्ञान मोक्षमार्गस्वरूप है। तातैं इस अनादिसंसार अवस्थाविषै इनिका सद्भाव ही नाहीं है. ऐसैं ज्ञानकी प्रवृत्ति पाइए है। बहुरि इंद्रिय वा मनके स्पर्शादिकविषय तिनिका संबंध होतैं प्रथमकालविषै मतिज्ञानके पहलै जो सत्तामात्र अवलोकनेरूप प्रतिभास हो है ताका नाम चक्षुदर्शन वा अचक्षुदर्शन तहां नेत्र इंद्रियकरि दर्शन होय ताका नाम तौ चक्षुदर्शन है सो तौ चौइंद्रिय पंचेंद्रिय जीवनिहीकै हो है। बहुरि स्पर्शन रसन घ्राण श्रोत्र इन च्यारि इंद्रिय अर मनकरि दर्शन होय ताका नाम अचक्षुदर्शन है सो यथायोग्य एकेंद्रियादि जीवनिकै हो है बहुरि अवधिके विषय-

निका संबंध होतैं अवधिज्ञानके पहलै जो सत्तामात्र अवलोकनेरूप प्रतिभास होय ताका नाम अवधिदर्शन है सो जिनिकै अवधिज्ञान संभवै तिनिहीकै यह हो है। जो यह चक्षु अचक्षु अवधिदर्शन है सो मतिज्ञान अवधिज्ञानवत् पराधीन जानना। बहुरि केवलदर्शन मोक्ष स्वरूप है ताका यहां सद्भाव ही नाहीं। ऐसैं दर्शनका सद्भाव पाइए है। या प्रकार ज्ञान दर्शनका सद्भाव ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयोपशमकै अनुसार हो है। जब क्षयोपशम थोरा हो है तब ज्ञानदर्शनकी शक्ति भी थोरी हो है। जब बहुत होय तब बहुत हो है। बहुरि क्षयोपशमतैं शक्ति तौ ऐसी बनी रहै अर परिणमनकरि एक जीवकै एक कालविषै एक विषयहीका देखना वा जानना हो है। इस परिणमनहीका नाम उपयोग है। तहां एक जीवकै एक कालविषै तौ ज्ञानोपयोग हो है वा दर्शनोपयोग हो है बहुरि एक उपयोगकी भी एक ही भेदकी प्रवृत्ति हो है जैसै मतिज्ञान होय तब अन्यज्ञान न होय। बहुरि एक भेदविषै भी एक विषयविषै ही प्रवृत्ति हो है। जैसैं स्पर्शकौं जानै तब रसादिककौं न जानै बहुरि एक विषयविषै भी ताके कोऊ एक अंगहीविषै प्रवृत्ति हो है जैसैं उष्णस्पर्शकौं जानै तब रूक्षादिककौं न जानै ऐसैं एक जीवकै एक कालविषै एक ज्ञेय वा दृश्यविषै ज्ञान व दर्शनका परिणमन जानना। सो ऐसैं ही देखिए है। जब सुननेविषै उपयोग लग्या होय तब नेत्रके समीप तिष्ठता भी पदार्थ न दीसै ऐसैं ही अन्य प्रवृत्ति देखिए है। बहुरि परिणमनविषै शीघ्रता बहुत है ताकरि काहू कालविषै ऐसा मानिए है युगपत् भी

अनेक विषयनिका जानना वा देखना हो है सो युगपत् होता नाहीं क्रमहीकरि हो है संस्कारवशतैं तिनिका साधन रहै है। जैसैं कागलेकै नेत्रकै दोय गोल हैं फूलरी एक है सो फिरै शीघ्र है ताकरि दोऊ गोलकनिका साधन करै है। तैसैं ही इस जीवकै द्वार तौ अनेक हैं अर उपयोग एक है सो फिरै शीघ्र है ताकरि सर्व द्वारनिका साधन रहै है। इहां प्रश्न—जो एक कालविषै एक विषयका जानना वा देखना हो है तौ इतना ही क्षयोपशम भया कहौ बहुत काहेकौं कहौ। बहुरि तुम कहो हौ क्षयोपशमतैं शक्ति हो है तौ शक्ति तौ आत्माविषै केवलज्ञानदर्शनकी भी पाइए हैं ताका समाधान—

जैसैं काहू पुरुषकै बहुत ग्रामनिविषै गमनकरनेकी शक्ति है। बहुरि ताकौं काहूनै रोक्या अर यह कह्या पांच ग्रामनिविषै जावो परंतु एक दिनविषै एक ही ग्रामकौं जावो। तहां उस पुरुषकै बहुत ग्राम जानेकी शक्ति तौ द्रव्य अपेक्षा पाइए है अन्य काल-विषै सामर्थ्य होय वर्तमान सामर्थ्यरूप नाहीं है परंतु वर्तमान पांच ग्रामनितैं अधिक ग्रामनिविषै गमन करि सकै नाहीं। बहुरि पांच ग्रामनिविषै जानेकी पर्यायअपेक्षा वर्तमान सामर्थ्यरूप शक्ति है तातैं इनिविषै गमन करि सकै है। बहुरि व्यक्तता एक दिनविषै एक ग्रामकौं गमन करनेहीकी पाइए है तैसैं इस जीवकै सर्वकौं देखनेकी जाननेकी शक्ति है। बहुरि याकौं कर्मनै रोक्या अर इतना क्षयोपशम भया कि स्पर्शादिक विषयनिकौं जानो वा देखो परंतु एक कालविषै एकहीकौं जानौ वा देखौ। तहां

इस जीवकै सर्वके देखने जाननेकी शक्ति तौ द्रव्यअपेक्षा पाइए है अन्यकालविपै सामर्थ्य होय परंतु वर्तमान सामर्थ्यरूप नाहीं जातैं अपनेयोग्य विषयनितैं अधिक विषयनिकौं देखि जानि सकै नाहीं। वहुरि अपने योग्य विषयनिकौं देखने जाननेकी पर्याय अपेक्षा वर्तमान सामर्थ्यरूप शक्ति है तातैं इनकौं देखि जानि सकै है। वहुरि व्यक्तता एक कालविपै एकहीकौं देखनेकी वा जाननेकी पाइए है। वहुरि इहां प्रश्न—जो ऐसैं तौं जान्या परंतु क्षयोपशम तौ पाइए अर वाह्य इंद्रियादिकका अन्यथा निमित्त भए देखना जानना न होय वा थोरा होय वा अन्यथा होय सो ऐसैं होतैं कर्महीका निमित्त तौ न रह्या ? ताका समाधान—

जैसैं रोकनहारानैं यह कह्या जो पांच ग्रामनिविषै एक ग्रामकौं एक दिनविपै जावो परंतु इन किंकरनिकौं साथ लेकैं जावो तहां वे किंकर अन्यथा परिणमैं तौ जाना न होय वा थोरा जाना होय वा अन्यथा जाना होय तैसैं कर्मका ऐसा ही क्षयोपशम भया है जो इतने विपयनिविपै एक विपयकौं एक कालविषै देखौ वा जानौ परंतु इतने वाह्य द्रव्यनिका निमित्त भए देखौ जानौ। तहां वे वाह्य द्रव्य अन्यथा परिणमैं तौ देखना जानना न होय वा थोरा होय वा अन्यथा होय ऐसैं यह कर्मके क्षयोपशमके विशेष हैं तातैं कर्महीका निमित्त जानना। जैसैं काहूकै अंधकारके परमाणु आड़े आए देखना न होय। घूघू मार्जारादिकनिकै तिनिकौं आड़े आए भी देखना होय सो ऐसा यह क्षयोपशमहीका विशेष है। जैसैं जैसैं क्षयोपशम होय तैसैं तैसैं ही देखना जानना होय। ऐसैं

इस जीवकै क्षयोपशमज्ञानकी प्रवृत्ति पाइए है। बहुरि मोक्षमार्गविषै अवधि मनःपर्यय हो हैं सो भी क्षयोपशमज्ञान ही हैं तिनिकी भी ऐसैं ही एककालविषै एककौं प्रतिभासना वा परद्रव्यका आधीनपना जानना। बहुरि विशेष है सो विशेष जानना। या प्रकार ज्ञानावरण दर्शनावरणका उदयके निमित्ततैं बहुत ज्ञान दर्शनके अंशनिका तौ अभाव है अर तिनके क्षयोपशमतैं थोरे अंशनिका सद्भाव पाइए है। बहुरि इस जीवकै मोहके उदयतैं मिथ्यात्व वा कषायभाव हो हैं तहां दर्शनमोहके उदयतैं तौ मिथ्यात्वभाव हो है ताकरि यह जीव अन्यथा प्रतीतिरूप अतत्त्वश्रद्धान करै है। जैसैं है तैसैं तौ नाहीं मानै है अर जैसैं नाहीं है तैसैं मानै है। अमूर्त्तीक प्रदेशनिका पुंज प्रसिद्ध ज्ञानादिगुणनिका धारी अनादिनिधन वस्तु आप है अर मूर्त्तीक पुद्गलद्रव्यनिका पिंड प्रसिद्ध ज्ञानादिकनिकरि रहित जिनका नवीनसंयोग भया ऐसैं शरीरादिक पुद्गल पर हैं इनिका संयोगरूप नानाप्रकार मनुष्य तिर्यंचादि पर्याय हो हैं, तिन पर्यायनिविषै अहंबुद्धि धारै है, स्वपरका भेद नाहीं करि सकै है जो पर्याय पावै तिसहीकौं आप मानै है,। बहुरि तिस पर्यायविषै ज्ञानादिक हैं ते तौ आपके गुण हैं अर रागादिक हैं ते आपके कर्मनिमित्ततैं उपाधिक भाव भए हैं अर वर्णादिक हैं ते आपके गुण नाहीं हैं शरीरादिक पुद्गलके गुण हैं अर शरीरादिकविषै वर्णादिकनिकी वा परमाणूनिकी नानाप्रकार पलटनि हो है सो पुद्गलकी अवस्था है सो इन सबनिहीकौं आपनौं स्वरूप जानै है स्वभाव परभावका विवेक नाहीं होय सकै है। बहुरि मनु-

ष्यादिक पर्यायनिविषै कुटुंब धनादिकका संबंध हो है ते प्रत्यक्ष आं-पतैं भिन्न हैं अर ते अपनैं आधीन होय नाहीं परणमै हैं तथापि तिनिविषै ममकार करै है ए मेरे हैं वै काहू प्रकार भी अपने होते नाहीं यह ही अपनी मानितैं अपने मानै है। बहुरि मनुष्यादि पर्यायनिविषै कदाचित् देवादिकका तत्त्वनिका अन्यथा स्वरूप जो कल्पित किया ताकी तौ प्रतीति करै है अर यथार्थ-स्वरूप जैसैं हैं तैसैं प्रतीति न करै है। ऐसैं दर्शनमोहके उदय-करि जीवकै अतत्त्वश्रद्धानरूप मिथ्यात्वभाव हो है - जहां तीव्र उदय होय है तहां सत्यश्रद्धानसे घना विपरीत श्रद्धान होय है जब मन्द उदय होय है, तब सत्यश्रद्धानतैं थोरा विपरीत-श्रद्धान हो है । बहुरि चारित्रमोहके उदयतैं इस जीवकै कषा-यभाव हो हैं तब यह देखता जानतासंता परपदार्थनिविषै इष्ट अनिष्टपनौ मानि क्रोधादिक करै है। तहां क्रोधका उदय होतैं पदार्थनिविषै अनिष्टपनौ वा ताका बुरा होना चाहै कोऊ मंदिरादि अचेतन पदार्थ बुरा लागै तब फोरना तोरना इत्यादि रूपकरि वाका बुरा चाहै। बहुरि शत्रुआदि अचेतन सचेतन पदार्थ बुरा लागै तब वाकौं बध बंधादिकरि वा मारनेकरि दुःख उपजाय ताका बुरा चाहै। बहुरि आप वा अन्य सचेतन अचेतन पदार्थ कोइ प्रकार परिणए आपकौं सो परिणमन बुरा लागै तब अन्यथा परिणमावनेकरि तिस परिणमनका बुरा चाहै याप्रकार क्रोधकरि बुरा चाहनेकी इच्छा तौ होय बुरा होना भवितव्य आधीन है । बहुरि मानके उदय होतैं पदार्थविषै अनिष्टपनौं मानि ताकौं

नीचा किया चाहै आप ऊंचा भया चाहै मल धूलिआदि अचेतंन पदार्थनिविषै घृणा वा निरादरादिककर तिनिकी हीनता आपकी उच्चता चाहै बहुरि पुरुषादिक सचेतन पदार्थनिकौं नमावना अपने आधीन करना इत्यादि रूपकरि तिनिकी हीनता आपकी उच्चता चाहै। बहुरि आप लोकविषै जैसैं ऊंचा दीसैं तैसैं शृंगारादि करना वा धन खरचना इत्यादि रूपकरि औरनिकौं हीन दिखाय आप ऊंचा होना चाहै। बहुरि अन्य कोई आपतैं ऊंचा कार्य करै ताका कोई उपायकरि नीचा दिखावै अर आप नीचा कार्य करै ताकौं ऊंचा दिखावै या प्रकार मानकरि अपनी महंतताकी इच्छा तौ होय महंतता होनी भवितव्य आधीन है। बहुरि मायाका उदय होतैं कोइ पदार्थकौं इष्ट मानि नानाप्रकार छलनिकरि ताकी सिद्धि किया चाहै रत्न सुवर्णादिक अचेतन पदार्थनिकी वा स्त्री दासी दासादि सचेतन पदार्थनिकी सिद्धिके अर्थि अनेक छल करै ठिगनेकै अर्थि अपनी अनेक अवस्था करै वा अन्य अचेतन सचेतन पदार्थनिकी अवस्था पलटावै इत्यादिरूप छलकरि अपना अभिप्राय सिद्ध किया चाहै या प्रकार मायाकरि इष्टसिद्धिके अर्थि छल तौ करै अर इष्टसिद्धि होना भवितव्य आधीन है बहुरि लोभका उदय होतैं पदार्थनिकौं इष्ट मानि तिनकी प्राप्ति चाहै वस्त्राभरण धनधान्यादि अचेतन पदार्थनिकी तृष्णा होय बहुरि स्त्री पुत्रादि सचेतन पदार्थनिकी तृष्णा होय, बहुरि आपकै वा अन्य सचेतन अचेतन पदार्थकै कोईपरिणमन होना इष्ट मानि तिनिकैं तिस परिणमनरूप परिणमाया चाहै याप्रकार लोभकरि

इष्टप्राप्तिकी इच्छा तौ होय अर इष्टप्राप्ति होनी भवितव्य आधीन है। ऐसें क्रोधादिकका उदयकरि आत्मा परिणमै है तहां एकएक कषाय च्यार च्यार प्रकार हैं अनंतानुबंधी १ अप्रत्याख्यानावरण २ प्रत्याख्यानावरण ३ संज्वलन ४ तहां जिनका उदयतैं आत्माकै सम्यक्त्व न होय स्वरूपाचरण चारित्र न होय सकै ते अनंतानुबंधीकषाय हैं। जिनिका उदय होतैं देशचारित्र न होय तातैं किंचित् त्याग भी न होय सकै ते अप्रत्याख्यानावरण कषाय हैं। बहुरि जिनिका उदय होतैं सकलचारित्र न होय तातैं सर्वका त्याग न होय सकै ते प्रत्याख्यानावरण कषाय हैं। बहुरि जिनिका उदय होतैं सकलचारित्रकौं दोष ऊपज्या करै तातैं यथाख्यातचारित्र न होय सकै ते संज्वलन कषाय हैं। सो अनादि संसारअवस्थाविषै इनि च्यारयूं ही कषायनिका निरंतर उदय पाइए है। परम कृष्णलेश्यारूप तीव्रकषाय होय तहां भी अर शुक्ललेश्यारूप मंद कषाय होय तहां भी निरंतर च्यारयौंहीका उदय रहै है। जातैं तीव्रमंदकी अपेक्षा अनंतानुबंधी भेदआदि भेद नाहीं हैं सम्यक्त्वादि घातनेकी अपेक्षा ए भेद हैं इनिकी प्रकृतिनिका तीव्र अनुभाग उदय होतैं तीव्र क्रोधादिक हो हैं मंद अनुभाग उदय होतैं मंद उदय हो है। बहुरि मोक्षमार्ग भए इनि च्यारौंविषै तीन दोय एकका उदय हो है पीछै च्यारयौंका अभाव हो है बहुरि क्रोधादि च्यारयौं कषायनिविषै एकै काल एकहीका उदय हो है। इनि कषायनिकै परस्पर कारणकार्यपनौ है। क्रोधकरि मानादिक हो जाय मानकरि क्रोधादिक हो जाय तातैं काहूकाऊ भिन्नता

भासै काहूकाल न भासै है ऐसे कषायरूप परिणमन जानना बहुरि चारित्रमोहहीके उदयतैं नोकषाय होय हैं तहां हास्यका उदयकरि कहीं इष्टपनौ मानि प्रफुल्लित हो है हर्ष मानै हैं बहुरि रतिका उदयकरि काहूकौं इष्ट मानि प्रीति करै है तहां आसक्त हो है। बहुरि अरतिका उदयकरि काहूकौं अनिष्ट मानि अप्रीति करै है तहां उद्वेगरूप हो है। बहुरि शोकका उदयकरि कहीं अनिष्ट पनौ मानि दिलगीर हो है विषाद मानै है। बहुरि भयका उदयकरि किसीकौं अनिष्ट मानि तिसतैं डरै है वाका संयोग न चाहै है। बहुरि जुगुप्साका उदयकरि काहू पदार्थकौं अनिष्ट मानि ताकी घृणा करै है वाका वियोग चाहै है। ऐसैं ए हास्यादिक छह जानने। बहुरि वेदके उदयतैं याकै कामपरिणाम हो है तहां स्त्रीवेदके उदयकरि पुरुषसौं रमनेकी इच्छा हो है पुरुषवेदके उदयकरि स्त्रीसौं रमनेकी इच्छा हो है नपुंसकवेदके उदयकरि युगपत् दोऊनिसौं रमनेकी इच्छा हो है ऐसैं ए नव तौ नो कषाय हैं। क्रोधादिसारिखे बलवान ए नाहीं तातैं इनिकौं ईषत्कषाय कहैं हैं। यहां नोशब्द ईषत्वाचक जानना। इनिका उदय तिनि क्रोधादिकनिकी साथि यथासंभव हो है। ऐसैं मोहके उदयतैं मिथ्यात्व वा कषायभाव हो हैं सो एही संसारके मूल हैं। इनि-हीकरि वर्तमानकालविषै जीव दुखी है अर आगामी कर्मबंधनके भी कारन एही हैं। बहुरि इनिहीका नाम राग द्वेष मोह है। तहां मिथ्यात्वका नाम मोह है जातैं तहां सावधानीका अभाव है। बहुरि मायालोभकषाय अर हास्य रति तीन वेदनिका नाम राग

है। जातैं तहां इष्टबुद्धिकरि अनुराग पाइए है। बहुरि क्रोधमान-कषाय अर अरति शोक भय जुगुप्सानिका नाम द्वेष है जातें तहां अनिष्टबुद्धिकरि द्वेष पाइए है। बहुरि सामान्यपनै सबहीका नाम मोह है। जातैं इनिविषै सर्वत्र असावधानी पाइए है। बहुरि अंतरायके उदयतैं जीव चाहै सो न होय। दान दिया चाहै देय न सकै। वस्तुकी प्राप्ति चाहै सो न होय। भोग किया चाहै सो न होय। उपभोग किया चाहै सो न होय। अपनी ज्ञानादि शक्तिकौं प्रगट किया चाहै सो प्रगट न होय—ऐसैं अंतरायके उदयतैं चाहै सो होय नाहीं। बहुरि तिसहीका क्षयोपशमतैं किंचिन्मात्र चाह्या भी हो है। चाहिये तौ बहुत है परंतु किंचिन्मात्र चाह्या हुआ होय है। बहुत दान देना चाहै है, परन्तु थोड़ा ही दान देय सकै है। बहुत लाभ चाहै है परन्तु थोड़ा ही लाभ हो है। ज्ञानादिक शक्ति प्रगट हो है तहां भी अनेक बाह्य कारन चाहिए। या प्रकार घातिकर्मनिके उदयतैं जीवकै अवस्था हो है। बहुरि अघातिकर्मनिविषै वेदनीयके उदयकरि शरीरविषै बाह्य सुख दुःखका कारन निपजै है। शरीरविषै आरोग्यपनौ रोगीपनौ शक्तिवानपनौ दुर्बलपनौ इत्यादि अर क्षुधा तृषा रोग खेद पीड़ा इत्यादि सुख दुःखनिके कारन हो हैं। बहुरि बाह्यविषै सुहावना ऋतु पवनादिक वा इष्टस्त्री पुत्रादिक वा मित्र धनादिक असुहावना ऋतु पवनादिक वा अनिष्टस्त्री पुत्रादिक वा शत्रु दरिद्र बध बंधनादिक सुखदुःखके कारन हो हैं। ए बाह्यकारन कहे तिनिविषै केई कारन तौ ऐसे हैं जिनिके निमित्तसौं शरीरकी

अवस्था ही सुखदुःखकौं कारन हो है अर वे ही सुख-दुःखकौं कारण हो है। बहुरि केई कारन ऐसे हैं जे आप ही सुख-दुःखकौं कारण हो हैं ऐसे कारनका मिलना वेदनीयके उदयतैं हो है। तहां सातावेदनीयतैं सुखके कारन हो हैं अर असाता-वेदनीयतैं दुःखके कारन मिलैं। सो यहां ऐसा जानना—ए कारन ही तौ सुखदुखकौं उपजावे नाहीं आत्मा मोहकर्मका उदयतैं आप सुखदुःख मानै है। तहां वेदनीयकर्मका उदयकै अर मोहकर्मका उदयकै ऐसा ही संबंध है। जब सातावेदनीयका निपजाया बाह्य कारन मिलै तब तौ सुखमाननेरूप मोहकर्मका उदय होय अर जब असातावेदनीयका निपजाया बाह्यकारन मिलै तब दुःखमानने-रूप मोहकर्मका उदय होय। बहुरि एक ही कारन काहूकौं सुखका काहूकौं दुखका कारन हो है। जैसे काहूकै सातावेदनीयका उदय होतैं मिल्या जैसा वस्त्र सुखका कारन हो है तैसा ही वस्त्र काहूकौं असातावेदनीयका उदय होतैं मिल्या सो दुःखका कारन हो है। तातैं बाह्यवस्तु सुखदुःखका निमित्तमात्र ही है। सुख दुख हो है सो मोहके निमित्ततैं हो है। निर्मोही मुनिनिकै अनेक ऋद्धिआदि परिसहादि कारन मिलैं तौ भी सुख दुःख न उपजै। मोही जीवकै कारन मिलै वा विनाकारन मिले भी अपने संकल्पहीतैं सुखदुःख हुवा ही करै है। तहां भी तीव्रमोहीकै जिस कारनकौं मिलै तीव्र सुखदुःख होय तिसही कारनकौं मिलैं मंदमोहीकै मंद सुखदुःख होय। तातैं सुखदुःखका मूल बलवान कारन मोहका उदय है। अन्यवस्तु हैं सो बलवान कारन नाहीं।

परंतु अन्यवस्तुकै अर मोही जीवकै परिणामनिकै निमित्तनैमित्त-कको मुख्यता पाइए है। ताकरि मोहीजीव अन्य वस्तुहीकौं सुख-दुःखका कारन मानै है। ऐसैं वेदनीयकरि सुखदुःखका कारन निपजै है बहुरि आयुकर्मके उदयकरि मनुष्यादिपर्यायनिकी स्थिति रहै है। यावत् आयुका उदय रहै तावत् अनेक रोगादिक कारन मिलै शरीरसौं संबंध न छूटै। बहुरि जब आयुका उदय न होय तब अनेक उपाय किए भी शरीरसौं संबंध रहै नाहीं, तिसहीकाल आत्मा अर शरीर जुदा होय। इस संसारविषै जन्म जीवन मरनका कारन आयुकर्म ही है। जब नवीन आयुका उदय होय तब नवीनपर्यायविषै जन्म हो है। बहुरि यावत् आयुका उदय रहै तावत् तिस पर्यायरूप प्राणनिकै धारनतैं जीवना हो है। बहुरि आयुका क्षय होय तब तिस पर्यायरूप प्राण छूटनेंतैं मरण हो है। सहज ही ऐसा आयुकर्मका निमित्त है और कोई उपजावनहारा क्षपावनहारा रक्षाकरनहारा है नाहीं ऐसा निश्चय करना। बहुरि जैसैं नवीन वस्त्र पहरै कितेक काल पहरैं रहै पीछै ताकौं छोड़ि अन्यवस्त्र पहरै तैसै जीव नवीन शरीर धरै कितेक काल धरैं रहै पीछै ताकौं छोड़ि अन्य शरीर धरै है। तातैं शरीरसंबंधअपेक्षा जन्मादिक हैं जीव जन्मादिरहित नित्य ही है। तथापि मोही जीवकै अतीत अनागतका विचार नाहीं तातैं पर्याय-पर्याय मात्र ही अपना अस्तित्व मानि पर्यायसंबंधी कार्यनिविषै ही तत्पर होय रह्या है। ऐसैं आयुकरि पर्यायकी स्थिति जाननी।

बहुरि नामकर्मकरि यह जीव मनुष्यादिगतिनिविषै प्राप्त हो है

तिस पर्यायरूप अपनी अवस्था हो है। बहुरि तहां त्रस स्थावरादि विशेष निपजै हैं। बहुरि तहां एकेंद्रियादि जातिकौं धारै है। इस जातिकर्मका उदयकै अर मतिज्ञानावरणका क्षयोपशमकै निमित्तनैमित्तिकपना जानना जैसा क्षयोपशम होय तैसी जाति पावै। बहुरि शरीरका संबंध हो है तहां शरीरके परमाणू अर आत्माके प्रदेशनिका एक बंधान हो है अर संकोच विस्ताररूप होय शरीरप्रमाण आत्मा रहै है। बहुरि नोकर्मरूप शरीरविषै अंगोपांगादिकका योग्य स्थान परिमाण लिए हो है। इसहीकरि स्पर्शन रसन आदि द्रव्यइंद्रिय निपजैं हैं वा हृदयस्थानविषै आठ पांखड़ीका फूल्या-कमळके आकार द्रव्यमन हो है। बहुरि तिस शरीरविषै आकारादिकका विशेष होना अर वर्णादिकका विशेष होना अर स्थूल-सूक्ष्मत्वादिकका होना इत्यादि कार्य निपजै है सो ए शरीररूप परणए परमाणु ऐसैं परिणमैं है। बहुरि श्वासोच्छ्वास वा स्वर निपजै हैं सो ए भी पुद्गलके पिंड हैं अर शरीरकौं एक बंधानरूप हैं। इनविषै भी आत्माके प्रदेश व्याप्त हैं। तहां श्वासोच्छ्वास तौ पवन है सो जैसैं आहारकौं ग्रहै नीहारकौं निकासै तब ही जीवनौ होय तैसैं बाह्यपवनकौं ग्रहै अर अभ्यंतरपवनकौं निकासै तब ही जीवितव्य रहै। तातैं श्वासोछ्वास जीवितव्यका कारन है। इस शरीरविषैं जैसैं हाड मांसादिक हैं तैसैं ही पवन जानना। बहुरि जैसैं हस्तादिकसौं कार्य करिए तैसैं ही पवनतैं कार्य करिए है। मुखमैं ग्रास धरया ताकौं पवनतैं निगलिए है मलादिक पवनतैं ही बाहरि काढिए है तैसैं ही अन्य जानना। बहुरि नाडी वा वायुरोग

वा वायगोला इत्यादि ए पवनरूप शरीरके अंग जानने । बहुरि स्वर है सो शब्द है, सो जैसैं वीणाकी तांतिकूं हलाए भाषारूपहोने योग्य पुद्गलस्कंध हैं ते साक्षर वा अनक्षर शब्दरूप परिणमै हैं तैसैं तालवा होठ इत्यादि अंगनिकौं हिलाएं भाषापर्याप्तिविषै ग्रहे पुद्गलस्कंध हैं ते साक्षर वा अनक्षर शब्दरूप परिणमै हैं। बहुरि शुभ अशुभ गमनादिक हो है। इहां ऐसा जानना जैसैं दोयपुरुषनिकै इकदंडी बेड़ी है। तहां एक पुरुष गमनादि किया चाहै अर दूसरा भी गमनादि करै तौ गमनादि होय सकै। दोऊनिविषै एक बैठि रहै तौ गमनादि होय सकै नाहीं अर दोऊनिविषै एक बलवान होय तौ दूसरेकौं भी घीसि. ले जाय तैसैं आत्माकै अर शरीरादिकरूप पुद्गलकै एकक्षेत्रावगाहरूप बंधान है तहां आत्मा हलनचलनादि किया चाहै अर पुद्गल तिस शक्तिकरि रहित हुवा हलन चलन न करै वा पुद्गलविषै शक्ति पइए है आत्माकी इच्छा न होय तौ हलनचलनादि न होय सकै। बहुरि इनिविषै पुद्गल बलवान होय हालै चालै तौ ताकी साथि विना इच्छा भी आत्मा आदि हालै चालै। ऐसैं हलन चलनादि होय सकै। बहुरि याका अपजसआदि [?] बाह्य निमित्त बनै है। ऐसैं ए कार्य निपजै हैं, तिनकरि मोहके अनुसार आत्मा सुखी दुःखी भी हो है। नामकर्मके उदयतैं स्वयमेव ऐसे नानाप्रकार रचना हो है और कोई करनहारा नाहीं है। बहुरि तीर्थंकरादि प्रकृति यहां हैं ही नाहीं। बहुरि गोत्रकर्मकरि ऊंचा नीचाकुलविषै उपजना हो है तहां अपना अधिकहीनपना प्राप्त हो है मोहके निमित्ततैं तिनिकरि आत्मा

सुखी दुखी भी हो है। ऐसैं अघातिकर्मनिका निमित्ततैं अवस्था हो है। या प्रकार इस अनादि संसारविषै घाति अघातिक कर्मनिका उदयकै अनुसार आत्माकै अवस्था हो है सो हे भव्य अपने अंत-रंगविषै विचारि देखि ऐसैं ही है कि नाहीं सो ऐसा विचार किए ऐसा ही प्रतिभासै है। बहुरि जो ऐसैं है तौ तू यह मानि मैं अनादि संसाररोग पाइए है, ताके नाशका मोकौं उपाय करना। इस विचारतैं तेरा कल्याण होगा।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै संसार अवस्थाका निरूपक द्वितीय अधिकार सम्पूर्ण भया ॥ २ ॥

दोहा

सो निजभाव सदा सुखद, अपनौं करो प्रकाश ॥
जो बहुविधि भवदुखनिकौ, करि है सत्तानाश ॥ १ ॥

अथ इस संसारअवस्थाविषै नानाप्रकार दुःख हैं तिनिका वर्णन करिए है—जातैं जो संसारविषै भी सुख होय तौ संसारतैं मुक्त होनेका उपाय काहेकौं करिए। इस संसारविषै अनेक दुःख हैं, तिसहीतैं संसारतैं मुक्त होनेका उपाय कीजिए है। बहुरि जैसैं वैद्य है सो रोगका निदान अर ताकी अवस्थाका वर्णनकरि रोगीकौं संसाररोगका निश्चय कराय पीछैं तिसका इलाज करनेकी रुचि करावै है तैसैं यहां संसारका निदान वा ताकी अवस्थाका वर्णनकरि संसारीकौं संसार रोगका निश्चय कराय अब तिनिका उपायकरनेकी रुचि कराइए है। जैसैं रोगी रोगतैं दुखी होय

रह्या है परंतु ताका मूलकारण जानैं नाहीं सांचा उपाय जानैं नाहीं अर दुःख भी सह्या जाय नाहीं तब आपकौं भासै सो ही उपाय करै तातैं दुःख दूरि होय नाहीं। तब तड़फि तड़फि परवशहुवा तिनि-दुःखनिकौं सहै है। परंतु ताका मूल कारण जानै नाहीं। परयाकौं वैद्य दुःखका मूल कारण बतावैं दुःखका स्वरूप बतावैं याके किए उपायनिकौं झूठा दिखावैं तब सांचा उपाय करनेकीरुचि होय, तैसैं ही यह संसारी संसारमैं दुःखी होय रह्या है, परंतु तिसका मूल कारण जानै नाहीं अरसांचा उपाय जानैं नाहीं अर दुःख भी सह्या जाय नाहीं तब आपको भासै सो ही उपाय करै है। तातैं दुःख दूर होय नाहीं तब तड़फि तडफि परवस हुआ दुःखनिकों सहै है। याकौं यहां दुःखका मूलकारन बताइए अर दुःखका स्वरूप बताइए अर तिनि उपायनिकूं झूठे दिखाइए तौ सांचे उपाय करनेकी रुचि होय तातैं यह वर्णन इहां करिये है। तहां सर्व दुःखनिका मूलकारन मिथ्यादर्शन अज्ञान असंयम है। जो दर्शनमोहके उदयतैं भया अतत्त्वश्रद्धान मिथ्यादर्शन ताकरि वस्तुस्वरूपकी यथार्थ प्रतीति न होय सकै है अन्यथा प्रतीति हो है। बहुरि तिस मिथ्यादर्शनहीके निमित्ततैं क्षयोपशमरूपज्ञान है सो कुज्ञान हो रह्या है। ताकरि यथार्थ वस्तुस्वरूपका जानना न हो है अन्यथा जानना हो है। बहुरि चारित्रमोहके उदयतैं भया कषायभाव ताका नाम असंयम है ताकरि जैसा वस्तुका स्वरूप है तैसा नाही प्रवर्तैं है अन्यथा प्रवर्तै है। ऐसैं ये मिथ्यादर्शनादिक हैं तेई सर्व दुःखनिका मूलकारन है। कैसैं सो दिखाइए है-मिथ्यादर्शनादिककरि जीवकै स्वपरविवेक नाही होय

सकै है एक आप आत्मा अर अनंत पुद्गलपरमाणुमय शरीर इनिका संयोगरूप मनुष्यादिपर्याय निपजै है तिस पर्यायहीकौं आपो मानै है। बहुरि आत्माका ज्ञानदर्शनादि स्वभाव है ताकरि किंचित् जानना देखना हो है। अरकर्मउपाधितैं भए क्रोधादिकभाव तिनिरूप परिणाम पाइए हैं। बहुरि शरीरका स्पर्श रस गंध वर्ण स्वभाव है सो प्रगट है अर स्थूल कृशादिक होना वा स्पर्शादिकका पलटना इत्यादि अनेक अवस्था हो है। इन सबनिकौं अपना स्वरूप जानै है। तहां ज्ञानदर्शनकी प्रवृत्ति इंद्रिय मनके द्वारा हो है तातै यह मानै है त्वचा जीभ नासिका नेत्र कान मन ए मेरै अंग हैं। इनिकरि मैं देखों जानौं हौं ऐसी मांनिने तैं इंद्रियनिविषै प्रीति पाइए है। बहुरि मोहके आवेशतैं तिनि इंद्रियनिकै द्वारा विषय ग्रहणकरनेकी इच्छा हो है बहुरि तिनिविषै इनिका ग्रहण भए तिस इच्छाके मिटनेतैं निराकुल हो है तब आनंद मानै है। जैसैं कूकरा हाड़ चाबै ताकरि अपना लोहू निकसै ताका स्वाद लेय ऐसैं मानै यह हाड़का स्वाद है। तैसैं यह जीव विषयनिकौं जानै ताकरि आपना ज्ञान प्रवर्तै ताका स्वाद लेय ऐसैं मानै यह विषयका स्वाद है सो विषयमैं तौ स्वाद है नाहीं, आप ही इच्छाकरी थी आप ही जानि आप ही आनंद मान्या। परंतु मैं अनादि अनंत ज्ञानस्वरूप आत्मा हौं, ऐसा निःकेवल ज्ञानका तौ अनुभव है नाहीं। बहुरि मैं नृत्य देख्या राग सुन्या फूल सूंघ्या पदार्थ स्पर्शा स्वाद जान्या मोकौं यह जानना इस प्रकार ज्ञेयमिश्रित ज्ञानका अनुभव है ताकरि विषयनिकरि ही प्रधानता भासे है

ऐसैं इस जीवकै मोहके निमित्ततैं विषयनिकी इच्छा पाइए है सो इच्छा तो त्रिकालवर्त्ती सर्वविषयनिके ग्रहण करनेकी है मैं सर्वकौं स्पर्शौं सर्वकौं स्वादौं सर्वकौं सूंघौं सर्वकौं देखौं सर्वकौं सुनौं सर्वकौं जानौं सो इच्छा तो इतनी है अर शक्ति इतनी ही है जो इंद्रियनिकै सन्मुख भया वर्तमान स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द तिनिविषै काहूकौं किंचिन्मात्र ग्रहै वा स्मरणादिकतैं मनकरि किछू जानै सो भी बाह्य अनेक कारन मिले सिद्ध होय। तातैं इच्छा कबहूं पूरन होय नाहीं। ऐसी इच्छा तौ केवलज्ञान भएं संपूर्ण होय। क्षयोपशमरूप इंद्रियकरि तौ इच्छा पूर्ण होय नाहीं तातैं मोहके निमित्ततैं इंद्रियनिकै अपने अपने विषय ग्रहणकी निरंतर इच्छा रहिबो ही करै ताकरि आकुलित हुवा दुःखी हो रह्या है। ऐसा दुःखी हो रह्या है जो एक कोइ विषयका ग्रहणकै अर्थि अपना मरनको भी नाहीं गिनै है। जैसैं हाथीकै कपटकी हथनीका शरीर स्पर्शनेकी अर मच्छकै बडसीके लग्या मांस स्वादनेकी अर भ्रमरकै कमलसुगंध सूंघनेकी अर पतंगकै दीपकका वर्ण देखनेकी अर हिरणकै राग सुननेकी इच्छा ऐसी हो है जो तत्काल मरन भासै तो भी मरनकौं गिनै नाहीं विषयनिका ग्रहण करै। जातैं मरण होनैतैं इंद्रियनिकरि विषयसेवनकी पीड़ा अधिक भासै है। इनि इंद्रियनिकी पीड़ाकरि सर्व जीव पीड़ितरूप निर्विचार होय जैसैं कोऊ दुखी पर्वततैं गिरि पड़ै तैसैं विषयनिविषै झंपापात ले है। नानाकष्टकरि धनकौं उपजावैं ताकौं विषयके अर्थि खोवैं। बहुरि विषयनिके अर्थि जहां मरन होता जानै तहां भी जाय

नरकादिककौं कारन जे हिंसादिक कार्य तिनिकौं करै वा क्रोधादि कषायनिकौं उपजावैं सो कहा करै इंद्रियनिकी पीड़ा सही न जाय तातैं अन्य विचार किछू आवता नाहीं। इस पीड़ाहीकरि पीड़ित भये इंद्रादिक हैं ते भी विषयनिविषै अति आसक्त हो रहे हैं। जैसे खाजि रोगकरि पीड़ित हुवा पुरुष आसक्त होय खुजावै है पीड़ा न होय तौ काहेकौं खुजावै, तैसैं इंद्रियरोगकरि पीड़ित भए इंद्रादिक आसक्त होय विषय सेवन करैं हैं। पीड़ा न होय तौ काहेकौं विषय सेवन करैं? ऐसैं ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयोपशमतैं भया इंद्रियादिजनित ज्ञान है सो मिथ्यादर्शनादिकके निमित्ततैं इच्छासहित होय दुःखका कारन भया है। अब इस दुःख दूरि होनेका उपाय यह जीव कहा करै है सो कहिए है,—

इंद्रियनिकरि विषयनिका ग्रहण भए मेरी इच्छा पूरन होय ऐसा जानि प्रथम तौ नानाप्रकार भोजनादिकनिकरि इंद्रियनिकौं प्रबल करै है अर ऐसैं ही जानै है जो इंद्रिय प्रबल रहैं मेरै विषय ग्रहणकी शक्ति विशेष हो है। बहुरि तहां अनेक बाह्यकारन चाहिए है तिनिका निमित्त मिलावै है। बहुरि इंद्रिय हैं ते विषयकौं सन्मुख भएं ग्रहैं तातैं अनेक बाह्य उपायकरि विषयनिका अर इंद्रियनिका संयोग मिलावै है नानाप्रकार वस्त्रादिकका वा भोजनादिकका वा पुष्पादिकका वा सुंदर आभूषणादिकका वा गायक वादित्रादिकका संयोग मिलावनेके अर्थि बहुत खेदखिन्न हो है। बहुरि इन इंद्रियनिके सन्मुख विषय रहै तावत् तिस-विषयका किंचित्स्पष्ट जानपना रहै। पीछैं मनद्वारै स्मरणमात्र रहता

जाय। कालव्यतीत होते स्मरण भी मंद होता जाय तातैं तिनि-विषयनिकौं अपने आधीन राखनेका उपाय करै। अर शीघ्र शीघ्र तिनिका ग्रहण किया करै बहुरि इंद्रियनिकै तौ एककालविषै एक विषयहीका ग्रहण होय अर यह बहुत बहुत ग्रहण किया चाहै, तातैं आखता[1] होय शीघ्र शीघ्र एक विषयकौं छोडि औरकौं ग्रहै। बहुरि वाकौं छोड़ि औरकौं ग्रहै। ऐसैं हापटा मारै है। बहुरि जो उपाय याकौं भासै है सो करै है सो यह उपाय झूटा है। जातैं प्रथम तो इनि सबनिका ऐसैं ही होना अपनै आधीन नाहीं महाकठिन है। बहुरि कदाचित् उदयअनुसारि ऐसैं ही विधि मिलै तौ इंद्रियनिकौं प्रबल किए किछू विषयग्रहणकी शक्ति बधै नाहीं। यह शक्ति तौ ज्ञानदर्शन बधे[2] बधै[3]। सो यह कर्मका क्षयोपशमकै आधीन है। किसीका शरीर पुष्ट है ताकैं ऐसी शक्ति घाटि देखिए है। काहूकैं शरीर दुर्बल है ताकैं अधिक देखिए है। तातैं भोजनादिककरि इंद्रिय पुष्ट किए किछू सिद्धि है नाहीं। कषायादि घटनेंतैं कर्मका क्षयोपशम भए ज्ञानदर्शन बधै तब विषयग्रहणकी शक्ति बधै है। बहुरि विषयनिका संयोग मिलावै सो बहुतकाल-ताईं रहता नाहीं अथवा सर्व विषयनिका संयोगमिलताही नाहीं। तातैं यह आकुलता रहिबो ही करै। बहुरि तिनिविषयनिकौं अपने आधीन राखि शीघ्र शीघ्र ग्रहण करै सो वे आधीन रहते नाहीं। वे तौ जुदे द्रव्य अपने आधीन परिणमै हैं, वा कर्मोदयकै आधीन हैं। सो ऐसा कर्मका बंध यथायोग्य शुभभाव भए होय।

---

[1] उतावला. [2] वढ़नेपर. [3] बढ़ै

फिर पीछै उदय आवे सो प्रत्यक्ष देखिए है। अनेक उपाय करतैं भी कर्मका निमित्त विना सामग्री मिलै नाहीं। बहुरि ऐक विषयकौं छोड़ि अन्यका ग्रहणकौं ऐसैं हापटा मारै है। सो कहा सिद्ध हो है। जैसैं मणकी भूखवालेकौं कण मिल्या तौ भूख कहा मिटै, तैसैं सर्वका ग्रहणकी जाकै इच्छा ताकै एक विषयका ग्रहण भए इच्छा कैसै मिटै इच्छा मिटे विना सुख होता नाहीं। तातैं यह उपाय झूंठा है। कोऊ पूछै कि इस उपायतैं केई जीव सुखी होते देखिए है सर्वथा झूंठ कैसैं कहो हो ताका समाधान,—

सुखीतौ न हो है भ्रमतैं सुख मानै है। जो सुखी भया तो अन्य विषयनिकी इच्छा कैसैं रहैगी। जैसैं रोग मिटे अन्य औषध काहेकौं चाहै तैसैं दुःखमिटे अन्य विषयकौं काहेकौं चाहै। तातैं विषयका ग्रहणकरि इच्छा थँभि जाय तौं हम सुख मानै, सो तौ यावत जो विषय ग्रहण न होय तावत् काल तौ तिसकी इच्छा रहै अर जिससमय ताका ग्रहण भया तिस ही समय अन्यविषय ग्रहणकी इच्छा होती देखिए है तौ यह सुख मानना कैसैं है जैसैं कोऊ महा क्षुधावान् रंक ताकौं एक अन्नका कण मिल्या ताका भक्षणकरि चैन मानैं तैसैं यह महातृष्णावान् याकौं एक विषयका निमित्त मिल्याताका ग्रहणकरि सुख मानै है। परमार्थतैं सुख है नाहीं। कोऊकहै जैसैं कणकणकरि अपनी भूख मेटै तैसैं एक एक विषयका ग्रहणकरि अपनी इच्छा पूरण करै तौ दोष कहा। ताका समाधान, —

जो कण भेले हों तौ ऐसैं ही मानै, परंतु जब दूसराकण मिलै

तब तिसकणका निर्गमन होय जाय तौ कैसैं भूख मिटै । तैसैं ही जाननेविषै विषयनिका ग्रहण भेलैं होता जाय तौ इच्छा पूरन होय जाय परंतु जब दूसरा विषय ग्रहण करै तब पूर्वविषय ग्रहण किया था ताका जानना रहै नाहीं, तौ कैसैं इच्छा पूरन होय ?इच्छा पूरन भये विना सुख कैसैं कह्या जाय। बहुरि एक विषयका ग्रहण भी मिथ्यादर्शनादिकका सद्भावपूर्वक करै है । तातैं आगामी अनेक दुखका कारन कर्म बंधै है। जातैं यह वर्त्तमानविषै सुख नाहीं आगामी सुखका कारन नाहीं तातैं दुःख ही है। सोई प्रवचनसार-विषै कह्या है,—

"सपरं बाधासहिदं वुच्छिणं बंधकारणं विसमं ।
जं इंदिएहिं लद्धं तं सोक्खं दुक्खमेव तहा (?) ॥१॥

जो इंद्रियनिकरि पाया सुख सो पराधीन है बाधासहित है विनाशीक है बंधका कारण है विषम है सो ऐसा सुख तैसा दुःख ही है। ऐसैं इस संसारीकरि किया उपाय झूठा जानना । तौ सांचा उपाय कहा ; जब इच्छा तौ दूरि होय अर सर्व विषयनिका युगपत् ग्रहण रह्या करै तब यह दुख मिटै । सो इच्छा तौ मोह गए मिटै और सबका युगपत्ग्रहण केवलज्ञान भए होइ । सो इनका उपाय सम्यग्दर्शनादिक है सोई सांचा उपाय जानना । ऐसैं तौ मोहके निमित्ततैं ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयोपशम भी दुःख-दायक है ताका वर्णन किया । इहां कोऊ कहै, ज्ञानावरण दर्शनावरणका उदयतैं जानना न भया ताकूं दुःखका कारण कहौ क्षयोपशमकौं काहेकौं कहौ । ताका समाधान,—

जो जानना न होना दुःखका कारन होय तौ पुद्गलकै भी दुःख ठहरै। तातैं दुःखका मूलकारण तो इच्छा है सो इच्छा क्षयोपशमहीतैं हो है, तातैं क्षयोपशमकौं दुःखका कारन कह्या है परमार्थतैं क्षयोपशम भी दुःखका कारन नाही। जो मोहतैं विषयग्रहणकी इच्छा है सोई दुःखका कारन जानना। बहुरि मोहका उदय है सो दुःखरूप ही है। कैसैं सो कहिए है,---

प्रथम तौ दर्शनमोहके उदयतैं मिथ्यादर्शन हो है ताकरि जैसैं याकै श्रद्धान है' तैसैं तौ पदार्थ है नाही जैसै पदार्थ है तैसैं यह मानै नाही तातैं याकै आकुलता ही रहै। जैसैं बाउलाकौं काहूनै वस्त्र पहराया। वह बाउला तिस वस्त्रकौं अपना अंग जानि आपकूं अर शरीरकौं एक मानै। वह वस्त्र पहरावनेवालेकै आधीन है, सो वह कबहू फारै, कबहू जोरै, कबहू खोसै, कबहू नवा पहरावै इत्यादि चरित्र करै। यह बाउला तिसकौं अपनैं आधीन मानैं वाकी पराधीन क्रिया होइ तातैं महाखेदखिन्न होय तैसैं इस जीवकौं कर्मोदयनैं शरीरसंबंध कराया। यह जीव तिस शरीरकौं अपना अंग जानि आपकौं अर शरीरकौं एक मानैं, सो शरीर कर्मके आधीन कबहू कृश होय कबहू स्थूल होय कबहू नष्ट होय कबहू नवीन निपजै इत्यादि चरित्र होय। यह जीव तिसकौं आपके आधीन जानै वाकी पराधीन क्रिया होय तातैं महाखेदखिन्न हो है। बहुरि जैसैं जहां बाउला तिष्टै था तहां मनुष्य घोटक धनादिक कहींतै आनि उतरैं यह बाउला तिनकौं अपने जानैं। वे तौ उनहीके आधीन कोऊ आवै कोऊ जावै कोऊ अनेक अवस्थारूप परिणमै। यह

बाउला तिनकौं अपने आधीन मानैं उनकी पराधीन क्रिया होइ तव खेदखिन्न होइ। तैसैं यह जीव जहां पर्याय धरै तहां स्वयमेव पुत्र घोटक धनादिक कहींतैं आनि प्राप्त भए, यह जीव तिनिकौं अपने जानैं सो वे तौ उनहीकै आधीन कोऊ आवै कोऊ जावै कोऊ अनेक अवस्थारूप परिणमैं। यह जीव तिनकौं अपने आधीन मानै उनकी पराधीन क्रिया होइ तब खेदखिन्न होय इहां कोऊ कहै काहूकालविषै शरीरकी वा पुत्रादिकी इस जीवकै आधीन भी तौ क्रिया होती देखिए है तव तो सुखी हो है।

ताका समाधान,—

शरीरादिककी भवितव्यकी अर जीवकी इच्छाकी विधि मिलै कोई एक प्रकार जैसैं यह चाहै तैसैं परिणमैं तातैं काहू कालविषै वाहीका विचार होतैं सुखकी सी आभासा होइ परंतु सर्व ही तौ सर्वप्रकार यह चाहै तैसैं न परिणमैं। तातैं अभिप्राय विषै तौ अनेक आकुलता सदाकाल रहवो ही करै। बहुरि कोई कालविषै कोई प्रकार इच्छअनुसारि परिणमता देखिकरि यह जीव शरीर पुत्रादिकविषै अहंकार ममकार करै है। सो इस वुद्धिकरि तिनिके उपजावनेकी वा वधावनेकी वा रक्षा करनेकी चिंताकरि निरंतर व्याकुल रहै है। नानाप्रकार कष्ट सहकरि भी तिनिका भला चाहै है। बहुरि जो विषयनिकी इच्छा हो है कषाय हो है वाह्य सामग्रीविषै इष्ट अनिष्टपनौं मानै है उपाय अन्यथा करै है सांचा उपायकौं न श्रद्धहै है अन्यथा कल्पना करै है सो इनि सबनिका मूलकारन एक मिथ्यादर्शन है। याका

नाश भए सवनिका नाश होइ जाय तातैं सब दुखनिका मूल यह मिथ्यादर्शन है। बहुरि इस मिथ्यादर्शनके नाशका उपाय भी नाहीं करै है। अन्यथा श्रद्धानकौं सत्यश्रद्धान मानै उपाय काहेकौं करै। बहुरि संज्ञी पंचेंद्रिय कदाचित् तत्त्वनिश्चय करनेका उपाय विचारै। तहां अभाग्यतैं कुदेव कुगुरु कुशास्त्रका निमित्त बनै तौ अतत्त्वश्रद्धान पुष्ट होइ जाय। यह तौ जानै इनतैं मेरा भला होगा, वे ऐसा उपाय करैं जाकरि यह अचेत होय जाय। वस्तु-स्वरूपका विचार करनेका उद्यमी भया सो विपरीत विचारविषै दृढ होइ जाय। तब विषयकषायकी वासना वधनैतैं अधिक दुःखी होय। बहुरि कदाचित् सुदेव सुगुरु सुशास्त्रका भी निमित्त बनि जाय तौ तहां तिनिका निश्चय उपदेशकौं तौ श्रद्धै नाहीं व्यवहारश्रद्धानकरि अतत्त्वश्रद्धानी ही रहै। तहां मंदकषाय वा विषय इच्छा घटै तौ थोरा दुखी होय पीछैं बहुरि जैसाका तैसा होइ जाय। तातैं यह संसारी उपाय करै सो भी झूठा ही होय। बहुरि इस संसारीकै एक यह उपाय है जो आपकै जैसा श्रद्धान है तैसैं पदार्थनिकौं परिणमाया चाहै सो वे परिणमै, तौ याका सांचा श्रद्धान होइ जाय। परंतु अनादिनिधन वस्तु जुदे जुदे अपनी मर्यादा लिये परिणमै हैं। कोऊ कोऊकै आधीन नाहीं। कोऊ किसीका परिणमाया परिणमै नाहीं। तिनिकौं परिणमाया चाहै सो उपाय नाहीं। यह तौ मिथ्यादर्शन ही है। तौ सांचा उपाय कहा है? जैसैं पदार्थनिका स्वरूप है तैसैं श्रद्धान होइ तौ सर्व दुःख दूरि होनेका उपाय है। तैसैं मिथ्यादृष्टी होइ पदार्थनिकौं

अन्यथा मानैं अन्यथा परिणमाया चाहै तौ आप ही दुखी हो है। बहुरि उनकौं यथार्थ मानना, अर ए परिणमाए अन्यथा परिणमैंगे नाहीं, ऐसा मानना सो ही तिस दुःखके दूरि होनेका उपाय है। भ्रमजनित दुःखका उपाय भ्रम दूरि करना ही है। सो भ्रम दूरि होनैतै सम्यक्श्रद्धान होय सो ही सत्य उपाय जानना। बहुरि चारित्रमोहके उदयतैं क्रोधादि कषायरूप वा हास्यादि नोकषायरूप जीवके भाव हो हैं। तब यह जीव क्लेशवान होइ दुखी होता संता विह्वल होइ नाना कुकार्यनिविषै प्रवर्त्तै है। सोइ दिखाइए है— जब याकै क्रोधकषाय उपजै, तब अन्यका बुरा करनेकी इच्छा होइ। बहुरि ताकेअर्थि अनेक उपाय विचारै। मरमच्छेद गालीप्रदानादिरूप वचन बोलै। अपने अंगनिकरि वा शस्त्रपाषाणादिकरि घात करै। अनेक कष्ट सहनेकरि वा धनादि खर्चनेकरि वा मरणादिकरि अपना भी बुरा करि अन्यका बुरा करनेका उद्यम करै अथवा औरनिकरि बुरा होता जानै तौ औरनिकरि बुरा करावै। वाका स्वयमेव बुरा होय तौ अनुमोदना करै। वाका बुरा भए अपना किछु भी प्रयोजन सिद्धि न होय तौ भी वाका बुरा करै। बहुरि क्रोध होतैं कोई पूज्य वा इष्ट भी वीचि आवै तौ उनकौं भी बुरा कहै। मारने लगि जाय, किछु विचार रहता नाहीं। बहुरि अन्यका बुरा न होय तौ अपने अंतरंगविषै आप ही बहुत संतापवान होइ वा अपने ही अंगनिका घात करै वा विषादिकरि मरि जाय ऐसी अवस्था क्रोध होतैं हो है। बहुरि जब याकै मानकषाय उपजै तब औरनिकौं नीचा वा आपकौं ऊंचा दिखावनेकी इच्छा होइ। बहुरि ताके

अर्थि अनेक उपाय विचारै अन्यकी निंदा करै आपकी प्रशंसा करै। वा अनेक प्रकारकरि औरनिका महिमा मिटावै आपकी महिमा करै। महाकष्टकरि धनादिकका संग्रह किया ताकौं विवाहादि कार्यनिविषै खरचै वा देना करि भी खरचैं। मूए पीछैं हमारा जस रहैगा ऐसा विचारि अपना मरन करिकैं भी अपनी महिमा बधावै। जो अपना सन्मानादि न करै ताकौं भयादिक दिखाय दुःख उपजाय अपना सन्मान करावै बहुरि मान होतैं कोई पूज्य बड़े होहीं तिनिका भी सन्मान न करै किछू विचार रहता नाहीं। बहुरि अन्य नीचा आप ऊंचा न दीसै. तौ अपने अंतरंगविषै आप बहुत संतापवान् होय वा अपने अंगनिका घात करै वा विषादिकरि मरि जाय ऐसी अवस्था मान होतैं हो है। बहुरि जब याकै मायाकषाय उपजै तब छलकरि कार्य सिद्ध करनेकी इच्छा होय। बहुरि ताके अर्थि अनेक उपाय विचारै, नानाप्रकार कपटके वचन कहै, कपटरूप शरीरकी अवस्था करै, बाह्य वस्तुनिकौं अन्यथा दिखावै, बहुरि जिनविषै अपना मरन जानै ऐसे भी छल करै बहुरि कपट प्रगट भए अपना बहुत बुरा होइ मरनादिक होइ तिनिकौं भी न गिनै। बहुरि माया होतैं कोई पूज्य वा इष्टका भी संबंध बनैं तौ उनस्यौं भी छल करै, किछू विचार रहता नाहीं। बहुरि छलकरि कार्यसिद्धि न होइ तौ आप बहुत संतापवान होय, अपने अंगनिका घात करै, वा विषादिकरि मरि जाय। ऐसी अवस्था माया होतैं हो है। बहुरि जब याकै लोभ कषाय उपजै तब इष्टपदार्थका लाभकी इच्छा होय

ताके अर्थि अनेक उपाय विचारै। ताके साधनरूप वचन बोले शरीरकी अनेक चेष्टा करै। बहुत कष्ट सहै। सेवा करै विदेशगमन करै जाकरि मरन होता जानै सो भी कार्य करै। घना दुःख जिन विषै उपजै ऐसा प्रारंभ करै। बहुरि लोभ होतैं पूज्य वा इष्टका भी कार्य होय तहां भी अपना प्रयोजन साधै किछू विचार रहता नाहीं। बहुरि तिस इष्टवस्तुकी प्राप्ति भई है ताकी अनेकप्रकार रक्षा करै है। बहुरि इष्ट वस्तुकी प्राप्ति न होइ वा इष्टका वियोग होइ तौ आप बहुत संतापवान होइ अपने अंगनिका घात करै वा विषादिकरि मरि जाय। ऐसी अवस्था लोभ होतैं हो है। ऐसैं विषायनिकरि पीड़ित हुवा इन अवस्थानिविषै प्रवर्त्तै है। बहुरि इनि कषायनिकी साथि नोकषाय हो हैं। जहां जब हास्य कषाय होइ तब आप विकसित होइ प्रफुल्लित होइ सो यह ऐसा जानना जैसा बायवालेका हंसना नाना रोगकरि आप पीड़ित है, कोई कल्पनाकरि हंसने लगि जाय है। ऐसैं हीं यह जीव अनेक पीड़ासहित है कोई झूठी कल्पनाकरि आपका सुहावताकार्य मानि हर्ष मानै है। परमार्थतैं दुखी ही है। सुखी तौ कषायरोग मिटैं होगा। बहुरि जब रति उपजै हैं, तब इष्ट वस्तुविषै अतिआसक्त हो है। जैसैं बिल्ली मूसाकौं पकरि आसक्त हो है। कोऊ मारै तौ भी न छोरै। सो इहां इष्टपना है। बहुरि वियोग होनेका अभिप्रायलिये आसक्तता हो है तातैं दुःख ही है। बहुरि जब अरति उपजै तब अनिष्ट वस्तुका संयोग पाय महा व्याकुल हो है। अनिष्टका संयोग भया सो आपकूं सुहावता नाहीं। सो यह

पीड़ा सही न जाय तातैं ताका बियोग करनेकौं तड़फड़ै है सो यह दुःख ही है। बहुरि जब शोक उपजै है तब इष्टका वियोग वा अनिष्टका संयोग होतैं अतिव्याकुल होइ संताप उपजावै रोवै पुकारै असावधान होइ जाय अपना अंगघात करै मरि जाय। किछू सिद्धि नांहीं तौ भी आप ही महादुःखी हो है। बहुरि जब भय उपजै है तब काहूको इष्टवियोग अनिष्टसंयोगका कारन जानि डरै अतिविह्वल होइ भागै वा छिपै वा सिथिल होइ जाइ कष्ट होनेके ठिकानै प्राप्त होइ वा मरि जाय सो यह दुःखरूप ही है। बहुरि जुगुप्सा उपजै है तब अनिष्ट वस्तुकौं घृणा करै। ताका तौ संयोग भया आप घृणाकरि भाग्या चाहै खेदखिन्न होइ महादुःखकौं पावै है। बहुरि तीनूं वेदनिकरि जब काम उपजै है तब पुरुषवेदकरि स्त्रीसहित रमनेकी अर स्त्रीवेदकरि पुरुषसहित रमनेकी अर नपुंसकवेदकरि दोऊनिस्यौं रमनेकी इच्छा हो है। तिसकरि अति व्याकुल हो है आताप उपजै है निर्लज्ज हो है धन खर्चै है। अपजसकौं न गिनै है। परंपरा दुःख होइ वा दंडादिक होइ ताकौं न गिनै है। काम पीड़ातै बाउला हो है। मरि जाय है। सो रसग्रंथनिविषै कामकी दश दशा कही है। तहां बाउला होना मरन होना लिख्या है। वैद्यकशास्त्रनिमैं ज्वरके भेदनिविषै कामज्वर मरनका कारन लिख्या है। प्रत्यक्ष कामकरि मरनपर्यंत होते देखिए है। कामांधकै किछू विचार रहता नाहीं। पिता, पुत्री वा मनुष्य तिर्यंचणी इत्यादितैं रमने लगि जायहै। ऐसी कामकी पीड़ा माहादुख स्वरूप है। या प्रकार कषाय वा नोकषा

यनिकरि अवस्था हो है । इहां ऐसा विचार आवै है जो इनि अवस्थानिविषै न प्रवर्त्तै तौ क्रोधादिक पीड़ैं अर इनि अवस्थानिविषै प्रवर्त्तै तौ मरनपर्यंत कष्ट होइ । तहां मरनपर्यंत कष्ट तौ कबूल करिए है, अर क्रोधादिककी पीड़ा सहनी कबूल न करिए है । तातैं यह निश्चय भया जो मरनादिकतैं भी कषायनिकी पीड़ा अधिक है । बहुरि जब याकै कषायका उदय होइ, तब कषाय किए बिना रह्या जाता नाहीं । बाह्य कषायनिके कारन आय मिलैं तौ उनकै आश्रय कषायकरै । न मिलैं तौ आप कारन बनावै । जैसैं व्यापारादि कषायनिका कारन न होइ तौ जूआ खेलना वा अन्य क्रोधादिकके कारन अनेक ख्याल खेलना वा दुष्टकथा कहनी सुननी इत्यादिक कारन बनावै है । बहुरि काम क्रोधादि पीड़ैं शरीरविषैं तिनिरूप कार्य करनेकी शक्ति न होइ तौ औषधि बनावै, अन्य अनेक उपाय करै । बहुरि कोइ कारन बनै नाहीं तौ अपने उपयोगविषै कषायनिकौ कारणभूत पदार्थनिका चिंतवनि—करि आप ही कषायरूप परिणमैं । ऐसैं यह जीव कषायभावनिकरि पीड़ित हुवा महान् दुःखी हो है । बहुरि जिस प्रयोजनकौ लियैं कषायभाव भया है तिस प्रयोजनकी सिद्धि होय तौ यह मेरा दुख दूरि होय अर मोकूं सुख होइ । ऐसैं विचारि तिस प्रयोजनकी सिद्धि होनेकै अर्थि अनेक उपाय करना सो तिस दुःख दूरि होनेका उपाय मानै है । सो इहां कषायभावनितैं जो दुःख हो है, सो तो सांचा ही है । प्रत्यक्ष आप ही दुखी हो है । बहुरि यह उपाय करै है सो झूंटा है । काहेतैं सो कहिए है—क्रोधविषै तौ

अन्यका बुरा करना, मानविषै औरनिकूं नीचा करि आप ऊंचा होना, मायाविषै छलकरि कार्यसिद्धि करना, लोभविषै इष्टका पावना, हास्यविषै विकसित होनेका कारन बन्या रहना, रतिविषै इष्टसंयोगका बन्या रहना, अरतिविषै अनिष्टका दूरि होना, शोकविषै शोकका कारन मिटना, भयविषै भयका मिटना, जुगुप्साविषै जुगुप्साका कारन दूरि होना, पुरुषवेदविषै स्त्रीस्यों रमना, स्त्रीवेदविषै पुरुषस्यों रमना, नपुंसकवेदविषै दोऊनिस्यों रमना, ऐसें प्रयोजन पाइए है। सो इनिकी सिद्धि होय तौ कषाय उपशमनेतैं दुःख दूरि होइ जाइ सुखी होइ परंतु इनिकी सिद्धि इनके किए उपायनिके आधीन नाहीं, भवितव्यके आधीन है। जातैं अनेक उपाय करते देखिये है अर सिद्धि न हो है। बहुरि उपाय बनना भी अपने आधीन नाहीं, भवितव्यके आधीन है। जातैं अनेक उपाय करना विचारै और एक भी उपाय न होता देखिए है। बहुरि काकतालीय न्यायकरि भवितव्य ऐसा ही होइ जैसा अपका प्रयोजन होइ तैसा ही उपाय होइ अर तातैं कार्यकी सिद्धि भी होइ जाइ, तौ तिस कार्यसंबंधी कोई कषायका उपशम होइ परंतु तहां थंभाव होता नाहीं। यावत् कार्यसिद्ध न भया तावत् तौ तिसकार्यसंबंधी कषाय था। जिस समय कार्यसिद्ध भया तिस ही समय अन्य कार्यसंबंधी कषाय होइ जाय। एक समयमात्र भी निराकुल रहै नाहीं। जैसें कोऊ क्रोधकरि काहूका बुरा विचारै था वाका बुरा होय चुक्या, तब अन्यस्यौं क्रोधकरि वाका बुरा चाहनै लग्या अथवा थोरी शक्ति थी तब छोटेनिका बुरा चाहै

था, घनी शक्ति भई तब बडेनिका बुरा चाहने लग्या। ऐसैं ही मानमायालोभादिककरि जो कार्य विचारै था सो सिद्ध होइ चुक्या तब अन्यविषै मानादिक उपजाय तिसकी सिद्धि किया चाहै। थोरी शक्ति थी तब छोटे कार्यकी सिद्धि किया चाहै था, घनी शक्ति भई तब बड़े कार्यकी सिद्धि करनेका अभिलाष भया। कषायनिविषै कार्यका प्रमाण होइ तौ तिसकार्यकी सिद्धि भए सुखी होइ जाय. सो प्रमाण है नाहीं। इच्छा बधती ही जाय। सोई आत्मानुशासनविषै कह्या है—

"आशागर्त्तः प्रतिप्राणि यस्मिन्विश्वमणूपमम्।
कस्मिन् किं कियदायाति वृथा वो विषयैषिता॥ १॥"

याका अर्थ— आशारूपी खाड़ा प्राणी प्राणी प्रति पाइए है। अनंतानंत जीव हैं तिनि सबनिकै ही आशा पाइए है। बहुरि वह आशारूपी खाड़ा कैसा है, जिस एक ही खाड़ेविषै समस्तलोक अणुसमान है। अर लोक एक ही, सो अब इहां कौन कौनकै कहा कितना [1]वटवारै आवै। तुम्हारै यह विषयनिकी इच्छा है सो वृथा ही है। इच्छा पूर्ण तौ होती ही नाहीं। तातैं कोई कार्य-सिद्धि भए भी दुःख दूरि न होय अथवा कोई कषाय मिटै तिस ही समय अन्य कषाय होइ जाय। जैसैं काहूकौं मारनेवाले बहुत होय जब कोई वाकूं न मारै तब अन्य मारने लगि जाय। तैसैं जीवकौं दुःख द्यावनेवाले अनेक कषाय हैं। जब क्रोध न होय, तब मानादिक होइ जाय। जब मान न होइ, तब क्रोधादिक होइ

1 बांटमें—हिस्सेमें।

जांय । ऐसैं कषाय सद्भाव रह्या ही करै । कोइ एक समय भी कषायरहित होय नाहीं । तातैं कोई कषायका कोई कार्य सिद्ध भए भी दुःख दूर कैसैं होइ । बहुरि याकै अभिप्राय तौ सर्वकषायनिका सर्व प्रयोजन सिद्ध करनेका है । सो होइ तौ सुखी होइ । सो तो कदाचित् होइ सकै नाहीं । तातैं अभिप्रायविषै शास्वता दुःखी ही रहै है । तातैं कषायनिका प्रयोजनकौं साधि दुःख दूरि करि सुखी भया चाहै है, सो यह उपाय झूंठा ही है । तौ सांचा उपाय कहा है ? सम्यग्दर्शनज्ञानतैं यथावत् श्रद्धान वा जानना होइ, तब इष्ट अनिष्टबुद्धि मिटै । बहुरि तिनहीके बलकरि चारित्रमोहका अनुभाग हीन होइ ऐसैं होते कषायनिका अभाव होइ, तब तिनिकी पीड़ा दूरि होय तब प्रयोजन भी किछू रहै नाहीं निराकुल होनेतैं महासुखी होइ । तातैं सम्यग्दर्शनादिक ही इस दुःख मेटनेका सांचा उपाय है । बहुरि अंतरायका उदयतैं जीवकै मोहकरि दान लाभ भोग उपभोग वीर्य शक्तिका उत्साह उपजै परंतु होइ सकै नाहीं । तब परम आकुलता होइ सो यह दुःखरूप है ही । याका उपाय यह करै है, जो विघ्नके बाह्य कारन सूझै तिनिके दूरि करनेका उद्यम करै सो यह झूंठा उपाय है । उपाय किये भी अंतरायका उदय होतैं विघन होता देखिए है । अंतरायका क्षयोपशम भए, विना उपाय भी विघन न हो है । तातैं विघनका मूलकारन अंतराय है । बहुरि जैसैं कूकराकै पुरुषकरि बाही हुई लाठीकी लागी । वह कूकरा लाठीस्यौं वृथा ही द्वेष करै है । तैसैं जीवकै अंतरायकरि निमित्तभूत क्रिया बाह्य चेतन

अचेतन द्रव्यकरि विघन भया। यह जीव तिनि बाह्य द्रव्यनिस्यौं वृथा खेद करै है। अन्य द्रव्य याकै विघन किया चाहै अर याकै न होइ। बहुरि अन्य द्रव्य विघन किया न चाहै अर याकै होइ। तातैं जानिए है अन्यद्रव्यका किछू वश नाहीं, तिनिस्यौं काहेको लरियें। तातैं यह उपाय झूठा है। तौ सांचा उपाय कहा है? मिथ्यादर्शनादिकतैं इच्छाकरि उत्साह उपजै था सो सम्यग्दर्शनादिककरि दूरि होय अर सम्यग्दर्शनादिकहीकरि अंतरायका अनुभाग घटै तब इच्छा तौ मिटि जाय शक्ति बधि जाय तब वह दुःख दूरि होइ निराकुलसुख उपजै। तातैं सम्यग्दर्शनादिक ही सांचा उपाय है। बहुरि वेदनीयके उदयतैं दुखसुखके कारकनिका संयोग हो है। तहां केई तौ शरीरविषै ही अवस्था हो है। केई शरीरकी अवस्थाकौं निमित्तभूत बाह्य संयोग हो है। केई बाह्य ही वस्तूनिका संयोग हो है। तहां असाताके उदयकरि शरीरविषै तौ क्षुधा तृषा उच्छ्वास पीड़ा रोग इत्यादि हो है। बहुरि शरीरकी अनिष्ट अवस्थाकौं निमित्तभूत बाह्य अतिशीत उष्ण पवन बंधनादिकका संयोग हो है॥ बहुरि बाह्य शत्रु कुपुत्रादिक वा कुवर्णादिक सहित स्कंधनिका संयोग हो है। सो मोहकरि इनिविषै अनिष्टबुद्धि हो है। जब इनिका उदय होय तब मोहका उदय ऐसा ही आवै जाकरि परिणामनिमैं महाव्याकुल होइ इनिको दूर किया चाहै। यावत् ए दूरि न होंय तावत् दुखी हो है सो इनिकौं होतैं तौ सर्व ही दुख मानै हैं। बहुरि साताके उदयकरि शरीरविषै आरोग्यवानपनौ बलवानपनौ इत्यादि हो है। बहुरि शरीरकी

इष्ट अवस्थाकौं निमित्तभूत बाह्य खानपानादिक वा सुहावना पवना-दिकका संयोग हो है। बहुरि बाह्य मित्र सुपुत्र स्त्री किंकर हस्ती घोटक धन धान्य मंदिर वस्त्रादिकका संयोग हो है सो मोहकरि इनिविषै इष्टबुद्धि हो है। जब इनिका उदय होय तब मोहका उदय ऐसा ही आवै जाकरि परिणामनिमैं चैन मानै। इनिकी रक्षा चाहै। यावत रहै तावत् सुख मानै। सो यह सुख मानना ऐसा है जैसैं कोऊ घनें रोगनिकरि बहुत पीड़ित होय रह्या था ताकै कोइ उपचारकरि कोइ एक रोगकी कितेक काल किछू उपशांतता भई तब वह पूर्व अवस्थाकी अपेक्षा आपकौं सुखी कहै, परमार्थतैं सुख है नाहीं। बहुरि याकौं असाताका उदय होतैं जो होय ताकरि तौ दुख भासै है। तातैं ताके दूरि करनेका उपाय करै है। अर साताका उदय होतैं जो होइ ताकरि सुख भासै है तातैं ताकौं होनेका उपाय करै है। सो यह उपाय झूठा है। प्रथम तौ याका उपाय याकै आधीन नाहीं वेदनीयकर्मका उदयकै आधीन है। असाताके मेटनैके अर्थि साताकी प्राप्तिके अर्थि तौ सर्वहीकै यत्न रहै परंतु काहूकै थोरा यत्न किए भी वा न किए भी सिद्ध होइ जाय, काहूके बहुत यत्न किए भी सिद्धि न होइ तातै जानिए है वाका उपाय याकै आधीन नाहीं। बहुरि कदाचित् उपाय भी करै अर तैसा ही उदय आवै तौ थोरै काल किंचित् काहूप्रकारकी असाताका कारन मिटै अर साताका कारण होइ तहां भी मोहके सद्भावतै तिनिकौं भोगनेकी इच्छाकरि आकुलित होइ। एक भोग्यवस्तुकौं भोगनेकी इच्छा होइ, वह

यावत् न मिले तावत् तौ वाकी इच्छाकरि आकुल होइ। अर वह मिल्या अर उसही समय अन्यकौं भोगनेकी इच्छा होइ जाय, तब ताकरि आकुल होइ। जैसैं काहूकौं स्वाद लेनेकी इच्छा भई थी वाका अस्वाद जिस समय भया तिस ही समय अन्य वस्तुका स्वाद लेनेकी वा स्पर्शनादि करनेकी इच्छा उपजै है। अथवा एक ही वस्तुकौं पहिले अन्य प्रकार भोगनेकी इच्छा होइ वह यावत् न मिलै तावत् वाकी आकुलता रहै। अर वह भोग भया अर उस ही समय अन्यप्रकार भोगनेकी इच्छा होइ। जैसैं स्त्रीको देख्या चाहै था जिस समय अवलोकन भया उस ही समय रमनेकी इच्छा हो है। बहुरि ऐसैं भोग भोगतैं भी तिनिके अन्य उपाय करनेकी आकुलता हो है तौ तिनिकौं छोरि अन्य उपाय करनेकौं लागै है। तहां अनेक प्रकार आकुलता हो है। देखो एक धनका उपाय करनेमैं व्यापारादिक करतैं बहुरि वाकी रक्षा करनेमैं सावधानी करतैं केती आकुलता हो है। बहुरि क्षुधा तृषा शीत उष्ण मल श्लेष्मादि असाताका उदय आया ही करै ताका निराकरणकरि सुख मानै सो काहेका सुख है। यह तौ रोगका प्रतीकार है। यावत् क्षुधादिक रहै तावत् तिनिका मिटावनेकी इच्छाकरि आकुलता होइ, वह मिटै तब कोई अन्य इच्छा उपजै ताकी आकुलता होइ। बहुरि क्षुधादिक होइ तब उनकी आकुलता होइ आवै। ऐसैं याकै उपाय करतैं कदाचित् असाता मिटि साता होइ तहां भी आकुलता रह्या ही करै तातैं दुःख ही रहै है। बहुरि ऐसैं भी रहना तौ होता नाहीं आपकौं उपाय करतैं करतैं ही कोई

असाताका उदय ऐसा आवे ताका किछू उपाय वनि सकै नाहीं। अर ताकी पीड़ा बहुत होय सही जाय नाहीं। तब ताकी आकुलताकरि विह्वल होइ जाइ तहां महादुखी होय। सो इस संसारमें साताका उदय तौ कोइ पुण्यका उदयकरि काहूकै कदाचित् ही पाइए है घणे जीवनिकै बहुत काल असाताहीका उदय रहै है। तातैं उपाय करै सो झूंटा है। अथवा बाह्य सामग्रीतैं सुख दुख मानिए है सो ही भ्रम है। सुख दुःख तौ साता असाताका उदय होतैं मोहका निमित्ततैं हो है। सो प्रत्यक्ष देखिये है। लक्षधनका धनीकै सहस्रधनका व्यय भया तब वह तौ दुखी हो है अर शत धनका धनीकै सहस्रधन भया तब वह सुख मानै है। बाह्य सामग्री तौ वाकै यातैं निन्याणवै गुणी है। अथवा लक्षधनका धनीकै अधिक धनकी इच्छा है तो वह दुखी है अर शत धनका धनीकै संतोष है तो वह सुखी है। बहुरि समान वस्तु मिले कोऊ सुख मानै है कोऊ दुख मानै है। जैसैं काहूकौं मोटा वस्त्रका मिलना दुखकारी होइ काहूकौं सुखकारी होइ। बहुरि शरीरविषै क्षुधा आदि पीडा वा बाह्य इष्टका वियोग अनिष्टका संयोग भए काहूकै बहुत दुख होइ काहूकै थोरा होइ काहूकै न होइ। तातैं सामग्रीकै आधीन सुख दुख नाहीं। साता असाताका उदय होतैं मोहपरिणामनके निमित्ततैं ही सुखदुख मानिए है। इहां प्रश्न—जो बाह्य सामग्रीकी तौ तुम कहौ हो, तैसैं हो है परंतु शरीरविषै तौ पीड़ा भए दुखी ही होइ अर पीड़ा न भए सुखी होइ सो यह तौ शरीरअवस्थादिकै आधीन सुख दुख भासै है। ताका समाधान,—

आत्माका तौ ज्ञान इन्द्रियाधीन है। अर इंद्रिय शरीरका अंग है। सो यामैं जो अवस्था वीतै ताका जाननेरूप ज्ञान परिणमैं ताकी साथि ही मोहभाव होइ। ताकरि शरीर अवस्थाकरि सुख-दुख विशेष जानिए है। बहुरि पुत्राधनादिकस्यौं अधिक मोह होइ तौ अपना शरीरका कष्ट सहै ताका थोरा दुख मानै उनकौं दुःख भए वा संयोग मिटैं बहुत दुःख मानै। अर मुनि हैं सो शरीरका पीड़ा होतैं भी किछू दुख मानते नाहीं। तातैं सुख दुख मानना तौ मोहहीकै आधीन है। मोहकै अर वेदनीयकै निमित्तनैमित्तिक संबंध है, तातैं साता असाताका उदयतैं सुख दुखका होना भासै है बहुरि मुख्यपनै केतीक सामग्री साताके उदयतैं हो है केतीक असाताका उदयतैं हो है तातैं सामग्रीनिकरि सुख दुख भासै है। परंतु निर्द्धार किंए मोहहीतैं सुख दुखका मानना हो है औरनिकरि सुख दुख होनेका नियम नाहीं। केवलीकै साता असाताका भी उदय है अर सुख दुखकौं कारण सामग्रीका भी संयोग है। परंतु मोहका अभावतैं किंचिन्मात्र भी सुख दुख होता नाहीं। तातैं सुख दुख मोहजनित ही मानना। तातैं तू सामग्रिके दूरकरनेका वा होनेका उपायकरि दुःख मेट्या चाहै सुखी भया चाहै सो यह उपाय झूंठा है, तौ सांचा उपाय कहा है? सम्यग्द-र्शनादिकतैं भ्रम दूरि होय तब सामग्रीतैं सुख दुख भासै नाहीं अपने परिणामहीतैं भासै बहुरि यथार्थ विचारका अभ्यासकरि अपने परिणाम जैसैं सामग्रीके निमित्ततैं सुखी दुखी न होइ तैसैं साधन करै। बहुरि सम्यग्दर्शनादि भावनाहीतैं मोह मंद होयजाय

तब ऐसी दशा होइ जाय जो अनेक कारण मिलौ आपकौं सुख--दुख होइ नाहीं। जब एक शांतदशारूप निराकुल होइ सांचा सुखकौं अनुभवे तब सर्व दुख मिटै सुखी होइ। यह सांचा उपाय है। बहुरि आयुकर्मके निमित्तनैं पर्यायका धारना सो जीवितव्य है पर्याय छूटना सो मरन है। बहुरि यह जीव मिथ्यादर्शनादिकतैं पर्यायहीकौं आपो अनुभवे है। तातैं जीवितव्य रहै अपना अस्तित्व मानै है। मरन भये अपना अभाव होना मानै है इसही कारणतैं सदाकाल याकै मरनका भय रहै है। तिस भयकरि सदा आकुलता रहै है। जिनिकौं मरनका कारन जानै तिनिस्यौं बहुत डरै। कदाचित् उनका संयोग बणै तौ महाविह्वल होइ जाय ऐसैं महा दुखी रहै है। ताका उपाय यह करै है जो मरनके कारननिकौं दूर राखै है वा उनस्यौं आप भागै है। बहुरि औषधादिकका साधन करै है गढ़ कोट आदिक बनावै है इत्यादि उपाय करै है। सो यह उपाय झूठा है जातैं आयु पूर्ण भए तौ अनेक उपाय करै है अनेक सहाई होंय तौ भी मरन होइ ही होइ। एक समयमात्र भी न जीवे। अर यावत् आयु पूर्ण न होइ तावत् अनेक कारन मिलौ सर्वथा मरन न होइ तातैं उपाय किए मरन मिटता नाहीं। बहुरि आयुकी स्थिति पूर्ण होइ ही होइ। तातैं मरन भी होइ ही होइ। याका उपाय करना झूठा ही है। तौ सांचा उपाय कहा है? सम्यग्दर्शनादिकतैं पर्यायविषै अहंबुद्धि छूटै अनादिनिधन आप चैतन्यद्रव्य है तिसविषै अहंबुद्धि आवै। पर्यायकौं स्वांग समान जानै तब मरनका भय रहै नाहीं। बहुरि सम्यग्दर्शनादिकहीतैं

सिद्धपद पावै तब मरनका अभाव ही होइ। तातैं सम्यग्दर्शनादिक ही सांचा उपाय है।

बहुरि नामकर्मके उदयतैं गति जाति शरीरादिक निपजै हैं तिनिविषै पुण्यके उदयतैं जे हो हैं ते तौ सुखके कारन हो हैं। पापके उदयतैं हो हैं ते दुखके कारण हो हैं। सो इहां सुख मानना भ्रम है। बहुरि यह दुखके कारन मिटावनेका सुखके कारन होनेका उपाय करै सो झूंठा है। सांचा उपाय सम्यग्दर्शनादिक हैं सो जैसैं वेदनीयका कथन करतैं निरूपण किया तैसैं ही इहां भी जानना। वेदनीय अर नामकै सुख दुखका कारनपनाकी समानतातैं निरूपणकी समानता जाननी। बहुरि गोत्र कर्मके उदयतैं नीच ऊंचकुलविषै उपजै है। तहां ऊंच कुलविषै उपजैं आपकौं ऊंचा मानै है अर नीच कुलविषै उपजैं आपकौं नीचा मानै है। सो कुल पलटनेका उपाय तौ याकूं भासै नाहीं। तातैं जैसा कुल पाया तैसा ही कुलविषै आपो मानै है। सो कुल अपेक्षा आपकौं ऊंचा नीचा मानना भ्रम है। ऊंचा कुलका कोइ निंद्य कार्य करै तौ वह नीचा होइ जाय। अर नीचा कुलविषै कोइ श्लाघ्य कार्य करै तौ वह ऊंचा होइ जाय। लोभादिकतैं नीच कुलवालेकी उच्चकुलवाला सेवा करने लगि जाय। बहुरि कुल कितेक काल रहै? पर्याय छूटैं कुलकी पलटनि होइ जाय। तातैं ऊंचा नीचा कुलकरि आपकूं ऊंचा नीचा मानैं। ऊंचाकुलवालाकौं नीचा होनेके भयका अर नीचाकुलवालाकौं पाएहुए नीचपनैका दुख ही है। तो याका सांचा उपाय कहा है?

सो कहिए है। सम्यग्दर्शनादिकतैं ऊंच नीच कुलविषै हर्ष विषाद न मानै। बहुरि तिनिहीतैं जाकी बहुरि पलटनि न होय ऐसा सर्वतैं ऊंचा सिद्ध पद पावै तब सर्व दुख मिटै सुखी होइ तातैं सम्यग्दर्शनही दुख मेटनैंका अर सुखकरनेका सांचा उपाय है। या प्रकार कर्मके उदयकी अपेक्षा मिथ्यादर्शनादिकके निमित्ततैं संसारविषै दुख ही दुख पाइए है ताका वर्नन किया। अब इस दुःखकौं पर्याय अपेक्षाकरि वर्नन करिए है—

इस संसारविषै बहुत काल तौ एकेन्द्रिय पर्यायहीविषै वीते है। तातैं अनादिहीतैं तौ नित्यनिगोदविषै रहना, बहुरि तहांतैं निकसना ऐसा जैसैं भारभूनतैं चणाका उछटि जाना सो तहांतैं निकसि अन्य पर्याय धरै तौ त्रसविषै तौ बहुत थोरे ही काल रहै। एकेंद्रीहीविषै बहुत काल व्यतीत करै है। तहां इतरनिगोदविषै बहुत रहना होइ। अर कितेक काल पृथिवी अप तेज वायु प्रत्येक वनस्पतीविषै रहना होय। नित्यनिगोदतैं निकसे पीछैं त्रसविषै तौ रहनेका उत्कृष्ट काल साधिक दोहजार सागर ही है। एकेन्द्रियविषै उत्कृष्ट रहनेका काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन मात्र है अर पुद्गलपरावर्तन काल ऐसा है जाके अनंतवाँ भागविषै भी अनंते सागर हो हैं। तातैं इस संसारीकै मुख्यपनैं एकेन्द्रिय पर्यायविषै ही काल व्यतीत हो हैं। तहां एकेन्द्रियकै ज्ञानदर्शनकी शक्ति तौ किंचिन्मात्र ही रहै है। एक स्पर्शन इंद्रियके निमित्ततैं भया मतिज्ञान अर ताके निमित्ततैं भया श्रुतज्ञान अर स्पर्शनइंद्रियजनित अचक्षुदर्शन जिनकर शीत उष्णादिकको

किंचित् जानै देखै है । ज्ञानावरण दर्शनावरणके तीव्र उदयकरि यातैं अधिक ज्ञानदर्शन न पाइए है । अर विषयनिकी इच्छा पाइए है तातैं महा दुःखी है । बहुरि दर्शनमोहके उदयतैं मिथ्या-दर्शन हो हैं तातैं पर्यायहीकौं आपो श्रद्दहै है । अन्यविचार करनेकी शक्ति ही नाहीं । बहुरि चारित्र मोहके उदयतैं तीव्र क्रोधादि कषायरूप परिणमै हैं जातैं उनकै केवली भगवानने कृष्ण नील कापोत ए तीन अशुभ लेश्या ही कही हैं । सो ए तीव्र कषाय होतैं ही हो हैं सो कषाय तौ बहुत अर शक्ति सर्वप्रकारकरि महा हीन तातैं बहुत दुःखी होय रहे हैं । किछू उपाय कर सकते नाहीं । इहां कोऊ कहै—ज्ञान तौ किंचित् मात्र ही रह्या है वै कहा कषाय करैं ? ताका समाधान—

जो ऐसा तौ नियम है नाहीं जेता ज्ञान होइ तेता ही कषाय होय । ज्ञान तौ क्षयोपशम जेता होय तेता हो है । सो जैसैं कोऊ आंधा बहरा पुरुषकै ज्ञान थोरा होतैं भी बहुत कषाय होते देखिए है तैसैं एकेन्द्रियकै ज्ञान थोरा होतै भी बहुत कषायका होना माना है । बहुरि बाह्य कषाय प्रगट तब हो है जब कषायकै अनुसार किछू उपाय करैं सो वै शक्तिहीन हैं तातैं उपाय करि सकते नाहीं तातैं उनकी कषाय प्रगट नाहीं हो है । जैसैं कोऊ पुरुष शक्तिहीन है ताकै कोई कारणतैं तीव्र कषाय होइ परंतु किछू करि सकै नाहीं । तातैं वाका कषाय बाह्य प्रगट नाहीं होय यूं ही अतिदुःखी होइ । तैसैं एकेन्द्रिय जीव शक्तिहीन हैं । तिनिकै कोई कारणतैं कषाय हो है परंतु किछू कर सकते

नाहीं तातैं उनका कषाय बाह्य प्रगट नाहीं हो है वै ही आप दुखी हो हैं। बहुरि ऐसा जानना जहां कषाय बहुत होय अर शक्तिहीन होय तहां घना दुख हो है बहुरि जैसें कषाय घटता जाय शक्ति वधती जाय तैसें दुःख घटता हो है। सो एकेंद्रियनिकै कषाय बहुत अर शक्ति हीन तातैं एकेंद्रिय जीव महा दुखी हैं। उनके दुख वै ही भोगवै हैं। अर केवली जानै हैं। जैसें सन्निपातीका ज्ञान घटि जाय अर बाह्य शक्तिके हीनपनैतैं अपना दुख प्रगट भी न करि सकै परंतु वह महादुखी है, तैसें एकेंद्रियका ज्ञान थोरा है अर बाह्य शक्तिहीनपनातैं अपना दुखकौं प्रगट भी न करि सकै है परंतु महदुखी है। बहुरि अंतरायके तीव्र उदयकरि चाह्या होता नाहीं। तातैं भी दुखी ही है। बहुरि अघातिकर्मनिविषै विशेषपनै पापप्रकृतिका उदय है तहां असातावेदनीयका उदय होतैं तिसके निमित्ततैं महादुखी हो है। पवनतैं टूटै है। बहुरि वनस्पती है सो शीत उष्णकरि सूकि जाय है, जल न मिलै सूकि जाय है, अगनिकरि बलै है ताकौं कोऊ छेदै है भेदै है मसलै है खाय है तोरै है इत्यादि अवस्था हो है। ऐसैं ही यथासंभव पृथ्वी आदिविषै अवस्था हो है। तिनि अवस्थाकौं होतैं वै महादुःखी हो हैं जैसैं मनुष्यकै शरीरविषै ऐसी अवस्था भए दुख हो है तैसैं ही उनकै हो है। जातैं इनिका जानपना स्पर्शन इंद्रियतैं होइ सो वाकै स्पर्शनइंद्रिय है ही, ताकरि उनकौं जानि मोहके वशतैं महाव्याकुल हो है। परंतु भागनेकी वा लरनैकी वा पुकारनैकी शक्ति नाहीं तातैं अज्ञानीलोक उनके दुखकौं जानते नाहीं। बहुरि

कदाचित् किंचित् साताका उदय होइ सो वह वलवान् होता नाहीं। बहुरि आयुकर्मतैं इनि एकेंद्रिय जीवनिविषै जे अपर्याप्त हैं, तिनिकै तौ पर्यायकी स्थिति उश्वासके अठारहवै भाग मात्र ही है। अर पर्याप्तनिकी अंतर्मुहूर्त आदि कितेकवर्ष पर्यंत है। सो आयु थोरा तातैं जन्ममरण हुवा ही करै ताकरि दुखी है। बहुरि नामकर्म विषै तिर्यंचगति आदि पापप्रकृतिनिका ही उदय विशेषपनै पाइए है। कोई ही पुण्यप्रकृतिका उदय होइ ताका वलवानपना नाहीं तातैं तिनिकरि भी मोहके वशतैं दुखी हो है। बहुरि गोत्रकर्म विषै नीच गोत्रहीका उदय है ताकरि महंतता होय नाहीं। तातैं भी दुखी ही है। ऐसैं एकेंद्रिय जीव महादुःखी है अर इस संसार विषै जैसैं पाषाण आधारविषै तौ बहुत काल रहै है निराधार आकाशविषै तौ कदाचित् किंचितमात्रकाल रहै है, तैसैं जीव एकेंद्रिय पर्यायविषै बहुतकाल रहै है अन्य पर्यायविषै तौ कदाचित् किंचिन्मात्र काल रहै है। तातैं यह जीव संसारविषै महादुखी है।

बहुरि वेंद्रिय तेन्द्रिय चौइन्द्रिय असंज्ञिपंचेंद्रिय पर्यायनिकौं जीव धरै तहां भी एकेंद्रियवत् दुख जानना। विशेष इतना—इहां क्रमतै एक एक इंद्रियजनित ज्ञानदर्शनकी वा किछू शक्तिकी अधिकता भई है. वहुरि बोलने चालनेकी शक्ती भई है। तहां भी जे अपर्याप्त हैं वा पर्याप्त भी हीनशक्तीके धारक हैं छोटे जीव हैं तिनिकी शक्ती प्रगट होती नाहीं। बहुरि केई पर्याप्त वहुत शक्तिके धारक बड़े जीव हैं, तिनिकी शक्ती प्रगट हो है। तातै ते जीव विषयनिका उपाय करै हैं दुख दूरि होनेका पाय करै हैं

क्रोधादिककरि काटना मारना लरना छलकरना अन्नादिक संग्रह करना भागना इत्यादि कार्य करै हैं। दुखकरि तड़फड़ाट करना पुकारना इत्यादि क्रिया करै हैं। तातैं तिनिका दुख किछू प्रगट भी हो है। सो लट कीड़ी आदि जीवनिकै शीत उष्ण छेदन भेदनादिकतैं वा भूख तृषा आदितैं परम दुख देखिए है। जो प्रत्यक्ष दीसै ताका विचार करि लैना इहां विशेष कहा लिखैं। ऐसैं बेइन्द्रियादिक जीव भी महादुखी ही जानने।

बहुरि संज्ञीपंचेंद्रियनिविषै नारकी जीव है ते तौ सर्व प्रकार घने दुखी हैं। ज्ञानादिक शक्ति किछू है परंतु विषयनिकी इच्छा बहुत अर इष्टविषयनिकी सामग्री किंचित् भी न मिलै तातै तिस शक्तिके होनैकरि भी घने दुखी हैं बहुरि क्रोधादि कषायका अति तीव्रपना पाइए है। जातैं उनकै कृष्णादि अशुभ लेश्या ही हैं। तहां क्रोधमानकरि परस्पर दुख देनेका निरंतर कार्य पाइए है। जो परस्पर मित्रता करैं तौ यह दुख मिटि जाय अर अन्यकौं दुख दिए किछू उनका कार्य भी होता नाहीं परंतु क्रोधमानका अति तीव्रपना पाइए है ताकरि परस्पर दुख देनैहीकी बुद्धि रहै है। विक्रियाकरि अन्यकौं दुखदायक शरीरके अंग बनावैं वा शस्त्रादि बनावैं तिनिकरि अन्यकौं आप पीड़ैं अर आपकौं कोई अन्य पीड़ै। कदाचित् कषाय उपशांत होय नाहीं। बहुरि माया लोभकी भी अति तीव्रता है परंतु कोई इष्टसामग्री तहां दीखै नाहीं। तातैं तिनि कषायनिका कार्य प्रगट करि सकते नाहीं। तिनिकरि अंतरंगविषै महादुखी हैं। बहुरि कदाचित् किंचित् कोई

प्रयोजन पाइ तिनिका भी कार्य हो है। बहुरि हास्य रति कषाय हैं परंतु बाह्यनिमित्त नाहीं तातैं प्रगट होते नाही कदाचित् किंचित् किंचित् किसी कारणतैं हो हैं। बहुरि अरति शोक भय जुगुप्सा इनिके बाह्य कारण बनि रहे हैं तातैं ए कषाय प्रगट तीव्र होइ हैं। बहुरि वेदनिविषै नपुंसक वेद है। सो इच्छा तौ बहुत और स्त्री पुरुषस्यौं रमनेका निमित्त नाही तातैं महापीड़ित हैं। ऐसैं कषायनिकरि अति दुखी हैं। बहुरि वेदनीयविषै असाताहीका उदय है ताकरि तहां अनेक वेदनाका निमित्त है। शरीरविषै कोढ कास स्वासादि अनेक रोग युगपत् पाइए है अर क्षुधा तृषा ऐसी है जो सर्वका भक्षण पान किया चाहै हैं। अर तहांकी माटीका भोजन मिलै है सो माटी भी ऐसी है जो इहां आवै तौ ताकी दुर्गंधतैं केई कोशनिके मनुष्य मरि जाएं। अर शीत उष्ण तहाँ ऐसा है जो लक्षयोजनका लोहका गोला होइ सो भी तिनिकरि भस्म होइ जाय। कहीं शीत है कहीं उष्ण है। बहुरि पृथिवी तहां शस्त्रनितैं भी महातीक्ष्ण कंटकनिकरि सहित है। बहुरि तिस पृथिवीविषै वन हैं सो शस्त्रकी धार समान पत्रादि सहित हैं। नदी है सो ताका स्पर्श भए शरीर खंड खंड होइ जाय ऐसे जल सहित है। पवन ऐसा प्रचंड है जाकरि शरीर दग्ध हुवा जाय है। बहुरि नारकी नारकीकौं अनेक प्रकार पीड़ैं घाणीमैं पेलैं खंड खंड करैं हांडीमैं रांधैं कोरडा मारैं तप्त लोहादिकका स्पर्श करावैं। इत्यादि वेदना उपजावैं। तीसरी पृथिवी पर्यंत असुरकुमार देव जाएं ते आप पीड़ा दें वा परस्पर लरावैं।

ऐसी वेदना होतैं शरीर छूटै नाहीं पारावत् खंड खंड होइ जाइ तौ भी मिलि जाय। ऐसी महा पीड़ा है। बहुरि साताका निमित्त तौ किछू है नाहीं। कोई अंश कदाचित् कोईकै अपनी मानितैं कोई कारण अपेक्षा साताका उदय है सो बलवान् नाहीं। बहुरि आयु तहां बहुत, जघन्य दशहजार वर्ष उत्कृष्ट तेतीस सागर। इतने काल ऐसे दुख तहां सहनै होय। बहुरि नामकर्मकी सर्वपापप्रकृतिनिहीका उदय है एक भी पुन्यप्रकृतिका उदय नाहीं तिनिकरि महादुखी हैं बहुरि गोत्रविषै नीच गोत्रहीका उदय है ताकरि महंतता न होइ तातैं दुखी ही हैं। ऐसैं नरकगतिविषै महादुख जाननै।

बहुरि तिर्यंचगतिविषै बहुत लब्धि अपर्याप्त जीव हैं तिनिका तौ उश्वासकै अठारवैं भाग मात्र आयु है। बहुरि केई पर्याप्त भी छोटे जीव हैं। सो इनिकी शक्ति प्रगट भासै नाहीं। तिनिकै दुख एकेंद्रियवत् जानना। ज्ञानादिकका विशेष है सो विशेष जानना। बहुरि बडे पर्याप्त जीव केई सम्मूर्छन हैं। केई गर्भज हैं। तिनिविषै ज्ञानादिक प्रगट हो है। सो विषयनिकी इच्छाकरि आकुलित हैं। बहुतकौं तौ इष्टविषयकी प्राप्ति नाहीं है काहूकौं कदाचित् किंचित् हो है। बहुरि मिथ्यात्व भावकरि अतत्त्व श्रद्धानी होय रहे हैं। बहुरि कषाय मुख्यपनै तीव्र ही पाइए है। क्रोध मानकरि परस्पर लरै हैं भक्षण करै हैं दुख दे हैं माया लोभकरि छल करै हैं वस्तुकौ चाहै हैं हास्यादिककरि तिनिकषायनिका कार्यनिविषै प्रवर्त्तैं हैं। बहुरि काहूकै कदाचित् मंदकषाय हो है परंतु थोरे जीवनिकै हो है तातैं मुख्यता नाहीं। बहुरि

वेदनीयविषै मुख्य असाताका उदय है ताकरि रोग पीड़ा क्षुधा तृषा छेदन भेदन बहुत भारवहन शीत उष्ण अंगभगादि अवस्था हो है ताकरि दुखी होते प्रत्यक्ष देखिए है। तातैं बहुत न कह्या है। काहूकै कदाचित् किंचित् साताका भी उदय हो है परंतु थोरे जीवनिकै हो है। मुख्यता नाहीं। बहुरि आयु अंतर्मुहूर्त आदि कोटिवर्ष पर्यंत है। तहां घने जीव स्तोक आयुके धारक हो हैं, तातैं जन्म मरनका दुःख पावै हैं। बहुरि भोगभूमियांकी बड़ी आयु है। अर उनकै साताका भी उदय है सो वै जीव थोरे हैं। बहुरि नामकर्मकी मुख्यपनै तौ तिर्यंचगति आदि पापप्रकृतिनिका ही उदय है। काहूकै कदाचित् केइ पुण्यप्रकृतिनिका भी उदय हो है परंतु थोरे जीवनिकै थोरा हो है मुख्यता नाहीं। बहुरि गोत्रविषै नीचगोत्रहीका उदय है तातै हीन होय रहे हैं। ऐसैं तिर्यंचगतिविषै महादुःख जाननै। बहुरि मनुष्यगतिविषै असंख्याते जीव तौ लब्धिअपर्याप्त हैं ते सम्मूर्छन ही हैं तिनिकी तौ आयु उश्वासके अठारवैं भागमात्र है। बहुरि कोई जीव गर्भमैं आय थोरै ही कालमैं मरन पावै हैं। तिनिकी तौ शक्ति प्रगट भासै नाहीं है। तिनिकै दुख एकेंद्रियवत् जनना। विशेष है सो विशेष जानना। बहुरि गर्भजनिकै कितक काल गर्भमैं रहना पीछैं बाह्य निकसना हो है। सो तिनिका दुखका वर्नन कर्मअपेक्षा पूर्वै वर्नन किया है तैसैं जानना वह सर्व वर्नन गर्भज मनुष्यनिकै संभवै है अथवा तिर्यंचनिका वर्णन किया है तैसैं जानना। विशेष यह है इहां कोई शक्तिविशेष पाइए

है वा राजादिकनिकै विशेष सात्ताका उदय है वा क्षत्रियादिकनिकैं उच्चगोत्रका भी उदय हो है। बहुरि धन कुटुंबादिकका निमित्त विशेष पाइए है इत्यादि विशेष जानना। अथवा गर्भ आदि अवस्थाके दुख प्रत्यक्ष भासैं हैं जैसैं विष्टाविषै लट उपजै तैसैं गर्भमें शुक्र शोणितका बिंदुकौं अपना शरीररूपकरि जीव उपजै। पीछैं तहां क्रमतैं ज्ञानादिककी वा शरीरकी वृद्धि होई। गर्भका दुख बहुत हैं संकोचरूप अधोमुखपना क्षुधातृषादिसहित तहां काल पूरण करै बहुरि बाह्य निकसै तब बाल्यअवस्थामें महादुख हो हैं कोउ कहै बाल्यअवस्थामें दुख थोरा है, सो नाहीं है शक्ति थोरी है तातैं व्यक्त न होय सकै है पीछे व्यापारादि वा विषयइच्छाआदि करि दुखनिकी प्रगटता हो है इष्ट अनिष्टजनित आकुलता रहयो ही करै पीछैं वृद्ध होइ तब शक्तिहीन होइ जाइ। तब परमदुखी हो है। सो ए दुख प्रत्यक्ष होते देखिए है। हम बहुत कहा कहैं। प्रत्यक्ष जाकौं न भासै सो कह्या कैसैं सुनै। काहूकै कदाचित् किंचित् साताका उदय हो है सो आकुलतामय है। अर तीर्थंकरादि पद मोक्षमार्ग पाए बिना होंय नाहीं। ऐसैं मनुष्य पर्यायविषै दुःख ही हैं। एक मनुष्य पर्यायविषै कोई आपना भला होनेका उपाय करै तौ होय सकै है। जैसैं कांणा[1] साठाकी जड़ वा बांडे[2] तौ चूसने योग्य ही नाहीं। अर बीचिकी पेली कांणी सो भी चूंसी जाय नाहीं कोई स्वादका

१ गन्ना। २ गन्नेके ऊपरका फीका भाग।

लोभी वाकूं विगारै तौ विगारै। अर जो वाकौं वोइ दे तौ वाके वहुत सांठे होंइ तिनिका स्वाद वहुत मीठा आवै। तैसै मनुष्य-पर्यायका वालवृद्धपना तौ सुख भोगने योग्य नाहीं। अर वीचिकी अवस्था सो रोग क्लेशादिकरि युक्त तहां सुख होइ सकै नाहीं। कोई विषयसुखका लोभी याकौं विगारै तौ विगारो। अर जो याकौं धर्मसाधनविषै लगावै तौ वहुत ऊंचे पदकौं पावै। तहां सुख वहुत निराकुल पाइए। तातैं इहां अपना हित साधना, सुख होनैका भ्रमकरि वृथा न खोवना। वहुरि देवपर्यायविषै ज्ञानादिककी शक्ति किछू औरनितैं विशेष है। मिथ्यात्वकरि अतत्त्वश्रद्धानी होय रहे हैं। वहुरि तिनिकै कषाय किछू मंद हैं। तहां भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्कनिकै कषाय बहुत मंद नाहीं अर उपयोग तिनिका चंचल बहुत अर किछू शक्ति भी है सो कषायनिके कार्यनिविषै प्रवर्त्तै है। कुतूहल विषयादि कार्यनिविषै लगि रहे हैं। सो तिस आकुलताकरि दुःखी ही हैं। वहुरि वैमानिकनिकै ऊपरिऊपरि विशेष मंदकषाय है अर शक्ति विशेष है तातैं आकुलता घटनैतैं दुःख भी घटता है। इहां देवनिकै क्रोधमान कषाय है परंतु कारन थोरा है। तातैं तिनिकै कार्यकी गौणता है। काहूका बुरा करना काहूका हीन करना इत्यादि कार्य निकृष्ट देवनिकै तौ कौतूहलादिकरि हो है। अर उत्कृष्ट देवनिकै थोरा हो है मुख्यता नाहीं। वहुरि माया लोभ कषायनिके कारण पाइए हैं। तातैं तिनिके कार्यकी मुख्यताहैं। तातैं छल करना विषय-सामग्रीकी चाहि करनी इत्यादि कार्य विशेष हो है। सो भी

ऊंचे ऊंचे देवनिकै घाटि है। बहुरि हास्य रति कषायके कारन घने पाइए है। तातैं इनिके कार्यनिकी मुख्यता है। बहुरि अरति शोक भय जुगुप्सा इनिके कारन थोरे हैं तातैं इनिके कार्यनिकी गौणता है। बहुरि स्त्रीवेद पुरुषवेदका उदय है अर रमनेका भी निमित्त है सो कामसेवन करैं हैं। ए भी कषाय ऊपरि ऊपरि मंद हैं। अहमिंद्रनिकै वेदनिकी मंदताकरि कामसेवनका अभाव है। ऐसैं देवनिकै कषायभाव हैं सो कषायहीतैं दुःख है। अर इनिकै कषाय जेता थोरा है तितना दुख भी थोरा है तातैं औरनिकी अपेक्षा इनिकौं सुखी कहिए है। परमार्थतैं कषाय भाव जीवै है ताकरि दुखी ही हैं। बहुरि वेदनीयविषै साताका उदय बहुत है। तहां भवनत्रिककै थोरा है वैमानिकनिकै ऊपरि ऊपरि विशेष है। इष्ट शरीरकी अवस्था स्त्रीमंदिरादि सामग्रीका संयोग पाइए है। बहुरि कदाचित् किंचित् असाताका भी उदय कोई कारणकरि हो है। तहां निकृष्टदेवनिकै किछू प्रगट भी है। अर उत्कृष्ट देवनिकै विशेष प्रगट नाहीं है। बहुरि आयु बड़ी हैं जघन्य दशहजारवर्ष उत्कृष्ट तेतीस सागर है यातैं अधिक आयुका धारी मोक्षमार्ग पाए बिना होता नाहीं। सो इतना काल विषयसुखमैं मगन रहै हैं। बहुरि नामकर्मकी देवगति आदि सर्व पुण्यप्रकृतिनिहीका उदय है। तातैं सुखका कारन है। अर गोत्र-विषै उच्चगोत्रहीका उदय है तातैं महंतपदकौं प्राप्त हैं। ऐसैं इनिकै पुण्यउदयकी विशेषताकरि इष्ट सामग्री मिली है। अर

---

१ कम है।

कषायनिकरि इच्छा पाइए है। तातैं तिनिके भोगवनेविषै आसक्त होइ रहे हैं। परंतु इच्छा अधिक ही रहै है तातैं सुखी होते नाहीं। ऊंचे देवनिकै उत्कृष्ट पुण्यका उदय है कषाय बहुत मंद है तथापि तिनिकै भी इच्छाका अभाव होता नाहीं तातैं परमार्थतैं दुखी ही हैं। ऐसैं सर्वत्र संसारविषै दुख ही दुख पाइए है। ऐसैं पर्यायअपेक्षा दुख वर्नन किया, अब इस सर्व दुखका सामान्य-स्वरूप कहिए है-दुखका लक्षण आकुलता है सो आकुलता इच्छा होतैं हो है। सोई संसारीकै इच्छा अनेक प्रकार पाइए है। एक तौ इच्छा विषयग्रहणकी है सो देख्या जान्या चाहै। जैसैं वर्ण देखनेकी राग सुननेकी अव्यक्तकौं जानने इत्यादिकी इच्छा हो है सो तहां अन्य किछू पीड़ा नाहीं। परंतु यावत् देखै जानै नाहीं तावत् महाव्याकुल होइ। इस इच्छाका नाम विषय है। बहुरि एक इच्छा कषायभावनिकै अनुसारि कार्य करनेकी है सो कार्य किया चाहै। जैसैं बुरा करनेकी हीन करनेकी इत्यादि इच्छा हो है। सो इहां भी अन्य कोई पीड़ा नाहीं। परंतु यावत् वह कार्य न होइ तावत् महा व्याकुल होय। इस इच्छाका नाम कषाय है। बहुरि एक इच्छा पापके उदयतैं शरीरविषै वा बाह्य अनिष्ट कारण मिलैं तब उनके दूरि करनेकी हो है। जैसैं रोग पीड़ा क्षुधा आदिका संयोग भए उनके दूर करनेकी इच्छा हो है सो इहां यह ही पीड़ा मानै है। यावत् वह दूरि न होइ तावत् महाव्याकुलता रहै। इस इच्छाका नाम पापका उदय है। ऐसैं इनि तीनप्रकारकी इच्छा होतैं सर्व ही दुख मानै हैं सो दुख ही है। बहुरि एक

इच्छा बाह्य निमित्ततैं बनै हैं सो इनि तीनप्रकार इच्छानिके अनुसारि प्रवर्त्तनेकी इच्छा हो है। सो तीनि प्रकार इच्छानिविषै एक एक प्रकारकी इच्छा अनेक प्रकार है। तहां केई प्रकारकी इच्छा पूरन करनेका कारन पुण्यउदयतैं मिलै। तिनिका साधन युगपत् होइ सकै नाहीं। तातैं एककौं छोड़ि अन्यकौं लागै आगै भी वाकौं छोड़ि अन्यकौं लागै। जैसैं काहूकै अनेक सामग्री मिली है। वह काहूकौं देखै है वाकौं छोड़ि राग सुनै है वाकौं छोड़ि काहूका बुरा करने लगि जाय वाकौं छोड़ि भोजन करै है अथवा देखनेविषै ही एककौं देखि अन्यकौं देखै है। ऐसैं ही अनेक कार्यनिकी प्रवृत्तिविषै इच्छा हो है सो इस इच्छाका नाम पुण्यका उदय है। याकौं जगत सुख मानै है सो सुख है नाहीं दुख ही है। काहेतैं—प्रथम तौ सर्वप्रकार इच्छा पूरन होनेके कारन काहूकै भी न बनैं अर केई प्रकार इच्छा पूरन करनेके कारन बनें तौ युगपत् तिनिका साधन न होइ। सो एकका साधन जावत् न होइ तावत् वाकी आकुलता रहै वाका साधन भए उसही समय अन्यका साधनकी इच्छ हो है तब वाकी आकुलता हो है। एक समय भी निराकुल न रहै तातैं दुखी ही है। अथवा तीनप्रकारके इच्छारोग मिटावनेका किंचित् उपाय करै है तातैं किंचित् दुख घाटि हो है सर्व दुखका तौ नाश न होइ तातैं दुख ही है। ऐसैं संसरी जीवनिकै सर्व प्रकार दुख ही है। बहुरि इहां इतना जानना,—तीनप्रकार इच्छानिकरि सर्व जगत पीडित है अर चौथी इच्छा है सो पुण्यका उदय आए होइ

सो पुण्यका बंध धर्मानुरागतैं होई अर धर्मानुरागविषै जीव थोरा लागै। जीव तौ बहुत पापक्रियानिविषै ही प्रवर्त्तै है। तातैं चौथी इच्छा कोई जीवकै कदाचित् कालविषै हो है। बहुरि इतना जानना,—जो समान इच्छावान् जीवनिकी अपेक्षा तौ चौथी इच्छावालाकै किछू तीनप्रकार इच्छाके घटनैंतैं सुख कहिए है। बहुरि चौथी इच्छावालाकी अपेक्षा महान् इच्छावाला चौथी इच्छा होतैं भी दुखी ही है। काहूकै बहुत बिभूति है अर वाकै इच्छा बहुत है तौ वह बहुत आकुलतावान है। अर वाकै थोरी विभूति है अर वाकै इच्छा थोरी है तौ वह थोरा आकुलतावान् हैं। अथवा कोऊकै अनिष्ट सामग्री मिली है वाकैं उसके दूर करनेकी इच्छा थोरी है तौ वह थोरा आकुलतावान् है। बहुरि काहूकै इष्ट सामग्री मिली है परंतु ताकै उनके भोगवनेकी वा अन्य सामग्रीकी इच्छा बहुत है तौ वह जीव घना आकुलतावान् है। तातैं सुखी दुखी होना इच्छाके अनुसार जानना बाह्य कारनकै आधीन नाहीं है। नारकी दुखी अर देव सुखी कहिए है सो भी इच्छाहीकी अपेक्षा कहिए है। जातैं नारकीनिकै तीव्रकषायतैं इच्छा बहुत है। देवनिकै मंद कषायतैं इच्छा थोरी है। बहुरि मनुष्य तिर्यंच भी सुखी दुखी इच्छाहीकी अपेक्षा जानना। तीव्रकषायतैं जाकै इच्छा बहुत ताकौं दुखी कहिए है। मंदकषायतैं जाकै इच्छा थोरी ताकौं सुखी कहिए है। परमार्थतैं दुख ही घना वा थोरा सुख नाहीं है। देवादिककौं भी सुखी मानै हैं सो भ्रम ही है। उनकै चौथी इच्छाकी मुख्यता है तातैं आकुलित हैं। या

प्रकार जो इच्छा है सो मिथ्यात्व अज्ञान असंमयतैं हो है। वहुरि इच्छा है सो आकुलतामय है अर आकुलता है सो दुख है। ऐसैं सर्व संसारी जीव नानाप्रकारके दुखनिकरि पीड़ित ही होइ रहे हैं। अव जिन जीवनिकौं दुखनितैं छूटना होय सो इच्छा दूरि करनेका उपाय करो। वहुरि इच्छा दूरि तव ही होइ जव मिथ्यात्व अज्ञान असंजमका अभाव होइ अर सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी प्राप्ति होय। तातैं इस ही कार्यका उद्यम करना योग्य है। ऐसा साधन करते जेती जेती इच्छा मिटै तेता ही दुख दूरि होता जाय। वहुरि जव मोहके सर्वथा अभावतैं सर्वथा इच्छाका अभाव होइ तव सर्व दुख मिटै सांचा सुख प्रगटै। वहुरि ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायका अभाव होइ तव इच्छाका कारण क्षयोपशम ज्ञान दर्शनका वा शक्तिहीनपनाका भी अभाव होइ अनंतज्ञानदर्शनवीर्यकी प्राप्ति होइ। वहुरि केतेक काल पीछैं अघाति कर्मनिका भी अभाव होइ तव इच्छाके वाह्य कारन तिनिका भी अभाव होइ। सो मोह गए पीछैं एकै काल किछू इच्छा उपजावनेकौं समर्थ थे नाहीं मोह होतैं कारण थे तातैं कारन कहे हैं सो इनिका भी अभाव भया। तव सिद्धपदकौं प्राप्त हो हैं। तहां दुखका वा दुखके कारननिका सर्वथा अभाव होनैतैं सदाकाल अनौपम्य अखंडित सर्वोत्कृष्ट आनंदसहित अनंतकाल विराजमान रहै हैं। सोई दिखाइए है—ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षयोपशम होतैं वा उदय होतैं मोहकरि एक एक विषय देखने जाननेकी इच्छाकरि महाव्याकुल होता था सो अव मोहका अभावतैं इच्छाका भी अभाव भया। तातैं

दुखका अभाव भया है। बहुरि ज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षय होनैंतै सर्व इंद्रियनिकौं सर्वविषयनिका युगपत् ग्रहण भया तातैं दुखका कारन भी दूरि भया है सोई दिखाइए है–जैसैं नेत्रकरि एक विषयकौं देख्या चाहै था अब त्रिकालवर्त्ती त्रिलोकके सर्व वर्णनिकौं युगपत् देखै है। कोऊ विना देख्या रह्या नाहीं जाके देखनेकी इच्छा उपजै। ऐसैं ही स्पर्शनादिककरि एक एक विषयकौं ग्रह्या चाहै था अब त्रिकालवर्ती त्रिलोकके सर्व स्पर्श रस गंध शब्दनिकौं युगपत् ग्रहै है कोऊ विना ग्रह्या रह्या नाहीं जाके ग्रहणकी इच्छा उपजै। इहां कोऊ कहै शरीरादिक विनाग्रहण कैसैं होइ? ताका समाधान—

इंद्रियज्ञान होतैं तौ द्रव्यइंद्रियादिविना ग्रहण न होता था। अब ऐसा स्वभाव प्रगट भया जो विना ही इंद्रिय ग्रहण हो है। इहां कोऊ कहै जैसैं मनकरि स्पर्शादिककौं जानिए है तैसैं जानना होता होगा त्वचा जीभ आदिकरि ग्रहण हो है तैसैं न होता होगा। सो ऐसैं नाहीं है। मनकरि तौ स्मरणादि होतैं अस्पष्ट जानना किछू हो है। इहां तौ स्पर्शरसादिककौं जैसैं त्वचा जीभ इत्यादिकरि स्पर्शै स्वादै सूंघै देखै सुनै जैसा स्पष्ट जानना हो है तिसतैं भी अनंत गुणा स्पष्ट जानना तिनिकै हो है। विशेष इतना भया है-वहां इंद्रियविषयका संयोग होतैं ही जानना होता था इहां दूर रहे भी वैसा ही जानना हो है। सो यह शक्तिकी महिमा है। बहुरि मनकरि किछू अतीत अनागतकौं अव्यक्तकौं जान्या चाहै था अब सर्व ही अनादितैं अनंतकालपर्यंत जे सर्व

पदार्थनिके द्रव्यक्षेत्र काल भाव तिनिकौं युगपत् जानै है कोऊ विना जान्या रह्या नाहीं जाके जाननेकी इच्छा उपजै। ऐसैं इन दुख और दुखनिके कारण तिनिका अभाव जानना। बहुरि मोहके उदयतैं मिथ्यात्व वा कषायभाव होने थे तिनिका सर्वथा अभाव भया तातैं दुखका अभाव भया। बहुरि इनिके कारणनिका अभाव भया तातैं दुखके कारणका भी अभाव भया। सो कारणका अभाव दिखाइए है—

सर्व तत्त्व यथार्थ प्रतिभासैं अतत्त्वश्रद्धानरूप मिथ्यात्व कैसैं होइ। कोऊ अनिष्ट रह्या नाहीं निंदक स्वयमेव अनिष्ट पावै ही है आप क्रोध कौनसौं करै? सिद्धनितैं ऊंचा कोई है नाहीं। इंद्रादिक आपहीतैं नमै हैं इष्ट पावैं हैं कौनस्यों मान करै? सर्व भवितव्य भास गया कार्य रह्या नाहीं काहूस्यों प्रयोजन रह्या नाहीं काहेका लोभ करै? कोऊ अन्य इष्ट रह्या नाहीं। कौन कारनतैं हास्य होइ? कोऊ अन्य इष्ट प्रीतिकरने योग्य है नाहीं। इहां कहा रति करै? कोऊ दुखदायक संयोग रह्या नाहीं, कहां अरति करै? कोऊ इष्टअनिष्ट संयोगवियोग होता नाहीं, काहेकौं शोक करै? कोऊ अनिष्ट करनेवाला कारन रह्या नाहीं, कौनका भय करै? सर्व वस्तु अपने स्वभाव लिए भासै आपकौं अनिष्ट नाहीं कहां जुगुप्सा करै? कामपीड़ा दूर होनैतैं स्त्रीपुरुष उभयस्यौं रमनेका किछू प्रयोजन रह्या नाहीं, काहेकौं पुरुष स्त्री नपुंसकवेद रूप भाव होइ? ऐसैं मोह उपजनैका कारणनिका अभाव जानना। बहुरि अंतरायके उदयतैं शक्ति हीनपनाकरि पूरन

न होती थी। अब ताका अभाव भया तातैं दुखका अभाव भया। बहुरि अनंत शक्ति प्रगट भई तातैं दुःखके कारणका भी अभाव भया। इहां कोऊ कहै, दान लाभ भोग उपभोग करते नाहीं इनकी शक्ति कैसै प्रगट भई। ताका समाधान,—

ए कार्य रोगके उपचार थे। जब रोग ही नाहीं तब उपचार काहेकौं करै। तातैं इनकार्यनिका सद्भाव तौ नाहीं। अर इनिका रोकनहारे कर्मका अभाव भया तातैं शक्ति प्रगटी कहिए है। जैसैं कोऊ नाहीं गमन किया चाहै ताकौं काहूनै रोक्या था तब दुखी था। जब वाकै रोकना दूरि भया अर जिह कार्यकै अर्थि गया चाहे था सो कार्य न रह्या तब गमन भी न किया। तब वाकै गमन न करतै भी शक्ति प्रगटी कहिए। तैसैं ही इहां जानना। बहुरि ज्ञानादिका शक्तिरूप अनंतवीर्य प्रगट उनकै पाइए है। बहुरि अघाति कर्मनिविषै मोहतैं पापप्रकृतिनिका उदय होतैं दुख मानै था। पुण्यप्रकृतिका उदयकौं सुख मानै था। परमार्थतैं आकुलताकरि सर्व दुख ही था। अब मोहके नाशतैं सर्व आकुलता दूरि होनेतै सर्व दुःखका नाश भया। बहुरि जिन कारननिकरि दुख मानै था ते तौ कारन सर्व नष्ट भये। अर जिनिकरि किंचित् दुख दूरि होनेतैं सुख मानै था सो अब मूलहीमैं दुख रह्या नाहीं। तातैं तिनि दुखके उपचारनिका किछू प्रयोजन रह्या नाहीं जो तिनिकरि कार्यकी सिद्धि किया चाहे। ताकी स्वयमेव ही सिद्धि होइ रही है। इसहीका विशेष दिखाइए है—वेदनीयविषै असाताके उदयतैं दुखके कारन शरीरविषै रोग क्षुधादिक होते थे।

अब शरीर ही नाहीं तब कहां होय। अर शरीरकी अनिष्ट अवस्थाकौं कारन आतापादिक थे सो अब शरीर विना कौनकौं कारन होय? अर बाह्य अनिष्ट निमित्त बनै था सो अब इनिकै अनिष्ट रह्या नाहीं। ऐसैं दुखका कारनका तौ अभाव भया। बहुरि साताके उदयतैं किंचित दुख मेटनेके कारन औषधि भोजनादिक थे तिनिका प्रयोजन रह्या नाहीं। अर इष्ट कार्य पराधीन रह्या नाहीं तातैं बाह्य भी मित्रादिककौं इष्ट माननेका प्रयोजन रह्या नाहीं। इनिकरि दुख मेट्या चाहै था वा इष्ट किया चाहै था सो अब संपूर्ण दुख नष्ट भया अर संपूर्ण इष्ट पाया। बहुरि आयुके निमित्ततैं मरण जीवन था तहां मरणकरि दुःख मानै था सो अविनाशी पद पाया तातैं दुखका कारन रह्या नाहीं। बहुरि द्रव्य प्राणनिकौं धरैं कितेक काल जीवनै मरनेतै सुख मानै था तहां भी नरकपर्यायविषै दुःखकी विशेपताकरि तहां जीवना न चाहै था सो अब इस सिद्धपर्यायविषै द्रव्यप्राणविना ही अपने चैतन्य प्राणकरि सदाकाल जीवै है। अर तहां दुखका लवलेश भी न रह्या है। बहुरि नामकर्मतैं अशुभ गति जाति आदि होतैं दुख मानै था सो अब तिनि सबनिका अभाव भया, दुख कहांतै होय? अर शुभगति जाति आदि होतैं किंचित् दुख दूरि होनेतैं सुख मानै था, सो अब तिनि विना ही सर्व दुखका नाश अर सर्वसुखका प्रकाश पाइए है। तातैं तिनिका भी किछू प्रयोजन रह्या नाहीं। बहुरि गोत्रके निमित्ततैं नीचकुल पाए दुख मानै था सो ताका अभाव होनेतैं दुखका कारन रह्या नाहीं। बहुरि उच्च-

कुल पाए सुख मानै था सो अब उच्चकुल विना ही त्रैलोक्यपूज्य उच्चपदकौं प्राप्त है। या प्रकार सिद्धनिकै सर्व कर्मकि नाश होनेतैं सर्व दुखका नाश भया है। दुखका तौ लक्षण आकुलता है सो आकुलता तब ही हो है जब इच्छा होइ। सो इच्छाका वा इच्छाके कारणनिका सर्वथा अभाव भया तातैं निराकुल होय सर्व दुखरहित अनंत सुखकौं अनुभवै है। जातैं निराकुलपना ही सुखका लक्षण है। संसारविषै भी कोऊ प्रकार निराकुल होइ तब ही सुख मानिए है। जहां सर्वथा निराकुल भया तहां सुख संपूरन कैसैं न मानिए? याप्रकार सम्यग्दर्शनादि साधनतैं सिद्धपद पाए सर्व दुखका अभाव हो है। सर्व सुख प्रगट हो है।

अब इहां उपदेश दीजिए है। — हे भव्य हे भाई जो तोकूं संसारके दुख दिखाए ते तुझविषै वीतैं हैं कि नाहीं सो विचारि। अर तू उपाय करै है ते झूठे दिखाए सो ऐसैं ही हैं कि नाहीं सो विचारि। अर सिद्धपद पाए सुख होइ कि नाहीं सो विचारि। जो तेरै प्रतीति जैसैं कहिए है तैसैं ही आवै है तौ तूं संसारतैं छूटि सिद्धपद पावनेका हम उपाय कहै हैं सो करि। विलंब मति करै। इह उपाय किया तेरा कल्याण होगा।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै संसारदुखका वा मोक्षसुखका निरूपक तृतीय अधिकार सम्मपूर्ण भया ॥३॥

दोहा।

इस भवके सब दुखनिके, कारन मिथ्याभाव।
तिनिकी सत्ता नाश करि, प्रगटै मोक्षउपाव॥ १॥

अब इहां संसार दुखनिके बीजभूत मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान मिथ्याचारित्र हैं तिनिका स्वरूप विशेष निरूपण कीजिए है। जैसें वैद्य है सो रोगके कारननिका विशेष कहै तौ रोगी कुपथ्य सेवन न करै तब रोगरहित होय, तैसैं इहां संसारके कारननिका विशेष निरूपण करिए है। जातैं संसारी मिथ्यात्वादिकका सेवन न करै तब संसाररहित होय तातैं मिथ्यादर्शनादिकनिका विशेष कहिए है,—

यह जीव अनादितैं कर्मसंबंधसहित है। याकैं दर्शनमोहके उदयतैं भया जो अतत्त्वश्रद्धान ताका नाम मिथ्यादर्शन है। जातैं तद्भाव जो श्रद्धान करने योग्य अर्थ है ताका जो भाव स्वरूप ताका नाम तत्त्व है। अर तत्त्व नाहीं ताका नाम अतत्त्व है। अर अतत्त्व है सो असत्य है तातैं इसहीका नाम मिथ्या है। बहुरि यह ऐसैं ही है, ऐसा प्रतीतिभाव ताका नाम श्रद्धान है। इहां श्रद्धानहीका नाम दर्शन है। यद्यपि दर्शनशब्दका अर्थ सामान्य अवलोकन है तथापि इहां प्रकरणके वशतैं इस ही धातुका अर्थ श्रद्धान जानना। सो ऐसैं ही सर्वार्थसिद्धिनाम सूत्रकी टीका— विषै कह्या है। जातैं समान्यअवलोकन संसारमोक्षकौं कारण होइ नाहीं। श्रद्धान ही संसार मोक्षकौं कारण है तातैं संसारमोक्षका कारणविषै दर्शनका अर्थ श्रद्धान ही जानना। बहुरि मिथ्यारूप

जो दर्शन कहिए श्रद्धान ताका नाम मिथ्यादर्शन है। जैसैं वस्तुका स्वरूप नाहीं तैसैं मानना, जैसैं है तैसैं न मानना ऐसा विपरीताभिनिवेश कहिए विपरीत अभिप्राय ताकौं लिए मिथ्यादर्शन हो है। इहां प्रश्न,–जो केवलज्ञान विना सर्वपदार्थ यथार्थ भासैं नाहीं अर यथार्थ भास विना यथार्थ श्रद्धान न होइ। तातैं मिथ्यादर्शनका त्याग कैसैं बनै? ताका समाधात,—

पदार्थनिका जानना न जानना अन्यथा जानना तौ ज्ञानावरणके अनुसारि है। बहुरि प्रतीति हो है सो जानें ही हो है। विना जानें प्रतीति कैसैं आवै? यह तौ सत्य है। परंतु जैसैं कोऊ पुरुष है सो जिनस्यौं प्रयोजन नाहीं तिनिकौं अन्यथा जानै वा यथार्थ जानै बहुरि जैसैं जानै तैसैं ही मानै, किछू वाका विगार सुधार है नाहीं, तातैं बाउला स्याणा नाम पावै नाही। बहुरि जिनस्यौं प्रयोजन पाइए है तिनिकौं जो अन्यथा जानै अर तैसैं ही मानै तौ बिगाड़ होय तातैं वाकौं बाउला कहिए। बहुरि तिनिकौं जो यथार्थ जानै अर तैसैं ही मानै तौ सुधार होइ। तातैं वाकौं स्याणा कहिए। तैसैं ही जीव है सो जिनस्यौं प्रयोजन नाहीं तिनिकौं अन्यथा जानौ वा यथार्थ जानौ। बहुरि जैसैं जानौ तैसै श्रद्धान करो किछू याका बिगार सुधार नाहीं। तातैं मिथ्यादृष्टी सम्यग्दृष्टी नाम पावै नाहीं। बहुरि जिनिस्यौं प्रयोजन पाइए है तिनिकौं जो अन्यथा जानै अर तैसैं ही श्रधान करै तौ बिगाड़ होइ। तातैं याकौं मिथ्यादृष्टी कहिए। बहुरि तिनिकौं जो यथार्थ जानै अर तैसैं श्रद्धान करै तौ सुधार होइ। तातैं

याकौ सम्यग्दृष्टी कहिए। इहां इतना जानना कि अप्रयोजनभूत वा प्रयोजनभूत पदार्थनिका न जानना वा यथार्थ अयथार्थ जानना जो होइ तामैं ज्ञानकी हीनता अधिकता होना इतना जीवका विगार सुधार है। ताका निमित्त तौ ज्ञानावरण कर्म है। बहुरि तहां प्रयोजनभूत पदार्थनिकौं अन्यथा वा यथार्थ श्रद्धान किए जीवका किछू और भी विगार सुधार हो है। तातैं याका निमित्त दर्शनमोह नामा कर्म है। इहां कोऊ कहै कि जैसा जानै तैसा श्रद्धान करै तातैं ज्ञानावरणहीकै अनुसारि श्रद्धान भासै है इहां दर्शनमोहका विशेष निमित्त कैसैं भासै? ताका समाधान,—

प्रयोजनभूत जीवादि तत्त्वनिका श्रद्धान करनेयोग्य ज्ञानावरणका क्षयोपशम तौ सर्व संज्ञी पंचेंद्रियनिकै भया है। परंतु द्रव्यलिंगी मुनि ग्यारह अंग पर्यंत पढ़ैं वा ग्रैवेयकके देव अवधिज्ञानादियुक्त हैं तिनिकै ज्ञानावरणका क्षयोपशम बहुत होतैं भी प्रयोजनभूत जीवादिकका श्रद्धान न होइ। अर तिर्यंचादिककै ज्ञानावरणका क्षयोपशम थोरा होतैं भी प्रयोजनभूत जीवादिकका श्रद्धान होइ तातैं जानिए है ज्ञानावरणहीकै अनुसारि श्रद्धान नाहीं। कोऊ जुदा कर्म है सो दर्शनमोह है। याकै उदयतैं जीवकै मिथ्यादर्शन हो है, तब प्रयोजनभूत जीवादितत्त्वनिका अन्यथा श्रद्धान करै है। इहां कोऊ पूछै कि प्रयोजनभूत अप्रयोजनभूत तत्त्व कौन हैं? ताका समाधान,—

इस जीवके प्रयोजन तौ एक यह ही है दुःख न होय सुख होय। अन्य किछू भी कोई ही जीवकै प्रयोजन है नाहीं। बहुरि

दुखका न होना सुखका होना एक ही है जातैं दुखका अभाव सोई सुख है। सो इस प्रयोजनकी सिद्धि जीवादिकका सत्य श्रद्धान किए हो है। कैसै सो कहिए है,—

प्रथम तो दुःख दूरि करनेविषै आपापरका ज्ञान अवश्य चाहिए जो आपापरका ज्ञान नाहीं होय तौ आपकौं पहिचाने विना अपना दुख कैसै दूरि करै। अथवा आपापरकौं एक जानि अपना दुखदूरि करनेकै अर्थि परका उपचार करै तौ अपना दुख दूरि कैसै हो। अथवा आपतैं पर भिन्न अर यह परविषै अहंकार ममकार करै तातैं दुख ही होय। आपापरका ज्ञान भए दुख दूरि हो है। वहुरि आपापरका ज्ञान जीव अजीवका ज्ञान भए ही होइ तातैं आप जीव है शरीरादिक अजीव हैं। जो लक्षणादिककरि जीव अजीवकी पहिचान होइ तौ आपापरकौं भिन्नपनौ भासै। तातैं जीव अजीवकौं जानना अथवा जीव अजीवका ज्ञान भये जिन पदार्थनिका अन्यथा श्रद्धानतैं दुख होता था तिनिका यथार्थ ज्ञान होनेतैं दुख दूरि होय। तातैं जीव अजीवकौं जानना। वहुरि दुखका कारन तौ कर्मबंधन है। अर ताका कारन मिथ्यात्वादिक आस्रव है। सो इनिकौं न पहिचानै इनिकौं दुखका मूलकारन न जानै तौ इनिका अभाव कैसैं करै। अर इनिका अभाव न करै तव कर्मबंध होइ तातैं दुख ही होइ। अथवा मिथ्यात्वादिक भाव हैं सो ए दुखमय हैं। सो इनकौं जैसेके तैसे न जानै, तौ इनिका अभाव न करै। तव दुख ही रहै। तातैं आस्रवकौं जानना। वहुरि समस्त दुखका कारण कर्मबंधन है सो याकौं न जानै तव यातैं मुक्त

होनेका उपाय न करै । तब ताके निमित्ततैं दुखी होइ । तातैं वंधकौं जानना । वहुरि आस्रवका अभाव करना सो संवर है। याका स्वरूप न जानै तौ याविषै न प्रवर्त्तै तब आस्रव ही रहै तातैं वर्त्तमान वा आगामी दुख ही होइ । तातैं संवरकौं जानना । वहुरि कथंचित् किंचित्कर्मवंधका अभाव ताका नाम निर्जरा है सो याकौं न जानै तब याकी प्रवृत्तिका उद्यमी न होइ तब सर्वथा वंध ही रहै तातैं दुख ही होइ । तातैं निर्जराकौं जानना । वहुरि सर्वथा सर्व कर्मवंधका अभाव होना ताका नाम मोक्ष है । सो याकौं न पहिचानै तौ याका उपाय न करै तब संसारविषै कर्मवंधतैं निपजे दुखनिहीकौं सहै तातैं मोक्षकौं जानना । ऐसैं जीवादि सप्त तत्व जानने । वहुरि शास्त्रादिकरि कदाचित् तिनिकौं जानै अर ऐसैं ही है ऐसी प्रतीति न आई तौ जानैं कहा होय तातैं तिनिका श्रद्धान करना कार्यकारी है । ऐसैं जीवादि तत्वनिका सत्यश्रद्धान किए ही दुख होनेका अभावरूप प्रयोजनकी सिद्धि हो है । तातैं जीवादिक पदार्थ हैं ते ही प्रयोजनभूत जानने । वहुरि इनिके विशेषभेद पुण्यपापादिकरूप तिनिका भी श्रद्धान प्रयोजनभूत है । जातैं सामान्यतैं विशेष वलवान् है । ऐसैं ये पदार्थ तौ प्रयोजनभूत हैं तातैं इनका यथार्थ श्रद्धान किए तौ दुख न होइ सुख होय अर इनिकौं यथार्थ श्रद्धान किए विना दुख हो है सुख न हो है । वहुरि इनि विना अन्य पदार्थ हैं ते अप्रयोजनभूत हैं । जातैं तिनिकौं यथार्थश्रद्धान करो वा मति करो उनका श्रद्धान किछू सुखदुखकौं कारन नाहीं । इहां प्रश्न उपजै है, जो पूर्वै जीव अजीव

पदार्थ कहे तिनिविषै तौ सर्व पदार्थ आय गए तिनि विना अन्य पदार्थ कौन रहे जिनिकौं अप्रयोजनभूत कहे। ताका समाधान,—

पदार्थ तौ सर्व जीव अजीवविषै ही गर्भित हैं परंतु तिन जीव अजीवके विशेष बहुत हैं। तिनिविषै जिन विशेषनिकरि सहित जीव अजीवको यथार्थ श्रद्धान किए स्वपरका श्रद्धान होय रागादिक दूर करनेका श्रद्धान होय तातैं सुख उपजै। अयथार्थ श्रद्धान किए स्वपरका श्रद्धान न होइ रागादिक दूरि करनेका श्रद्धान न होइ तातैं दुख उपजै। तिनिविशेषनिकरि सहित जीव अजीव पदार्थ तौ प्रयोजनभूत जानने। बहुरि तिन विशेषनिकरि सहित जीव अजीवकौं यथार्थ श्रद्धान किए स्वपरका श्रद्धान न होय वा होय अर रागादिक दूर करनेका श्रद्धान होइ वा न होइ किछू नियम नाहीं। तिनिविशेषनिकरि सहित जीव अजीव पदार्थ अप्रयोजनभूत जानने। जैसैं जीव अर शरीरका चैतन्य मूर्त्तत्वादिविशेषनिकरि श्रद्धान करना तौ प्रयोजनभूत है। अर मनुष्यादि पर्यायनिका वा घटपटादिका अवस्था आकारादिविशेषनिकरि श्रद्धान करना अप्रयोजनभूत है। ऐसैं ही अन्य जानने। याप्रकार कहे जे प्रयोजनभूत जीवादिक तत्व तिनिका अयथार्थ श्रद्धान ताका नाम मिथ्यादर्शन जानना। अब संसारी जीवनिकै मिथ्यादर्शनकी प्रवृत्ति कैसैं पाइए है। सो कहिए है। इहां वर्णन तौ श्रद्धानका करना है परंतु जानै तब श्रद्धान करै तातैं जाननेकी मुख्यताकरि वर्णन करिए है॥

अनादितैं जीव है सो कर्मके निमित्ततैं अनेक पर्याय धरै है तहां पूर्व पर्यायकौं छोड़ै नवीन पर्याय धरै। बहुरि वह पर्याय

है सो एक तौ आप आत्मा अर अनंत पुद्गलपरमाणुमय शरीर तिनिका एक पिंड बंधानरूप है। बहुरि जीवकै तिसपर्यायविषै यह मैं हौं ऐसैं अहंबुद्धि हो है। बहुरि आप जीव है ताका स्वभाव तौ ज्ञानादिक है अर विभाव क्रोधादिक हैं। अर पुद्गल परमाणूनिके वर्ण गंध रस स्पर्शादि स्वभाव हैं तिनि सबनिकौं अपना स्वरूप मानै हैं। ए मेरे हैं ऐसैं ममबुद्धि हो है। बहुरि आप जीव है ताकौं ज्ञानादिककी वा क्रोधादिककी अधिकहीन तारूप अवस्था हो है। अर पुद्गलपरमाणूनिकी वर्णादि पलटनेरूप-अवस्था हो है तिनिसबनिका अपनी अवस्था मानै है। ए मेरी अवस्था है। ऐसैं ममबुद्धि करै है। बहुरि जीवकै अर शरीरकै निमित्तनैमित्तिक संबंध है तातैं जो क्रिया हो है ताकौं अपनी मानै है। अपना दर्शनज्ञानस्वभाव है ताकी प्रवृत्तिकौं निमित्त मात्र शरीरका अंगरूपस्पर्शनादि द्रव्यइंद्रिय हैं। यह तिनिकौं एकमानि ऐसैं मानैहै जो हस्तादि स्पर्शनकरि मैं स्पर्या जीभकरि चाख्या नासिकाकरि सूंघ्या नेत्रकरि देख्या, कानकरि सुन्या ऐसैं मानै है। मनोवर्गणारूप आठपांखुडीका फूल्या कमलकै आकारि हृदय-स्थानविषै द्रव्य मन है दृष्टिगम्य नाहीं ऐसा है सो शरीरका अंग है ताका निमित्त भए स्मरणादिरूप ज्ञानकी प्रवृत्ति हो है। यह द्रव्य मनकौं अर ज्ञानकौं एक मानि ऐसैं मानै है कि मैं मनकरि जान्या। बहुरि अपने बोलनेकी इच्छा हो है तब अपने प्रदेश-निकौं जैसैं बोलना बनै तैसैं हलावै तब एकक्षेत्रावगाहसंबंधतैं शरीरके अंग ही ताकै निमित्ततैं भाषावर्गणारूप पुद्गलवचनरूप

परिणमै । यह सबकौं एक मानि ऐसैं मानै जो मैं बोलौं हों ।
बहुरि अपने गमनादिक क्रियाकी वा वस्तुग्रहणादिककी इच्छा होय
तब अपने प्रदेशनिकौं जैसैं कार्य बनै तैसैं हलावै तब एक क्षेत्रा-
वगाहतैं शरीरके अंग हालैं तब वह कार्य बनै । अथवा अपनी
इच्छाविना शरीर हालै तब अपने प्रदेश भी हालैं। यह सबकौं
एक मानि ऐसैं मानै, मैं गमनादिक कार्य करौं हौं वा वस्तु ग्रहौं हौं।
वा मैं किया है इत्यादिरूप मानै है। बहुरि जीवकै कषायभाव
होय तब शरीरकी चेष्टा ताकै अनुसार होय जाय । जैसैं क्रोधा
दिक भए रक्तनेत्रादि हो जांय । हास्यादि भए प्रफुल्लित वदनादि
होय जाय । पुरुषवेदादि भए लिंगकाठिन्यादि होय जाय । यह
सबकौं एक मानि ऐसा मानै कि ए कार्य सर्व मैं करौं हौं।
बहुरि शरीरविषै शीत उष्ण क्षुधा तृषा रोग आदि अवस्था हो है
ताके निमित्ततैं मोहभावकरि आप सुखदुख मानै इन सबनिकौं
एक जानि शीतादिककौं वा सुखदुखकौं अपने ही भए मानै है
बहुरि शरीरका परमाणूनिका मिलना बिछुरनादि होनेकरि वा
तिनिकी अवस्था पलटनेकरि वा शरीरस्कंधका खंडादि होनेक[रि]
स्थूल कृशादिक वा बाल वृद्धादिक वा अंगहीनादिक होय । अर
ताकै अनुसार अपने प्रदेशनिका संकोच विस्तार होइ यह सबकौं
एक मानि मैं स्थूल हौं मैं कृश हौं मैं बालक हौं मैं वृद्ध हौं . मेरे
इनि अंगनिका भंग भया है इत्यादि रूप मानै है । यह शरीरकी
अपेक्षा गतिकुलादिक होइ तिनिकौं अपने मानि मैं मनुष्य हौं मैं
तिर्यंच हौं मैं क्षत्रिय हौं मैं वैश्य हौं इत्यादिरूप मानै है बहुरि

शरीर संयोग होने छूटनेकी अपेक्षा जन्म मरण होय तिनिकौं अपना जन्म मरण मानि मैं उपज्या, मैं मरूंगा ऐसा मानै है। बहुरि शरीरहीकी अपेक्षा अन्यवस्तुनिस्यौं नाता मानै है। जिन करि शरीर निपज्या तिनिकौं आपके माता पिता मानै है। जो शरीरकौं रमावै ताकौं अपनी रमणी मानै है। जो शरीरकरि निपज्या ताकौं अपना पुत्र मानै है। जो शरीरकौं उपगारी ताकौं मित्र मानै है जो शरीरका बुरा करै ताकौं शत्रु मानै है इत्यादिरूप मानि हो है। बहुत कहा कहिए जिसतिसप्रकारकरि आप अर शरीरका एक ही मानै हैं। इंद्रियादिकका नाम तौ इहां कह्या है याकूं तौ किछू गम्य नाहीं, अचेत हुवा पर्यायविषै अहंबुद्धि धारै है। सो कारन कहा है, सो कहिए है,--इस आत्माकै अनादितैं इंद्रियज्ञान है ताकरि आप अमूर्तीक है सो तौ भासै नाहीं अर शरीर मूर्तीक है सो ही भासै। अर आत्मा काहूकौं आपौ जानि अहंबुद्धि धारै ही धारै सो आप जुदा न भास्या तब तिनिका समुदायरूप पर्यायविषै ही अहंबुद्धि धारै है। बहुरि आपकै अर शरीरकै निमित्त नैमित्तिक संबंध घना ताकरि भिन्नता भासै नाहीं। बहुरि जिसविचारकरि भिन्नता भासै सो मिथ्यादर्शनके जोरतैं होइ सकै नाहीं। तातैं पर्यायहीविषै अहंबुद्धि पाइए है। बहुरि मिथ्यादर्शनकरि यह जीव कदाचित् बाह्यसामग्रीका संयोग होतैं तिनिकौं भी अपनी मानै है। पुत्र स्त्री धन धान्य हाथी घोरे मंदिर किंकरादिक प्रत्यक्ष आपतैं भिन्न अर सदाकाल अपने आधीन नाहीं ऐसे आपकौं भासैं तौ भी तिनविषै ममकार करै है।

पुत्रादिकविषै ए हैं, सो मैं ही हौं ऐसी भी कदाचित् भ्रमबुद्धि हो है। बहुरि मिथ्यादर्शनतैं शरीरादिकका स्वरूप अन्यथा ही भासै है। अनित्यकौं नित्य मानै है भिन्नकौं अभिन्न मानैं दुखके कारनकौं सुखके कारन मानैं दुखकौं सुख मानैं इत्यादि विपरीत भासै है। ऐसैं जीव अजीवतत्वनिका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है। तिनकौं अपना स्वभाव मानै है। कर्म उपाधितैं भए न जानै है। दर्शन ज्ञान उपयोग अर ए आस्रवभाव तिनकौं एक मानै है। जातैं इनका आधारभूत तौ एक आत्मा अर इनिका परिणमन एकै काल होइ तातैं याकौं भिन्नपनौ न भासै अर भिन्नपनौ भासनेका कारन जो विचार है सो मिथ्यादर्शनके बलतैं होइ सकै नाहीं। बहुरि ए मिथ्यात्व कषायभाव आकुलतालिए हैं, तातैं वर्त्तमान दुखमय हैं। अर कर्मबंधके कारन हैं, तातैं आगामी दुख उपजावैंगे तिनिकौं ऐसैं न मानै है आप भला जानि इन भावनिरूप होइ प्रवर्तै है। बहुरि यह दुखी तौ अपने इन मिथ्यात्वकषायभावनितैं होइ अर वृथा ही औरनिकौं दुख उपजावनहारे मानै। जैसैं दुखी तौ मिथ्यात्वश्रद्धानतैं होइ अर अपने श्रद्धानके अनुसार जो पदार्थ न प्रवर्त्तै ताकौं दुखदायक मानै। बहुरि दुखी तौ क्रोधतैं हो है अर जासौं क्रोध किया होय ताकौं दुखदायक मानै। दुखी तौ लोभतैं होइ अर इष्ट वस्तुकी अप्राप्तिकौं दुखदायक मानै ऐसैं अन्यत्र जानना। बहुरि इनि भावनिका जैसा फल लागै तैसा न भासै है इनकी तीव्रताकरि नरकादिक हो है। मंदकरि स्वर्गादिक हो है। तहां घनी थोरी

आकुलता हो है सो भासै नाहीं तातैं बुरे न लागै हैं । कारनं कहा है कि ए आपके किए भासैं तिनकौं बुरे कैसैं मानै । बहुरि ऐसैं ही आस्रव तत्त्वका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है । बहुरि इनि आस्रवभावनिकरि ज्ञानावरणादिकर्मनिका बंध हो है । तिनिका उदय होतैं ज्ञानदर्शनका हीनपना होना, मिथ्यात्वकषायरूप परिणमनि, चाह्या न होना, सुखदुखका कारन मिलना, शरीरसंयोग रहना, गतिजातिशरीरादिकका निपजना, नीचा ऊंचा कुल पावना होइ । सो इनिके होनेविषै मूलकारन कर्म है । ताकौं तौ पहिचानै नाहीं जातैं वह सूक्ष्म है याकौं सूझता नाहीं । अर आपकौं इनि कार्यनिका कर्त्ता दीखै नाहीं तातैं इनिके होनेविषै कै तौ आपकौं कर्ता मानै कै काहू औरकौं कर्त्ता मानैं । अर आपका वा अन्यका कर्त्तापना न भासै तौ गहलरूप होय भवितव्य मानै । ऐसैं ही बंधतत्वका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है । बहुरि आस्रवका अभाव होना सो संवर है। जो आस्रवकौं यथार्थ न पहिचानै ताके संवरका यथार्थश्रद्धान कैसैं होइ ? जैसैं काहूकै अहित आचरण है । वाकौं वह अहित न भासै तौ ताके अभावकौं हितरूप कैसैं मानै । तैसैं ही जीवकै आस्रवकी प्रवृत्ति है । याकौं वह अहित न भासै तौ ताके अभावरूप संवरकौं कैसैं हित मानै । बहुरि अनादितैं इस जीवकै आस्रवभाव ही भया संवर कबहू न भया तातैं संवरका होना भासै नाहीं , संवर होतैं सुख हो है सो भासै नाहीं । संवरतैं आगामी दुख न होसी सो भासै नाहीं । तातैं आस्रवका तौ संवर करै नाहीं, अर तिनि

अन्य पदार्थनिका दुखदायक मानै है। तिनिहीकै न होनेका उपाय करै है सो अपने आधीन नाहीं। वृथा ही खेद खिन्न होय। ऐसैं संवरतत्वका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो हैं। वहुरि बंधका एकदेश अभाव होना सो निर्जरा है। जो वंधकौं यथार्थ न पहिचानै ताकै निर्जराका यथार्थ श्रद्धान कैसैं होय? जैसैं भक्षण किया हुवा विषआदिकतैं दुख होता न जानै तौ ताकै उषालका[1] उपायकों कैसैं भला जानै। तैसैं बंधनरूप किए कर्मनितैं दुख होना न जानै तौ तिस निर्जराका उपायकौं कैसैं भला जानै। वहुरि इस जीवकै इंद्रियनितैं सूक्ष्मरूप कर्मनिका तौ ज्ञान होता नाहीं। वहुरि तिनविषै दुखकौं कारनभूत शक्ति है ताका ज्ञान नाहीं तातैं अन्य पदार्थनिहीके निमित्तकौं दुखदायक जानि तिनिकेई अभाव करनेका उपाय करै हैं। सो अपनें आधीन नाहीं। वहुरि कदाचित् दुख दूरि करनेके निमित्त कोई इष्ट संयोगादि कार्य वनै हैं सो वह भी कर्मके अनुसार वनै है। तातैं तिनिका उपायकरि वृथा ही खेद करै है। ऐसैं निर्जरातत्वका अयथार्थ ज्ञान होतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है। वहुरि सर्व कर्मबंधका अभाव ताका नाम मोक्ष है। जो वंधकौं वा वंधजनित सर्व दुखनिकौं नाहीं पहिचानै ताकै मोक्षका यथार्थ श्रद्धान कैसैं होइ। जैसैं काहूकै रोग है वह तिस रोगकौं वा रोगजनित दुखनिकौं न जानै तौ सर्वथा रोगके अभावकौं कैसैं भला जानै? वहुरि इस जीवकै कर्मका वा तिनकी शक्तिका तौ ज्ञान नाहीं तातैं वाह्यपदा

1 नष्ट करनेके।

र्थनिकौं दुखका कारन जानि तिनके सर्वथा अभाव करनेका उपाय करै है। अर यह तौ जानै सर्वथा दुःखदूरि होनेका कारण इष्ट सामग्रीनिकौं मिलाय सर्वथा सुखी होना सो कदाचित् होय सकै नाहीं। यह वृथा खेद करै है। ऐसैं मिथ्यादर्शनतैं मोक्षतत्त्वका अयथार्थ ज्ञान होनेतैं अयथार्थ श्रद्धान हो है। या प्रकार यह जीव मिथ्यादर्शनतैं जीवादि सप्ततत्त्व प्रयोजनभूत हैं तिनिका अयथार्थ श्रद्धान करै है। बहुरि पुण्यपाप हैं ते इनिके विशेष हैं। सो इन पुण्य पापनिकी एक जाति है तथापि मिथ्यादर्शनतैं पुण्यकौं भला जानै है। पापकौं बुरा जानै है पुण्यकरि अपनी इच्छाके अनुसार किंचित् कार्य बनै है ताकौं भला जानै है। पापकरि इच्छाके अनुसार कार्य न बनै ताकौं बुरा जानै है सो दोन्यौं ही आकुलताके कारण हैं तातैं बुरे ही हैं। बहुरि यह अपनी मानितैं तहां सुखदुख मानै है। परमार्थतैं जहां आकुलता है तहां दुःख ही है। तातैं पुण्यपापके उदयकौं भला बुरा जानना भ्रम ही है। बहुरि केई जीव कदाचित पुण्यपापके कारन जे शुभ अशुभ भाव तिनिकौं भले बुरे जानै हैं सो भी भ्रम है। जातैं दोऊ ही कर्मबंधके कारन हैं। ऐसैं पुण्यपापका अयथार्थज्ञान होतैं अयथार्थश्रद्धान हो है। याप्रकार अतत्वश्रद्धानरूप मिथ्यादर्शनका स्वरूप कह्या। यह असत्यरूप है तातैं याहीका नाम मिथ्यात्व है। बहुरि यह सत्यश्रद्धानतैं रहित है तातैं याहीका नाम अदर्शन है। अब मिथ्याज्ञानका स्वरूप कहिए है,—

प्रयोजनभूत जीवादि तत्वनिका अयथार्थ जानना ताका नाम

मिथ्याज्ञान है। ताकरि तिनिके जाननेविषै संशय विपर्यय अनध्य-वसाय हो है। 'तहां ऐसैं है कि ऐसैं है' ऐसा जो परस्पर विरुद्धता लिए दोयरुप ज्ञान ताका नाम संशय है। जैसैं 'मैं आत्मा हौं कि शरीर हौं ऐसा जानना। बहुरि ऐसैं ही है ऐसा वस्तुस्वरूपतैं विरुद्धतालिए एकरूप ज्ञान ताका नाम विपर्यय है। जैसैं मैं शरीर हौं' ऐसा जानना। बहुरि 'किछू है' ऐसा निर्द्धाररहित विचार ताका नाम अनध्यवसाय है। जैसैं 'मैं कोई हौं, ऐसा जानना। याप्रकार प्रयोजनभूत जीवादि तत्वनिविषै संशय विपर्यय अनध्य-वसायरूप जो जानना होय ताका नाम मिथ्याज्ञान है। बहुरि अप्रयोजनभूत पदार्थनिकौं यथार्थ जानै ताकी अपेक्षा मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान नाम नाहीं है। जैसैं मिथ्यादृष्टि जेवरीकौं जेवरी जानै तौ सम्यग्ज्ञान नाम न होय। अर सम्यग्दृष्टि जेवरीकौं सांप जानै तौ मिथ्याज्ञान नाम न होय। इहां प्रश्न,—जो प्रत्यक्ष सांचा झूंठा ज्ञानकौं सम्यग्ज्ञान मिथ्याज्ञान कैसैं न कहिए! ताका समाधान—जहां जाननेहीका– सांच झूठ निर्द्धार करनेहीका प्रयोजन होय तहां तौ कोई पदार्थ ताका सांचा झूठा जाननेकी अपेक्षा ही मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान नाम पावै है। जैसैं प्रत्यक्ष परोक्षप्रमाणका वर्णनविषै कोई पदार्थ होय ताका सांचा जाननेरूप सम्यग्ज्ञानका ग्रहण किया है। संशयादिरूप जाननेकौं अप्रमाणरूप मिथ्याज्ञान कह्या है। बहुरि इहां संसार मोक्षके कारणभूत सांचा झूंठा जाननेका निर्द्धार करना है सो जेवरी सर्पादिकका यथार्थ वा अन्यथा ज्ञान संसार मोक्षका कारन नाहीं। तातैं तिनिकी अपेक्ष

इहां मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान न कह्या । इहां प्रयोजनभूत जीवादिक तत्त्वनिहीका जाननेकी अपेक्षा मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान कह्या है। इस ही अभिप्रायकरि सिद्धांतविषै मिथ्यादृष्टीका तौ सर्व जानना मिथ्याज्ञान ही कह्या अर सम्यग्दृष्टीका सर्व जानना सम्यग्ज्ञान कह्या । इहां प्रश्न,—जो मिथ्यादृष्टीकै जीवादि तत्त्वनिका अयथार्थ जानना है ताकौं मिथ्याज्ञान कहौ । जेवरी सर्पादिकके यथार्थ जाननेकौं तौ सम्यग्ज्ञान कहौ । ताका समाधान—

मिथ्यादृष्टी जानै है तहां वाकै सत्ता असत्ताका विशेष नाहीं है । तातैं कारणविपर्यय वा स्वरूपविपर्यय वा भेदाभेदविपर्ययकौं उपजावै है । तहा जाकौं जानै है ताका मूल कारणकौं न पहिचानै । अन्यथा कारण मानै सो तो **कारणविपर्यय** है । बहुरि जाकौं जानै ताका मूलवस्तुस्वरूप स्वरूप ताकौं न पाहिचानै अन्यथास्वरूप मानै सो **स्वरूपविपर्यय** है । बहुरि जाकौं जानै ताकौं ए इनतैं भिन्न हैं ए इनतैं अभिन्न हैं ऐसा न पहिचानै अन्यथा भिन्न अभिन्नपनौ मानै सो **भेदाविपर्यय** है । ऐसैं मिथ्यादृष्टीकै जाननेविषै विपरीतता पाइए है । जैसैं मतवाला माताकौं भार्या मानै भार्याकौं माता मानै तैसैं मिथ्यादृष्टीकै अन्यथा जानना है । बहुरि जैसैं काहूकालविषै मतवाला माताकौं माता वा भार्याकौं भार्या भी जानै तौ भी वाकै निश्चयरूप निर्द्धारकरि श्रद्धान लिए जानना न हो है । तातैं ताकै यथार्थज्ञान न कहिए । तैसैं मिथ्यादृष्टी काहू-कालविषै किसी पदार्थकौं सत्य भी जानै तौ भी वाकै निश्चयरूप निर्द्धारकरि श्रद्धानलिए जानना न हो है । अथवा सत्य भी जानै

परंतु तिनकरि अपना प्रयोजन जो अयथार्थ ही साधै है तातैं वाकै सम्यग्ज्ञान न कहिए। ऐसा मिथ्यादृष्टीकै ज्ञानकौं मिथ्याज्ञान कहिए है। इहां प्रश्न,—जो इस मिथ्यातका कारन कौन है? ताका समाधान,—

मोहके उदयतैं जो मिथ्यात्वभाव होय सम्यक्त्व न होय सो इस मिथ्याज्ञानका कारण है। जैसैं विषके संयोगतैं भोजन भी विषरूप कहिए तैसैं मिथ्यात्वके संबंधतैं ज्ञान है सो मिथ्याज्ञान नाम पावै। इहां कोऊ कहै ज्ञानावरणका निमित्त क्यौं ना कहौ? ताका समाधान,—

ज्ञानावरणके उदयतैं तौ ज्ञानका अभावरूप अज्ञानभाव हो है। बहुरि क्षयोपशमतैं किंचित् ज्ञानरूप मतिज्ञानआदि ज्ञान हो हैं। जो इनिविषै काहूकौं मिथ्याज्ञान काहूकौं सम्यग्ज्ञान कहिए तौ दोऊंहीका भाव मिथ्यादृष्टी वा सम्यग्दृष्टीकै पाइए हैं तातैं तिनि दोऊंनिकै मिथ्याज्ञान वा सम्यग्ज्ञानका सद्भाव होय जाय सो सिद्धांतविरुद्धहै। तातैं ज्ञानावरणका निमित्त बनै नाहीं। बहुरि इहां कोऊ पूछै कि जेवरी सर्पादिकका अयथार्थज्ञानका कौन कारन है तिसहीकौं जीवादितत्त्वनिका अयथार्थ यथार्थज्ञानका कारन कहौ, ताका उत्तर,—

जो जाननेविषै जेता अयथार्थपना हो है तेता तौ ज्ञानावरणका उदयतैं हो है। अर यथार्थपना हो है तेता ज्ञानावरणके क्षयोपशमतैं हो है। जैसैं जेवरीकौं सर्प जान्या सो यथार्थ जाननेकी शक्तिका कारन उदय है तातैं अयथार्थ जानै है। बहुरि

जेवरीकौं जेवरी जानी सो यथार्थ जाननेकी शक्तिका कारन क्षयोपशम है तातैं यथार्थ जानै है। तैसैं ही जीवादि तत्वनिका यथार्थ जाननेकी शक्ति न होने वा होनेविषै ज्ञानावरणहीका निमित्त है परंतु जैसैं काहूपुरुषकै क्षयोपशमतैं दुखकौं वा सुखकौं कारणभूत पदार्थनिकौं यथार्थ जाननेकी शक्ति होय तहां जाकै असातावेदनीका उदय होय सो दुखकौं कारनभूत जो होय तिसहीकौं वेदै, सुखका कारनभूत पदार्थनिकौं न वेदै अर जो वेदै तौ सुखी हो जाय। सो असाताका उदय होतैं होय सकै नाहीं। तातैं इहां दुखकौं कारनभूत अर सुखकौं कारनभूत पदार्थ वेदनैविषै ज्ञानावरणका निमित्त नाहीं असाता साताका उदय ही कारणभूत है। तैसैं ही जीवकै प्रयोजनभूत जीवादिकतत्त्व अप्रयोजनभूत अन्य तिनिकै यथार्थ जाननेकी शक्ति होइ। तहां जाकै मिथ्यात्वका उदय होइ सो जे अप्रयोजनभूत होइ तिनिहीकौं वेदै जानै प्रयोजनभूतकौं न जानै। जो प्रयोजनभूतकौं जानै तौ सम्यग्ज्ञान होय जाय सो मिथ्यात्वका उदय होतैं होय सकै नाहीं। तातैं इहां प्रयोजनभूत अप्रयोजनभूत पदार्थ जाननेविषै ज्ञानावरणका निमित्त नाहीं। मिथ्यात्वका उदय अनुदय ही कारनभूत है। इहा ऐसा जानना- जहां एकेंद्रियादिककै जीवादि तत्त्वनिका यथार्थ जाननेकी शक्ति ही न होय तहां तौ ज्ञानावरणका उदय अर मिथ्यात्वका उदयतैं भया मिथ्यादर्शन इन दोऊनिका निमित्त है। बहुरि जहां संज्ञी मनुष्यादिकै क्षयोपशमादि लब्धि होतैं शक्ति होय अर न जानै तहां मिथ्यात्वकै उदयहीका निमित्त जानना। याहीतैं

मिथ्याज्ञानका मुख्य कारण ज्ञानावरण न कह्या मोहका उदयतैं भया भाव सो ही कारण कह्या है। बहुरि इहां प्रश्न-जो ज्ञान भए श्रद्धान हो है तातैं पहिलै मिथ्याज्ञान कहौ पीछैं मिथ्यादर्शन कहौ ताका समाधान,—

है तौ ऐसैं ही, जाने विना श्रद्धान कैसैं होय परंतु मिथ्या अर सम्यक् ऐसी संज्ञा ज्ञानकै मिथ्यादर्शन सम्यग्दर्शनके निमित्ततैं हो है। जैसैं मिथ्यादृष्टी वा सम्यग्दृष्टी सुवर्णादि पदार्थकौं जानै तौ समान है परंतु सो ही जानना मिथ्यादृष्टिकै मिथ्याज्ञान नाम पावै सम्यग्दृष्टीकै सम्यग्ज्ञान नाम पावै। ऐसैं हीं सर्व मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञानकौं कारन मिथ्यादर्शन सम्यग्दर्शन जानना। तातैं जहां सामान्यपनै ज्ञान श्रद्धानका निरूपण होय तहां तौ ज्ञान कारणभूत है ताकौं पहिले कहना अर श्रद्धान कार्यभूत है ताकौं पीछैं। बहुरि जहां मिथ्या सम्यग्ज्ञान श्रद्धनका निरूपण होय तहां श्रद्धान कारनभूत है ताकौं पहिले कहना, ज्ञान कार्यभूत है ताकौं पीछैं कहना। बहुरि प्रश्न--जो ज्ञान श्रद्धान तौ युगपत् हो हैं इनविषै कारण कार्यपना कैसैं कहौ हौ? ताका समाधान,—

वह होय तौ वह होय इस अपेक्षा कारणकार्यपना हो है। जैसैं दीपक अर प्रकाश युगपत् हो है तथापि दीपक होय तौ प्रकाश होय तातैं दीपक कारण है प्रकाश कार्य है। तैसैं ही ज्ञान श्रद्धान है वा मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञानकै वा सम्यग्दर्शन ज्ञानकै कारणकार्यपना जानना। बहुरि प्रश्न,--जो मिथ्यादर्शनके संयोगतैं

ही मिथ्याज्ञान नाम पावै है तौ एक मिथ्यादर्शन ही संसारका कारण कहना इहां मिथ्याज्ञान जुदा काहेकौं कह्या ? ताका समाधान,--

ज्ञानहीकी अपेक्षा तौ मिथ्यादृष्टी वा सम्यग्दृष्टीकै क्षयोपशमतैं भया यथार्थ ज्ञान तामैं किछू विशेष नाहीं । अर यहज्ञान केवलज्ञान विषै भी जाय मिलै है, जैसैं नदी समुद्रमैं मिलै है । यामैं कछू दोष नाहीं परंतु क्षयोपशम ज्ञान जहां लागै तहां एक ज्ञेयविषै लागै सो यह मिथ्यादर्शनके निमित्ततैं अन्य ज्ञेयनिविषै तौ ज्ञान लागै अर प्रयोजनभूत जीवादि तत्वनिका यथार्थ निर्णय करनेविषै न लागै सो यह ज्ञानविषै दोष भया । याकौं मिथ्याज्ञान कह्या । बहुरि जीवादितत्वनिका यथार्थ श्रद्धान न होय सो यह श्रद्धानविषै दोष भया याकौं मिथ्यादर्शन कह्या । ऐसैं लक्षणभेदतैं मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान जुदा कह्या । याप्रकार मिथ्याज्ञानका स्वरूप कह्या । इसहीकौं तत्वज्ञानके अभावतैं अज्ञान कहिए है । अपना प्रयोजन न सधै तातैं याहीकौं कुज्ञान कहिए है । अब मिथ्याचारित्रका स्वरूप कहिए है,--

चारित्र मोहके उदयतैं कषायभाव होय. तिसका नाम मिथ्याचारित्र है वहां अपनी स्वभावरूप प्रवृत्ति नाही यह दुखी है ऐसी झूठी परस्वभावरूप प्रवृत्ति किया चाहै सो बनै नाहीं तातैं याका नाम मिथ्याचारित्र है। सो दिखाइए है-- अपना स्वभाव तौ दृष्टा ज्ञाता है सो आप केवल देखनहारा जाननहारा तौ रहै

नाहीं। जिन पदार्थनिकौं देखै जानै तिनविषै इष्ट अनिष्टपनौं मानै तातैं रागी द्वेषी होय काहूका सद्भावकौं चाहै काहूका अभावकौं चाहै। सो उनका सद्भाव अभाव याका किया होता नाहीं। जातैं कोई द्रव्य कोई द्रव्यका कर्त्ता है नाहीं। सर्व द्रव्य अपने अपने स्वभावरूप परिणमै हैं। यह वृथा ही कषायभावकरि आकुलित हो है बहुरि कदाचित् जैसैं आप चाहै तैसैं ही पदार्थ परिणमैं तौ अपना परिणमाया तौ परिणम्या नाहीं। जैसैं गाडा चालै है अर वाकौं बालक धकोयकरि ऐसा मानै कि याकौं मैं चलाउं हूं सो वह असत्य मानै है। जो वाका चलाया चालै है तौ वह न चालै तब क्यौं न चलावै। तैसैं पदार्थ परिणमैं हैं अर उनकौं यह जीव अनुसारि होयकरि ऐसा मानै जो याकौं मैं ऐसैं परिणमावौं हौं सो यह असत्य मानै है। जो याका परिणमाया परिणमै तौ वै तैसैं न परिणमैं तब क्यौं न परिणमावै: सो जैसैं आप चाहै तैसैं तौ पदार्थका परिणमन कदाचित् ऐसैं ही बनाव बनै तब हो है। बहुतपरिणमन तौ आप न चाहै तैसैं ही होते देखिए है। तातैं यह निश्चय है अपना किया काहूका सद्भाव अभाव होता नाहीं। कषायभाव करनेतैं कहा होय केवल आप ही दुखी होय। जैसैं कोऊ विवाहादि कार्यविषै जाका किछू कह्या न होय अर वह आप कर्त्ता होय कषाय करै तौ आपही दुखी होय तैसैं जानना। तातैं कषायभाव करना ऐसा है जैसा जलका बिलोवना किछू कार्यकारी नाहीं। तातैं इनि कषायनिकी प्रवृत्तिकौं मिथ्याचारित्र कहिए है अर कषायभाव हो

हैं, सो पदार्थनिकैं इष्ट अनिष्ट माननेतैं हो हैं. सो इष्ट अनिष्ट मानना मिथ्या है । जातैं कोई पदार्थ इष्ट अनिष्ट है नाहीं कैसैं सो कहिए है—

जो आपकौं सुखदायक उपकारी होय ताकौं इष्ट कहिए अर जो आपकौं दुखदायक अनुपकारी होय ताकौं अनिष्ट कहिए । सर्व लोकमैं सर्व पदार्थ अपने २ स्वभावके कर्त्ता है । कोऊ काहुकौं सुखदायक दुखदायक उपकारी अनुपकारी है नाहीं । यह जीव अपने परिणामनिविषै तिनिकौ सुखदायक उपकारी जानि इष्ट जानै अथवा दुखदायक अनुपकारी जानि अनिष्ट मानै है. जातैं एक ही पदार्थ काहूकौं इष्ट लागै है काहूकौं अनिष्ट लागै हैं । जैसैं जाकौं वस्त्र न मिलै ताकौं मोटा वस्त्र इष्ट लागै अर जाकौं महीन वस्त्र मिलै ताकौं अनिष्ट लागै हैं । सूकरादिककौं विष्ठा इष्ट लागै है । देवादिककौं अनिष्ट लागै है । काहूकौं मेघवर्षा इष्ट लागै है काहूकौं अनिष्ट लागै है । ऐसैं ही अन्य जानने । बहुरि याही प्रकार एक जीवकौं भी एक ही पदार्थ काहूकालविषै इष्ट लागै है काहूकालविषै अनिष्ट लागै है । बहुरि यह जीव जाकौं मुख्यपनै इष्ट मानै सो भी अनिष्ट होता देखिए है । इत्यादि जाननै । जैसैं शरीर इष्ट है सो रोगादिसहित होय तब अनिष्ट होइ जाय । पुत्रादिक इष्ट हैं सो कारनपाय अनिष्ट होते देखिए है । इत्यादि जानने । बहुरि यह जीव जाकौं मुख्यपनै अनिष्ट मानै सो भी इष्ट होता देखिये है । जैसैं गाली अनिष्ट लागै है सो सासरैमैं इष्ट लागै है । इत्यादि जानने । ऐसैं पदार्थनिविषै इष्ट अनिष्ट-

पनौ है नाहीं। जो पदार्थविषै इष्ट अनिष्टपनौ होतौ, तौ जो पदार्थ इष्ट होता सो सबको इष्ट ही होता। जो अनिष्ट होता सो अनिष्ट ही होता। सो है नाहीं। यह जीव आप ही कल्पनाकरि तिनकौं इष्ट अनिष्ट मानै है। सो यह कल्पना झूंठी है। बहुरि पदार्थ है सो सुखदायक उपकारी वा दुखदायक अनुपकारी हो है सो आपहीतैं नाहीं हो है पुण्यपापका उदयके अनुसारि हो है। जाकै पुण्यका उदय हो है ताकै पदार्थनिका संयोग सुखदायक उपकारी हो है। जाकै पापका उदय हो है ताकै पदार्थनिका संयोग दुखदायक अनुपकारी हो है। सो प्रत्यक्ष देखिये हैं। काहूकै स्त्रीपुत्रादिक सुखदायक हैं काहूकै दुखदायक हैं। व्यापार कीए काहूकै नफा हो है। काहूकै टोटा हो है। काहूकै शत्रु भी किंकर हो है। काहूकै पुत्र भी अहितकारी हो है। तातैं जानिए है पदार्थ आप ही इष्ट अनिष्ट होते नाहीं। कर्म उदयके अनुसार प्रवर्त्तै हैं। जैसैं काहूकै किंकर अपने स्वामीके अनुसारि किसी पुरुषकौं इष्ट अनिष्ट उपजावैं तौ किछू किंकरनिका कर्त्तव्य नाहीं उनके स्वामीका कर्त्तव्य है। जो किंकरनिहीकौं इष्ट अनिष्ट मानै सो झूठ है। तैसैं कर्मके उदयतैं प्राप्त भए पदार्थ कर्मके अनुसार जीवकौं इष्ट अनिष्ट उपजावैं तौ किछू पदार्थनिका कर्त्तव्य नाहीं। कर्मका कर्तव्य है जो पदार्थनिकौं इष्ट अनिष्ट मानै सो झूंठ है। तातैं यह बात सिद्ध भई कि पदार्थनिकौं इष्ट अनिष्ट मानि तिनविषै राग द्वेष करना मिथ्या है। इहां कोऊ कहै कि बाह्य वस्तूनिका संयोग कर्मनिमित्ततैं बनै है तौ कर्मनिविषै तौ राग द्वेष करना। ताका

समाधान,—

कर्म तौ जड हैं उनकै किछू सुखदुख देनैकी इच्छा नाहीं। बहुरि वै स्वयमेव कर्मरूप परिणमैं नाहीं। याके भावनिका निमित्ततैं कर्मरूप हो हैं। जैसैं कोऊ अपने हाथ भाटा[1] लेय अपना सिर फोरै तौ भाटाका कहा दोष है। तैसैं ही जीव अपना रागादिक भावनिकरि पुद्गलकौं कर्मरूप परिणामाय अपना बुरा करै तौ कर्म के कहा दोष है। तातैं कर्मसौं भी रागद्वेष करना मिथ्या है। या प्रकार परद्रव्यनिकौं इष्ट अनिष्ट मानिं रागद्वेष करना मिथ्या है। जो परद्रव्य इष्ट अनिष्ट होता अर तहां रागद्वेष करता, तो मिथ्या नाम न पावता। वह तौ इष्ट अनिष्ट नाहीं। अर यह इष्ट अनिष्ट मानि रागद्वेष करै तातैं इनि परिणामनिकौं मिथ्या कह्या है। मिथ्यारूप जो परिणमन ताका नाम मिथ्याचरित्र है। अब इस जीवके रागद्वेष होय है ताका विधान वा विस्तार दिखाइए है-

प्रथम तौ इस जीवके पर्यायविषै अहंबुद्धि है सो आपकौं वा शरिरकौं एक जानि प्रवर्तै है। बहुरि इस शरीरविषै आपकौं सुहावै ऐसी इष्ट अवस्था हो है, तिसविषै राग करै है। आपकौं न सुहावै ऐसी अनिष्ट अवस्था है तिसविषै द्वेष करै है। बहुरि शरीरकी इष्ट अवस्थाके कारणभूत बाह्य पदार्थनिविषै तौ राग करै है अर ताके घातकनिविषै द्वेष करै है। बहुरि शरीरकी अनिष्ट अवस्थाके कारणभूत बाह्य पदार्थनिविषै तौ द्वेष करै है

---

[1] पत्थर।

अर ताके घातकनिविषै राग करै । है । बहुरि इनिविषै-- जिन बाह्य पदार्थनिसौं राग करै है तिनिके कारनभूत अन्य पदार्थनिविषै राग करै है तिनिके घातकनिविषै द्वेष करै है । बहुरि जिन बाह्य पदार्थनिसौं राग करै है तिनिके कारणभूत अन्य पदार्थनिविषै द्वेष करैहै तिनिके घातक निविषै राग करै है । बहुरि इनिविषै भी जिनसौं राग करै, तिनिके कारन घातक अन्य पदार्थ निविषै राग वा द्वेष करै है । अर जिनसौं द्वेष है तिनिके कारण वा घातक अन्यपदार्थनिविषै द्वेष वा राग करै है । ऐसैं ही राग द्वेषकी परंपरा प्रवर्तै है । बहुरि केई बाह्यपदार्थ शरीरकी अवस्थाकौं कारण नाहीं तिनिविषै भी रागद्वेष करै है । जैसैं गऊ आदिके पुत्रादिकतैं किछू शरीरका इष्ट होय नाहीं तथापि तहां राग करै है । जैसैं कूकरा आदिकके बिलाई आवतैं किछू शरीरका अनिष्ट होय नाहीं तथापि तहां द्वेष करै है । बहुरि केई वर्ण गंध शब्दादिकके अवलोकनादिकतैं शरीरका इष्ट होता नाहीं तथापि तिनिविषै राग करै हैं। केई वर्णादिकके अवलोकनादिकतैं शरीरका अनिष्ट होता नाहीं तथापि तिनिविषै द्वेष करै है । ऐसैं भिन्न भिन्न बाह्य पदार्थनिविषै रागद्वेष हो है बहुरि इनिविषै भी जिनिसौं राग करै है तिनिके कारण अर घातक अन्यपदार्थनिविषै राग वा द्वेष करै है । अर जिनस्यौं द्वेष करै है तिनिके कारण वा घातक अन्यपदार्थ तिनिविषै द्वेष वा राग करै है । ऐसैं ही इहां भी रागद्वेषकी परंपरा प्रवर्तै है । इहां प्रश्न—जो अन्यपदार्थनिविषै तौ रागद्वेष करनेका प्रयोजन जान्या परंतु प्रथम तौ मूलभूत

शरीरकी अवस्थाविषै वा शरीरकी अवस्थकौं कारण नाहीं तिन पदार्थनिविषै इष्ट अनिष्ट माननेका प्रयोजन कहा है ? ताका समधान,—

जो प्रथम मूलभूत शरीरकी अवस्था आदिक हैं तिनिविषै भी प्रयोजन विचारि राग करै तौ मिथ्याचारित्र काहेकौं नाम पावै ? तिनिविषै विना ही प्रयोजन रागद्वेष करै है। अर तिनिहीके अर्थि अन्यसौं रागद्वेष करै तातैं सर्व रागद्वेषपरिणतिका नाम मिथ्याचारित्र कह्या है। इहां प्रश्न—जो शरीरकी अवस्था वा बाह्यपदार्थनिविषै इष्ट अनिष्ट माननेका प्रयोजन तौ भासै नाहीं अर इष्ट अनिष्ट मानेविना रह्या जाता नाहीं, सो कारण कहा है। ताका समाधान,—

इस जीवकै चारित्रमोहका उदयतै रागद्वेष भाव होय सो ए भाव कोई पदार्थका आश्रयविना होय सकै नाहीं। जैसैं राग होय सो कोई पदार्थविषै होय। द्वेष होय सो कोई पदार्थविषै ही होय। ऐसैं तिनिपदार्थनिकै अर रागद्वेषके निमित्तनैमित्तिक संबंध है। तहां विशेष इतना जो केई पदार्थ तौ मुख्यपनै रागकौं कारन हैं। केई पदार्थ मुख्यपनै द्वेषकौं कारण हौं। केई पदार्थ काहूकौं काहूकालविषै रागके कारन हो हैं काहूकौं काहूकालविषै द्वेषकौं कारण हो हैं। इहां इतना जानना, एक कार्य होनेविषै अनेक कारण चाहिए सो रागादिक होनेविषै अंतरंग कारण मोहका उदय है, सो बलवान् है। अर बाह्य कारण पदार्थ है सो बलवान् नाहीं है। महामुनिकै मोह मंद होतैं बाह्य पदार्थनिकौ

निमित्त होतै भी रागद्वेष उपजते नाहीं। पापी जीवनकै मोह तीव्र होतै बाह्यकारण न होतै भी तिनिका संकल्पहीकरि रागद्वेष हो है। तातै मोहका उदय होतैं रागादिक हो हैं। तहां जिस बाह्यपदार्थका आश्रयकरि रागभाव होना होय तिसविषै विना ही प्रयोजन वा किछू प्रयोजनलिए इष्टबुद्धि हो है। बहुरि जिस पदार्थका आश्रयकरि द्वेषभाव होना होय तिसविषै विना ही प्रयोजन वा किछू प्रयोजनलिए अनिष्टबुद्धि हो है। तातैं मोहका उदयतैं पदार्थनिकौं इष्ट अनिष्ट माने विना रह्या जाता नाहीं। ऐसैं पदार्थनिकैविषै इष्टअनिष्टबुद्धि होतैं रागद्वेषरूप परिणमन होय ताका नाम मिथ्याचारित्र जानना। बहुरि इनि रागद्वेषनिहीके विशेष क्रोध, मान, माया, लोभ हास्य, रति, अरति शोक भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद नपुंसकवेदरूप कषायभाव हैं ते सर्व इस मिथ्याचारित्रके भेद जानने। इनिका वर्णन पूर्वैं किया ही है। बहुरि इस मिथ्याचारित्रविषै स्वरूपाचरणरूप चारित्रका अभाव है तातैं याका नाम अचारित्र भी कहिए। बहुरि इहां परिणाम मिटै नाहीं अथवा विरक्त नाहीं तातैं याहीका नाम असंयम कहिए है वा अविरत कहिए है। जातैं पांच इंद्रिय अर मनके विषयनि विषै बहुरि पंचस्थावर त्रसकी हिंसाविषै स्वच्छंदपणा हो है अर इनिके त्यागरूप भाव न होय सो ही असंयम वा अविरत बारह प्रकार कह्या है। सो कषायभाव भए ऐसे कार्य हो हैं। तातैं मिथ्याचारित्रका नाम असंयम वा अविरत जानना। बहुरि इस-हीका नाम अव्रत जानना। जातैं हिंसा अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रह

ईनि पापकार्यनिविषै प्रवृत्तिका नाम अव्रत है । सो इनका मूलकारण प्रमत्तयोग कह्या है । प्रमत्तयोग है सो कषायमय है तातैं मिथ्याचारित्रका नाम अव्रत भी कहिए है । ऐसैं मिथ्या-चारित्रका स्वरूप कह्या । या प्रकार इस संसारी जीवके मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान मिथ्याचारित्ररूप परिणमन अनादितैं पाइए है । सो ऐसा परिणमन एकेंद्रिय आदि असंज्ञीपर्यंत तौ सर्व जीवनिकै पाइए है । बहुरि संज्ञी पंचेंद्रियनिविषै सम्यग्दृष्टी विना अन्य सर्व जीवनिकै ऐसा ही परिणम पाइए है । परिणमनविषै जैसा जहां संभवै तैसा तहां जानना जैसैं एकेंद्रियादिककै इंद्रियादि-कनिकी हीनता अधिकता पाइए है वा धन पुत्रादिकका संबंध मनुष्यादिककै ही पाइए है सो इनिकै निमित्ततैं मिथ्यादर्शनादिकका वर्णन किया है । तिसविषै जैसा विशेष संभवै तैसा जानना । बहुरि एकेंद्रियादिक जीव इंद्रिय शरीरादिका नाम जानैं नाहीं है । परंतु तिस नामका अर्थरूप जो भाव है तिसविषै पूर्वोक्त प्रकार परिणमन पाइए है । जैसैं मैं स्पर्शकरि स्परसौं हौ शरीर मेरा है ऐसा नाम न जानै है तथापि इसका अर्थरूप जो भाव है तिसरूप परिणमैं है । बहुरि मनुष्यादिक केई नाम भी जानैं हैं अर ताके भावरूप परिणमै हैं । इत्यादि विशेष संभवै सो जान लेना । ऐसैं ए मिथ्यादर्शनादिकभाव जीवकै अनादितैं पाइए है नवीन ग्रहे नाहीं । देखो याकी महिमा कि जो पर्याय धरै है तहां विना ही सिखाए मोहके उदयतैं स्वयमेव ऐसा ही परिणमन हो है । बहुरि मनुष्यादिककैं सत्य विचार होनैके

कारण मिलैं तौ भी सम्यक् परिणमन होय नाहीं। श्रीगुरुके उपदेशका निमित्त बनै वह वारंवार समझावै यह किछू विचार करै नाहीं। वहुरि आपकौं भी प्रत्यक्ष भासै सो तौ न मानै अर अन्यथा ही मानै। कैसैं, सो कहिए है—मरण होतैं शरीर आत्मा प्रत्यक्ष जुदा हो है। एक शरीरकौं छोरि आत्मा अन्य शरीर धरै है सो व्यंतरादिक अपने पूर्व भवका संबंध प्रगट करते देखिए हैं। परंतु याकै शरीरतैं भिन्नबुद्धि न होय सकै। स्त्रीपुत्रादिक अपने स्वार्थके सगे प्रत्यक्ष देखिए है। उनका प्रयोजन न सधै तब ही विपरीत होते देखिए है। यह तिनिविषै ममत्व करै है। अर तिनिकै अर्थि नरकादिकविषै गमनकौं कारण नाना पाप उपजावै है। धनादिक सामग्री अन्यकी अन्यकै होती देखिए है यह तिनिकौं अपनी मानैं है। वहुरि शरीरकी अवस्था वा बाह्यसामिग्री स्वयमेव होती विनशती देखिए है। यह वृथा आप कर्त्ता हो है। तहां जो अपने मनोरथ अनुसारि कार्य होय ताकौं तौ कहै मैं किया। अर अन्यथा होय ताकौं कहै मैं कहा करौं? ऐसैं ही होना था वा ऐसैं क्यौं भया। ऐसा मानै, सो कै तौ सर्वका कर्त्ता ही होना था कै अकर्त्ता रहना था। सो विचार नाहीं। वहुरि मरण अवश्य होगा ऐसा जानै परंतु मरणका निश्चयकरि किछू कर्त्तव्य करै नाहीं। इस पर्यायसंबंधी ही जतन करै है। वहुरि मरणका निश्चयकरि कबहू तौ कहै, मैं मरूंगा शरीरकौं जलावैंगे। कबहू कहै मोकौं जलावैंगे। कबहू कहै जस रह्या तौ हम जीवते ही हैं। कबहू कहै पुत्रादिक रहैंगे तौ मैं ही जीवौंगा। ऐसैं

याउन्यकीसी नाई बनै है किछू सावधानी नाहीं । बहुरि आपकौं परलोकविषै प्रत्यक्ष जाता जानै ताका तौ इष्ट अनिष्टका किछू उपाय नाहीं । अर इहां पुत्र पोता आदि मेरी संततिविषै घनेकाल ताईं इष्ट रह्या करै अनिष्ट न होय । ऐसैं अनेक उपाय करै है । काहूका परलोक भए पीछैं इस लोककी सामग्रीकरि उपकार भया देख्या नाहीं परंतु याकौं परलोक होनेका निश्चय भए भी इस लोककी सामग्रीहीका यतन रहै है । बहुरि विषयकषायकी प्रवृत्तिकरि वा हिंसादि कार्यकरि आप दुखी होय, खेदखिन्न होय औरनिका वैरी होय, इस लोकविषै निंद्य होय परलोकविषै बुरा होय सो प्रत्यक्ष आप जानै तथापि तिनिहीविषै प्रवर्त्तै । इत्यादि अनेक प्रकार प्रत्यक्ष भासै ताकौं भी अन्यथा श्रद्दहै जानै आचरै सो यहु मोहका माहात्म्य है ऐसैं यहु मिथ्यादर्शनज्ञान चारित्ररूप अनादितैं जीव परिणमै है । इस ही परिणमनकरि संसारविषै अनेक प्रकार दुख उपजावनहारे कर्मनिका संबंध पाइए है । एई भाव दुःखनिके बीज हैं अन्य कोई नाहीं । तातैं हे भव्य जो दुखतैं मुक्त भया चाहै तौ इनि मिथ्यादर्शनादिक विभावनिका अभाव करना यह ही कार्य है इस कार्यके किए तेरा परम कल्याण होगा ।

इति श्री मोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रविषै मिथ्यादर्शनज्ञान चारित्रका निरूपणरूप चौथा अधिकार सम्पूर्ण भया ॥ ४ ॥

दोहा।

बहुविधि मिथ्यागहनकरि, मलिनभए निज भाव।
ताकौ हेतु अभाव है, सहजरूप दरसाव॥ १॥

अथ यह जीव पूर्वोक्तप्रकारकरि अनादितैं मिथ्यादर्शन-ज्ञानचारित्ररूप परिणमै है ताकरि संसारविषै दुख सहतो संतो कदाचित् मनुष्यादिपर्यायनिविषै विशेष श्रद्धानादि करनेकी शक्तिकौं पावै। तहां विशेष मिथ्याश्रद्धानादिकके कारणनिकरि तिनि मिथ्याश्रद्धानादिककौं पोषै तौ तिस जीवका दुखतैं मुक्त होना अति दुर्लभ हो है। जैसैं कोई पुरुष रोगी है किछू सावधानीकौं पाय कुपथ्य सेवै तौ उस रोगीका सुलजना कठिन ही होय। तैसैं यह जीव मिथ्यात्वादि सहित है सो किछू ज्ञानादि शक्तिकौं पाय विशेष विपरीत श्रद्धानादिककै कारणनिका सेवन करै तौ इस जीवका मुक्त होना कठिन ही होय। तातैं जैसैं वैद्य कुपथ्यनिका विशेष दिखाय तिनिके सेवनकौं निषेधैं, तैसैं ही इहां विशेष मिथ्याश्रद्धानादिकके कारणनिका विशेष दिखाय तिनिका निषेध करिए है। इहां अनादितैं जे मिथ्यात्वादि भाव पाइए हैं ते तौ अगृहीतमिथ्यात्वादि जानने। जातैं ते नवीन ग्रहे नाहीं। बहुरि इनके पुष्ट करनेके कारणनिकरि विशेष मिथ्यात्वादि भाव होंय ते गृहीतमिथ्यात्वादि जानने। तहां अगृहीतमिथ्यात्वादिकका वर्णन तौ पूर्वैं किया है सो जानना अर गृहीतमिथ्यात्वादिकका अब निरूपण करिए है सो जानना,—

कुदेव कुगुरु कुधर्म अर कल्पित तत्त्वनिका श्रद्धान सो तौ

मिथ्यादर्शन है। बहुरि जिनिकैविषै विपरीत निरूपणकरि रागादि पोषै होय ऐसे कुशास्त्र तिनिविषै श्रद्धानपूर्वक अभ्यास सो मिथ्याज्ञान है। बहुरि जिस आचरणविषै कषायनिका सेवन होय अर ताकौं धर्मरूप अंगीकार करै सो मिथ्याचारित्र है। अब इनका विशेष दिखाइए है,—इंद्र लोकपालइत्यादि। अद्वैतब्रह्म राम कृष्ण महादेव बुद्ध पीर पैगंबर इत्यादि। बहुरि हनुमान भैरू क्षेत्रपाल देवी दिहाड़ी सती इत्यादि। बहुरि शीतला चौथि सांझी गणगोरि होली इत्यादि। बहुरि सूर्य चंद्रमा ग्रह ऊत पितर व्यंतर इत्यादि, बहुरि गऊ सर्प इत्यादि। बहुरि अग्नि जल वृक्ष इत्यादि। बहुरि शास्त्र दवात वासण इत्यादि अनेक तिनिका अन्यथा श्रद्धानकरि तिनिकौं पूजै। बहुरि तिनकरि अपना कार्य सिद्ध किया चाहै सो वै कार्य सिद्धिके कारन नाहीं तातैं ऐसे श्रद्धान गृहीतमिथ्यात्व कहिए है। तहां तिनिका अन्यथा श्रद्धान कैसैं हो है सो कहिए है,—

अद्वैतब्रह्मकौं सर्वव्यापी सर्वका कर्त्ता मानै सो कोई है नाहीं। मिथ्या कल्पना करै हैं। प्रथम वाकौं सर्वव्यापी मानै सो सर्व पदार्थ तौ न्यारे न्यारे प्रत्यक्ष हैं वा तिनिके स्वभाव न्यारे न्यारे देखिए है इनिकौं एक कैसैं मानिए है। एक मानना तौ इनि प्रकारनिकरि है—एक प्रकार तौ यह है जो सर्व न्यारे न्यारे हैं तिनिके समुदायकौं कल्पनाकरि ताका किछू नाम धरिए। जैसैं घोटक हस्ती इत्यादि भिन्न भिन्न हैं तिनिके समुदायका नाम सेना है। तिनितैं जुदा कोई सेना वस्तु नाहीं। सो इस प्रकार

सर्वपदार्थनिका नाम ब्रह्म है तौ ब्रह्म कोई जुदा वस्तु तौ न ठहर्‍या कल्पना मात्र ही ठहर्‍या । बहुरि एक प्रकार यह है— जो व्यक्ति अपेक्षा तौ न्यारे न्यारे हैं तिनिकौं जाति अपेक्षा कल्पनाकरि एक कहिए है । जैसैं सौ घोटक (घोड़ा) हैं ते व्यक्तिअपेक्षा तौ जुदे जुदे सौ ही हैं तिनिके आकारादिककी समानता देखि कल्पनाकरि एक जाति कहैं सो वह जाति तिनतैं जुदी तौ कोई है नाहीं । सो इस प्रकारकरि जो सबनिकी कोई एक जाति अपेक्षा एक ब्रह्म मानिए है तौ ब्रह्म जुदा तौ कोई न ठहर्‍या । इहां भी कल्पनामात्र ही ठहर्‍या । बहुरि एक प्रकार यह है जो पदार्थ न्यारे २ हैं तिनिकै मिलपतैं एक स्कंध होय ताकौं एक कहिए । जैसैं जलके परमाणु न्यारे न्यारे हैं तिनिका मिलाप भए समुद्रादि कहिए अथवा जैसैं पृथवीके परमाणुनिका मिलाप भए घट आदि कहिए । सो यहां समुद्रादि वा घटादिक हैं ते तिन परमाणुनितैं भिन्न कोई जुदा तौ वस्तु नाहीं । सो इस प्रकारकरि जो सर्व पदार्थ न्यारे न्यारे हैं परंतु कदाचित् मिलि एक हो जाय हैं सो ब्रह्म है, ऐसैं मानिए तौ इनितैं जुदा तौ कोइ ब्रह्म न ठहर्‍या । बहुरि एक प्रकार यह है कि अंग तौ न्यारे न्यारे हैं अर जाके अंग हैं सो अंगी एक है । जैसैं नेत्र हस्त पादादिक भिन्न भिन्न हैं अर जाकै ए हैं सो मनुष्य एक है सो इस प्रकार जो सर्व पदार्थ तो अंग हैं अर जाकै ए है सो अंगी ब्रह्म है । यह सर्व लोक विराटस्वरूप ब्रह्मका अंग है, ऐसैं मानिए तौ मनुष्यकै हस्तपादादिक अंगनिकै परस्पर अंतराल भए तौ

एकपना रहता नाहीं । जुडे रहें ही एक शरीर नाम पावै । सो लोकविषै तौ पदार्थनिकै अंतराल परस्पर भासै है । याका एकत्वपना कैसैं मानिए ? अंतराल भए भी एकत्व मानिए तौ भिन्नपना कहां मानिए । इहां कोऊ कहै कि समस्त पदार्थनिके मध्यविषै सूक्ष्मरूप ब्रह्मके अंग हैं तिनिकरि सर्व पदार्थ जुडि रहे हैं ताकौं कहिए है—

जो अंग जिस अंगतै जुरया है तिसहीतै जुरया रहै है कि टूटि टूटि अन्य अन्य अंगनिसौं जुरया करै है । जो प्रथम पक्ष ग्रहण करैगा तौ सूर्यादिक गमन करै हैं तिनिके साथि जिन सूक्ष्म अंगनितै वे जुरे रहैं ते भी गमन करैं । बहुरि तिनिकौं गमन करते सूक्ष्म अंग अन्य स्थूल अंगनितै जुरे रहैं ते भी गमन करैं हैं सो ऐसैं सर्व लोक अस्थिर होय जाय । जैसैं शरीरका एक अंग खींचे सर्व अंग खींचे जांय, तैसैं एक पदार्थकौं गमनादि करतैं सर्व पदार्थनिका गमनादि होय सो भासै नाहीं । बहुरि जो द्वितीय पक्ष ग्रहैगा, तौ अंग टूटनैतैं भिन्नपना होय जाय तब एकपना कैसैं रह्या ? तातैं सर्वलोकका एकत्वकौं ब्रह्म मानना भ्रम ही है । बहुरि एक प्रकार यह है जो पहिले एक था पीछैं अनेक भया बहुरि एक होय जाय तातैं एक है । जैसैं जल एक था सो वासंणनिमैं जुदा जुदा भया बहुरि मिलै तब एक होय जाय तातैं एक है । वा जैसैं सोनाका गदा[1] एक था सो कंकण कुंडलादिरूप भया बहुरि मिलिकरि सोनाका एक गदा होय

[1] डला वा पांसा ।

जाय । तैसैं ब्रह्म एक था पीछैं अनेकरूप भया बहुरि एक होयगा तातैं एक ही है। इस प्रकार एकत्व मानै है तौ जब अनेकरूप भया तब जुरया रह्या कि भिन्न भया । जोजुरया कहैगा तौ पूर्वोक्त दोष आवैगा। भिन्न भया कहैगा तो तिसकाल तौ एकत्व न रह्या। बहुरि जल सुवर्णादिककौं भिन्न भए भी एक कहिए है सो तौ एकजातिअपेक्षा कहिए है। सर्व पदार्थनिकी एक जाति भासै नाहीं। कोऊ चेतन है कोऊ अचेतन है इत्यादि अनेकरूप हैं तिनकी एक जाति कैसैं कहिए। बहुरि जाति-अपेक्षा एकत्व माननां कल्पनामात्र पूर्वैं कह्या ही है। बहुरि पहिले एक था पीछैं भिन्न भया मानै है तौ जैसैं एक पाषाणादि फूटि टुकडे होय जाय हैं तैसैं ब्रह्मके खंड होय गए बहुरि तिनिका एकठा होना मानै है तौ तहां तिनिका स्वरूप भिन्न रहै है कि एक होय जाय है। जो भिन्न रहै हैं तौ तहां अपने अपने स्वरूपकरि भिन्न ही है। अर एक होय जाय तौ जड भी चेतन होय जाय वा चेतन जड होय जाय। तहां अनेक वस्तूनिका एक वस्तु भया तब काहू कालविषै अनेक वस्तु काहू कालविषै एक वस्तु ऐसा कहना बनै। अनादि अनंत एक ब्रह्म है ऐसा कहना बनै नाहीं। बहुरि जो कहैगा लोकरचना होतैं वा न होतैं ब्रह्म जैसाका तैसा ही रहै है तातैं ब्रह्म अनादि अनंत है। सो हम पूछैं हैं लोकविषैं पृथिवी जलादिक देखिए हैं ते जुदे नवीन उत्पन्न भए हैं कि ब्रह्म ही इन स्वरूप भया है ? जो जुदे नवीन उत्पन्न भए हैं तो ए न्यारे भए ब्रह्म न्यारा रहा सर्वव्यापी

अद्वैतब्रह्म न ठहरया। बहुरि जो ब्रह्म ही इन स्वरूप भया तौ कदाचित् लोक भया कदाचित ब्रह्म भया तौ जैसाका तैसा कैसैं रह्या? बहुरि वे कहै हैं जो सब ही ब्रह्म तौ लोकस्वरूप न हो है वाका कोई अंश ही है। ताकौं कहिए है- -जैसें समुद्रका एक बिंदु विषरूप भया तहां स्थूलदृष्टिकरि तौ गम्य नाहीं परंतु सूक्ष्मदृष्टि दिए तौ एकबिंदुअपेक्षा समुद्रकै अन्यथापना भया। तैसैं ब्रह्मका एक अंश भिन्न होय लोकरूप भया। तहां स्थूलविचारकरि तौ किछू गम्य नाहीं परंतु सूक्ष्मविचार किया तौ एकअंशअपेक्षा ब्रह्मकै अन्यथापना भया। यह अन्यथापना और तौ काहूकै भया नाहीं। ऐसें सर्वरूप ब्रह्मकौं मानना भ्रम ही है।

बहुरि एक प्रकार यह है, —जैसें आकाश सर्वव्यापी है तैसें सर्व व्यापी है। सो इसप्रकार मानै है तौ आकाशवत् बडा ब्रह्मकौं मानि वा जहां घटपटादिक हैं तहां जैसें आकाश है तैसें तहां ब्रह्म भी है ऐसा भी मानि। परंतु जैसें घटपटादिककौं अर आकाशकौं एक ही कहिए तौ कैसैं बनै तैसें लोककौं अर ब्रह्मकौं एक मानना कैसैं संभवै? बहुरि आकाशका तौ लक्षण सर्वत्र भासै है तातैं ताका तौ सर्वत्र सद्भाव मानिए है। ब्रह्मका तौ लक्षण सर्वत्र भासता नाहीं तातैं ताका सर्वत्र सद्भाव कैसैं मानिए? ऐसैं या प्रकारकरि भी सर्वरूप ब्रह्म नाहीं है। ऐसैं ही विचारकरतैं किसी भी प्रकारकरि एक ब्रह्म संभवै नाहीं। सर्व पदार्थ भिन्न भिन्न ही भासैं हैं। इहां प्रतिवादी कहै है--जो सर्व एक ही है परंतु तुम्हारै भ्रम है तातैं तुमकौं एक भासै नाहीं। बहुरि तुम युक्ति

कही सो ब्रह्मका स्वरूप युक्तिगम्य नाहीं। वचन अगोचर है, एक भी है अनेक भी है। जुदा भी है मिल्या भी है। वाकी महिमा ऐसी ही है। ताकौं कहिए है,—

जो प्रत्यक्ष तुजकौं वा सबनिकौं भासै ताकौं तौ तू भ्रम कहै। अर युक्तिकरि अनुमान करिए सो तू कहै है कि सांचा स्वरूप युक्तिगम्य है नाहीं। बहुरि कहै सांचास्वरूप वचनअगोचर है तौ वचन विना कैसैं निर्णय करै? बहुरि तू कहै एक भी है अनेक भी है जुदा भी है मिल्या भी है सो तिनकी अपेक्षा बतावै नाहीं बाउलेकीसी नांई ऐसैं भी है ऐसैं भी है ऐसा कहि याकौं महिमा बतावै सो जहां न्याय न होय है तहां झूठे ऐसैं ही वाचालपना करै है सो करो। न्याय तौ जैसैं सांचा है तैसैं ही होगा बहुरि अब तिस ब्रह्मकौं लोकका कर्त्ता मानै है ताकौं मिथ्या दिखाइए है,—

प्रथम तौ ऐसा मानै है जो ब्रह्मकै ऐसी इच्छा भई कि— 'एकोऽहं बहुस्यां, कहिए मैं एक हौं सो बहुत होस्यों। तहां पूछिए है—पूर्वअवस्थामैं दुःखी होय, तब अन्य अवस्थाकौं चाहै। सो ब्रह्म एकरूप अवस्थातैं बहुतरूप होनेकी इच्छा करी सो तिस एकरूप अवस्थाविषै कहा दुःख था? तब वह कहै है जो दुःख तौ न था ऐसा ही कौतूहल उपज्या। ताकौं कहिए है जो पूर्वैं थोरा सुखी होय अर कुतूहल किए घना सुखी होय सो कुतूहल करना विचारै। सो ब्रह्मकै एक अवस्थातैं बहुत अवस्थारूप भये घना सुख होना कैसैं संभवै? बहुरि जो पूर्वैं ही संपूर्ण सुखी

होय, तौ अवस्था काहेकौं पलटै। प्रयोजन विना तौं कोई किछू कर्तव्य करै नाहीं। बहुरि पूर्वैं भी सुखी होयगा इच्छा अनुसार कार्य भए भी सुखी होगा परंतु इच्छा भई तिसकाल तौ दुखी होय। तब वह कहै है ब्रह्मकै जिसकाल इच्छा हो है तिसकाल ही कार्य हो है तातैं दुःखी न हो है। तहां कहिए है, —स्थूल-कालकी अपेक्षा तौ ऐसैं मानौं परंतु सूक्ष्मकालकी अपेक्षा तौ इच्छाका और कार्यका होना युगपत् संभवै नाहीं। इच्छा तौ तब ही होय, जब कार्य न होय। कार्य होय, तब इच्छा न होय। तातैं सूक्ष्मकालमात्र इच्छा रही तब तौ दुःखी भया होगा। जातैं इच्छा है सो ही दुःख है और कोई दुःखका स्वरूप है नाहीं। तातैं ब्रह्मकै इच्छाकी कल्पना करिए है सो मिथ्या है।

बहुरि वह कहै है इच्छा होतैं ब्रह्मकी माया प्रगट भई सो ब्रह्मकै माया भई तब ब्रह्म भी मायावी भया शुद्धस्वरूप कैसैं रह्या। बहुरि ब्रह्मकै अर मायाकै दंडी दंडवत् संयोगसंबंध है कि अग्नि उष्णवत् समवायसंबंध है। जो संयोगसंबंध है तौ ब्रह्म भिन्न है माया भिन्न है अद्वैत ब्रह्म कैसैं रह्या? बहुरि जैसैं दंडी दंडकौं उपकारी जानि ग्रहै है तैसैं ब्रह्म मायाकौं उपकारी जानै है तौ ग्रहै है, नाहीं तौ काहेकौं ग्रहै? बहुरि जिस मायाकौं ब्रह्म ग्रहै ताका निषेध करना कैसैं संभवै वह तौ उपादेय भई। बहुरि जो समवायसंबंध है तौ जैसैं अग्निका उष्णत्व स्वभाव है तैसैं ब्रह्मका मायास्वभाव ही भया। जो ब्रह्मका स्वभाव है ताका निषेध करना कैसैं संभवै। यह तौ उत्तम भई।

बहुरि वह कहै है कि—ब्रह्म तौ चैतन्य है माया जड़ है सो समवायसंबंधविषै ऐसे दोय स्वभाव संभवै नाहीं। जैसैं प्रकाश और ब्रह्म अंधकार एकत्र कैसैं संभवै ? बहुरि वह कहै है,—माया करि ब्रह्म आप तौ भ्रमरूप होता नाहीं ताकी मायाकरि जीव भ्रमरूप हो हैं। ताकौं कहिए है,-जैसैं कपटी अपने कपटकौं आप जानैं सो आप भ्रमरूप न होय वाके कपटकरि अन्य भ्रमरूप होय जाय। तहां कपटी तौ वाहीकौं कहिए जानै कपट किया। ताकै कपटकरि अन्य भ्रमरूप भए तिनिकौं तौ कपटी न कहिए। तैसै ब्रह्म अपनी मायाकौं आप जानै सो आप तौ भ्रमरूप न होय वाकी मायाकरि अन्य जीव भ्रमरूप होय हैं। तहां मायावी तौ ब्रह्मकौं कहिए ताकी मयाकरि अन्य जीव भ्रमरूप भए तिनकौं मायावी काहेकौं कहिए।

बहुरि पूछिए है कि वे जीव ब्रह्मतैं एक हैं कि न्यारे हैं। जो एक हैं तौ जैसैं कोऊ आप ही अपने अंगनिकौं पीड़ा उपजावै तौ ताकौं बाउला कहिए है। तैसैं ब्रह्म आप ही आपतैं भिन्न नाहीं ऐसे अन्य जीवनिकौं मायाकरि दुखी करै है तौ याकौं कहा कहोगे, बहुरि जो न्यारे हैं तौ जैसैं कोऊ प्रयोजनभूत विना ही औरनिकौं भ्रम उपजावै पीड़ा देवै तौ ताकौं निकृष्ट ही कहिए। तैसैं ब्रह्म विना ही प्रयोजन अन्य जीवनिकौं माया उपजाय पीड़ा उपजावै तौ वाकौं कहा कहोगे। ऐसैं माया ब्रह्मकी कहिए है, सो भी भ्रम ही है।

बहुरि वे कहै हैं---जुदे जुदे बहुत पात्रनिविषै जल भर्या है

तिन सबनिविषै चंद्रमाका प्रतिबिंब जुदा जुदा पड़े है। चंद्रमा एक है। तैसें जुदे जुदे बहुत शरीरनिविषै ब्रह्मका चैतन्य प्रकाश जुदा जुदा पाइए है। ब्रह्म एक है। तातैं जीवनिकै चेतना है सो ब्रह्महीकी है। सो ऐसा कहना भी भ्रम ही है। जातैं शरीर जड़ है याविषै ब्रह्मका प्रतिबिंबतैं चेतना भई तौ घटपटादि जड़ है तिनविषै ब्रह्मका प्रतिबिंब क्यौं न पड़या अर चेतना क्यौं न भई। बहुरि वै कहै है शरीरकौं तौ चैतन्य नाहीं करै है जीवकौं करै है। तब वाकौं पूछिए है कि जीवका स्वरूप चेतन है कि अचेतन है। जो चेतन है तौ चेतनका चेतन कहा करैगा। जो अचेतन है तौ शरीरकी वा घटादिककी वा जीवकी एक जाति भई। बहुरि वाकौं पूछिए है—ब्रह्मकी अर जीवनिकी चेतना एक है कि भिन्न है। जो एक है तौ ज्ञानका अधिक हीनपना कैसैं देखिए है। बहुरि ए जीव परस्पर वह वाकी जानीकौं न जानै वह वाकी जानीकौं न जानै सो कारण कहा? जो तू कहैगा यह घट उपाधिका भेद है तो चेतना भिन्न भिन्न ठहरी। घट उपाधि मिटैं याकी चेतना ब्रह्ममैं मिलेगी कै नाश हो जायगी? जो नाश हो जायगी तो यह जीव अचेतन रह जायगा अर तू कहैगा जीव ही ब्रह्ममैं मिलि जाय है तौ तहां ब्रह्मविषै मिलैं याका अस्तित्व रहै है कि नाहीं रहै है। जो अस्तित्व रहै है तौ यह रह्या याकी चेतना याकै रही ब्रह्मविषै कहा मिल्या? अर जो अस्तित्व न रहै है तौ याका नाश भया ब्रह्मविषै कौन मिल्या? बहुरि जो तू कहैगा ब्रह्मकी अर जीवकी चेतना भिन्नभिन्न है

तौ ब्रह्म अर सर्वजीव आप ही भिन्न भिन्न भिन्न ठहरे। ऐसैं जीवनिकै चेतना है सो ब्रह्मकी है ऐसा मानना भ्रम है।

शरीरादि मायाके कहो सो माया ही हाड मांसादिरूप हो है कि मायाके निमित्ततैं और कोई तिनरूप हो है। जो गाया ही होय है तौ मयाकै वर्ण गंधादिक पूर्वैं ही थे कि नवीन भए। जो पूर्वैं थे तौ पूर्वैं तौ माया ब्रह्मकी थी अर ब्रह्म अमूर्त्तीक है तहा वर्णादि कैसैं सभवैं। बहुरि जो नवीन भए तौ अमूर्त्तीकका मूर्त्तीक भया तब अमूर्त्तीक स्वभाव शाश्वता ठहरया। बहुरि जो कहैगा मायाके निमित्ततैं और कोई हो है तौ और पदार्थ तौ तू ठहरावता ही नाहीं भया कौन जो तू कहेगा नवीन पदार्थ निपजे, तौ ते मायातैं भिन्न निपजे कि अभिन्न निपजे मायातैं भिन्न निपजे तौ मायामयी शरीरादिक काहेकौं कहौ। ते तौ तिनपदार्थमय भये अर अभिन्न निपजे तौ माया ही तद्रूप भई नवीन पदार्थ निपजे काहेकौं कहौ। ऐसैं शरीरादिक माया स्वरूप हैं ऐसा कहना भ्रम है।

बहुरि वह कहै है मायातैं तीन गुण निपजे—राजस तामस सात्विक। सो यह भी कहना मिथ्या है। जातैं मानादि कषायरूप भावकौं राजस कहिए है, क्रोधादिक कषायरूप भावकौं तामस कहिए है, मंदकषायरूप भावकौं सात्विक कहिए है। सो ए तौ भाव चेतनामई प्रत्यक्ष देखिए है। अर मायाका स्वरूप जड़ कह्यो हो, सो जड़तैं ए भाव कैसैं निपजैं। जो जड़कै भी होंय तौ पाषाणादिकके भी होंय। सो तो चेतनास्वरूप जीव तिनिहीकै ए

भाव दीसै हैं। तातैं ए भाव मायातैं निपजे नाहीं जो मयाकौं चेतन ठहरावै तौ मानैं। सो मायकौं चेतन ठहराए शरीरादिक मायातैं भिन्न भिन्न निपजे कहैगा तौ न मानैंगे। तातैं निर्द्धार कर भ्रमरूप मानैं नफा कहा है।

बहुरि वह कहै है तिनिगुणनितैं ब्रह्मा विष्णू महेश ए तीन देव प्रगट भए सो यह भी मिथ्या ही है। जातैं गुणीतैं तौ गुण होय गुणतैं गुणी कैसैं निपजै। पुरुषतैं तौ क्रोध होय क्रोधतैं पुरुष कैसैं निपजे। बहुरि इनि गुणनिकी तौ निंदा करिए है इनकरि निपजे ब्रह्मादिक तिनिकौं पूज्य कैसें मानिए है। बहुरि गुण तौ मायामय अर इनकौं ब्रह्माके अवतार कहिए है सो ए तौ मायाके अवतार भए इनकौं ब्रह्माके अवतार कैसें कहिए है। बहुरि ए गुण जिनमैं थोरे भी पाइए तिनिकौं तौ छुडावनेका उपदेश दीजिए अर जो इनिहीकी मूर्त्ति तिनिकौं पूंज्य मानिए। यह तौ बड़ा भ्रम है। बहुरि तिनिका कर्त्तव्य भी इनमयी भासै है। कुतूहलादिक वा युद्धादिक वा स्त्रीसेवनादिक कार्य करै हैं सो तिनि राजसादि गुणनिकरि ही ए क्रिया हो है। इनिकै राजसादिक पाइए है ऐसैं कहौ। इनिकौं पूज्य कहना परमेश्वर कहना तौ बनै नाहीं। जैसैं अन्य संसारी हैं तैसैं ए भी हैं। बहुरि कदाचित् तू कहैगा संसारी तौ मायाके आधीन हैं सो विना जाने तिन कार्यनिकौं करै हैं। ब्रह्मादिककै माया आधीन है सो ए जानकर इनि कार्यनिकौं करै हैं। सो यह भी भ्रम है। जातैं मायाके आधीन भए तौ काम क्रोधादि निपजे हैं और कहा हो है। सो इन

ब्रह्मादिकनिकै तो कामक्रोधादिककी तीव्रता पाइए हैं। कामकी तीव्रताकरि स्त्रीनिके वशीभूत भए नृत्य गानादि करते भए, विह्वल होते भए, नानाप्रकार कुचेष्टा करते भए बहुरि क्रोधके वशीभूत भए अनेक युद्धादि कार्य करते भए, मानके वशीभूत भए आपकी उच्चता प्रगट करनेके अर्थि अनेक उपाय करते भए, मायाके वशीभूत भए अनेक छल करते भए, लोभके वशीभूत भए परिग्रहका संग्रहकरते भए-इत्यादि बहुत कहा कहिए। ऐसैं वशीभूत भए चीरहरणादि निर्लज्जनिकी क्रिया और दधि लूटनादि चौरनिकी क्रिया अर रुंडमाला धारणादि बाउलेनिकी क्रिया, बहुरूपधारणादि भूतनिकी क्रिया, गौचरावणादि नीच कुलवालों-की क्रिया इत्यादि जे निंद्यक्रिया तिनिकौं तौ करत भए, यातैं अधिक मायाके वशीभूत भए कहा क्रिया हो है सो जानी न परी। जैसैं कोऊ मेघपटलसहित आमावस्याकी रातकौं अंधकार रहित मानै तैसैं बाह्य कुचेष्टासहित तीव्र काम क्रोधादिकनिके धारी ब्रह्मादिकनिकौं मायारहित मानना है।

बहुरि वह कहै कि इनिकौं कामक्रोधादि व्याप्त नहीं होता यह भी परमेश्वरकी लीला है। ताकौं कहिए है--ऐसे कार्य करै है ते इच्छाकरि करैं हैं की विना इच्छा करैं हैं। जो इच्छा-करि करैं हैं तौ स्त्रीसेवनकी इच्छाहीका नाम काम है युद्ध करनेकी इच्छहीका नाम क्रोध है इत्यादि ऐसैं ही जानना। बहुरि जो विना इच्छा हो है तौ आप जाकौं न चाहै ऐसा कार्य तौ परवश भए ही होय सो परवशपना कैसैं संभवै। बहुरि

तू लीला बतावै है सो परमेश्वर अवतार धरि इन कार्यनिविषै लीला करै है तौ अन्य जीवनिकौं इनि कार्यनितैं छुड़ाय मुक्त करनेका उपदेश काहेकौं दीजिए है । क्षमा संतोष शील संयमादिकका उपदेश सर्व झूंठा भया ।

बहुरि वै कहैं हैं कि परमेश्वरकौं तौ किछू प्रयोजन नाहीं लोकरीतिकी प्रवृत्तिके अर्थि वा भक्तनिकी रक्षा दुष्टनिका निग्रह तिनिके अर्थि अवतार धरै है । याकौं पूछिए है—प्रयोजन बिना चिंवटी हू कार्य न करै परमेश्वर काहेकौं करै । बहुरि प्रयोजन भी कहा लोकरीतिकी प्रवृत्तिके अर्थि करै है । सो जैसैं कोई पुरुष आप कुचेष्टाकरि अपने पुत्रनिकौं सिखावै बहुरि वै तिस चेष्टारूप प्रवर्त्तैं तब उनकौं मारै तौ ऐसे पिताकौं भला कैसैं कहिए । तैसैं ब्रह्मादिक आप कामक्रोधरूप चेष्टाकरि अपने निपजाए लोकनिकै प्रवृत्ति करावैं । बहुरि वे लोक तैसैं प्रवर्तैं तब उनकौं नरकादिकविषै डारैं । नरकादिक इनिही भावनिका फल शास्त्रविषै लिख्या है सो ऐसे प्रभुकौं भला कैसैं मानिए बहुरि तैं यह प्रयोजन कह्या कि भक्तनिकी रक्षा दुष्टनिका निग्रह करना सो भक्तनिकौं दुखदायक जे दुष्ट भए ते परमेश्वरकी इच्छाकरि भए कि विना इच्छाकरि भए । जो इच्छाकरि-भए तौ जैसैं कोऊ अपने सेवककौं आप ही काहूकौं कहकरि मरावै बहुरि तिस मारनेवालेकौं आप मारै सो ऐसे स्वामीकौं भला कैसैं कहिए । तैसैं ही जो अपने भक्तनिकौं आप ही इच्छाकरि दुष्टनिकरि पीडित करावै । अर पीछैं तिनि दुष्टनि

कौं आप अवतार धारि मारै तौ ऐसे ईश्वरकौं भला कैसैं मानिए। बहुरि जो तू कहैगा कि विना इच्छा दुष्ट भए तौ कै तौ परमेश्वरकै ऐसा आगामी ज्ञान न होगा जो दुष्ट मेरे भक्तनिकौं दुख देवैंगे कै पहिले ऐसे शक्ति न होगी जो इनिका ऐसे न होने देता। बहुरि वाकौं पूछिए है जो ऐसे कार्यके अर्थि अवतार धार्या सो कहा विना अवतार धारे शक्ति थी कि नाहीं। जो थी तौ अवतार काहेकौं धारे अर न थी तौ पीछे सामर्थ्य होनेका कारण कहा भया। तब वह कहै है ऐसैं किए विना परमेश्वरकी महिमा कैसैं प्रगट होय। वाकौं पूछिये है कि अपनी महिमाके अर्थि अपने अनुचरनिका पालन करै प्रतिपक्षीनिका निग्रह करै सो ही रागद्वेष है। सो रागद्वेष तो संसारी जीवका लक्षण है। जो परमेश्वरके भी रागद्वेष पाइए है तौ अन्य जीवनिकौं रागद्वेष छोडि समता भाव करनेका उपदेश काहेकौं दीजिए। बहुरि रागद्वेषके अनुसार कार्य करना विचार्या सो कार्य थोरे वा बहुत काल लागे विना होय नाही तावत् काल आकुलता भी परमेश्वरकै होती होसी बहुरि जैसैं जिस कार्यकौं छोटा आदमी ही कर सकै तिस कार्यकौं राजा आप करै तौ किछू राजाकी महिमा होती नाहीं निंदा ही होय। तैसैं जिस कार्यकौं राजा वा व्यंतरदेवादिक करि सकैं तिस कार्यकौं परमेश्वर आप अवतार धारि करै ऐसा मानिये तौ किछू परमेश्वरकी महिमा होती नाहीं निंदा ही है। बहुरि महिमा तौ कोई और होय ताकौं दिखाइए है। तू तौ

अद्वैत ब्रह्म माने है कौनकौ महिमा दिखावै है। अर महिमा दिखानेका फल तौ स्तुति करावना है तौ कौनपै स्तुति कराया चाहै है। बहुरि तू तौ कहै है सर्व जीव परमेश्वरकी इच्छा अनुसार प्रवर्तै हैं अर आपकै स्तुति करावनेकी इच्छा है तौ सबकौं अपनी स्तुतिरूप प्रवर्त्तावै तौ काहेकौं अन्य कार्य करना परै। तातैं महिमाकै अर्थि भी कार्य करना न बनै।

बहुरि वै कहै है—परमेश्वर इनि कार्यनिकौं करता संता भी अकर्त्ता है याका निर्द्धार होता नाहीं। याकौं कहिए है—तू कहैगा इह मेरी माता भी है अर बांझ भी है तो तेरा कह्या कैसैं मानैंगे। जो कार्य करै ताकौं अकर्त्ता कैसैं मानिए। अर तू कहै निर्द्धार होता नाहीं सो निर्द्धार विना मान लेना ठहर्‍या तौ आकाशके फूल गधेके सींग भी मानौ सो ऐसा कहना युक्त नाहीं। ऐसैं ब्रह्मा विष्णू महेशका होना कहै हैं, सो मिथ्या जानना।

बहुरि वै कहै हैं—ब्रह्मा तौ सृष्टिकौं उपजावैहै, विष्णु रक्षा करै है महेश संहार करै है। सो ऐसा कहना भी मिथ्या है। जातैं इनि कार्यनिकौं करतैं कोऊ किछू किया चाहै कोऊ किछू किया चाहै तब परस्पर विरोध होय। अर जो तू कहैगा ए तौ एक परमेश्वरका ही स्वरूप है, विरोध काहेकौं होय। तौ आप ही उपजावै आप ही क्षिपावै ऐसे कार्यमैं कौन फल है। जो सृष्टि आपकौं अनिष्ट है तौ काहेकौं उपजाई अर इष्ट है तौ काहेकौं खपाई। जो पहिलै इष्ट लागी तब उपजाई पीछैं अनिष्ट लागी

तब खपाई ऐसैं है तौ परमेश्वरका स्वभाव अन्यथा भया कि सृष्टिका स्वरूप अन्यथा भया। जो प्रथम पक्ष ग्रहैगा तौ परमेश्वरका एक स्वभाव न ठहर्‍या। सो एक स्वभाव न रहनेका कारण कौन है सो वताय, विनाकारण स्वभावकी पलटनि काहेकौं होय। अर द्वितीय पक्ष ग्रहैगा तौ सृष्टि तौ परमेश्वरके आधीन थी वाकौं ऐसी काहेकौं होनै दीनी जो आपकौं अनिष्ट लागै।

वहुरि हम पूछै हैं – ब्रह्मा सृष्टि उपजावै है सो कैसैं उपजावै हैं। एक तौ प्रकार यह है जैसैं मंदिर चुननेवाला चूनापत्थर आदि सामग्री एकठीकरि आकारादि वनावै है। तैसैं ही ब्रह्मा सामग्री एकठीकरि सृष्टि रचना करै है तौ ए सामग्री जहातैं ल्याय एकठी करि सो ठिकाना वताय। अर एक ब्रह्मा ही एती रचना वनाई सो पहिले पीछै वनाई होगी, के अपने शरीरके हस्तादि वहुत किए होंगे सो कैसैं है सो वताय। जो वतावैगा तिसहीमैं विचार किए विरुद्ध भासैगा।

वहुरि एक प्रकार यह है जैसैं राजा आज्ञा करै ताके अनुसार कार्य होय तैसैं ब्रह्मकी आज्ञाकरि सृष्टि निपजै है तौ आज्ञा कौनकौं दई। अर जिनिकौं यह आज्ञा दई वे कहांतै सामग्री पाय कैसै रचना करै है, सो वताय।

वहुरि एक प्रकार यह है जैसैं ऋद्धिधारी इच्छा करै ताके अनुसारि कार्य स्वयमेव वनै तैसैं ब्रह्मा इच्छा करै ताकै अनुसारि सृष्टि निपजै है, तौ ब्रह्मा तौ इच्छाहीका कर्त्ता भया। लोक तौ स्वयमेव ही निपज्या। वहुरि इच्छा तौ परमब्रह्म कीन्ही थी

ब्रह्माका . कर्तव्य कहां भया जातैं ब्रह्माकौं सृष्टिका निपजावनहारा कह्या । बहुरि तू कहैगा परमब्रह्म भी इच्छा करी अर ब्रह्मा भी इच्छा करी तब लोक निपज्या तौ जानिए है केवल परमब्रह्मकी इच्छा कार्यकारी नाहीं । तहां शक्तिहीनपना आया ।

बहुरि हम पूछैं हैं जो केवल बनाया हुवा लोक बनै है तौ बनावनहारा तौ सुखके अर्थि बनावै सो इष्ट ही रचना करै । इस लोकविषै तौ इष्ट पदार्थ थोरे देखिए है अनिष्ट घने देखिए है । जीवनिविषै देवादिक बनाए सो तौ रमनेके अर्थि वा भक्ति करावनेके अर्थि बनाए परंतु लट कीड़ी कूकरे सूअर सिंहादिक बनाये सो किस अर्थि बनाए । ए तौ रमणीक नाहीं । सर्व प्रकार अनिष्ट ही हैं । बहुरि दरिद्री दुखी नारकीनिकों देखे आपकौं जुगुप्सा ग्लानि आदि दुख उपजै ऐसे अनिष्ट काहेकौं बनाए । तहां वह कहै है,—ए जीव अपने पापकरि लट कीड़ी दरिद्री नारकी आदि पर्याय भुगतै हैं । याकौं पूछिए है कि पीछै तौ पापहीका फलतैं ए पर्याय भए कहो परंतु पहिले लोकरचना करते ही इनकौं बनाए सो किस अर्थि बनाए । बहुरि जीव पीछैं पापरूप परिणए तौ कैसैं परिणए । जो आप ही परिणए कहोगे तौ जानिए है ब्रह्मा पहिलै तौ निपजाए पीछैं वाकै आधीन न रहे इसकारणतैं ब्रह्माकौं दुख ही भया । बहुरि कहोगे--ब्रह्माके परिणमाए परिणमै हैं तौ तिनिकौं पापरूप काहेकौं परिणमाए । जीव तौ आपके निपजाए थे उनका बुरा किस अर्थि किया । तातैं ऐसैं भी न बनै । बहुरि अजीवनिविषै सुवर्ण सुगंधादि सहितवस्तु बनाए

सो तौ रमणैके अर्थि बनाए कुवर्ण दुर्गंधादिसहित दुखदायक वस्तु बनाए सो किस अर्थि बनाए। इनिका दर्शनादिकरि ब्रह्मकै किछू सुख तौ नाहीं उपजता होगा। बहुरि तू कहैगा, पापी जीवनिकौं दुख देनेके अर्थि बनाए, तौ आपहीके निपजाए जीव तिनिस्यौं ऐसी दुष्टता काहेकौं करी जो तिनिकौं दुखदायक सामग्री पहिले ही बनाई। बहुरि धूलि पर्वतादिक केतीक वस्तु ऐसी हैं जे रमणीक भी नाहीं अर दुखदायक भी नाहीं। तिनिकौं किस अर्थि बनाए। स्वयमेव तौ जैसें तैसें हीं होय अर बनावनहारा बनावै सो प्रयोजनलिए ही बनावै। तातैं 'ब्रह्म सृष्टिका कर्त्ता है।' यह मिथ्यावचन है।

बहुरि विष्णुकौं लोकका रक्षक कहै हैं सो भी मिथ्या है। जातैं रक्षक होय सो तौ दोय ही कार्य करै। एक तौ दुख उपजावनेके कारण न होनै दे अर एक विनसनेका कारण न होनै दे। सो तौ लोकविषै दुखहीके उपजनैके कारण जहां तहां देखिए है। अर तिनिकरि जीवनिकौं दुख ही देखिए है। क्षुधा तृषादिक लग रहे हैं। शीत उष्णादिक करि दुख हो है। जीव परस्पर दुख उपजावै हैं। शस्त्रादि दुखके कारण बनि रहे हैं। बहुरि विनसनेके कारण अनेक बनि रहे हैं। जीवनीकै रोगादिक वा अग्नि विष शस्त्रादिक पर्यायके नाशके कारण देखिए है। अर जीवनिकै भी परस्पर विनसनेका कारण देखिए है। सो ऐसैं दोय प्रकारहीकी रक्षा की नाहीं तौ विष्णु रक्षक होय कहा किया। वै कहै हैं।—विष्णु रक्षक ही है देखो

क्षुधा तृषादिकके अर्थि अन्न जलादिक किए हैं कीड़ीकौं कण कुंजरकौं मण पहुचावे हैं। संकटमैं सहाय करै है। मरणके कारण भए टीटोडीकी नांई उबारै है इत्यादि प्रकारकरि विष्णु रक्षा करै है याकौं कहिए है,—ऐसैं है तौ जहां जीवनिकौं क्षुधातृषादिक बहुत पीड़ैं अर अन्न जलादिक मिलै नाहीं, संकट पड़ै सहाय न होय किंचित् कारण पाय मरण होय जाय, तहां विष्णु की शक्ति हीन भई कि वाकौं ज्ञान न भया। लोकविषै बहुत ऐसैं ही दुखी हो हैं मरण पावै हैं विष्णु रक्षा काहेकौं न करी। तब वै कहै हैं, यह जीवनिके अपने कर्त्तव्यका फल है। तब वाकौं कहिए है कि, जैसैं शक्तिहीन लोभी झूठा वैद्य काहूकै किछू भला होइ ताकौं तौ कहै मेरा कियाभया है। अर जहां बुरा होय मरण होय, तब कहै याका ऐसा ही होनहार था। तैसैं ही तू कहै है कि, भला भया तहां तौ विष्णुका किया भया अर बुरा भया सो जीवनिके कर्त्तव्यका फल भया। ऐसैं झूठी कल्पना काहेकौं कीजिए। कै तौ बुरा भला दोऊ विष्णुका किया कहौ कै अपने कर्तव्यका फल कहो। जो विष्णुका किया भया तौ घने जीव दुखी अर शीघ्र मरते देखिए है सो ऐसा करै ताकौं रक्षक कैसैं कहिए। बहुरि अपने

१ (टिटहरी) एक प्रकारका पक्षी एक समुद्र किनारे रहती थी। उसके अंडे समुद्र बहा ले जाता था, सो उसने दुखी होकर गरुड पक्षीकी मारफत विष्णुसे अर्ज की, तौ उन्होंने समुद्रसे अंडे दिलवा दिये। ऐसी पुराणोंमें कथा है।

कर्त्तव्यका फल है तौ करैगा सो पावैगा विष्णु कहा रक्षा करैगा। तब वै कहै हैं, जे विष्णुके भक्त हैं तिनिकी रक्षा करै है। वाकौं कहिए है कि जो ऐसा है तौ कीड़ी कुंजर आदि भक्त नाहीं उनकै अन्नादिक पहुचावनैविषै वा संकटमैं सहाय होनैविषै वा मरण होनैविषै विष्णुका कर्त्तव्य मानि सर्वका रक्षक काहेकौं मानैं। भक्त भक्तहीका रक्षक मानि। सो भक्तनिका भी रक्षक दीसता नाहीं। जातैं अभक्त भी भक्त पुरुषनिकौं पीड़ा उपजावते देखिए है। तब वह कहै है,—घनी ही जायगा (जगह) प्रह्लादादिककी सहाय करी है। वाकौं कहै है,—जहां सहाय करी तहां तौ तू तैसैं ही मानि। परंतु हम तौ प्रत्यक्ष म्लेच्छ मुसलमान आदि अभक्त पुरुषनिकरि भक्त पुरुष पीड़ित होते देखि वा मंदिरादिकौं विघ्न करते देखि पूछै हैं, कि इहां सहाय न करै है सो विष्णुकी शक्ति ही नाहीं कि खबरि नहीं। जो शक्ति नाहीं तौ इनितैं भी हीनशक्तिका धारक भया। जो खबरि नाहीं तौ जाकौं एती भी खबर नाहीं सो अज्ञान भया। अर जो तू कहैगा, शक्ति भी है अर जानै भी है इच्छा ऐसी ही भई, तौ फिर भक्तवत्सल काहेकौं कहै। ऐसैं विष्णुकौं लोकका रक्षक मानना मिथ्या है।

बहुरि वै कहै है—महेश संहार करै है, सो भी मिथ्या है। प्रथम तौ महेश संहार करै है सो सदा ही करै है कि महाप्रलय हो है तब ही करै है। जो सदा करै है तौ जैसैं विष्णुकी रक्षा करनेकरि स्तुति कीनी तैसैं याकी संहार करनेकरि निंदा करो।

जातैं रक्षा अर संहार प्रतिपक्षी हैं। बहुरि यह संहार कैसैं करै है। जैसैं पुरुष हस्तादिककरि काहूकौं मारै वा काहूकरि मरावै तैसैं महेश अपने अंगनिकरि संहार करै है वा काहूकौं आज्ञाकरि मरावै है। जो अपने अंगनिकरि संहार करै है, तो । क्षण क्षणमैं संहार तौ घने जीवनिका सर्व लोकमैं हो है यह कैसैं अंगनिकरि वा कौन कौनकौं आज्ञा देय युगपत् कैसैं संहार करै है। जो कहै कि महेश तौ इच्छा ही करै अर याहीकी इच्छातैं स्वयमेव उनका संहार हो है। तौ याकै सदा काल मारनेरूप दुष्टपरिणाम ही रह्या करते होंगे। अर अनेकजीवनिकौं युगपत मारनेकी इच्छा कैसैं होती होगी। बहुरि जो महा प्रलय होतैं संहार करै है तौ परमब्रह्मकी इच्छा भए करै है कि वाकी विना इच्छा ही करै है। जो इच्छा भए करै है तौ परमब्रह्मकै ऐसा क्रोध कैसैं भया जो सर्वका प्रलय करनेकी इच्छा भई। जातैं कोई कारण विना नाश करनेकी इच्छा होय नाहीं। अर नाश करनेकी इच्छा ताहीका नाम क्रोध है, सो कारण बताय। बहुरि विनाकारण इच्छा हो है, तौ बावले-कीसी इच्छा भई। बहुरि तू कहैगा परमब्रह्म यह ख्याल (खेल) बनाया था बहुरि दूरि किया कारन किछू भी नाहीं, तौ ख्याल बनानैवालाकौं भी ख्याल इष्ट लागै है तब बनावै है। अनिष्ट लागै है तब दूरि करै है। जो याकौं यह लोक इष्ट अनिष्ट लागै है, तौ याकै लोकसौं रागद्वेष तौ भया। साक्षीभूत परब्रह्मका स्वरूप काहेकौं कहो। साक्षीभूत तौ वाका नाम है जो स्वयमेव जैसैं होय तैसैं देख्या जान्या करै। जो इष्ट अनिष्ट मानि उपजावै नष्ट करै

ताकौं साक्षीभूत कैसैं कहिए, जातैं साक्षीभूत रहना अर कर्त्ता हर्ता होना ए दोऊ परस्पर विरोधी है । एककै दोऊ संभवै नाहीं । बहुरि परमब्रह्मकै पहिलै तौ इच्छा यह भई थी कि 'मैं एक हों सो बहुत होस्यों' तब बहुत भया था । अब ऐसी इच्छा भई होगी जो "मैं बहुत हों सो एक होस्यों" सो जैसैं कोऊ भोलपतैं कारज करि पीछैं तिस कार्यकौं दूरि किया चाहै तैसैं परमब्रह्म भी बहुत होय एक होनेकी इच्छा करी सो जानिये है कि बहुत होनेका कार्य किया सो भोलपहीतैं किया था आगामी ज्ञानकरि किया होता तौ काहेकौं ताके दूरि करनेकी इच्छा होती ।

बहुरि जो परमब्रह्मकी इच्छा विना ही महेश संहार करै है तौ यह परमब्रह्मका वा ब्रह्माका विरोधी भया । बहुरि पूछैं हैं कि महेश लोककौं कैसैं संहार करै है । अपने अंगनि करि संहार करै है कि इच्छा होतैं स्वयमेव ही संहार हो है । जो अपने अंगनिकरि संहार करै है तो सर्वका युगपत् संहार कैसैं करै हैं बहुरि याकी इच्छा होतैं स्वयमेव संहार हो है तौ इच्छा तो परमब्रह्म कीन्ही थी यानैं संहार कहा किया ।

बहुरि हम पूछै हैं कि संहार भए सर्व लोकविषै जीव अजीव थे ते कहां गए । तब वै कहै है—जीवनिविषै भक्त तौ ब्रह्मविषै मिले अन्य मायाविषै मिले । अब याकूं पूछिए है कि माया ब्रह्मतैं जुदी रहै है कि पीछैं एक होय जाय है । जो जुदी रहै तौ ब्रह्मवत् माया भी नित्य भई । तब अद्वैतब्रह्म न रह्या । अर माया ब्रह्ममैं एक होय जाय है तौ जे जीव मायामैं मिले थे ते भी मायाके

साथि ब्रह्ममैं मिलि गए। जब महाप्रलय होतैं सर्वका परब्रह्ममैं मिलना ठहरया ही तौ मोक्षका उपाय काहेकौं करिए। बहुरि जे जीव मायामैं मिले ते बहुरि लोकरचना भए वे ही जीव लोकविषै आवैंगे कि वे तौ ब्रह्ममैं मिलगए थे नए उपजैंगे। जो वे ही आवैंगे तौ जानिए है जुदे जुदे रहै हैं मिले काहेकौं कहे। अर न उपजैंगे तौ जीवका अस्तित्व थोरा कालपर्यंत ही रहै है काहेकौं मुक्त होनेका उपाय कीजिए है। बहुरि वे कहै है कि पृथिवी आदिक हैं ते मायाविषै मिलैं हैं सो माया अमूर्त्तीक सचेतन है कि मूर्त्तीक अचेतन है। जो अमूर्त्तीक सचेतन है तौ यामैं मूर्त्तीक अचेतन कैसें मिलैं। अर मूर्त्तीक अचेतन है तो यह ब्रह्ममैं मिलै है कि नाहीं। जो मिलै है तौ याके मिलनेतैं ब्रह्म भी मूर्त्तीक अचेतनकरि मिश्रित भया। अर न मिलै है तौ अद्वैतता न रही। अर तू कहैगा ए सर्व अमूर्त्तीक चेतन होइ जाय है तौ आत्मा अर शरीरादिककी एकता भई सो यह संसारी एकता मानै ही है याकौं अज्ञानी काहेकौं कहिए। बहुरि पूछैं हैं,—लोकका प्रलय होतैं महेशका प्रलय हो है कि नाहीं। जो हो है तौ युगपत हो है कि आगैं पीछैं हो है। युगपत् हो है तौ आप नष्ट होता लोककौं नष्ट कैसें करै। अर आगैं पीछैं हो है तौ महेश लोककौं नष्टकरि आप कहां रह्या आप भी तो सृष्टिविषै ही था, ऐसैं महेशकौं सृष्टिका संहारकर्त्ता मानै है सो असंभव है। या प्रकारकरि वा अन्य अनेकप्रकारकरि ब्रह्मा विष्णु महेशकौं सृष्टिका उपजावन हारा, रक्षा करनेवाला, संहार करनहारा मानना मिथ्या जानि

लोककौं अनादिनिधन मानना। इस लोकविषै जे जीवादि पदार्थ हैं ते न्यारे न्यारे अनादिनिधन हैं। बहुरि तिनिकी अवस्थाकी पलटनि हुवा करै है तिस अपेक्षा उपजते विनशते कहिए है। बहुरि स्वर्ग नरक द्वीपादिक हैं ते अनादितैं ऐसैं ही हैं अर सदाकाल ऐसैं ही रहैंगे। कदाचित् तू कहैगा विना बनाए ऐसे आकारादिक कैसैं संभवैं होंय तौं बनाए ही होंय। सो ऐसा नाहीं है जातैं अनादितैं ही जे पाइए तहां तर्क कहा। जैसैं तू परब्रह्मका स्वरूप अनादिनिधन मानै तैसैं ए भी हैं। तू कहै जीवादिक वा स्वर्गादिक कैसैं भए। हम कहैंगे परब्रह्म कैसैं भया। तू कहैगा इनकी रचना ऐसी कौंन करी। हम कहैंगे परब्रह्मकौं ऐसा कौन बनाया। तू कहैगा परब्रह्म स्वयंसिद्ध है। हम कहैंगे जीवादिक वा स्वर्गादिक स्वयंसिद्ध है। तू कहैगा इनकी अर परब्रह्मकी समानता कैसैं संभवै। तौ संभवनेविषैं दूषण बताय। लोककौं नवा उपजावना ताका नाश करना तिसविषैं तौ हम अनेक दोष दिखाए। लोककौं अनादिनिधन माननेतैं कहा दोष है सो तू बताय। जो तू परब्रह्म मानै है सो जुदा ही कोई है नाहीं। ए संसारविषै जीव हैं ते ही यथार्थ ज्ञानकरि मोक्षमार्ग साधनतैं सर्वज्ञ वीतराग हो हैं।

इहां प्रश्न—जो तुम तौ न्यारे न्यरे जीव अनादिनिधन कहो हौ मुक्त भए पीछैं तो निराकार हो हैं तहां न्यारे न्यारे कैसैं संभवैं। ताका समाधान—जो मुक्त भए पीछैं सर्वकौं दीसै है कि नाहीं दीसै है। जो दीसैं है तौ किछू आकार दीसता ही होगा। विना आकार देखै कहा देख्या। अर न दीसैं है तौ कै तौ

वस्तु ही नाहीं कै सर्वज्ञ नहीं। तातैं इंद्रियगम्य आकार नाहीं तिस अपेक्षा निराकार है अर सर्वज्ञ ज्ञानगम्य है तातैं आकारवान् है। जब आकारवान् ठहरया तब जुदा जुदा होय तौ कहा दोष लागै। बहुरि जो तू जाति अपेक्षा एक कहै तौ हम भी मानैं हैं। जैसें गेहूं भिन्नभिन्न हैं तिनकी जाति एक है ऐसें एक मानैं तौ किछू दोष है नाहीं या प्रकार यथार्थ श्रद्धानकरि लोकविषै सर्व पदार्थ अकृत्रिम जुदे जुदे अनादिनिधन मानने। बहुरि जो वृथा ही भ्रमकरि सांच झूंठका निर्णय न करै तौ तू जानै तेरे श्रद्धानका फल तू पावेगा।

बहुरि वे ही ब्रह्मतैं पुत्रपौत्रादिकरि कुलप्रवृत्ति कहै हैं। बहुरि कुलनिविषै राक्षस मनुष देव तिर्यचनिकै परस्पर प्रसूतिभेद बतावै हैं। तहां देवतैं मनुष्य वा मनुष्यतैं देव वा तिर्यंचतैं मनुष्य इत्यादि कोई माता कोई पितातैं पुत्रपुत्रीका उपजना बतावैं सो कैसें संभवै। बहुरि मनहीकरि वा पवनादिकरि वा वीर्य सूंघने आदि करि प्रसूति होनी बतावै हैं, सो प्रत्यक्षविरुद्ध भासै है। ऐसें होतैं पुत्रपौत्रादिकका नियम कैसें रह्या। बहुरि बड़ेबड़ेनिकौं अन्य अन्य माता पितातैं भए कहै हैं। सो महंतपुरुष कुशीली मातापितातैं कैसैंउपजैं। यह लोकविषै गालि है। ऐसा कहि उनकी महंतता काहेकौं कहिए है। बहुरि गणेशादिककी मैल आदिकरि उत्पत्ति बतावै हैं। वा काहूका अंग काहूकै जुरै बतावै हैं। इत्यादि अनेक प्रत्यक्ष विरुद्ध कहै हैं। बहुरि चौईस अवतार भए कहै हैं, तहां केई अवतारनिकौं पूर्णावतार कहै हैं। केईनिकौं अंशावतार कहै

हैं। सो पूर्णावतार भए तब ब्रह्म अन्यत्र व्यापि रह्या कि न रह्या- जो रह्या तौ इनि अवतारनिकौं पूर्णावतार काहेकौं कहौ। जो व्यापि न रह्या तौ एतावन्मात्र ही ब्रह्म रह्या। बहुरि अंश अवतार भए तहां ब्रह्मका अंश तौ सर्वत्र कहौ हौ इनविषै कहा अधिकता भई। बहुरि कार्य तौ तुच्छ तिसकै वास्तै आप ब्रह्म अंशावतार धार्‌या कहै सो जानिये है विना अवतार धारे ब्रह्मकी शक्ति तिस कार्यके करनेकी न थी। जातैं जो कार्य स्तोक उद्यमतैं होय तहां बहुत उद्यम काहेकौं करिए। बहुरि अवतारनिविषै मच्छ कच्छादि अवतार भए सो किंचित् करनेके अर्थि हीन तिर्यंच पर्यायरूप भए सो कैसैं संभवै। बहुरि प्रहलादके अर्थि नरसिंह- अवतार भए सो हरिणाकुशकौं ऐसा काहेकौं होनै दिया। अर कितनेक काल अपने भक्तकौं काहेकौं दुख दिया। बहुरि विड्रूप स्वांग काहेकौं धर्‌या। बहुरि नाभिराजाकै वृषभावतार भया बतावै हैं सो नाभिकौं पुत्रपनेका सुख उपजावनेकौं अवतार धर्‌या। घोरतपश्चरण किस अर्थि किया। उनकौं तौ कुछ साध्य था ही नहीं। अर कहैगा जगतके दिखावनैकौं किया तौ कोई अवतार तौ तपश्चरण दिखावैं। कोई अवतार भोगादिक दिखावै। जगत किसकौं भला जानि लागै। यह तौ बहुरूपियाकासा स्वांग किया।

बहुरि वह कहै है—एक अरहंत नामका राजा भया, सो वृषभावतारका मत अंगीकारकरि जैनमत प्रगट किया सो जैनविषै कोई एक अरहंत भया नाहीं। जो सर्वज्ञपद पाय पूजने योग्य होय

ताहीका नाम अर्हंत् है। बहुरि राम कृष्ण इनि दोय अवतार-
निकौं मुख्य कहैं हैं सो रामावतार कहा किया। सीताके अर्थि
विलापकरि रावणसौं लरि वाकूं मारि राज किया। अर कृष्णा-
वतार पहिलै गुवालिया होय परस्त्री गोपिकानिके अर्थि नाना
विपरीत चेष्टाकरि पीछैं जरासिंधु आदिकौं मारि राज किया। सो
ऐसे कार्य करनेमैं कहा सिद्धि भई। बहुरि रामकृष्णादिकका एक
स्वरूप कहैं। सो बीचिमैं इतने काल कहां रहे। जो ब्रह्मविषै
रहे तौ जुदे रहे कि एक रहे। जुदे रहे तौ जानिए है ए ब्रह्मतै
जुदे रहे। एक रहे तौ राम ही कृष्ण भया सीता ही रुक्मिणी
भई इत्यादि कैसैं कहिए है। बहुरि रामावतारविषै तौ सीताकौं
मुख्य कहै अर कृष्णावतारविषै सीताकौं रुक्मिणी भई कहै ताकूं
तौ प्रधान न कहैं राधिका कुमारी ताकूं मुख्य कहैं। बहुरि
पूछैं तब कहैं कि राधिका भक्त थी, सो निजस्त्री कौं छोरि दासीका
मुख्य करना कैसैं बनै। बहुरि कृष्णकै तौ राधिकासहित परस्त्री
सेवनके सर्व विधान भए। सो यह भक्ति कैसी करी। ऐसे कार्य
तौ महानिंद्य हैं। बहुरि रुक्मिणीकूं छोरि राधाकौं मुख्य करी सो
परस्त्रीसेवनकौं भला जानि करी होसी। बहुरि एक राधाहीविषै
आसक्त न भया अन्य गोपिका कुब्जा आदि अनेक परस्त्रीविषै
भी आसक्त भया। सो यह अवतार ऐसे ही कार्यका अधिकारी
भया। बहुरि कहैं—लक्ष्मी वाकी स्त्री है बहुरि धनादिककौं लक्ष्मी
कहैं सो ए तौ पृथ्वी आदिविषै जैसैं पाषाण धूलि है तैसैं ही रत्न
सुवर्णादि देखिए है। जुदी ही लक्ष्मी कौन जाका भर्त्तार नारायण

है। बहुरि सीतादिकौं मायाका स्वरूप कहैं सो इनिविषै आसक्त भए तब मायाविषै आसक्त कैसैं न भए। कहां ताईं कहिए जो निरूपण करैं सो विरुद्ध करैं। परंतु जीवनकौं भोगादिककी वार्त्ता सुहावै तातैं तिनिका कहना वल्लभ लागै है। ऐसैं अवतार कहे हैं इनिकौं ब्रह्मस्वरूप कहै है। बहुरि औरनिसौं भी ब्रह्मरूप कहै हैं। एक तौ महादेवकौं ब्रह्मस्वरूप मानै हैं। ताकूं योगी कहै हैं, सो योग किस अर्थि ग्रह्या। बहुरि मृगछाला भस्मी धारै है सो किस अर्थि धारी है। बहुरि रुंडमाळा पहरै हैं सो हाड़ांका छीवना भी निंद्य है ताकूं गलेमैं किस अर्थि धारै है। सर्पादि सहित है सो यामैं कौन बड़ाई है। आक धतूरा खाय है लो यामैं कौन भलाई है। त्रिशूलादि राखै है सो कौनका भय है। बहुरि पार्वती संग लिए हैं सो योगी होय स्त्री राखै है सो ऐसा विपरीतपना कहेकौं किया। कामासक्त था तौ घरहीमें रह्या होता। बहुरि वानै नानाप्रकार विपरीत चेष्टा कीन्हीं ताका प्रयोजन तौ किछू भासै नाहीं। बाउलेकासा कर्त्तव्य भासै ताकौं ब्रह्मस्वरूप कहैं।

बहुरि कृष्णकौं याका सेवक कहै है कबहू याकौं कृष्णका सेवक कहैं कबहू दोउनिकौं एक ही कहैं सो किछू ठिकाना नाहीं। बहुरि सूर्य्यादिककौं ब्रह्मका स्वरूप कहैं। बहुरि ऐसा कहैं जो विष्णु कह्या सो धातूनिविषै सुवर्ण, वृक्षनिविषै कल्पवृक्ष जूवाविषै झूंठ इत्यादिमैं मैं ही हौं। सो किछू पूर्वापर विचारै नाहीं। कोई एक अंगकरि संसारी जीवकौं महंत मानै ताहीकौं ब्रह्मका स्वरूप कहैं। सो ब्रह्म सर्वव्यापी है ऐसा विशेषण काहेकौं

किया। अर सूर्यादिविषै वा सुवर्णादिविषै ही ब्रह्म है तौ सूर्य उजाला करै है सुवर्ण धन है इत्यादि गुणनिकरि ब्रह्म मान्या सो सूर्यवत् दीपादिक भी उजाला करै हैं सुवर्णवत् रूपा लोहा आदि भी धन हैं इत्यादि गुण अन्य पदार्थनिविषै भी हैं तिनिकौं भी ब्रह्म मानौ। बड़ा छोटा मानौ परंतु जाति तौ एक भई। सो झूंठी महंतता ठहरावनेके अर्थि अनेकप्रकार युक्ति बनावै हैं।

बहुरि अनेक ज्वालामालिनी आदि देवीनिकौं मायाका स्वरूप कहि हिंसादिक पाप उपजाय पूजना ठहरावै हैं सो माया तौ निंद्य है ताका पूजना कैसैं संभवै। अर हिंसादिक करतां कैसैं भला होय। बहुरि गऊ सर्प्पादि पशु अभक्ष्यभक्षणादिसहित तिनिकौं पूज्य कहैं। अग्नि पवन जलादिककौं देव ठहराय पूज्य कहैं। वृक्षादिककौं युक्ति बनाय पूज्य कहैं। बहुरि कहा कहिए पुरुषलिंगी नाम सहित जे होंय तिनिविषै ब्रह्मकी कल्पना करैं अर स्त्रीलिंगी नाम सहित होय तिनिविषै मायाकी कल्पनाकरि अनेक वस्तूनिका पूजन ठहरावै है। इनके पूजे कहा होयगा सो विचार किछू नाहीं। झूंठे लौकिक प्रयोजनके कारन ठहराय जगतकौं भ्रमावै हैं बहुरि कहै हैं—विधाता शरीरकौं घड़ै है, यम मारै है, मरते समय यमके दूत लेनैं आवै है, मूए पीछैं मार्गविषै बहुतकाल लागै है तहां पुण्य पापका लेखा हो है, तहां दंडादिक देवै हैं। सो ए कल्पित झूठी युक्ति हैं। जीव तौ समय समय अनंते उपजैं मरैं हैं तिनिका युगपत् कैसैं इसप्रकार संभवै अर ऐसैं माननेका कोई कारण भी भासै नाहीं। बहुरि मूए पीछैं श्राद्धादिककरि वाका भला

होना कहैं सो जीवतां तौ काहूके पुण्यपापकरि कोई सुखी दुखी होता दीखै ही नाही मूए पीछैं कैसैं होय। ए युक्ति मनुष्यनिकौं भ्रमाय अपने लोभ साधनेकै अर्थि बनावै हैं। कीडी पतंग सिंहादिक जीव भी तौ उपजैं मरैं हैं सो उनकौं प्रलयके जीव ठहरावैं। तहां जैसैं मनुष्यादिककै जन्म मरण होते देखिए है, तैसे ही उनके होते देखिए है। झूठी कल्पना किए कहा सिद्धि है। बहुरि वै शास्त्रनिविषै कथादिक निरूपै हैं तहां विचार किए विरुद्ध भासै है। बहुरि यज्ञादिक करना धर्म ठहरावै हैं। तहां बडे जीवनिका होम करै हैं, अन्नादिकका महा आरंभ करै हैं, तहां जीवघात हो है सो उनहीके शास्त्रविषै वा लोकविषै हिंसाका निषेध है परंतु ऐसे निर्दय हैं किछू गिनै नाहीं। अर कहैं—"यज्ञार्थं पशवाः सृष्टाः" ए यज्ञहीकै अर्थि पशु बनाए हैं। तहां घातकरनेका दोष नाहीं। बहुरि मेघादिकका होना शत्रु आदिका विनशना इत्यादि फल दिखाय अपने लोभके अर्थि राजादिकनिकैं भ्रमावैं। जैसें कोइ विषतैं जीवना कहै सो प्रत्यक्ष विरुद्ध है तैसैं हिंसा किए धर्म अर कार्यसिद्धि कहना प्रत्यक्ष विरुद्ध हैं। परंतु जिनिकी हिंसा करनी कही, तिनिकी तौ किछू शक्ति नाहीं अर उनकी काहूकौं पीरि नाहीं। जो किसी शक्तिवानका इष्टका होम करना ठहराया होता, तौ ठीक पड़ता। पापका भय नाहीं तातैं दुर्बलके घातक होय अपने लोभके अर्थि अपना वा अन्यका बुरा करनेविषैं तत्पर प्ररूपै हैं। तहां प्रथम ही भक्तियोगकरि मोक्षमार्ग कहैं हैं, ताका स्वरूप कहिए है,—

तहां भक्ति निर्गुण सगुण भेदकरि दोयप्रकार कहै हैं। तहां अद्वैत परब्रह्मकी भक्ति करनी सो निर्गुणभक्ति है। सो ऐसै कहै हैं;— तुम निराकार हो, निरंजन हो, मन वचनकै अगोचर हो, अपार हो, सर्वव्यापी हो, एक हो सर्वके प्रतिपालक हो, अधमउधारक हो सर्वके कर्त्ता हर्त्ता हो, इत्यादि विशेपणनिकरि गुण गावै हैं। सो इनिविपै केई तौ निराकारादि विशेपण हैं सो अभावरूप हैं तिनिकौं सर्वथा मानैं अभाव ही भासै। जातैं आकारादि वस्तु विना कैसैं भासै। बहुरि केई सर्वव्यापी आदि विशेपण असंभव हैं सो तिनिका असंभवपना पूर्वै दिखाया ही है। बहुरि ऐसा कहैं—जीवबुद्धिकरि मैं तिहारा दास हौं, शास्त्रदृष्टिकरि तिहारा अंश हौं तत्त्वबुद्धिकरि 'तू ही मैं हूं, सो ए तीनौं ही भ्रम हैं। यह भक्तिकरनहारा चेतन है कि जड़ है। तहां जो चेतन है तौ चेतन ब्रह्मकी है कि इसहीकी है। जो ब्रह्मकी है तौ मैं दास हौं ऐसा मानना चेतनाहीकै हो है सो चेतना ब्रह्मका स्वरूप ठह्र्या। अर स्वभाव स्वभावीकै तादात्म्यसंबंध है। तहां दास अर स्वामीका संबंध कैसैं बनै। दासस्वामीका संबंध तौ भिन्न-पदार्थ होय तब ही बनै। बहुरि जो यह चेतना इसहीकी है तौ यह अपनी चेतनाका धनी जुदा पदार्थ ठह्र्या तौ मैं अंश हौं वा 'जो तू है सो मैं हूं' ऐसा कहना झूंठा भया। बहुरि जो भक्ति करनहारा जड़ है, तौ जड़कै बुद्धिका होना असंभव है ऐसी बुद्धि कैसैं भई। तातैं 'मैं दास हौं, ऐसा कहना तब ही बनै है जब जुदा पदार्थ होय। अर 'तेरा मैं अंश हौं, ऐसा कहना बनै ही नाहीं।

जातैं 'तू' अर 'मैं' ऐसा तौ भिन्न होय तब ही बनै सो अंश अंशी भिन्न कैसैं होय। अंशी तौ कोई जुदा वस्तु है नाहीं, अंशनिका समुदाय सो ही अंशी है। अर 'तू है सो मैं हूं' ऐसा वचन ही विरुद्ध है। एक पदार्थविषै आपो भी मानै अर पर भी मानै सो कैसैं संभवै। तातैं भ्रम छोड़ि निर्णय करना। बहुरि केई नाम ही जपैं हैं। सो जाका नाम जपै ताका स्वरूप पहचानेविना केवल नामहीका जपना कैसै कार्यकारी होय। जो तू कहैगा नामहीका अतिशय है तौ जो नाम ईश्वरका है सो ही नाम किसी पापी-पुरुषका धर्‍या तहां दोऊनिका नाम उच्चारणविषै फलकी समानता होय सो कैसैं बनै। तातै स्वरूपका निर्णयकरि पीछै भक्तिकरने-योग्य होय ताकी भक्ति करनी। ऐसैं निर्गुणभक्तिका स्वरूप दिखाया।

बहुरि जहां काम क्रोधादिकरि निपजे कार्यनिका वर्णनकरि स्तुत्यादि करिए ताकौं सगुणभक्ति कहैं हैं। सो तहां सगुणभक्ति-विषै लौकिकशृंगार वर्णन जैसैं नायक नायिकाका करिए तैसैं ठाकुरठकुरानीका वर्णन करैं हैं। स्वकीय परकीया स्त्रीसंबंधी संयो-गवियोगरूप सर्वव्यवहार तहां निरूपैं हैं। बहुरि स्नान करती स्त्री-निका वस्त्र चुरावना, दधि लूटना, स्त्रीनिकै पंगा परना, स्त्रीनिकै आगै नाचना इत्यादि जिन कार्यनिकौं करते संसारी जीव लज्जित होंय तिनि कार्यनिका करना ठहरावै हैं। सो ऐसा कार्य अतिकामपी-डित भए ही बनै। बहुरि युद्धादिक किए कहैं सो ए क्रोधके कार्य हैं। अपनी महिमा दिखावनैकें अर्थि उपाय किए कहैं सो

मानके कार्य हैं। अनेक छल किए कहैं सो मायाके कार्य हैं। विषयसामग्रीकी प्राप्तिके अर्थि यत्न किए कहैं सो लोभके कार्य हैं। कुतूहलादिक किए कहैं सो हास्यादिकके कार्य हैं। ऐसैं ए सब कार्य क्रोधादिकरि युक्त भए ही बनैं। याप्रकार कामक्रोधादिकरि निपजे कार्यनिकौं प्रगटकरि कहैं हम स्तुति करै हैं। सो काम क्रोधादिके कार्य ही स्तुतियोग्य भए तौ निंद्य कौन ठहरैंगे। जिनकी लोकविषै शास्त्रविषै अत्यंत निंदा पाईए तिनि कार्यनिका वर्णनकरि स्तुति करना तौ हस्तचुगलकासा कार्य है। हम पूछैं हैं- कोऊ किसीका नाम तौ कहै नाहीं अर ऐसे कार्यनिहीका निरूपण करि कहै कि किसीनै ऐसे कार्य किए हैं, तब तुम वाकौं भला जानौ कै बुरा जानौ ; जो भला जानौ तौ पापी भले भए। बुरा कौन भया। अर बुरे जानौ तौ ऐसे कार्य कोई करौ सो ही बुरा भया। पक्षपातरहित न्याय करौ। जो पक्षपातकरि कहौगे ठाकुरका ऐसा वर्णन करना भी स्तुति है तौ ठाकुर ऐसे कार्य किस अर्थि किए। ऐसे निंद्यकार्य करनेमैं कहा सिद्धि भई। कहौगे, प्रवृत्ति चलानेके अर्थि किए, तौ परस्त्रीआदिसेवन निंद्यकार्यनिकी प्रवृत्ति चलावनेमैं आपकै वा अन्यकै कहा नफा भया। तातैं ठाकुरकै ऐसे कार्य करना संभवै नाहीं। बहुरि जो ठाकुर कार्य नाहीं किए तुम ही कहो हौ तौ जामैं दोष न था ताकौं दोष लगाया तातैं ऐसा वर्णन करना तौ निंदा है स्तुति नाहीं। बहुरि स्तुति करते जिन गुणनिका वर्णन करिए तिस रूप ही परिणाम होंय वा तिनिहीविषै अनुराग आवै। सो काम क्रोधादि कार्यनिका

वर्णन करतैं आप भी कामक्रोधादिरूप होय अथवा कामक्रोधादि विषै अनुरागी होय तौ ऐसे भाव तौ भले नाहीं। जो कहोगे, भक्त ऐसा भाव न करै हैं तौ परिणाम भए विना वर्णन कैसैं किया। अनुराग भए विना. भक्ति कैसैं करी। जो ए भाव ही भले होंय तौ ब्रह्मचर्यकौं वा क्षमादिककौं भले काहेकौं कहिए। इनिकै तौ परस्पर प्रतिपक्षीपना है। बहुरि सगुणभक्तिकरनेके अर्थि राम कृष्णादिककी मूर्ति भी शृंगारादि किए वक्रत्वादिसहित स्त्रीआदि संगलिए बनावै हैं जाकौं देखते ही कामक्रोधादि भाव प्रगट होय आवैं। बहुरि महादेवके लिंगहीका आकार बनावै हैं। देखो विटंवना, जाका नाम लिए ही लाज आवै जगत् जिसकौं ढक्या राखै ताका आकारका पूजन करावै हैं। अन्य अंग कहा वाकै न थे। परंतु घनी विटंबना ऐसे ही किए प्रगट होय। बहुरि सगुणभक्तिकै अर्थि नानाप्रकार विषयसामग्री भेली करैं तहां नाम तौ ठाकुरका करैं अर आप भोगवैं भोजनादि बनावैं बहुरि ठाकुरकौं भोग लगाया कहैं पीछैं आपही प्रसादकी कल्पनाकरि ताका भक्षणादि करैं। सो यहां पूछिए है, प्रथम तौ ठाकुरकै क्षुधा तृषादिककी पीड़ा होयगी। जो न होय तौ ऐसी कल्पना कैसैं संभवै। अर क्षुधादिकरि पीड़ित होय सो व्याकुल होय तब ईश्वर दुखी भया औरका दुःख दूरि कैसैं करै। बहुरि भोजनादि सामग्री आप तौ उनकै अर्थि अर्पण करी सो करी पीछैं प्रसाद तौ ठाकुर देवै तब होय आपहीका तौ किया न होय। जैसैं कोऊ राजाकौं भेटकरैं पीछैं राजा बकसैं तौ वाकौं ग्रहण करना योग्य अर राजा तौ किछू

कहै नाहीं, आप ही 'राजा मोकूं बकसी' ऐसैं कहि वाकौं अंगीकार करै तौ यह ख्याल (खेल) भया। तैसैं यहां भी ऐसैं किए भक्ति तौ भई नाहीं हास्यकरना भया। बहुरि ठाकुर अर तू दोय हो कि एक हो। दोय हो तौ तैनें भेट करी पीछैं ठाकुर बकसै सो ग्रहण कीजै। आपही काहेकौं ग्रहण करै है। अर तू कहैगा ठाकुरकी तौ मूर्ति है तातैं मैं ही कल्पना करूं हूं तौ ठाकुरके करनेका कार्य तैनैं ही किया तब तू ही ठाकुर भया। बहुरि जो एक हो, तौ भेट करनी प्रसाद करना झूंठा भया। एक भए यह व्यवहार संभवै नाहीं। तातैं भोजनासक्त पुरुषनिकरि ऐसी कल्पना करिए है। बहुरि ठाकुरकै अर्थि नृत्य गीतादि करावना, शीत ग्रीष्म वसंत आदि ऋतुनिविषै संसारीकै संभवती ऐसी विषयसामग्री भेली करनी इत्यादि कार्य करैं। तहां नाम तौ ठाकुरका लेना अर इंद्रियविपय अपने पोषने। सो विषयासक्त जीवनिकरि ऐसा उपाय किया है। बहुरि जन्म विवाहादिककी वा सोवना जागना इत्यादिककी कल्पना तहां करै हैं सो जैसैं लड़की गुड्डा गुड्डीका ख्याल बनायकरि कुतूहल करैं तैसैं यह भी कुतूहल करना है। किछू परमार्थरूप गुण है नाहीं। बहुरि बालक ठाकुरका स्वांग बनाय चेष्टा दिखावैं। ताकरि अपने विषय पोषैं अर कहैं यह भी भक्ति है। इत्यादि कहा कहिए ऐसी अनेक विपरीतता सगुण-भक्तिविषै पाईए है। ऐसैं दोय प्रकार भक्तिकरि मोक्षमार्ग कहै हैं सो ताका स्वरूप मिथ्या जानना। अब अन्यमतके ज्ञानयोगकरि मोक्षमार्गका स्वरुप दिखाइए—

एक अद्वैत सर्वव्यापी परब्रह्मकौं जानना ताकौं ज्ञान कहै है सो ताका मिथ्यापना तौ पूर्वैं कह्या ही है। बहुरि आपकौं सर्वथा शुद्ध ब्रह्मस्वरूप मानना काम क्रोधादिक वा शरीरादिककौं भ्रम जानना ताकौं ज्ञान कहैं हैं सो यह भ्रम है। जो आप शुद्ध है तौ मोक्षका उपाय काहेकौं करै है। आप शुद्धब्रह्म ठहर्या, तब कर्तव्य कहा रह्या। बहुरि प्रत्यक्ष आपकै काम क्रोधादिक होते देखिए अर शरीरादिकका संयोग देखिए है सो इनिका अभाव होगा तब होगा वर्त्तमानविषै इनिका सद्भाव मानना भ्रम कैसैं भया। बहुरि कहै हैं, मोक्षका उपाय करना भी भ्रम है। जैसैं जेवरी तौ जेवरी ही है ताकौं सर्प जानै था सो भ्रम था—भ्रम मिटे जेवरी ही है। तैसैं आप तौ ब्रह्म ही है आपकौं अशुद्ध मानै था सो भ्रम था भ्रम मिटे आप ब्रह्म ही है। सो ऐसा कहना मिथ्या हैं। जो आप शुद्ध होय अर ताकौं अशुद्ध जानै तौ भ्रम, अर आप कामक्रोधादिसहित अशुद्ध होय रह्या ताकौं अशुद्ध जानै तौ भ्रम काहेका। झूठा भ्रम-करि आपकौं शुद्ध माने कहा सिद्धि है। बहुरि तू कहैगा ए काम क्रोधादिक तौ मनके धर्म हैं ब्रह्म न्यारा है तौ पूछिए है—मन है सो तेरा स्वरूप है कि नाहीं। जो है तौ काम क्रोधादि भी तेरे ही भए। अर नाहीं है तौ पूछिए है जो तू ज्ञानस्वरूप है कि जड़ है। जो ज्ञानस्वरूप है तौ तेरै तौ ज्ञान मन वा इंद्रियद्वारा ही होता दीखै है। इनि विना कोई ज्ञान बतावै तौ ताकौं जुदा तेरा स्वरूप मानै सो भासता नाहीं। बहुरि **'मन ज्ञाने'** धातुतैं मन शब्दनिपजे है सो मन तौ ज्ञानस्वरूप है। यह ज्ञान किसका है

ताकौं बताय। सो जुदा कोऊ भासै नाहीं। बहुरि जो तू जड है तौ ज्ञान विना अपने स्वरूपका विचार कैसै करै है। यह बनै नाहीं बहुरि तू कहै है ब्रह्म न्यारा है सो वह न्यारा ब्रह्म तू ही है कि और है। जो तू ही है तौ तेरे 'मैं ब्रह्म हौं' ऐसा माननेवाला ज्ञान है सो तौ मनस्वरूप ही है मनतैं जुदा नाहीं। आपा मानना आपहीविषै होय। जाकौं न्यारा जानै तिसविषै आपा मान्या जाय नाहीं। सो मनतैं न्यारा ब्रह्म है तौ मनरूप ज्ञान ब्रह्मविषै आपा काहेकौं मानै है। बहुरि जो ब्रह्म और ही है तौ तू ब्रह्मविषै आपा काहेकौं मानै। तातैं भ्रम छोड़ि ऐसा मानि कि जैसैं स्पर्शनादि इंद्रिय तौ शरीरका स्वरूप है सो जड है याकै द्वारि जो जानपनौ हो है सो आत्माका स्वरूप है। तैसैं ही मन भी सूक्ष्म परमाणूनिका पुंज है सो शरीरहीका अंग है। ताकै द्वारि जानपना हो है वा कामक्रोधादि भाव हों हैं सो सर्व आत्माका स्वरूप है विशेष इतना जो जानपना तौ निज स्वभाव है काम क्रोधादिक उपाधिक भाव है तिसकरि आत्मा अशुद्ध है। बहुरि जब कालपाय क्रोधादिक मिटैंगे अर जानपनाकै मन इंद्रियका आधीनपना मिटैगा तब केवल ज्ञानस्वरूप आत्मा शुद्ध होगा। ऐसैं ही बुद्धि अहंकारादिक भी जानि लेने। जातै मन अर बुद्ध्यादिक एकार्थ हैं अर अहंकारादिक हैं ते काम क्रोधादिकवत् उपाधिक भाव हैं। इनकौं आपतैं भिन्न जानना भ्रम है। इनकौं अपने जानि उपाधिक भावनिके अभाव करनेका उद्यम करना योग्य है। बहुरि जिनितैं इनिका अभाव न होय सकै अर अपनी महंतता चाहैं ते जीव

अपने इन भावनिकौं न ठहराय स्वच्छंद प्रवर्त्तै हैं। काम क्रोधादिक भावनिकौं बधाय विषयसामग्रीविषै वा हिंसादिकार्यनिविषै तत्पर हो हैं। बहुरि अहंकारादिकका त्यागकौं भी अन्यथा मानै हैं। सर्वकौं परब्रह्म मानना कहीं आपा न मानना ताकौं अहंकारका त्याग बतावैं सो मिथ्या है। जातैं कोई आप है कि नाहीं। जो है तौ आपविषै आपा कैसैं न मानिए अर न है तौ सर्वकौं ब्रह्म कौन मानै है। तातैं शरीरादि परविषै अहंबुद्धि न करनी। तहां करता न होना सो अहंकारका त्याग है। आपविषै अहंबुद्धि करनेका दोष नाहीं। बहुरि सर्वकौं समान जानना कोई विषै भेद न करना ताकौं राग द्वेषका त्याग बतावै हैं सो भी मिथ्या है। जातैं सर्व पदार्थ समान नाहीं हैं। कोई चेतन हैं कोई अचेतन हैं कोई कैसा है कोई कैसा है। तिनिकौं समान कैसैं मानिए। तातैं परद्रव्यनिकौं इष्ट अनिष्ट न मानना सो रागद्वेषका त्याग है। पदार्थनिका विशेष जाननेमैं तौ किछू दोष है नाहीं। ऐसैं ही अन्य मोक्षमार्गरूप भावनिकी अन्यथा कल्पना करै हैं। बहुरि ऐसी कल्पनाकरि कुशील सेवै हैं अभक्ष्य भखै हैं वर्णादि भेद नाहीं करै हैं हीन क्रिया आचरै हैं इत्यादि विपरीतरूप प्रवर्त्तै हैं। जब कोऊ पूछै तब कहै हैं, यह तौ शरीरका धर्म है अथवा जैसी प्रालब्धि है तैसैं होय है अथवा जैसैं ईश्वरकी इच्छा हो है तैसैं हो है। हमकौं तौ विकल्प न करना। सो देखो आप जानि जानि प्रवर्त्तै ताकौं तौ शरीरका धर्म बतावै। आप उद्यमी होय कार्य करै ताकौं प्रालब्धि कहै। आप इच्छाकरि सेवै ताकौं

ईश्वरकी इच्छा बतावै। विकल्प करै अर कहै हमकौं तौ विकल्प न करना। सो धर्मका आश्रय लेय विषयकषाय सेवनै तातैं ऐसी झूंठी युक्ति बनावै हैं। जो अपने परिणाम किछू भी न मिलावैं तौ हम याका कर्त्तव्य न मानै। जैसें आप ध्यान धरैं तिष्ठै अर कोऊ अपने ऊपरि वस्त्र गेरि आवै तहां आप किछू सुखी न भया तहां तौ ताका कर्त्तव्य नाहीं सो साचा, अर आप वस्त्रकौं अंगीकारकरि पहरै अपनी शीतादिक वेदना मिटाय सुखी होय तहां जो अपना कर्त्तव्य न मानै सो कैसैं बनै। बहुरि कुशील सेवना अभक्ष्य भक्षण इत्यादि कार्य तौ परिणाम मिले विना होते ही नाहीं। तहां अपना कर्त्तव्य कैसैं न मानिए। तातैं जो काम क्रोधादिका अभाव ही भया होय तौ तहां किसी क्रियानिविषै प्रवृत्ति संभवै ही नाहीं। अर जो कामक्रोधादि पाईए है तौ जैसैं ए भाव थोरे होंय तैसैं प्रवृत्ति करनी। स्वच्छंद होय इनिकौं बधावना युक्त नाहीं। बहुरि केई जीव पवनादिकका साधनकरि आपकौं ज्ञानी मानै हैं। तहां इड़ा पिंगला सुषुम्णारूप नासिकाद्वारकरि पवन निकसै, तहां वर्णादिक भेदनितैं पवनहीकौं पृथ्वी तत्त्वादिकरूप कल्पना करैं हैं। ताका विज्ञानकरि किछू साधनतैं निमित्तका ज्ञान होय तातैं जगतकौं इष्ट अनिष्ट बतावै आप महंत कहावै सो यह तौ लौकिक कार्य है किछू मोक्षमार्ग नाहीं। जीवनिकौं इष्ट अनिष्ट बताय उनकै राग द्वेष बधावै अर अपनै मान लोभादिक निपजावै यामैं कहा सिद्धि है। बहुरि प्राणायामादिका साधनकरि पवनकौं चढ़ाय समाधि लगाई कहैं, सो यह तौ जैसैं नट साधनतै हस्तादिक क्रिया करैं तैसैं

यहां भी साधनतैं पवनकरि क्रिया करी। हस्तादिक अर पवन यह तौ शरीरहीके अंग हैं। इनिके साधनतैं आत्महित कैसैं सधै। बहुरि तू कहैगा—तहां मनका विकल्प मिटै है सुख उपजै है यमकै वशीभूतपना न हो है सो मिथ्या है जैसैं निद्राविषै चेतनाकी प्रवृत्ति मिटै है तैसैं पवन साधनैतैं यहां चेतनाकी प्रवृत्ति मिटै है। तहां मनकौं रोकि राख्या है किछू वासना तौ मिटी नाहीं। तातैं मनका विकल्प मिट्या न कहिए। चेतनाविना सुख कौन भोगवै है? तातैं सुख उज्या न कहिए। अर इस साधनवाले तौ इस क्षेत्रविषै भए हैं तिनिविषै कोई अमर दीखता नाहीं। अग्नि लगाए ताका मरण होता दीखै है तातैं यमकै वशीभूत नाहीं यह झूठी कल्पना है। बहुरि जहां साधनविषै किछू चेतना रहै अर तहां साधनतैं शब्द सुनै, ताकौं अनहद शब्द बतावैं। सो जैसैं बीणादिकके शब्द सुननेतैं सुख मानना तैसैं तिसके सुननेतैं सुख मनना है। यह तौ विषयपोषण भया परमार्थ तौ किछू नाहीं ठहरया। बहुरि पवनके निकसनै पैठनैविषै 'सोहं' ऐसे शब्दकी कल्पनाकरि ताकौं 'अजपा जाप' कहै हैं। सो जैसैं तीतरके शब्दविषै 'तू ही, शब्दकी कल्पना करै हैं किछू तीतर अर्थ अवधारि ऐसा शब्द कहता नाहीं तैसैं यहां। 'सोहं' शब्दकी कल्पना है। किछू पवन अर्थ अवधारि ऐसा शब्द कहता नाहीं। बहुरि शब्दके जपने सुनिनेतैं ही तौ किछू फलप्राप्ति नाहीं। अर्थ अवधारे फल–प्राप्ति हो है। सो 'सोहं' शब्दका तौ यह अर्थ है 'सो हूं छूं' यहां ऐसी अपेक्षा चाहिए है, 'सो' कौन? तब ताका निर्णय किया चाहिए।

जातैं तत् शब्दकै अर यत् शब्दकै नित्यसंबंध है । तातैं वस्तुका निर्णयकरि ताविषै अहंबुद्धि धारने विषै' सोहं शब्द बनै तहां भी । आपकौं आप अनुभवै तहां तौ 'सोहं' शब्द संभवै नाहीं । परकौं अपने स्वरूप बतावनेविषै 'सोहं, शब्द संभवै है । जैसें पुरुष आपकौं आप जानै तहां'सो हूं छूं, ऐसा काहेकौं विचारै । कोई अन्यजीव आपकौं न पहचानता होय अर कोई अपना लक्षण न पहचानता होय, तब वाकौं कहिए **'जो ऐसा है सो मै हूं'** तैसैं ही यहां जानना । बहुरि केई ललाट भंवरा नासिकाके अग्रभाग देखनेका साधनकरि त्रिकुटी आदिका ध्यान भया कहि परमार्थ मानै, सो नेत्रकी पूतरी फिरे मूर्त्तीक वस्तु देखी, यामैं कहा सिद्धि है । बहुरि ऐसे साधननितैं किंचित् अतीत अनागतादिकका ज्ञान होय वा वचन सिद्धि होय वा पृथ्वी आकाशादिविषै गमनादिककी शक्ति होय वा शरीरविषै आरोग्यादिक होय तौ ए तौ सर्व लौकिक कार्य हैं । देवादिककै स्वयमेव ऐसी ही शक्ति पाइए है । इनितैं किछू अपना भला तौ होता नाहीं, भला तौ विषयकषायकी वासना मिटे होय । सो ए तौ विषयकषाय पोषनेके उपाय हैं । तातैं ए सर्व साधन किछू हितकारी है नाहीं । इनिविषै कष्ट बहुत है मरणादि पर्यंत होय अर हित सधै नाहीं । तातैं ज्ञानी ऐसा खेद न करै है । कषायी जीव ही ऐसे साधनविषै लागैं हैं । बहुरि काहूकौं बहुत तपश्चरणादिककरि मोक्षका साधन कठिन बतावै हैं काहूकौं सुगम-पनैं ही मोक्षभया कहैं । उद्धवादिककौं परम भक्ति कहैं तिनकौं तौ तपका उपदेश दिया कहैं अर वेश्यादिककै विना परिणाम केवल

नामादिकहीतैं तिरना बतावैं किछू थल है नाहीं। ऐसैं मोक्षमार्गकौं अन्यथा प्ररूपै हैं।

बहुरि मोक्षस्वरूपकौं भी अन्यथा प्ररूपै हैं। तहां मोक्ष अनेक प्रकार बतावैं हैं। एक तौ मोक्ष ऐसा कहै हैं—जो वैकुंठधामविषै ठाकुर ठकुरानीसहित नानाभोगविलास करै हैं तहां जाय प्राप्त होय अर तिनिकी टहल किया करै सो मोक्ष है। सो यह तौ विरुद्ध है। प्रथम तौ ठाकुर भी संसारीवत् विषयासक्त होय रह्या है। तौ जैसा राजादिक हैं तैसा ही ठाकुर भया। बहुरि अन्य पासि टहल करावनी हुई तब ठाकुरकै पराधीनतापना भया। बहुरि यह मोक्षकौं पाय तहां टहल किया करै तौ जैसैं राजाकी चाकरी करनी तैसैं यह भी चाकरी भई। तहां पराधीन भए सुख कैसैं होय। यह भी बनै नाहीं।

बहुरि एक मोक्ष ऐसा कहै हैं—ईश्वरकै समान आप हो है सो भी मिथ्या है। जो उनकै समान और भी जुदा हो है तौ बहुत ईश्वर भए लोकका कर्त्ता हर्त्ता कौन ठहरै। भिन्न २ इच्छा भए परस्पर विरोध होय। एक ही है तौ समानता न भई। न्यून है ताकै नीचापनेकरि उच्चता होनेकी आकुलता रही तब सुखी कैसैं होय। जैसैं छोटा राजा बड़ा राजा संसारविषै हो हैं तैसैं छोटा बड़ा ईश्वर भी मुक्तिविषै भया सो बनै नाहीं।

बहुरि एक मोक्ष ऐसा कहै हैं—जो वैकुंठविषै दीपककीसी ज्योति है। तहां ज्योतिविषै ज्योति जाय मिलै है। सो यह भी मिथ्या है। दीपककी ज्योति तौ मूर्त्तीक अचेतन है, ऐसी ज्योति तहां कैसैं

संभवै। बहुरि ज्योतिमैं ज्योति मिलै यह ज्योति रहै है कि विनसि जाय है। जो रहै है तौ ज्योति बधती जायगी। तब ज्योति विषै हीनाधिकपना होगा। अर विनसि जाय है तौ आपकी सत्ता नाश होय ऐसा कार्य उपादेय कैसैं मानिए। तातैं ऐसैं भी बनै नाहीं।

बहुरि एक मोक्ष ऐसा कहै हैं—जो आत्मा ब्रह्म ही है मायाका आवरण मिटे मुक्ति ही है। सो यह भी मिथ्या है। यह मायाका आवरणसहित था तब ब्रह्मसौं एक था कि जुदा था। जो एक था तौ ब्रह्म ही मायारूप भया अर जुदा था तौ माया दूरि भए ब्रह्मविषै मिलै है तब याका अस्तित्व रहै है कि नाहीं रहै है, जो रहै है तौ सर्वज्ञकौं तौ याका अस्तित्व जुदा भासै तब संयोग होनेतैं मिल्या कहो परंतु परमार्थतैं तौ मिल्या नाहीं। बहुरि अस्तित्व नाहीं रहै है तौ आपका अभाव होना कौन चाहै तातैं यह भी न बनै।

बहुरि एक प्रकार मोक्षका स्वरूप ऐसा भी केई कहै हैं—जो बुद्ध्यादिकका नाश भए मोक्ष हो है। सो शरीरके अंगभूत मन इंद्रिय तिनिकै आधीन ज्ञान न रह्या। ऐसैं कहना तौ काम क्रोधादिक दूरि भए बनै है अर तहां चेतनताका भी अभाव भया मानिए तौ पाषाणादि समान जड़ अवस्थाकौं कैसैं भली मानिए। बहुरि भला साधन करतैं तौ जानपना बधै है भला साधन किए जानपनेका अभाव होना कैसैं मानिए। बहुरि लोक विषै ज्ञानकी महंततातैं जड़पनाकी महंतता नाहीं तातै यह भी बनै नाहीं। ऐसैं ही अनेक प्रकार कल्पनाकरि मोक्षकौं बतावैं सो किछू यथार्थ

तौ जानै नाहीं संसार अवस्थाकी मुक्ति अवस्थाविषै कल्पनाकरि अपनी इच्छा अनुसारि वकै हैं। याप्रकार वेदांतादि मतनिविषै अन्यथा निरूपण करै हैं।

बहुरि ऐसैं ही मुसलमानोंके मतविषै अन्यथा निरूपन करिए है जैसैं वै ब्रह्मकौं सर्वव्यापी निरंजन सर्वका कर्त्ता हर्त्ता मानै हैं तैसैं ए खुदाकौं मानैं हैं। बहुरि जैसैं वै अवतार भए मानैं है तैसैं ए पैगंबर भए मानैं हैं। जैसैं वै पुण्य पापका लेखा लेना यथा— योग्य दंडादिक देना ठहरावै हैं तैसैं ए खुदाकै ठहरावै हैं। बहुरि जैसैं वै गऊ आदिकौं पूज्य कहै हैं, तैसैं ए सूकर आदिकौं कहै हैं। ए सब तिर्यंचादिक हैं। बहुरि जैसैं वै ईश्वरकी भक्तितैं मुक्ति कहै हैं तैसैं ए खुदाकी भक्तितैं कहै हैं। बहुरि वै कहीं दया पोषैं कहीं हिंसा पोषैं, तैसैं ए भी कहीं रहम करना पोषैं कहीं जिवहकरना पोषै हैं। बहुरि जैसैं वै कहीं तपश्चरण करना पोषैं कहीं विषयसेवना पोषैं तैसैं ही ए भी पोषै है। बहुरि जैसैं वै कहीं मांस मदिरा शिकार आदिका निषेध करैं कहीं उत्तम पुरुषनिकरि तिनिका अंगीकार करना बतावैं तैसैं ए भी तिनिका निषेध वा अंगीकार करना बतावैं हैं। ऐसैं अनेकप्रकारकरि समानता पाइए है। यद्यपि नामादिक और और हैं तथापि प्रयोजनभूत अर्थका एकता पाईए है बहुरि ईश्वर खुदा आदि मूल-श्रद्धानकी तौ एकता है अर उत्तरश्रद्धानविषै घने ही विशेष हैं। तहां उनकैं भी विपरीतरूप विषय कषाय हिंसादि पापके पोषक प्रत्यक्षादि प्रमाणतैं विरुद्ध निरूपण करैं हैं। तातैं मुसलमानोंका

मत महाविपरीतरूप जानना। याप्रकार इस क्षेत्र कालविषै जिनिकी प्रचुर प्रवृत्ति है ताका मिथ्यापना दिखाया। यहां कोऊ कहै जो ए मत मिथ्या हैं तौ बड़े राजादिक वा बड़े विद्यावान् इनि मतनिविषै कैसैं प्रवर्तै हैं, ताका समाधान,—

जीवनिकै मिथ्यावासना अनादितैं है सो इनिविषै मिथ्यात्वहीका पोषण है। बहुरि जीवनिकै विषयकषायरूप कार्यनिकी चाहि वर्त्तै है सो इनमैं विषयकषायरूप कार्यनिहीका पोषण है। बहुरि राजादिकोंका विद्यावानोंका ऐसे धर्मविषै विषयकषायरूप प्रयोजन सिद्ध होय है। बहुरि जीव तौ लोकनिंद्यपनाकौं भी उलंघि वा पाप भी जानि जिन कार्यनिकौं किया चाहै तिनि कार्यनिकौं करतैं धर्म बतावै तौ ऐसे धर्मविषै कौन न लागै। तातैं इनि धर्मनिकी विशेष प्रवृत्ति है। बहुरि कदाचित् तू कहैगा,—इनि धर्मनिविषै विरागता दया इत्यादि भी तौ कहै हैं, सो जैसैं झोल दिए विना खोटा द्रव्य चालै नाहीं तैसैं सांच मिलाए विना झूंठ चालै नाहीं। परंतु सर्वके हित प्रयोजनविषै विषयकषायका ही पोषण किया है जैसैं गीताविषै उपदेश देय रारि (युद्ध) करावनेका ही प्रयोजन प्रगट किया। वेदान्तविषै शुद्ध निरूपणकरि स्वच्छंद होनेका प्रयोजन दिखाया। ऐसैं ही जानना। बहुरि यह काल तौ निकृष्ट है सो इसविषै तौ निकृष्ट धर्महीकी प्रवृत्ति विशेष हो है देखो इस कालविषै मुसलमान बहुत प्रधान हो गए हिंदू घटि गए। हिंदूनिविषै और बधि गए जैनी घटि गए। सो यह कालका दोष है। ऐसैं यहां अबार मिथ्याधर्मकी प्रवृत्ति बहुत

पाईए है। अब पंडितपनाके बलकरि कल्पितयुक्तिकरि नाना मत स्थापित भए हैं तिनिविषै जे तत्वादिक मानिए है तिनिका निरूपण कीजिए है। तहां सांख्यमतविषै पच्चीस तत्त्व माने हैं सो कहिए है,—

सत्व रजः तमः यह तीन गुण कहै हैं तहां सत्वकरि प्रसाद हो है रजोगुणकरि चित्तकी चंचलता हो है तमोगुणकरि मूढ़ता हो है इत्यादि लक्षण कहै हैं। इनिरूप अवस्था ताका नाम प्रकृति है। बहुरि तिसतैं बुद्धि निपजै है याहीका नाम महत्तत्व है। बहुरि तिसतैं अहंकार निपजै है। बहुरि तिसतैं सोलहमात्रा हो हैं। तहां पांच तौ ज्ञानइंद्रिय हो है——स्पर्शन रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र। बहुरि एक मन हो है। बहुरि पांच कर्मेंद्रिय हो हैं-वचन, चरन, हस्त, गुदा, लिंग। बहुरि पांच तन्मात्रा हो हैं-रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द बहुरि रूपतैं अग्नि, रसतैं जल, गंधतैं पृथ्वी, स्पर्शतैं पवन शब्दतैं आकाश, ऐसैं भया कहै हैं। ऐसैं चौवीस तत्त्व तौ प्रकृतिस्वरूप हैं। इनितैं भिन्न निर्गुण कर्त्ता भोक्ता एक पुरुषहै। ऐसैं पचीस तत्त्व कहै हैं। सो ए कल्पित हैं। जातैं राजसादिक गुण आश्रयविना कैसैं होय। इनिका आश्रय तौ चेतनद्रव्य ही संभवै है। बहुरि बुद्धि इनितैं भई कहै सो बुद्धि नाम तौ ज्ञानका है। कोई ज्ञानगुणका धारी पदार्थविषै ए होते देखिए है। इनितैं ज्ञान भया कैसैं मानिए। कोई कहै,–बुद्धि जुदी है ज्ञान जुदा है तौ मन तौ आगैं षोड़शमात्राविषै कह्या अर ज्ञान जुदा कहोगे तौ बुद्धि किसका नाम ठहरैगा। बहुरि तिसतैं अहंकार भया कह्या,

सो परवस्तुविषैं 'मैं करूं हूं' ऐसैं माननेका नाम अहंकार है। साक्षीभूत जाननेकरि तौ अहंकार होता नाहीं। ज्ञानकरि उपज्या कैसैं कहिए है। बहुरि अहंकारकरि षोड़श मात्रा उपजी कहीं। तिनिविषैं पांच ज्ञानइंद्रिय कहीं। सो शरीरविषै नेत्रादि आकाररूप द्रव्येंद्रिय हैं सो तौ पृथ्वी आदिवत् देखिए है। अन्य वर्णादिकके जाननेरूप भावइंद्रिय हैं सो ज्ञानरूप हैं। अहंकारका कहा प्रयोजन है। अहंकार बुद्धिरहित कोऊ काहूकूं दीखै है। तहां अहंकारकरि निपजना कैसैं संभवै। बहुरि मन कह्या, सो इंद्रियवत् ही मन है। जातैं द्रव्यमन शरीररूप है, भावमन ज्ञानरूप है। बहुरि पांच कर्मेंद्रिय कहीं, सो ए तौ शरीरके अंग हैं। मूर्तीक है। अहंकार अमूर्तीकतैं इनिका उपजना कैसैं मानिए। बहुरि कर्मइंद्रिय पांच ही तौ नाहीं। शरीरके सर्व अंग कार्यकारी हैं। बहुरि वर्णन तौ सर्व जीवाश्रित है, मनुष्याश्रित ही तौ नाहीं, तातै सूंड़ि पूंछ इत्यादि अंग भी कर्मइंद्रिय है। पांचहीकी संख्या कैसैं कहिए हैं। बहुरि स्पर्शादिक पांच तन्मात्रा कहीं, सो रूपादि किछू जुदे वस्तु नाहीं ए तौ परमाणूनिसौं तन्मय गुण हैं ए जुदे कैसैं निपजै। बहुरि अहंकार तौ अमूर्त्तीक जीवका परिणाम है। तातै ए मूर्त्तीकगुण कैसैं निपजे मानिए। बहुरि इनि पांचनितैं अग्नि अदि निपजे कहैं, सो प्रत्यक्ष झूंठा है। रूपादिक अग्न्यादिककै तौ सहभूत गुणगुणी संबंध है। कहने मात्र भिन्न हैं वस्तुविषै भेद नाहीं। किसीप्रकार कोऊ भिन्न होता भासै नाहीं, कहने मात्रकरि भेद उपजाइए है। तातैं रूपादिकरि अग्न्यादि कैसैं उपजे

मानिए। कहनेविषै भी गुणीविषै गुण हैं। गुणतै गुणी निपज्या कैसैं मानिए। वहुरि इनितै भिन्न एक पुरुष कहै हैं, सो ताका स्वरूप अवक्तव्य कहि प्रत्युत्तर नाहीं करते। जो पूछिए कि कैसा है, कहा है, कैसै कर्त्ता हर्त्ता है, सो वतावते नाहीं जो वतावैं तौ ताहीमैं विचार किए अन्यथापनो भासै। ऐसैं सांख्यमतकरि कल्पित तत्व मिथ्या जानने। वहुरि पुरुषकौं प्रकृतितैं भिन्न जाननेका नाम मोक्षमार्ग कहै हैं। सो प्रथम तौ प्रकृतिपुरुष कोई है ही नाहीं। वहुरि केवल जानेहीतै तौ सिद्धि होती नाहीं। जानिकरि रागादिक मिटाए सिद्धि होय, सो ऐसैं जाने किछू रागादिक घटै नाहीं। प्रकृतिका कर्त्तव्य माने आप अकर्त्ता रहै, तव काहेकौं आप रागादिक घटावै। तातैं यह मोक्षमार्ग नाहीं है। वहुरि प्रकृति पुरुषका जुदा होना मोक्ष कहै हैं। सो पचीस तत्वनिविषै चौईस तत्व तौ प्रकृतिसंबंधी कह्या, एक पुरुष भिन्न कह्या। सो ए तौ जुदे ही हैं अर जीव कोई पदार्थ पचीस तत्वनिविषै कह्या ही नाहीं। अर पुरुषहीकौं प्रकृतिसंयोग भए जीवसंज्ञा हो है, तौ पुरुष न्यारे न्यारे प्रकृतिसहित हैं पीछैं साधनकरि कोई पुरुष रहित हो हैं, ऐसा सिद्ध भया—पुरुष एक न ठहरया। वहुरि प्रकृति पुरुषकी भूलि है कि कोई व्यंतरीवत् जुदी ही है सो जीवकौं आनि लागै है। जो याकी भूलि है, तौ प्रकृतितैं इंद्रियादिक तत्त्व उपजे कैसैं मानिए। अर जुदी हैं तौ वै भी एक वस्तु है सर्व कर्त्तव्य वाका ठहरया। पुरुषका किछू कर्त्तव्य रह्या ही नाहीं काहेकौं उपदेश दीजिए है। ऐसैं यह

मोक्षमार्गपना मानना मिथ्या है। बहुरि तहां प्रत्यक्ष अनुमान आगम ए तीन प्रमाण कहै हैं, सो तिनिका सत्य असत्यका निर्णय जैनके न्याय ग्रंथनितैं जानना। बहुरि इस सांख्यमतविषै कोई ईश्वरकौं न मानै हैं। कोई एक पुरुषकौं ईश्वर मानै हैं। कोई शिवकौं देव मानै हैं। कोई एक पुरुषकौं मानै हैं। अपनी इच्छा अनुसार कल्पना करै हैं किछू निश्चय है नाहीं। बहुरि इस मतविषै केई जटा धारै हैं, केई चोटी राखै हैं, केई मुंडित हो हैं, केई काथे वस्त्र पहरैं हैं, इत्यादि अनेकप्रकार भेष धारि तत्त्वज्ञानका आश्रयकरि महंत कहावैं हैं। ऐसैं सांख्यमतका निरूपण किया।

बहुरि शिवमतविषै दोय भेद हैं—नैयायिक वैशेषिक। तहां नैयायिकविषै सोलह तत्त्व कहै हैं। प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धांत, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रहस्थान। तहां प्रमाण च्यारि प्रकार कहै हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमा। बहुरि आत्मा, देह अर्थ, बुद्धि इत्यादि प्रमेय कहै हैं। बहुरि 'यह कहा है' ताका नाम संशय है। जाके अर्थि प्रवृत्ति होय, सो प्रयोजन है। जाकौं वादी प्रतिवादी मानै सो दृष्टांत है। दृष्टांतकरि जाकौं ठहराईए सो सिद्धांत है। बहुरि अनुमानके प्रतिज्ञा आदि पंच-अंग ते अवयव हैं। संशय दूरि भए किसी विचारतैं ठीक होय, सो तर्क है। पीछैं प्रतीतिरूप जानना सो निर्णय है। आचार्य शिष्यकै पक्ष प्रतिपक्षकरि अभ्यास सो वाद है। जानेकी इच्छा-

रूप कथाविषै जो छल जाती आदि दूषण सो जल्प है। प्रतिपक्ष-रहित वाद सो वितंडा है। सांचे हेतु नाहीं ते असिद्ध आदि भेद लिए हेत्वाभास है। छललिए वचन सो छल है। सांचे दूषण नाहीं ऐसे दूषणाभास सो जाति है। जा करि परवादीका निग्रह होय सो निग्रहस्थान है या प्रकार संशयादि तत्त्व कहे, सो ए कोई वस्तुस्वरूप तौ तत्त्व हैं नाहीं। ज्ञानके निर्णय करनेकौं वा वादकरि पांडित्य प्रगट करनेकौं कारणभूत विचाररूप तत्त्व कहे, सो इनितैं परमार्थ कार्य कैसैं होय। काम क्रोधादि भावकौं मैटि निराकुल होना सो कार्य है। सो तौ यहां प्रयोजन किछू दिखाया ही नाहीं। पंडिताईकी नाना युक्ति बनाई सो यह भी एक चातुर्य्य है, तातैं ये तत्त्वभूत नाहीं। बहुरि कहोगे इनिकौं जाने विना प्रयोजनभूत तत्वका निर्णय न करि सकै, तातैं ए तत्व कहे हैं। सो ऐसैं परंपरा तौ व्याकरणवाले भी कहै हैं। व्याकरण पढ़ें अर्थ निर्णय होय, वा भोजनादिकके अधिकारी भी कहै हैं। कि भोजन किए शरीरकी स्थिरता भए तत्वानिर्णय करनेकौं समर्थ होय सो ऐसी युक्ति कार्यकारी नाहीं बहुरि जो कहोगे व्याकरण भोजनादिक तौ अवश्य तत्वज्ञानकौं कारण नाहीं लौकिक कार्यसाधनेकौं कारण है सो जैसैं ए हैं तैसै ही तुम तत्व कहे सो भी लौकिक कार्य साधनेकौं कारण हैं जैसैं इंद्रियादिकके जाननेकौं प्रत्यक्षादि प्रमाण कहे वा स्थाणु पुरुषादिविषै संशयादिकका निरूपण किया। तातैं जिनिंकौं जाने अवश्य काम क्रोधादि दूरि होंय निराकुलता उपजै, वै ही तत्त्व

कार्यकारी हैं । बहुरि कहोगे, जो प्रमेय तत्वविषै आत्मादिकका निर्णय हो है सो कार्यकारी है । सो प्रमेय तौ सर्व ही वस्तु हैं । प्रमितिका विषय नाहीं ऐसा कोई भी नाहीं, तातैं प्रमेय तत्त्व काहेकौं कह्या । आत्मा आदि तत्त्व कहने थे । बहुरि आत्मादिकका भी स्वरूप अन्यथा प्ररूपण किया, सो पक्षपातरहित विचार किए भासै है । जैसैं आत्माके भेद दोय कहे हैं—परमात्मा जीवात्मा तहां परमात्माकौं सर्वका कर्त्ता बतावै हैं । तहां ऐसा अनुमान करै हैं जो यह जगत् कर्त्ताकरि निपज्या है । जातैं यह कार्य है । जो कार्य है सो कर्त्ताकरि निपज्या है । जैसैं घटादिक । सो यह अनुमानाभास है । जातैं यहां अनुमानांतर संभवै है । यह जगत् सर्व कर्त्ताकरि निपज्या नाहीं । जातैं याविषै केई अकार्यरूप पदार्थ भी हैं जो अकार्य है, सो कर्त्ताकरि निपज्या नाहीं । जैसैं सूर्य्यबिंबादिक । जातैं अनेक पदार्थनिका समुदायरूप जगत् तिसविषै कोई पदर्थ कृत्रिम हैं सो मनुष्यादिककरि किए होंय हैं । कोई अकृत्रिम हैं सो ताका कर्त्ता नाहीं । यह प्रत्यक्षादि प्रमाणके अगोचर है तातैं ईश्वरकौं कर्त्ता मानना मिथ्या है । बहुरि जीवात्माकौं प्रतिशरीर भिन्न कहै हैं । सो यह सत्य है । परंतु मुक्त भए पीछैं भी भिन्न ही मानना योग्य है । विशेष पूर्वैं कह्या ही है । ऐसैं ही अन्य तत्त्वनिकौं मिथ्या प्ररूपैं हैं । बहुरि प्रमाणादिकका भी स्वरूप अन्यथा कल्पैं हैं, सो जैनग्रंथनितैं परीक्षा किए भासै है । ऐसैं नैयायिकमतविषै कहे तत्त्व कल्पित जानने ।

बहुरि वैशेषिकमतविषै छह तत्त्व कहें हैं। द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय। तहां द्रव्य नवप्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, पवन, आकाश, काल, दिशा, आत्मा, मन। तहां पृथ्वी जल अग्निके परमाणु भिन्न भिन्न हैं। ते परमाणु नित्य हैं। तिनिकरि कार्यरूप पृथ्वी हो है सो अनित्य है। सो ऐसा कहना प्रत्यक्षादितैं विरुद्ध है। ईंधनरूप पृथ्वी आदिके परमाणु अग्निरूप होते देखिए है। अग्निके परमाणु राखरूप पृथ्वी होते देखिए है। जलके परमाणु मुक्ताफल (मोती) रूप पृथ्वी होते देखिए है बहुरि जो तू कहैगा, वै परमाणु जाते रहै हैं और ही परमाणु तिनिरूप हो है सो प्रत्यक्षकौ असत्य ठहरावै है। कोई ऐसी प्रबलयुक्ति कहै तौ ऐसैं ही मानै, परंतु केवल कहेतैं ही तौ ऐसैं ठहरै नाहीं जातैं सब परमाणूनिकी एक पुद्गलरूप जाति है, सो पृथ्वी आदि अपने अवस्थारूप परिणमै हैं। बहुरि इन पृथ्वी आदिकका कहीं जुदा शरीर ठहरावै है, सो मिथ्या ही है। जातैं वाका कोई प्रमाण नाहीं। अर पृथ्वी आदि तौ परमाणुपिंड हैं। इनिका शरीर अन्यत्र ए अन्यत्र ऐसा संभवै नाहीं। तातैं यह मिथ्या है। बहुरि जहां पदार्थ अटकै नाहीं, ऐसी जो पोलि ताकौं आकाश कहै हैं। क्षण पल आदिकौं काल कहै हैं। सो ए दोन्यूं ही अवस्तु हैं। सत्तारूप ए पदार्थ नाहीं। पदार्थनिका क्षेत्रपरिणमनादिकका पूर्वापरविचार करनेके अर्थि इनिकी कल्पना कीजिए है। बहुरि दिशा किछू है नाहीं। आकाशविषै खंड कल्पनाकरि दिशा मानिए है। बहुरि आत्मा दोय प्रकार कहै है, सो पूर्वै निरूपण किया ही

हैं। बहुरि मन कोई जुदा पदार्थ नाहीं। भावमन तौ ज्ञानरूप है, सो आत्माका स्वरूप है। द्रव्यमन परमाणूनिकां पिंड है, सो शरीरका अंग है। ऐसैं ये द्रव्य कल्पित जानने। बहुरि गुण चोईस कहे हैं—स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, शब्द, संख्या, विभाग, संयोग, परिमाण, पृथक्त्व, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, धर्म, अधर्म, प्रयत्न, संस्कार, द्वेष, स्नेह, गुरुत्व, द्रव्यत्व,। सो इनिविषै स्पर्शादिक गुण तौ परमाणूनिविषै पाईए हैं। परंतु पृथ्वीकौं गंधवती ही कहनी, जलकौं शीतस्पर्शवान् कहना इत्यादि मिथ्या है। जातैं कोई पृथ्वीविषै गंधकी मुख्यता न भासै है। कोई जल उष्ण देखिए है। इत्यादि प्रत्याक्षादितैं विरूद्ध है। बहुरि शब्दकौं आकाशका गुण कहैं। सो भी मिथ्या है। शब्द भींति इत्यादितैं रुकै है, तातैं मूर्त्तीक है। आकाश अमूर्त्तीक सर्वव्यापी है। भींतिविषै अकाश रहै शब्दगुण न प्रवेशकरि सकै, यह कैसैं बनै। बहुरि संख्यादिक हैं सो वस्तुविषै तौ किछू है नाहीं, अन्य पदार्थ अपेक्षा अन्य पदार्थके हीनाधिक जाननेकौं अपने ज्ञानविषै संख्यादिककों कल्पनाकरि विचार कीजिए हैं। बहुरि बुद्धिआदि हैं, सो आत्माका परिणमन है। तहां बुद्धि नाम ज्ञानका है तौ आत्माका गुण है अर मनका नाम है तौ द्रव्यनिविषै कह्या ही था, यहां गुण काहेकौं कह्या। बहुरि सुखादिक हैं, सो आत्माविषैं कदाचित् पाईए है तातैं आत्माके लक्षणभूत तौ ए गुण हैं नाहीं, अव्याप्तपनेतैं लक्षणाभास हैं। बहुरि स्नेहादि पुद्गलपरमाणुविषैं पाईए है, सो स्निग्धगुरुत्व इत्यादि तौ स्पर्शन इंद्रियकरि जानिए

तातैं स्पर्शगुणविषै गर्भित भए जुदे काहेकौं कहे । बहुरि द्रव्यत्वगुण जलविषै कह्या, सो ऐसैं तौ अग्निआदिविषै ऊर्ध्वगमनत्व आदि पाईए है । कै तौ सर्व कहने थे, कै समान्यविषै गर्भित कहने थे। ऐसैं ए गुण कहे ते भी कल्पित हैं । बहुरि कर्म पांचप्रकार कहैं हैं—उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुंचन, प्रसारण, गमन । सो ए तौ शरीरकी चेष्टा हैं । इनिकौं जुदा कहनेका अर्थ कहा । बहुरि ए · ती ही चेष्टा तें होती नाहीं, चेष्टा तौ घनी ही प्रकारकी हो हैं । बहुरि जुदा ही इनिकौं तत्त्वसंज्ञा कही, सो कै तौ जुदा पदार्थ होय तौ ताकौं जुदा तत्त्व कहना था, कै काम क्रोधादि मेटनेकौं विशेष प्रयोजनभूत होय तौ तत्व कहना था, सो दोऊ ही नाहीं । अर ऐसैं ही कहि देना तौ पाषाणादिककी अनेक अवस्था हो हैं सो कह्या करो किछू साध्य नाहीं । बहुरि सामान्य दोय प्रकार है—पर अपर । सो पर तौ सत्तारूप है अपरप द्रव्यत्वरूप है । बहुरि नित्यद्रव्यविषै प्रवृत्ति जिनिकी होय ते विशेष हैं । बहुरि अयुत-सिद्धसंबंधका नाम समवाय है । सो सामान्यादिक तौ बहुतनिकौं एकप्रकारकरि वा एकवस्तुविषै भेदकल्पनाकरि वा भेदकल्पना अपेक्षा संबंध माननेकरि अपने विचारहीविषै हो है कोई जुदे पदार्थ तौ नाहीं । बहुरि इनिके जाने कामक्रोधादि मेटनेरूप विशेष प्रयोजनकी भी सिद्धि नाहीं, तातैं इनिकौं तत्त्व काहेकौं कहे । अर ऐसैं ही तत्त्व कहने थे, तौ प्रमेयत्वादि वस्तुके अनंत-धर्म हैं वा संबंध आधारादिक कारकनिके अनेक प्रकार वस्तुविषै संभवै हैं । कै तौ सर्व कहने थे, कै प्रयोजन जानि कहने थे ।

तातैं ए सामान्यादिक तत्त्व भी वृथा ही कहे। ऐसैं वैशेपिकनि-
कारि कहे कल्पित तत्त्व भी जानने। बहुरि वैशेपिक दोय ही प्रमाण
मानै है–प्रत्यक्ष, अनुमान। सो इनिका सत्य असत्यका निर्णय
जैनन्यायग्रंथनितैं जानना।

बहुरि नैयायिक तौ कहै हैं-विपय, इंद्रिय, बुद्धि, शरीर, सुख,
दुःख, इनिका अभावतैं आत्माकी स्थिति सो मुक्ति है। अर
वैशेपिक कहै हैं—चौईस गुणनिविपै बुद्धि आदि नवगुणनिका
अभाव सो मुक्ति है। सो यहां बुद्धिका अभाव कह्या सो बुद्धि नाम
ज्ञानका है तौ ज्ञानका अधिकरणपणा आत्माका लक्षण कह्या था,
अब ज्ञानका अभाव भए लक्षणका अभाव होतैं लक्ष्यका भी अभाव
होय, तब आत्माकी स्थिति कैसैं रही। अर जो बुद्धि नाम मनका
है, तो भावमन तौ ज्ञानरूप है ही अर द्रव्यमन शरीररूप है सो
मुक्त भए द्रव्यमनका संबन्ध छूटै ही छूटै। सो द्रव्यमन जड़ ताका
नाम बुद्धि कैसैं होय। बहुरि मनवत् ही इंद्रिय जानने। बहुरि
विपयका अभाव होय। सो स्पर्शादि विषयनिका जानना मिटै है,
तौ ज्ञान काहेका नाम ठहरैगा। अर तिनि विषयनिका ही अभाव
होयगा, तौ लोकका अभाव होयगा। बहुरि सुखका अभाव कह्या
सो सुखहीकै अर्थ उपाय कीजिए है ताका जहां अभाव होय सो
उपादेय कैसैं होय। बहुरि जो आकुलतामय इंद्रियजनित सुखका
तहां अभाव भया कहैं, तौ यह सत्य है। निराकुलता लक्षण अतीं-
द्रियसुख तौ तहां संपूर्ण संभवै है तातैं सुखका अभाव नाहीं।
बहुरि शरीर दुःख द्वेपादिकका तहां अभाव कहैं सो सत्य ही है।

बहुरि शिवमतविषै कर्त्ता निर्गुण ईश्वर शिव है ताकौं देव मानै हैं। सो याके स्वरूपका अन्यथापना पूर्वोक्त प्रकार जानना। बहुरि यहां भस्मी, कोपीन, जटा, जनेऊ इत्यादि चिन्हसहित भेष हो हैं सो आचारादि भेदतैं च्यार प्रकार हैं—शैव, पाशुपत, महाव्रती कालमुख। सो ए रागादि सहित हैं तातैं सुलिंग नाहीं। ऐसैं शिव-मतका निरूपण किया। अब मीमांसक मतका स्वरूप कहिए है—

मीमांसक दोय प्रकार हैं— ब्रह्मवादी कर्मवादी तहां ब्रह्मवादी तौ सर्व यह ब्रह्म है दूसरा कोऊ नाहीं ऐसा वेदान्तविषै अद्वैत ब्रह्मको निरूपै हैं बहुरि आत्माविषै लय होना सो मुक्ति कहै हैं। सो इनिका मिथ्यापना पूर्वै दिखाया है, सो विचारना। अर कर्मवादी क्रिया आचार यज्ञादिक कार्यनिका कर्तव्यपना प्ररूपै हैं, सो इन क्रियानिविषै रागादिकका सद्भाव पाईए है, तातैं ए कार्य किछू कार्यकारी नाहीं। बहुरि तहां,'भट्ट' तौ अर 'प्रभाकर' करि करी हुई दोय पद्धति हैं। तहां, भट्ट तौ छह प्रमाण मानै है—प्रत्यक्ष, अनुमान, वेद, उपमा, अर्थापत्ति, अभाव। बहुरि प्रभाकर अभाव विना पांच ही प्रमाण मानै है। सोइनका सत्यासत्यपना जैन-शास्त्रनितैं जानना। बहुरि तहां षट्कर्मसहित ब्रह्मसूत्रके धारक शूद्रअन्नादिकके त्यागी ते गृहस्थाश्रम है नाम जिनिका ऐसे भट्ट हैं। बहुरि वेदान्तविषै यज्ञोपवीतरहित विप्रअन्नादिकके ग्राही भागवत् है नाम जिनिका ऐसे च्यारि प्रकार हैं-कुटीचर, बहूदक हंस परमहंस। सो ए किछू त्यागकरि संतुष्ट भए हैं, परंतु ज्ञान

श्रद्धानका मिथ्यापना अर रागादिकका सद्भाव इनिकै पाईए है। तातैं ए भेष कार्यकारी नाहीं।

बहुरि यहां जैमिनीयमत है, सो ऐसैं कहै है, —

सर्वज्ञदेव कोई है नाहीं। वेदवचन नित्य हैं, तिनितैं यथार्थ निर्णय हो है। तातैं पहलैं वेदपाठकरि क्रियाप्रति प्रवर्त्तना सो तौ चोदना सोई है लक्षण जाका ऐसा धर्म ताका साधन करना। जैसें कहै हैं "स्वः कामोऽग्निं यजेत्" स्वर्गाभिलाषी अग्निकौं पूजै इत्यादि निरूपण करै हैं। यहां पूछिए है,—शैव, सांख्य, नैयायिकादिक सर्व ही वेदकौं मानैं हैं तुम भी मानो हौ। तुम्हारै अर उन सबनिकै तत्त्वादिनिरूपणविषै परस्पर विरुद्धता पाईए है सो कहा है। जो वेदहीविषै कहीं किछू कहीं किछू निरूपण किया है, तौ वाकी प्रमाणता कैसी रही। अर जो मतवाले ही ऐसैं निरूपण करैं हैं तौ तुम परस्पर झगरि निर्णयकरि एककौं वेदका अनुसारी अन्यकौं वेदतैं पराङ्मुख ठहरावो। सो हमकौं तौ यह भासै है वेदहीविषै पूर्वापरविरुद्धतालिए निरूपण है। तिसतैं ताका अपनी अपनी इच्छा अनुसारि अर्थ ग्रहणकरि जुदे जुदे मतके अधिकारी भए हैं। सो ऐसे वेदकौं प्रमाण कैसैं कीजिए। बहुरि अग्नि पूजे स्वर्ग होय, सो अग्नि मनुष्यतैं उत्तम कैसैं मानिए प्रत्यक्षविरुद्ध हैं। बहुरि वह स्वर्गदाता कैसैं होय। ऐसैं ही अन्य वेदवचन प्रमाणविरुद्ध हैं। बहुरि वेदविषै ब्रह्म कह्या है, सर्वज्ञ कैसैं न मानैं हैं। इत्यादि प्रकारकरि जैमिनीयमत कल्पित जानना।

अब बौद्धमतका स्वरूप कहिए है,—

बौद्धमतविषै च्यारितत्त्व प्ररूपै हैं । दुःख, आयतन, समु-दाय, मार्ग । तहां संसारीकै बंधरूप सो दुःख है । सो पांच प्रकार है—विज्ञान, वेदना, संज्ञा, संस्कार, रूप । तहां रूपादिकका जानना सो विज्ञान है, सुख दुःखका अनुभवना सो वेदना है. मनका जानना सो संज्ञा है, पढ्या था ताका जानना सो संस्कार है, रूपका धारना सो रूप है । सो यहां विज्ञानादिककौं दुःख कह्या सो मिथ्या है । दुःख तौ काम क्रोधादिक हैं । ज्ञान दुःख नाहीं । यह तौ प्रत्यक्ष देखिए है । काहूकै ज्ञान थोरा है अर क्रोध लोभादिक बहुत हैं सो दुखी है । काहूकै ज्ञान बहुत है काम क्रोधादि स्तोक हैं वा नाहीं हैं सो सुखी है । तातैं विज्ञाना-दिक दुःख नाहीं हैं । बहुरि आयतन बारह कहे हैं । पांच तौ इंद्रिय अर तिनिके शब्दादिक पांच विषय, एक मन, एक धर्माय तन । सो ये आयतन किस अर्थि कहे । क्षणिक सबकौं कहै, इनिका कहा प्रयोजन है । बहुरि जातैं रागादिकका कारण निपजै ऐसा आत्मा अर आत्मीय यह है नाम जाका सो समुदाय है । तहां अहंरूप आत्मा अर मनरूप आत्मीय जानना, सो क्षणिक मानै इनिका भी कहनेका किछू प्रयोजन नाहीं । बहुरि सर्व संस्कार क्षणिक हैं, ऐसी वासना सो मार्ग है । सो प्रत्यक्ष बहुतकाल-स्थायी केई वस्तुअवलोकिए है । तू कहैगा एक अवस्था न रहै है,-तौ यह हम भी मानै हैं । सूक्ष्मपर्याय क्षणस्थायी हैं । बहुरि तिस वस्तुहीका नाश मानै तौ यह होता न दीसै है हम कैसैं मानै । बहुरि बाल वृद्धादि अवस्थाविषै एक आत्माका अस्तित्व भासै है ।

जो एक नाहीं है तौ पूर्व उत्तर कार्यका एक कर्त्ता कैसैं मानै हैं।
जो तू कहैगा संस्कारतैं हैं, तौ संस्कार कौनकै है। जाकै है सो
नित्य है कि क्षणिक है। नित्य है तौ सर्व क्षणिक कैसैं कहै है।
क्षणिक है तौं जाका आधार ही क्षणिक तिस संस्कारकी परंपरा
कैंसे कहै है। बहुरि सर्वक्षणिक भया, तव आप भी क्षणिक भया,
तू ऐसी वासनाकौं मार्ग कहै है सो इस मार्गका फलकौं आप तौ
पावै ही नाहीं काहेकौं इस मार्गविषै प्रवर्तै। बहुरि तेरे मतविषैं
निरर्थक शास्त्र काहेकौं किए। उपदेश तौ किछू कर्त्तव्यकरि फल-
पावै तिसकै अर्थ दीजिए है। ऐसैं यह मार्ग मिथ्या है। बहुरि
रागादिक ज्ञानसंतानवासनाका उच्छेद जो निरोध, ताकौं मोक्ष
कहै है। सो क्षणिक भया तव मोक्ष कौनकै कहै है। अर रागा-
दिकका अभाव होना तौ हम भी मानै हैं। अर ज्ञानादिक अपने
स्वरूपका अभाव भए तौ आपका अभाव होय ताका उपाय करना
कैसैं हितकारी होय। हिताहितका विचार करनेवाला तौ ज्ञान ही
है। सो आपका अभावकौं ज्ञानी हित कैसैं मानै। बहुरि बौद्ध-
मतविषै दोय प्रमाण मानै हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान। सो इनिके सत्या-
सत्यका निरूपण जैन शास्त्रनितैं जानना। बहुरि जो यह दोय ही
प्रमाण हैं, तौ इनिके शास्त्र अप्रमाण भए तिनिका निरूपण किस
अर्थि किया। प्रत्यक्ष अनुमान तौं जीव आप ही करि लेंगे, तुम
शास्त्र काहेकौं किए। बहुरि तहां सुगतकौं देव मानै हैं सो ताका
स्वरूप नग्न वा विक्रियारूप स्थापै हैं सो विटंबनारूप है। बहुरि
कमंडलु रक्तांबरके धारी पूर्वाह्नविषै भोजन करैं इत्यादि लिंगरूप

बौद्धमतके भिक्षुक हैं, सो क्षणिककौं भेष धरनैका कहा प्रयोजन। परंतु महंतताके अर्थि कल्पित निरूपण करना वा भेष धरना हो है। ऐसे बौद्ध हैं, ते च्यारि प्रकार हैं—वैभाषिक, सौत्रांतिक, योगाचार, मध्यम। तहां वैभाषिक तौ ज्ञानसहित पदार्थकौं मानै हैं। सौत्रांतिक प्रत्यक्ष यह देखिए है सो ही है परैं किछू नाहीं ऐसैं मानै है। योगाचारनिकै आचारसहित बुद्धि पाईए है। मध्यम हैं ते पदार्थका आश्रयविना ज्ञानहीकौं मानैं हैं। सो अपनी अपनी कल्पना करै हैं। विचार किए किछू ठिकाणाकी बात नाहीं। ऐसैं बौद्धमतका निरूपण किया।

अब चार्वाक मत कहिए है,—

कोई सर्वज्ञदेव धर्म अधर्म मोक्ष है नाहीं। अर परलोक नाहीं वा पुण्यपापका फल नाहीं। यहु इंद्रियगोचर जितना है सो ही लोक है। ऐसैं चार्वाक कहै हैं। तहां वाकौं पूछिए है—सर्वज्ञदेव इस काल क्षेत्रविषै नाहीं कि सर्वदा सर्वत्र नाहीं। इस कालक्षेत्र विषै तौ हम भी नाहीं मानै हैं। अर सर्वकालक्षेत्रविषै नाहीं ऐसा सर्वज्ञविना जानना किसकै भया। जो सर्व कालक्षेत्रकी जानै सो ही सर्वज्ञ अर न जानै है तौ निषेध कैसैं करै है। बहुरि धर्म अधर्म लोकविषै प्रसिद्ध हैं। जो ए कल्पित होय तौ सर्वजन प्रसिद्ध कैसैं होय। बहुरि धर्म अधर्मरूप परणति होती देखिए है—ताकरि वर्तमानहीमैं सुखी दुखी होते देखिए हैं। इनिकौं कैसैं न मानिए। अर मोक्षका होना अनुमानविषै आवै है। क्रोधादिक दोष काहूकै हीन हैं काहूकै अधिक हैं सो जानिए है काहूकै

इनिकी नास्ति भी होती होगी अर ज्ञानादिक गुण काहूकै हीन काहूकै अधिक भासै हैं, सो जानिए है काहूकै संपूर्ण भी होते होंयगे। ऐसैं जाकै समस्तदोषनिकी हानि गुणनिकी प्राप्ति होय सो ही मोक्ष अवस्था है। बहुरि पुण्य पापका फल भी देखिए है। कोऊ उद्यम करै तौ भी दरिद्री रहै। कोउकै स्वयमेव लक्ष्मी होय। कोउ शरीका यत्न करै, तौ भी रोगी रहै काहूकै विना ही यत्न नीरोगता रहै। इत्यादि प्रत्यक्ष देखिए है। सो याका कारण कोई तौ होगा। जो याका कारण सो पुण्य पाप। बहुरि परलोक भी प्रत्यक्ष अनुमानतैं भासै है। व्यंतरादिक है ते अवलो-किए है। मैं अमुक था सो देव भया हूं। बहुरि तू कहैगा यह तौ पवन है तातैं हम तौ 'मैं हौं' इत्यादि चेतनाभाव जाकै आश्रय पाईए ताहीकौं आत्मा कहै है. सो तूं वाका नाम पवन कहि परंतु पवन तौ भींति आदिकरि अटकै है आत्मा मूंद्या बन्द किया हुवा भी अटकै नाहीं, तातैं पवन कैसै मानिए। बहुरि जितना इंद्रियगोचर है तितना ही लोक कहै है। सो तेरी इंद्रियगोचर तौ थोरेसे भी योजनका दूरिवर्त्ती क्षेत्र अर थोरासा अतीत अनागत काल ऐसा क्षेत्रकालवर्त्ती भी पदार्थ नाहीं होय सकै। अर दूरि देशकी वा बहुतकालकी बातैं परंपरातैं सुनिए ही है, तातैं सबका जानना तेरै नाहीं तू इतना ही लोक कैसैं कहै है। बहुरि चार्वाकमतविषै कहै हैं पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश-मिले चेतना होय आवै है। सो मरतैं पृथ्वी आदि यहां रही चेतनावान् पदार्थ गया सो व्यंतरादि भया प्रत्यक्ष जुदे जुदे

देखिए है। बहुरि एक शरीरविषै पृथ्वी आदि तौ भिन्न भिन्न भासै हैं चेतना एक भासै है। जो पृथ्वी आदिकै आधार चेतना होय तौ लोही उस्वासादिककै जुदी जुदी ही चेतना होय अर हस्तादिक काटे जैसें वर्णादि रहै हैं तैसें चेतना भी रहै है। बहुरि अहंकार बुद्धि तौ चेतनाकै है सो पृथिवी आदि रूप शरीर तौ यहां ही रह्या व्यंतरादि पर्यायविषै पूर्वपर्यायका अहंपना मानना देखिए है सो कैसें हो है। बहुरि पूर्वपर्यायका गुह्य समाचार प्रगट करै सो यह जानना किसके साथि गया, जाकी साथि जानना गया सो ही आत्मा है। बहुरि चार्वाकमतविषै खान पान भोग विलास इत्यादि स्वच्छंद वृत्तिका उपदेश है सो ऐसैं तौ जगत् स्वयमेव ही प्रवर्त्तै है। तहां शास्त्रादि बनाय कहा भला होनेका उपदेश दिया। बहुरि तू कहैगा तपश्चरण शील संयमादि छुड़ावनेकै अर्थि उपदेश दिया तौ इनि कार्यनिविषै तौ कषाय घटनेतैं आकुलता घटै है तातैं यहां ही सुखी होना हो है यश आदि हो है तू इनिकौं छुड़ाय कहा भला करै है। विषयासक्त जीवनिकौं सुहावती बातैं कहि अपना वा औरनिका बुरा करनेका भय नाहीं। स्वच्छंद होय विषयसेवनके अर्थि ऐसी झूंठी युक्ति बतावै है। ऐसैं चार्वाकमतका निरूपण किया।

इस ही प्रकार अन्य अनेक मत हैं ते झूंठी युक्ति बनाय विषयकषायासक्त पापी जीवनिकरि प्रगट किए हैं। तिनिका श्रद्धानादिकरि जीवनिका बुरा हो है। बहुरि एक जिनमत है सो ही सत्यार्थका प्ररूपक है। सर्वज्ञ वीतरागदेवकरि भाषित है।

तिसका श्रद्धानादिक करि ही जीवनिका भला हो है । सो जिन-मतविषै जीवादि तत्त्व निरूपण किए हैं । प्रत्यक्ष परोक्ष दोय प्रमाण किए हैं । सर्वज्ञ वीतराग अर्हंत देव हैं । बाह्य आभ्यंतर परिग्रहरहित निर्ग्रंथ गुरु हैं । सो इनिका वर्णन इस ग्रंथविषै आगैं विशेष लिखैंगे सो जानना यहां कोऊ कहै—तुम्हारै राग-द्वेष है तातैं तुम अन्य मतका निषेधकरि अपने मतकौं स्थापो हौ, ताकौं कहिए हैं—

यथार्थ वस्तुके प्ररूपण करनेविषै रागद्वेष नाहीं । किछू अपना प्रयोजन विचारि अन्यथा प्ररूपण करै, तौ राग द्वेष नाम पावै । बहुरि वह कहै है - जो रागद्वेष नाहीं, तौ अन्यमत बुरे जैनमत भला ऐसा कैसैं कहो हौ । साम्य भाव होय तौ सर्वकौं समान जानौं मतपक्ष काहेकौं करो हौ । ताकौं कहिए है—बुराकौं बुरा कहैं हैं भलाकौं भला कहैं हैं, यामैं रागद्वेष कहा किया । बहुरि बुरा भलाकौं समान जानना तौ अज्ञानभाव है, साम्यभाव नाहीं । बहुरि वह कहै है-जो सर्व मतनिका प्रयोजन तौ एक ही है, तातैं सर्वकौं समान जानना । ताकौं कहिए है—प्रयोजन एक ही होय तौ नानामत काहेकौं कहिए । एक मतविषै तौ एक प्रयोजन लिए अनेकप्रकार व्याख्यान हो है, ताकौं जुदा मत कौन कहै है । परंतु प्रयोजन ही भिन्न भिन्न हो हैं, सो ही दिखाईए है- -जैनमतविषैं एक वीतरागभाव पोषनेका प्रयोजन हैं, सो कथानिविषै वा लोका-दिक निरूपणविषै वा आचरणविषै वा तत्त्वनिविषै जहां तहां वीतरागताहीकौं पुष्टता करी है । बहुरि अन्य मतनिविषै सराग-

भाव पोषनेका प्रयोजन है। जातैं कल्पित रचना तौ कषायी जीव करै, सो अनेक युक्ति बनाया कषायभावहीकौं पोषै। जैसैं अद्वैत ब्रह्मवादी सर्वकौं ब्रह्म माननेकरि, अर सांख्यमती सर्व कार्य प्रकृतिका मानि आपकौं शुद्ध अकर्त्ता माननेकरि, अर शिवमति तत्त्व जाननेहीतैं सिद्धि होना माननेकरि, मीमांसक कषायजनित आचरणकौं धर्म माननेकरि, बौद्ध क्षणिक माननेकरि, चार्वाक परलोकादि न माननेकरि विषयभोगादिरूप कषायकार्यनिविषै स्वच्छंद होना ही पोषै हैं। यद्यपि कोई ठिकानै कोई कषाय घटावनेका भी निरूपण करै, तौ उस छलकरि अन्य कषायनिकौं पोषण करै हैं। जैसैं गृहकार्य छोरि परमेश्वरका भजन करना ठहराया अर परमेश्वरका स्वरूप सरागी ठहराय उनकै आश्रय अपने विषय कषाय पोषै हैं। बहुरि जैनधर्मविषै देव गुरु धर्मादिकका स्वरूप वीतराग ही निरूपणकरि केवल वीतरागताहीकौं पोषै हैं, सो यह प्रगट है।

हम कहा कहैं, अन्यमती भर्तृहरि ताहूनैं वैराग्यप्रकरणविषै[1] ऐसा कह्या है

एको[2] रागिषु राजते प्रियतमादेहार्द्धधारी हरो
नीरागेषु जिनो विमुक्तललनासङ्गो न यस्मात्परः।
दुर्वारस्मरबाणपन्नगविषव्यासक्तमुग्धो जनः
शेषः कामविडंबितो हि विषयान् भोक्तुं न मोक्तुं क्षमः॥१॥

---

१ वैराग्यप्रकरणमें नहीं किन्तु शृंगारप्रकरण (शतक) में यह ९७ नं० का श्लोक है। न जाने यहां वैराग्यप्रकरण कैसे लिखा गया है।

२ रागी पुरुषोंमें तो एक महादेव शोभित होता है, जिसने अपनी प्रियतमा :—

यांविषै सरागीनिविषै महादेवकौं प्रधान कह्या अर वीतरागीनिविषै जिनेदवकौं प्रधान कह्या है । बहुरि सराग भाव वीतरागभावनिविषै परस्पर प्रतिपक्षीपना है, सो यह दोऊ भले नाहीं । इनिविषै एक ही हितकारी है, सो वीतराग ही हितकारी है जाके होतें तत्काल आकुलता मिटै, स्तुतियोग्य होय । आगामी भला होना सर्व कहैं । अर सरागभाव होते तत्काल आकुलता होय, निंदनीक होय, आगामी बुरा होना भासै, तातैं जामैं वीतरागभावका प्रयोजन ऐसा जैनमत सो ही इष्ट है । जिनमैं सरागभावके प्रयोजन प्रगट किए हैं ऐसे अन्यमत अनिष्ट हैं । इनिकौं समान कैसैं मानिए । तब वह कहै है-- यह तौ सांच, परंतु अन्यमतकी निंदा किए अन्यमती दुःख पावैं, औरनिसौं विरोध उपजै, तातैं काहेकौं निंदा करिए । तहां कहिए है--जो हम कषायकरि निंदा करैं वा औरनिकौं दुःख उपजावैं तौ हम पापी ही हैं । अन्यमतके श्रद्धानादिककरि जीवनिकै अतत्त्वश्रद्धान दृढ होय, ताकरि संसारविषै जीव दुखी होय, तातैं करुणाभावकरि यथार्थ निरूपण किया है । कोई विनादोष ही दुःख पावै, विरोध उपजावै, तौ हम कहा करैं । जैसैं मदिराकी बात किए कलाल दुःख पावै, कुशीलकी निंदा किए वेश्यादिक दुःख पावैं, खोटा खरा पहिचाननेकी परीक्षा बतावतैं ठिग दुःख पावै, तौ कहा करिए । ऐसैं जो पापीनिके भयकरि धर्मोपदेश न

पार्वतीको आधे शरीरमें धारणकर रक्खा है और विरागियोंमें जिनदेव शोभित होते हैं, जिनके समान स्त्रियोंका संग छोडनेवाला दूसरा कोई नहीं है। शेष लोग तो दुर्निवार कामदेवके बाणरूप सर्पोंके विषसे मूर्च्छित हुए हैं,जो कामकी विडम्बनासे न तो विषयोंको भलीभांति भोग ही सकते हैं और न छोड ही सकते हैं।

दीजिए, जीवका भला कैसैं होय । ऐसा तौ कोई उपदेश नाहीं जा करि सर्व ही चैन पावैं । बहुरि वह विरोध उपजावै, सो विरोध तौ परस्पर हो है । हम लरैं नाहीं, वै आप ही उपशांत हो जांयगे । हमकौं तौ हमारे परिणामौंका फल होगा । बहुरि कोऊ कहै—प्रयोजनभूत जीवादिक तत्त्वनिका अन्यथा श्रद्धान किए मिथ्यादर्शनादि हो हैं, अन्यमतनिका श्रद्धान किए कैसैं मिथ्यादर्शनादिक होंय, ताका समाधान—

अन्यमतनिविषै विपरीत युक्ति बताय जीवादिक तत्त्वनिका स्वरूप यथार्थ न भासै यह उपाय किया है, सो किस अर्थि किया है । जीवादि तत्त्वनिका यथार्थ स्वरूप भासै, तौ वीतरागभाव भए ही महंतपनौ भासै । बहुरि जे जीव वीतरागी नाहीं अर अपनी महंतता चाहैं, तिनि सरागभाव होतैं महंतता मनावनेके अर्थि कल्पित युक्तिकरि अन्यथा निरूपण किया है । सो अद्वैतब्रह्मादिकका निरूपणकरि जीव अजीवका अर स्वच्छंदवृत्ति पोषनेकरि आस्रव-संवरादिकका अर सकषायीवत् वा अचेतनवत् मोक्षकहनैकरि मोक्षका अयथार्थ श्रद्धानकौं पोषै हैं । जातैं अन्यमतनिका अन्यथापना प्रगट किया है । इनिका अन्यथापना भासै, तौ तत्त्वश्रद्धानविषै रुचिवंत होय उनकी युक्तिकरि भ्रम न उपजै । ऐसैं अन्यमतनिका निरूपण किया ।

अब अन्यमतनिके शास्त्रनिहीकी साक्षीकरि जिनमतकी समीचीनता वा प्राचीनता प्रगट कीजिए है,—

बड़ा योगवाशिष्ट छत्तीस हजार श्लोक प्रमाण, ताका प्रथम

वैराग्यप्रकरण तहां अहंकार निषेधाध्यायविषै वशिष्ठ अर रामका संवादविषै ऐसा कह्या है, —

रामोवाच—

" नाहं रामो न मे वांछा भावेषु च न मे मनः ।
शांतिमास्थातुमिच्छामि स्वात्मन्येव जिनो यथा ॥ १ ॥

या विषै रामजी जिन समान होनेकी इच्छा करी, तातैं रामजीतैं जिनदेवका उत्तमपना प्रगट भया अर समीचीनपना प्रगट भया । बहुरि 'दक्षिणामूर्त्ति-सहस्रनाम' विषै कह्या है -

शिवोवाच—

'जैनमार्गरतो जैनो जितक्रोधो जितामयः ॥'

यहां भगवतका नाम जैनमार्गविषै रत अर जैन कह्या, सो यामैं जैनमार्गकी प्रधानता वा प्राचीनता प्रगट भई । बहुरि 'वैशंपायन-सहस्रनाम, विषै कह्या है,

' कालनेमिनिहा वीरः शूरः शौरिर्जिनेश्वरः ।'

यहां भगवानका नाम जिनेश्वर कह्या, तातैं जिनेश्वर भगवान् हैं । बहुरि दुर्व्वासाऋषिकृत ' महिम्नस्तोक ' विषै ऐसा कह्या है,-

"तत्तद्दर्शनमुख्यशक्तिरिति च त्वं ब्रह्मकर्मेश्वरी ।
कर्त्तार्हन् पुरुषो हरिश्च सविता बुद्धः शिवस्त्वं गुरुः" ॥१॥

यहां ' अरहंत तुम हो ' ऐसैं भगवंतकी स्तुति करी, तातैं

---

१ अर्थात -मैं राम नहीं हूं, मेरी कुछ इच्छा नहीं है और भावों वा पदार्थों में मेरा मन नहीं है । मैं तो अपनी जिनदेवके समान आत्मामें ही शान्ति स्थापना करन चहता हूं ।

अरहंतकै भगवंतपनौ प्रगट भयो । बहुरि हनुमन्नाटकविषै ऐसैं कह्या है,—

"[1]यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनः
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्त्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः
सोऽयं वो विदधातु वांछितफलं त्रैलोक्यनाथः प्रभुः ॥ १ ॥

यहां छहों मतविषै ईश्वर एक कह्या; तहां अरहंतदेवकै भी ईश्वरपना प्रगट किया। यहां कोऊ कहै,— जैसैं यहां सर्वमतविषै एक ईश्वर कह्या तैसैं तुम भी मानौ ताकौं कहिए है – तुमने यह कह्या है, हम तौ न कह्या। तातैं तुम्हारे मतविषै अरहंतकौं ईश्वरपना सिद्ध भया। हमारे मतविषै भी ऐसैं ही कहैं तौ हम भी शिवादिककौं ईश्वर मानैं। जैसैं कोई व्यापारी सांचा रत्न दिखावै कोई झूठा रत्न दिखावै। तहां झूठा रत्नवाला तौ सर्व रत्नका समान मोल लेनेकै अर्थि समान कहै सांचा रत्नवाला कैसैं समान मानै। तैसैं जैनी सांचा देवादिककौं निरूपै अन्यमती झूठा निरूपै तहां अन्यमती अपनी महिमाकै अर्थि सर्वकौं समान कहै— जैनी कैसैं कहैं। बहुरि रुद्रयामलतंत्र विषै भवानीसहस्रनामविषै ऐसैं कह्या है,—

---

१ यह हनुमन्नाटकके मंगलाचरणका श्लोक है। इसका अभिप्राय यह है कि, जिसको शैव लोग शिव कहकर, वेदान्ती ब्रह्म कहकर, बौद्ध बुद्धदेव कहकर, नैयायिक कर्त्ता कहकर, जैनी अर्हन् कहकर और मीमांसक कर्म कहकर उपासना करते हैं, वह त्रैलोक्यनाथ प्रभु तुम्हारे मनोरथोंको सफल करे।

कुंडासना जगद्धात्री बुद्धमाता जिनेश्वरी ।
जिनमाता जिनेन्द्रा च शारदा हंसवाहिनी ॥ १ ॥"

यहां भावनीके नाम जिनेश्वरी इत्यादि कहे, तातैं जिनका उत्तमपना प्रगट भया । बहुरि 'गणेशपुराण' विषै ऐसैं कह्या है,—

" जैनं पाशुपतं सांख्यं "

बहुरि व्यासकृत सूत्रविषै ऐसा कह्या है—

" जैना एकस्मिन्नेव वस्तुनि उभये प्ररूपयन्ति । "

इत्यादि तिनिके शास्त्रनिविषै जैन निरूपण है, तातैं जैनमतका प्राचीनपना भासै है । बहुरि भागवतका पंचमस्कंधविषैं ऋषभावतारका वर्णन है । तहां इनिकौं करुणामय तृष्णादिरहित ध्यानमुद्राधारी सर्वाश्रमकरि पूजित कह्या है ताकै अनुसारि अरहंत राजा प्रवृत्ति करी ऐसा कहै हैं । सो जैसैं रामकृष्णादि अवतारनिकै अनुसारि अन्यमत, तैसैं ऋषभावतारकै अनुसारि जैनमत, ऐसैं तुह्मारे मतहीकरि जैन प्रमाण भया । यहां इतना विचार और किया चाहिए—कृष्णादि अवतारनिकै अनुसारि विषयकषायनिकी प्रवत्ति हो है । ऋषभावतारकै अनुसारि वीतराग साम्यभावकी प्रवृत्ति हो है । यहां दोऊ प्रवृत्ति समान माने धर्म अधर्मका विशेष न रहै अर विशेष माने, भली होय जो अंगीकार करनी । बहुरि दशावतारचरित्रविषै —"बध्द्वा पद्मासनं यो नयनयुगमिदं न्यस्य नासाग्रदेशे" इत्यादि बुद्धावतारका स्वरूप अरहंत देव सारिखा लिख्या है, सो ऐसा स्वरूप पूज्य है तौ अरहंतदेव पूज्य सहज ही भया ।

वहुरि काशीखंडविषै दिवोदास राजानैं संवोधि राज्य छुड़ायो। तहां नारायण तौ विनयकीर्ति जती भया, लक्ष्मीकौं विनयश्री अर्जिका करी, गरुड़कौं श्रावक किया, ऐसा कथन है। सो जहां संवोधन करना भया, तहां जैनी भेप वनाया। तातैं जैन हितकारी प्राचीन प्रतिभासै हैं। वहुरि 'प्रभासपुराण' विषै ऐसा कह्या है—

"भवस्य पश्चिमे भागे वामनेन तपः कृतम्।
तेनैव तपसाकृष्टः शिवः प्रत्यक्षतां गतः ॥ १ ॥"
"पद्मासनसमासीनः श्याममूर्तिर्दिगम्बरः।
नेमिनाथः शिवोथैवं नाम चक्रेऽस्य वामनः ॥ २ ॥"
"कलिकाले महाघोरे सर्वपापप्रणाशकः।
दर्शनात्स्पर्शनादेव कोटियज्ञफलप्रदः ॥ ३ ॥"

यहां वामनकौं पद्मासन दिगंवर नेमिनाथका दर्शन भया कह्या। वाहीका नाम शिव कह्या। वहुरि ताके दर्शनादिकतैं कोटियज्ञका फल कह्या सो ऐसा नेमिनाथका स्वरूप तौ जैनी प्रत्यक्ष मानै हैं, सो प्रमाण ठहरया। वहुरि प्रभासपुराणविषै कह्या है,—

रैवताद्रौ जिनो नेमियुगादिर्विमलाचले।
ऋषीणामाश्रमादेव मुक्तिमार्गस्य कारणम् ॥ १ ॥"

यहां नेमिनाथकौं जिनसंज्ञा कही, ताके स्थानकौं ऋषिका आश्रम मुक्तिका कारण कह्या, अर युगादिके स्थानकौं भी ऐसा ही कह्या, तातैं उत्तम पूज्य ठहरे। वहुरि 'नगरपुराण' विषै भवावतार-रहस्यविषै ऐसा कह्या है,—

"अकारादिहकारान्तं मूर्द्धाधोरेफसंयुतम् ।
नादविन्दुकलाक्रान्तं चन्द्रमण्डलसन्निभम् ॥ १ ॥
एतद्देवि परं तत्त्वं यो विजानाति तत्त्वतः ।
संसारबन्धनं छित्त्वा स गच्छेत्परमां गतिम् ॥ २ ॥"

यहां 'अर्हं' ऐसे पदकौं परमतत्त्व कह्या । याके जाने परमगतिकी प्राप्ति कही, सो 'अर्हं' पद जैनमतउक्त है । बहुरि नगरपुराणविषै कह्या है,—

"दशभिर्भोजितैर्विप्रैः यत्फलं जायते कृते ।
मुनेरर्हत्सुभक्तस्य तत्फलं जायते कलौ ॥ १ ॥"

यहां कृतयुगविषै दश ब्राह्मणौंकौं भोजन करानेका जेता फल कह्या, तेताफल कलियुगविषै अर्हंतभक्तमुनिकै भोजन कराएका कह्या । तातैं जैनी मुनि उत्तम ठहरे । बहुरि 'मनुस्मृति, विषै ऐसा कह्या है,—

"कुलादिबीजं सर्वेषां प्रथमो विमलवाहनः ।
चक्षुष्मान् यशस्वी वाभिचंद्रोऽथ प्रसेनजित् ॥१॥
मरुदेवीच नाभिश्च भरते कुलसत्तमाः ।
अष्टमो मरुदेव्यां तु नाभेर्जात उरुक्रमः ॥ २ ॥
दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुरनमस्कृतः ।
नीतित्रितयकर्त्ता यो युगादौ प्रथमो जिनः ॥ ३ ॥

यहां विमलवाहनादिक मनु कहे, सो जैनविषै कुलकरनिके ए नाम कहे हैं अर यहां प्रथम जिन युगकी आदिविषै मार्गका दर्शक अर सुरासुरकरि पूजित कह्या, सो ऐसैं ही है तौ जैनमत युगकी

आदिहीतैं है अर प्रमाणभूत कैसैं न कहिए । बहुरि ऋग्वेदविषै ऐसा कह्या है,-

" ॐ त्रैलोक्यप्रतिष्ठितान् चतुर्विंशतितीर्थंकरान् ऋषभाद्यवर्द्धमानान्तान् सिद्धान् शरणं प्रपद्ये । ॐ पवित्रं नग्नमुपस्पृशामहे एषां नग्ना (नग्नये) जातिर्येषां वीरा । " इत्यादि

बहुरि यजुर्वेदविषै ऐसा कह्या है,-

ॐ नमो अर्हतो ऋषभो ॐ ऋषभ पवित्रं पुरुहूतमध्वरं यज्ञेषु नग्नं परमं माहसंस्तुतं वरं शत्रुं जयंतं पशुरिंद्रमाहुतिरिति स्वाहा । ॐ त्रातारमिंद्रं ऋषभं वदन्ति अमृतारमिंद्रं हवे सुगतं सुपार्श्वमिदं हवे शक्रमजितं तद्वर्द्धमानपुरुहूतमिंद्रमाहुरिति स्वाहा । ॐ नग्नं सुधीरं दिग्वाससं ब्रह्मगर्भं सनातनं उपैमि वीरं पुरुषमर्हंतमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् स्वाहा । ॐ [1]स्वस्तिन इंद्रो वृद्धश्रवा स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु । दीर्घायुस्त्वायुबलायुर्वा शुभजातायु ॐ रक्ष रक्ष अरिष्टनेमिः स्वाहा ॥ वामदेव शान्त्यर्थमनुविधीयते सोऽस्माकं अरिष्टनेमिः स्वाहा ।

यहां जैनतीर्थंकरनिके जे नाम हैं तिनिका पूजन कह्या । बहुरि यहां यह भास्या, जो इनिकै पीछैं वेदरचना भई है । ऐसैं

---

[1] ऋग्वेद अष्ट १ अ० ६ वर्ग १६ ।

अन्यमतनिकी साक्षीतैं भी जिनमतकी उत्तमता अर प्राचीनता दृढ भई। अर जिनमतकौं देखैं वै मत कल्पित ही भासैं। तातैं अपना हितका इच्छक होय, सो पक्षपात छोरि सांचा जैनधर्मकौं अंगीकार करो। बहुरि अन्य मतनिविषै पूर्वापरविरोध भासै है। पहले अवतार वेदका उद्धार किया। तहां यज्ञादिकविषै हिंसादिक पोषे। अर बुद्धावतार यज्ञका निंदक होय, हिंसादिक निषेधे वृषभावतार वीतराग संयमका मार्ग दिखाया। कृष्णावतार परस्त्री रमणादि विषय कषायादिकनिका मार्ग दिखाया। सो अब यह संसारी कौनका कह्या करै कौनकै अनुसारि प्रवर्त्तै अर इन सब अवतारनिकौं एक बतावैं सो एक ही कदाच्नित् कैसैं कदाचित कैसैं कहै वा प्रवर्त्तै तौ याकै उनके कहनेकी वा प्रवर्त्तनेकी प्रतीति कैसैं आवै। बहुरि कहीं क्रोधादिकषायनिका वा विषयनिका निषेध करैं, कहीं लरनेका वा विषयादिसेवनेका उपदेश दें। तहां प्रालब्धि बतावैं, सो विनां क्रोधादि भए आपहीतैं लरना आदि कार्य होंय, तौ यह भी मानिए सो तौ होंय नाहीं। बहुरि लरना अदि कार्य होतैं क्रोधादि भए मानिए तौ जुदे ही क्रोधादि कौंन हैं, तिनका निषेध किया। तातैं बनै नाहीं, पूर्व्वापरविरोध है। गीताविषै वीतरागता दिखाय लरनेका उपदेश दिया, सो यह प्रत्यक्ष विरोध भासै है। बहुरि ऋषीश्वरादिकनिकरि श्राप दिया बतावैं, सो ऐसा क्रोध किए निंद्यपना कैसैं न भया। इत्यादि जानना। बहुरि **अपुत्रस्य गतिर्नास्ति** ऐसा भी कहैं अर भारतविषै ऐ भी कह्या है,

अनेकानि सहस्राणि कुमारब्रह्मचारिणाम् ।
दिवं गतानि राजेन्द्र अकृत्वा कुलसन्ततिम् ॥ १ ॥

यहां कुमारब्रह्मचारीनिकौं स्वर्ग गए बताए, सो यह परस्पर विरोध है । बहुरि ऋषीश्वर भारतविषै तौ ऐसा कह्या,—

मद्यमांसाशनं रात्रौ भोजनं कन्दभक्षणम् ।
ये कुर्वन्ति वृथास्तेषां तीर्थयात्रा जपस्तपः ॥ १ ॥
वृथा एकादशी प्रोक्ता वृथा जागरणं हरेः ।
वृथा च पौष्करी यात्रा कृत्स्नं चान्द्रायणं वृथा ॥२॥
चातुर्मास्ये तु सम्प्राप्ते रात्रिभोज्यं करोति यः ।
तस्य शुद्धिर्न विद्येत चान्द्रायणशतैरपि ॥ ३ ॥

इनविषै मद्यमांसादिकका वा रात्रिभोजनका वा चौमासैमैं विशेषपनैं रात्रिभोजनका वा कंदभक्षणका निषेध किया । बहुरि बड़े पुरुषनिकै मद्यमांसादिकका सेवन करना कहैं, व्रतादिविषै रात्रिभोजन थापैं वा कंदादिभक्षण थापैं ऐसैं विरुद्ध निरूपै हैं । ऐसैं ही अनेक पूर्वापर विरुद्धवचन अन्यमतके शास्त्रनिविषै है । सो करैं कहा, कहीं तौ पूर्वपरंपरा जानि विश्वास अनावनेके अर्थि यथार्थ कह्या अर कहीं विषयकषाय पोषनेके अर्थि अन्यथा कह्या । सो जहां पूर्वापरविरोध होय, तिनिका वचन प्रमाण कैसैं करिए । तहां जो अन्यमतनिविषै क्षमा शील संतोषादिककौं पोषते वचन हैं, सो तौ जैनमतविषै पाइए हैं अर विपरीत वचन हैं, सो उनके कल्पित हैं । जिनमत अनुसार वचनका विश्वासतैं उनका विपरीतवचनका श्रद्धानादिक होय जाय, तातैं अन्यमतका

कोऊ अंग भला देखिकर भी तहां श्रद्धानादिक न करना। जैसैं विषमिलित भोजन हितकारी नाहीं, तैसै जानना। बहुरि जो कोई उत्तमधर्मका अंग जिनमतविषै न पाईए अर अन्यमतविषै पाईए, अथवा कोई निषिद्ध धर्मका अंग जैनमतविषै पाईए अर अन्यत्र न पाईए, तौ अन्यमतकौं आदरो सो सर्वथा होय नाहीं। जातैं सर्वज्ञका ज्ञानतैं किछू छिपा नाहीं है। तातैं अन्यमतनिका श्रद्धानादिक छोरि जिनमतका दृढ़ श्रद्धानादिक करना। बहुरि कालदोषतैं कषायी जीवनिकरि जिनमतविषै भी कल्पितरचना करी हैं, सो ही दिखाईए है,—

श्वेतांबरमतवारे काहूनैं सूत्र बनाए, तिनकौं गणधरके किए कहै हैं। सो उनकौं पूछिए है—गणधरनैं आचारांगादिक बनाए हैं सो तुम्हारै अबार पाईए है सो इतने प्रमाण लिए ही किए थे। जो एतने प्रमाण लिए ही किए थे, तौ तुम्हारे शास्त्रनिविषै आचारांगादिकनिके पदनिका प्रमाण अठारहहजार आदि कह्या है सो तिनकी विधि मिलाय द्यो। पदका प्रमाण कहा। जो विभक्तिका अंतकौं पद कहोगे, तौ कहे प्रमाणतैं बहुत पद होय जांयगे अर जो प्रमाणपद कहोगे, तौ तिस एकपदकै साधिक इक्यावन कोड़ि श्लोक हैं। सो यह तौ बहुत छोटे शास्त्र हैं, सो बनै नाहीं। बहुरि आचारांगादिकतैं दशवैकालिकादिकका प्रमाण घाटि कह्या है। तुम्हारै बधता है सो कैसैं बनै। बहुरि कहोगे, आचारांगादिक बडे थे, कालदोष जानि तिनहीमैंसौं केतेक सूत्र काढ़ि यह शास्त्र बनाए हैं। तौ प्रथम तौ टूटकग्रंथ प्रमाण नाहीं।

वहुरि यह प्रबंध है, जो बड़ा ग्रथ वनावै तौ वा विषै सर्ववर्णन विस्तार लिए करै अर छोटा ग्रंथ वनावै तौ तहां संक्षेपवर्णन करै परंतु संबंध टूटै नाहीं। अर कोई बड़ा ग्रंथमैं थोरासा कथन काढ़ि लीजिए, तौ तहां संबंध मिलै नाहीं—कथनका अनुक्रम टूटि जाय। सो तुम्हारे सूत्रनिविषै तौ कथादिकका भी संबंध मिलता भासै है- -टूटकपना न भासै है। बहुरि अन्य कवीनितैं गणधरकी तौ बुद्धि अधिक होगी, ताके किए ग्रंथनिमैं थोरे शब्दमैं बहुत अर्थ चाहिए सो तौ अन्य कवीनिकीसी भी गंभीरता नाहीं। बहुरि जो ग्रंथ वनावै, सो अपना नाम ऐसैं धरै नाहीं, 'जो अमुक कहै है'। 'मैं कहौं हौं' ऐसा कहै। सो तुम्हारे सूत्रनिविषै 'हे गोतम' वा 'गोतम कहै है' ऐसे वचन हैं। सो ऐसे वचन तौ तब ही संभवैं, जब और कोई कर्त्ता होय। तातैं यह सूत्र गणधरकृत नाहीं, औरके किए हैं। गणधरका नामकरि कल्पितरचनाकौं प्रमाण कराया चाहै हैं। सो विवेकी तौ परीक्षाकरि मानैं, कह्या ही तौ न मानैं। बहुरि वह ऐसा भी कहै हैं--जो गणधरसूत्रनिकै अनुसार कोई दशपूर्वधारी भया है, तानै ए सूत्र बनाए हैं। तहां पूछिए है—जो नए ग्रंथ बनाए थे, तौ नवा नाम धरना था, अंगादिकके नाम काहेकौं धरे। जैसैं कोई बड़ा साहूकारकी कोठीका नामकरि अपना साहूकारा प्रगट करै, तैसैं यह कार्य भया। यह सांच तौ तब होता, जैसैं दिगम्बर आचार्यनिने अनेक ग्रंथ रचे, सो सर्व गणधरकरि भाषित अंगप्रकीर्णक ताके अनुसार रचे अर तिनि सबनिमैं ग्रंथकर्त्ताका नाम सर्व आचार्यनिने अपना भिन्न

भिन्न रक्खा अर तिनि ग्रंथनिके नामहू भिन्न भिन्न रक्खे किसी ग्रंथका भी नाम अंगादिक नहीं रक्खा अर न यह लिख्या,जो ए गणधर देवके रचे हैं। सांचेकौं तौ जैसैं दिगंवरविषै ग्रंथनिके नाम धरे अर अनुसारी पूर्वग्रंथनिका कह्या, तैसैं कहना योग्य था। अंगादिकका नाम धरि गणधरदेवका भ्रम काहेकौं उपजाया। तातैं गणधरके वा पूर्वधारीके वचन नाहीं। बहुरि इन सूत्रनिविषै जो विश्वास अनावनेंकै अर्थि जिनमतअनुसार कथन है, सो तौ सांच है ही। दिगंबर भी तैसैं ही कहै हैं। वहुरि जो कल्पितरचना करी है, तामैं पूर्वापरविरुद्धपनौ वा प्रत्यक्षादि प्रमाणमैं विरुद्धपनौं भासै है, सो ही दिखाईए है,—

अन्य लिंगीकै वा गृहस्थकै वा स्त्रीकै वा चांडालादि शूद्रनिकै साक्षात् मुक्तिकी प्राप्ति होनी मानै हैं, सो वनै नाहीं। सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी एकता मोक्षमार्ग है। सो वै सम्यग्दर्शनका स्वरूप तौ ऐसा कहै हैं,—

अरहंतो महादेवो जावज्जीवं सुसाहणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं ए सम्मत्तं मए गहिएं॥ १॥

सो अन्यलिंगीकै अरहंत देव, साधु गुरु, जिनप्रणीत तत्त्वका मानना कैसैं संभवै। तव सम्यक्त भी न होय, तौ मोक्ष कैसैं होय। जो कहोगे अंतरंगके श्रद्धान होनैतैं सम्यक्त तिनिकै हो है, सो विपरीत लिंगधारककी प्रशंसादिक किए भी सम्यक्तकौं अतीचार कह्या है तौ सांचा श्रद्धान भए पीछैं आप विपरीतलिंगका धारक कैसैं रहै। श्रद्धान भए पीछैं महाव्रतादि अंगीकार किए सम्यक्—

चारित्र अन्यलिंगविषै कैसैं बनै। जो अन्य लिंगविषै भी सम्यक्-चारित्र हो है, तौ जैनलिंग अन्यलिंग समान भया। तातैं अन्य-लिंगीकौं मोक्ष कहना मिथ्या है। बहुरि गृहस्थकौं मोक्ष कहैं, सो हिंसादिक सर्व सावद्यका त्याग किए सम्यक्चारित्र होय, सो सर्व सावद्ययोगका त्याग किए गृहस्थपनौ कैसैं संभवै। जो कहोगे—अंतरंगका त्याग भया है, तौ यहां तौ तीनूं योगका त्याग करै है कायकरि त्याग कैसैं भया। बहुरि बाह्यपरिग्रहादिक राखे भी महाव्रत हो है, सो महाव्रतनिविषै तौ बाह्यत्यागकरनेकी हीं प्रतिज्ञा करिए है त्याग किए बिना महाव्रत न होय। महाव्रत बिना छठाआदि गुणस्थान न होय सकै, तौ मोक्ष कैसैं होय। तातैं गृहस्थकौं मोक्ष कहना मिथ्या वचन है।

बहुरि स्त्रीकौं मोक्ष कहैं, सो जातैं सप्तमनरकगमनयोग्य पाप न होय सकै, ताकरि मोक्षका कारण शुद्धभाव कैसैं होय सकै। जातैं जाके भाव दृढ़ होंय सो ही उत्कृष्ट पाप वा धर्म उपजाय सकै है। बहुरि स्त्रीकै निशंक एकांतविषै ध्यान धरना, सर्वपरिग्रहादिकका त्याग करना संभवै नाहीं। जो कहोगे, एकसमयविषै पुरुषवेदी वा स्त्रीवेदी वा नपुंसकवेदीकौं सिद्धि होनी सिद्धांतविषै कही है, तातैं स्त्रीकौं मोक्ष मानिए है। सो यहां भाववेदी है कि द्रव्यवेदी है। जो भाववेदी है तौ हम मानै ही हैं। द्रव्यवेदी है, तौ पुरुषस्त्रीवेदी तौ लोकविषै प्रचुर दीखै हैं, नपुंसक तौ कोई विरला दीखै है। एक समयविषै मोक्ष जानेवाले इतने नपुंसक कैसैं संभवै। तातैं द्रव्यवेद अपेक्षा कथन बनैं नाहीं बहुरि जो

कहोगे नवमगुणस्थानताईं वेदकहे हैं, सो भी भाववेद अपेक्षा ही कथन है द्रव्यवेदअपेक्षा होय तौ चौदहवाँ गुणस्थानपर्यंत वेदका सद्भाव संभवै । तातैं स्त्रीकै मोक्षका कहना मिथ्या है।

बहुरि शूद्रनिकौं मोक्ष कहैं । सो चांडालादिककौं गृहस्थ सन्मानादिककरि दानादिक कैसैं दे, लोकविरुद्ध होय । बहुरि नीचकुलवालोंके उत्तम परिणाम न होय सकैं । बहुरि नीचगोत्रकर्मका उदय तौ पंचम गुणस्थानपर्यंत ही है। ऊपरिके गुणस्थान चढ़े विना मोक्ष कैसैं होय । जो कहोगे-संयम धारे पीछैं वाकै उच्चगोत्रका उदय कहिए, तौ संयम धारनेकी वा न धारनेकी अपेक्षातैं नीच उच्चगोत्रका उदय ठहर्या । ऐसैं होतैं असंयमी मनुष्य तीर्थंकर क्षत्रियादिककै भी नीचगोत्रका उदय ठहरै। जो उनकै कुल अपेक्षा उच्चगोत्रका उदय कहोगे, तौ चांडालादिककै भी कुल अपेक्षा ही नीचगोत्रका उदय कहो । ताका सद्भाव तुम्हारे सूत्रनिविषै भी पंचम गुणस्थानपर्यंत ही कह्या है । सो कल्पित कहनेमैं पूर्वापरविरुद्ध होय ही होय। तातैं शूद्रनिकै मोक्षका कहना मिथ्या है ।

ऐसैं तिनहूनैं सर्वकै मोक्षकी प्राप्ति कही, सो ताका प्रयोजन यह है जो सर्वका भला मनावना मोक्षका लालच देना अर अपना कल्पितमतकी प्रवृत्ति करनी । परंतु विचार किए मिथ्या भासै है । बहुरि तिनके शास्त्रनिविषै 'अछेरा' कहे हैं । सो कहैं हैं— हुंडावसर्प्पिणीके निमित्ततैं भए हैं, इनकौं छेड़ने नाहीं । सो

कालदोषतैं केई बात होय परंतु प्रमाणविरुद्ध तौ न होय। जो प्रमाणविरुद्ध भी होय, तौ आकाशके फूल गधेके सींग इत्यादिका होना भी बनै सो संभवै नाहीं। तातैं वै जो अछेरा कहै हैं सो प्रमाणविरुद्ध हैं। काहेतैं, सो कहिए है,–

वर्द्धमानजिन केतेककाल ब्राह्मणीके गर्भविषै रहि पीछैं क्षत्रियाणीके गर्भविषै बधे, ऐसा कहै हैं। सो काहूका गर्भ काहूकै धरया प्रत्यक्ष भासै नाहीं, अनुमानादिकमैं आवै नाहीं। बहुरि तीर्थंकरकै भया कहिए, तौ गर्भकल्याणक काहूकै घर भया जन्मकल्याणक काहूकै भया। केतेक दिन रत्नवृष्ट्यादिक काहूकै घर भई, केतेक दिन काहूकै भई। सोलह स्वप्न किसीकौं आए, पुत्र किसीकै भया, इत्यादि असंभव भासै। बहुरि माता तौ दोय भई अर पिता तौ एक ब्राह्मण ही रह्या। जन्मकल्याणादिविषै वाका सन्मान किया, कै अन्य कल्पित पिताका किया। सो तीर्थंकरकै दोय पिताका कहना, महाविपरीत भासै है। सर्वोत्कृष्ट-पदके धारककै ऐसे वचन सुनने भी योग्य नाहीं। बहुरि तीर्थंकरकै भी ऐसी अवस्था भई, तौ सर्वत्र ही अन्यस्त्रीका गर्भ अन्यस्त्रीकै धरि देना ठहरै, तौ वैष्णव जैसैं अनेक प्रकार पुत्र पुत्रीका उपजना बतावैं हैं, तैसैं यह कार्य भया। सो ऐसे निकृष्ट कालविषै तौ ऐसे होय ही नाहीं, तहां होना कैसैं संभवै। तातैं यह मिथ्या है।

बहुरि मल्लितीर्थंकरकौं कन्या कहै हैं। सो मुनि देवादिककी सभाविषै स्त्रीका स्थिति करना उपदेश देना न संभवै, वा स्त्रीपर्याय हीन है सो उत्कृष्ट तीर्थंकरपदधारककै न बनै। बहुरि तीर्थंकरकै

नग्नलिंग ही कहे हैं, सो स्त्रीकै नग्नपनौ न संभवै। इत्यादि विचार किए असंभव भासै है।

बहुरि हरिक्षेत्रका भोगभूमियांकौं नरकि गया कहैं। सो बंध-वर्णनविषै तौ भोगभूमियांकै देवगति देवायुहीका बंध कहैं, नरकि कैसैं गया। सिद्धांतविषै तौ अनंतकालविषै जो बात होय, सो भी कहैं जैसें तीसरै नरक पर्यंत तीर्थंकरप्रकृतिका सत्व कह्या, भोगभूमियांकै नरक आयु गतिका बंध न कह्या, सो केवली भूलैं तौ नांहीं। तातैं यह मिथ्या है ऐसैं सर्व अछेरे असंभव जानने। बहुरि वै कहै हैं। इनकौं छेड़ने नाहीं। सो झूंठ कहनेवाला ऐसैं ही कहै। बहुरि जो कहोगे --दिगंबर विषै जैसैं तीर्थंकरकै पुत्री, चक्रवर्तिका मानभंग इत्यादि कार्य कालदोषतैं भया कहै हैं, तैसैं ए भी भए। सो वै कार्य तौ प्रमाणविरुद्ध नाहीं। अन्यकै होते थे सो महंतनिकै भए, तातैं कालदोष भया कहै हैं। गर्भहरणादि कार्य प्रत्यक्ष अनुमानादितैं विरुद्ध, तिनिकै होना कैसैं संभवै। बहुरि अन्य भी घने ही कथन प्रमाणविरुद्ध कहै हैं। जैसैं कहै हैं, सर्वार्थसिद्धिके देव मनहीतैं प्रश्न करै हैं, केवली मनहीतैं उत्तर दे हैं। सो सामान्य ही जीवकै मनकी बात मनःपर्ययज्ञानीविना जानि सकै नाहीं। केवलीके मनकी सर्वार्थसिद्धिके देव कैसैं जानै। बहुरि केवलीकै भावमनका तौ अभाव है, द्रव्यमन जड़ आकारमात्र है, उत्तर कौन दिया। तातैं मिथ्या है। ऐसैं अनेक प्रमाणविरुद्ध कथन किए हैं, तातैं तिनिके आगम कल्पित ही जानने।

बहुरि श्वेतांबरमतवाले देवगुरुधर्मका स्वरूप अन्यथा निरूपै हैं। तहां केवलीकै क्षुधादिक दोष कहैं। सो यह देवका स्वरूप अन्यथा है। काहेतैं क्षुधादिक दोष होतैं आकुलता होय, तब अनंतसुख कैसैं बनैं। बहुरि जो कहोगे, शरीरकौं क्षुधा लागै है आत्मा तद्रूप न हो है, तौ क्षुधादिकका उपाय आहारादिक काहेकौं ग्रहण किया कहो हो। क्षुधादिकरि पीड़ित होय, तब ही आहार ग्रहण करै। बहुरि कहोगे, जैसैं कर्मोदयतैं विहार हो है, तैसैं ही आहार ग्रहण हो है। सो विहार तौ विहायोगतिके उदयतैं हो है, अर पीड़ाका उपाय नाहीं, अर विना इच्छा भी किसी जीवकै होता देखिए है। बहुरि आहार है, सो प्रकृतिका उदयतैं नाहीं क्षुधाकरि पीड़ित भए ही ग्रहण करै है। बहुरि आत्मा पवनादिककौं प्रेरै तब ही निगलना हो है, तातैं विहारवत् आहार नाहीं। जो कहोगे—सातावेदनीयकै उदयतैं आहार ग्रहण हो है, सो बनै नाहीं। जो जीव क्षुधादिकरि पीड़ित होय, पीछैं आहारादिक ग्रहणतैं सुख मानै, ताकै आहारादिक साताके उदयतैं कहिए। आहारादिक सातावेदनीयके उदयतैं स्वयमेव होय ऐसैं तौ है नाहीं। जो ऐसैं होय, तौ सातावेदनीयका मुख्यउदय देवनिकै है, ते निरंतर आहार क्यों न करैं। बहुरि महामुनि उपवासादि करैं, तिनकै साताका भी उदय अर निरंतर भोजन करनेवालौंकै असाताका भी उदय संभवै तातैं जैसैं विना इच्छा विहायोगतिके उदयतैं विहार संभवै, तैसैं विना इच्छा केवल सातावेदनीयहीके उदयतैं आहारका ग्रहण संभवै नाहीं। बहुरि

वह कहै हैं, सिद्धांतविषै केवलीकै क्षुधादिक ग्याहर परीषद कहे हैं, तातैं तिनकै क्षुधाका सद्भाव संभवै है। बहुरि आहारादिक-विना तिनकी उपशांतता कैसैं होय, तातैं तिनकै आहारादिक मानै हैं। ताका समाधान,—

कर्मप्रकृतीनिका उदय तीव्रमंद भेद लिए हो है। तहां अति मंद होतैं तिसका उदयजनित कार्यकी व्यक्तता भासै नाहीं। तातैं मुख्यपनै अभाव कहिए, तारतम्यविषै सद्भाव कहिए। जैसैं नवम गुणस्थानविषै वेदादिकका उदय मंद है, तहां मैथुनादि क्रिया व्यक्त नाहीं तातैं तहां ब्रह्मचर्य्य ही कह्या। तारतम्यविषै मैथुनादिकका सद्भाव कहिए है। तैसैं केवलीकैं असाताका उदय अतिमंद है। जातैं एक एक कांडकविषै अनंतवै भाग अनुभाग रहै ऐसे बहुत अनुभागकांडकनि करि वा गुणसंक्रमणादिककरि सत्ताविषै असातावेदनीयका अनुभाग अत्यंत मंद भया, ताका उदयविषैं क्षुधा ऐसी व्यक्त होती नाहीं जो शरीरकौं क्षीण करै। अर मोहके अभावतैं क्षुधाजनित दु:ख भी नाहीं, तातैं क्षुधादिकका अभाव कहिए हैं। तारतम्यविषै तिनका सद्भाव कहिए है। बहुरि तैं कह्या - आहारादिक विना तिनकी उपशांतता कैसैं होय सो आहारादिकरि उपशांतता होने योग्य क्षुधा लागे, तौ मंद उदय काहेका रह्या। देव भोगभूमिया आदिककै किंचित् मंद उदय होतै ही बहुतकाल पीछैं किंचित् आहार ग्रहण हो है तौ इनकै तौ अतिमंद उदय भया है, तातैं इनकै आहारका अभाव संभवै। बहुरि वै कहै हैं देव भोगभूमियांका तौ शरीर ही ऐसा

है, जाकौं घनेंकाल पीछैं थोरी भूख लागै, इनका तौ शरीर कर्मभूमिका औदारिक है । तातैं इनका शरीर आहार विना देशोनकोडि पूर्वपर्यंत उत्कृष्टपनैं कैसैं रहै ताका समाधान—

देवादिकका भी शरीर वैसा है, सो कर्मकेही निमित्ततैं है । यहां केवलज्ञान भए ऐसा ही कर्म उदय भया जाकरि शरीर ऐसा भया, जाकौं भूख प्रगट होती ही नाहीं । जैसैं केवलज्ञान भए पहलै केश नख बधै थे, सो वधैं (बढ़ैं) नाहीं । छाया होती थी, सो होती नाहीं । शरीरविषै निगोद थे, ताका अभाव भया । बहुत प्रकारकरि जैसैं शरीरकी अवस्था अन्यथा भई, तैसैं आहार-विना भी शरीर जैसाका तैसा रहै ऐसी भी अवस्था भई । प्रत्यक्ष देखौ, औरनिकौं जरा व्यापै तब शरीर शिथिल होय जाय, इनका आयुका अंतपर्यंत शरीर शिथिल न होय । तातैं अन्य मनुष्यनिका शरीर अर इनका शरीरकी समानता संभवै नाहीं । बहुरि जो तू कहैगा—देवादिककै आहार ही ऐसा है, जाकरि बहुतकालकी भूख मिटै, इनकै भूख काहेतैं मिटी अर शरीर पुष्ट कैसैं रह्या । ताकौं कहिए है--जो असाताका उदय मंद होनेतैं मिटी अर समय समय परम औदारिक शरीर वर्गणाका ग्रहण हो है, सो अब तौ कर्म आहार है सो ऐसी वर्गणाका ग्रहण हो है जाकरि क्षुधादिक व्यापै नाहीं वा शरीर शिथिल होय नाहीं । सिद्धांतविषै याहीकी अपेक्षा केवलीकौं आहार कह्या है । अर अन्नादिकका आहार तौ शरीरकी पुष्टताका मुख्य कारण नाहीं । प्रत्यक्ष देखौ, कोऊ थोरा आहार करै शरीर पुष्ट बहुत होय, कोऊ बहुत आहार करै

शरीर क्षीण रहै । बहुरि पवनादि साधनेवाले बहुतकालताई आहार न लें शरीर पुष्ट रह्या करै, वा ऋद्धिधारी मुनि उपवासादि करैं शरीर पुष्ट बन्या रहै; सो केवलीकै तौ सर्वोत्कृष्टपना है । उनकै अन्नादिक विना शरीर पुष्ट बन्या रहै, तौ कहा आश्चर्य भया । बहुरि केवली कैसैं आहारकौं जाय, कैसैं जाचैं । बहुरि वै आहारकौं जांय, तब समवसरण खाली कैसैं रहै । अथवा अन्यका ल्याय देना ठहरावोगे, तौ कौन ल्याय दे, उनके मनकी कौन जानै । पूर्वं उपवासादिककी प्रतिज्ञा करी थी, ताका कैसैं निर्वाह होय । जीवअंतराय सर्व प्रतिभासै; कैसैं आहार ग्रहैं, इत्यादि विरुद्ध भासै है । बहुरि वह कहै है—आहार ग्रहै हैं, परंतु काहूकौं दीसै नाहीं । सो आहार ग्रहणकौं निंद्य जान्या, तब वाका न देखना अतिशयविषै लिख्या । सो उनकै निंद्यपना रह्या अर और न देखै हैं, तौ कहा भया । ऐसैं अनेक प्रकार विरुद्ध उपजै है ।

बहुरि अन्य अविवेक कहै हैं—केवलीकै नीहार कहै हैं रोगादिक भया कहै हैं, अर कहैं, काहूनैं तेजोलेश्या छोरी ताकरि वर्द्धमान स्वामीकै पेडूंगाका (पेचिसका) रोग भया, ताकरि बहुत बार नीहार होने लागा । सो तीर्थंकर केवलीकै भी ऐसा कर्मका उदय रह्या; अर अतिशय न भया तौ इंद्रादिकरि पूज्यपना कैसैं सोभै । बहुरि नीहार कैसैं करैं, कहा करैं कोऊ संभवती बात नाहीं । बहुरि जैसैं रागादिकरि युक्त छद्मस्थकै क्रिया होय, तैसैं केवलीकै क्रिया ठहरावै हैं । वर्द्धमानस्वामीका उपदेशविषै 'हे गौतम' ऐसा वारंवार कहना ठहरावै हैं । सो उनकै तौ अपना

कालविषै सहज दिव्यध्वनि हो है, तहां सर्वकौं उपदेश हो है गौतमकौं संबोधन कैसैं बनै। बहुरि केवलीकै नमस्कारादिक क्रिया ठहरावै हैं, सो अनुरागविना वंदना संभवै नाहीं। बहुरि गुणाधिककौं वंदना संभवै, सो उनसौं कोई गुणाधिक रह्या नाहीं। सो कैसैं बनै। बहुरि हाटिविषै समवसरण उतार्या कहैं, सो इंद्रकृत समवसरण हाटिविषै कैसैं रहै? इतनी रचना तहां कैसैं समावै। बहुरि हाटिविषै काहेकौं रहै कहा इंद्र हाटि सारिखी रचना करनेकौं भी समर्थ नाहीं; जातैं हाटिका आश्रय लीजिए। बहुरि कहैं,—केवली उपदेशदेनेकौं गए। सो घरि जाय उपदेश देना अतिरागता होय, सो मुनिकै भी संभवै नाहीं केवलीकै कैसैं बनै। ऐसैं ही अनेक विपरीतता तहां प्ररूपै हैं। केवली शुद्धज्ञानदर्शनमय रागादिरहित भए हैं, तिनिकै अघातिनिके उदयतैं संभवतीक्रिया कोई हो है, अर मोहादिकका अभाव भया है। तातैं उपयोगमिले जो क्रिया होय सकै सो संभवै नाहीं पापप्रकृतिका अनुभाग अत्यंत मंद भया है। ऐसा मंद अनुभाग अन्य कोईकै नाहीं। तातैं अन्यजीवनिकै पापउदयतैं जो क्रिया होती देखिए है, सो केवलीकै न होय। ऐसैं केवली भगवानकै सामान्य मनुष्यकीसी क्रियाका सद्भाव कहि देवका स्वरूपकौं अन्यथा प्ररूपै हैं।

बहुरि गुरूका स्वरूपकौं अन्यथा प्ररूपै हैं। मुनिकै वस्त्रादिक चौदह उपकरण कहैं हैं। सो हम पूछै हैं कि मुनिकौं निर्ग्रंथ कहैं अर मुनिपद लेतैं नवप्रकार सर्वपरिग्रहका त्यागकरि महाव्रत

अंगीकार करैं, सो ए वस्त्रादिक परिग्रह हैं कि नाहीं। जो हैं तौ त्यागकिए पीछैं काहेकौं राखैं, अर नाहीं हैं, तौ वस्त्रादिक गृहस्थ राखै ताकौं भी परिग्रह मति कहौ। सुवर्णादिककौं ही परिग्रह कहौ। बहुरि जो कहोगे, जैसैं क्षुधाके अर्थि आहार ग्रहण कीजिए हैं, तैसैं शीतउष्णादिकके अर्थि वस्त्रादिक ग्रहण कीजिए है। सो मुनिपद अंगीकार करतें आहारका त्याग किया नाहीं, परिग्रहका त्याग किया है। बहुरि अन्नादिकका तौ संग्रह करना परिग्रह है, भोजन करने जाय सो परिग्रह नाहीं। अर वस्त्रादिकका संग्रह करना वा पहरना सर्व ही परिग्रह है, सो लोकविषै प्रसिद्ध है। बहुरि कहैंगे शरीरकी स्थितिकै अर्थि वस्त्रादिक राखिए है-ममत्त्व नाहीं, तातैं इनकौं परिग्रह न कहिए। सो श्रद्धानविषै तौ जब सम्यग्दृष्टी भया, तब ही समस्त परद्रव्यविषै ममत्त्वका अभाव भया। तिस अपेक्षा तौ चौथा गुणस्थान ही परिग्रहरहित कहौ। अर प्रवृत्तिविषै ममत्त्व नाहीं, तौ कैसैं ग्रहण करै हैं। तातैं वस्त्रादिक ग्रहण धारण छूटैगा' तब ही निःपरिग्रह होगा। बहुरि कहैंगे-वस्त्रादिककौं कोई ले जाय, तौ क्रोध न करै वा क्षुधादि लागै तौ वेचै नाहीं, वा वस्त्रादिकपहरि प्रसाद करै नाहीं। परिणामनिकी स्थिरताकरि धर्म ही साधै है, तातैं ममत्त्व नाहीं। सो बाह्य क्रोध मति करौ, परंतु जाका ग्रहणविषै इष्टबुद्धि होय, ताका वियोगविषै अनिष्टबुद्धि होय ही जाय। जो अनिष्टबुद्धि न भई, तौ बहुरि ताके अर्थि याचना काहेकौं करिए है। बहुरि वेचते नाहीं, सो धातु राखनेतैं अपनी हीनता जानि नाहीं वेचिए

है। जैसैं धनादि राखने तैसैं ही वस्त्रादि राखने। लोकविषै परिग्रहके चाहक जीवनिकै दोऊनिकी इच्छा है। तातैं चौरादिकै भयादिकके कारन दोऊ समान हैं। बहुरि परिणामनिकी स्थिरता-करि धर्मसाधनेतैं ही परिग्रहपना न होय, तौ काहूकौं बहुत शीत लागै सो सोड़ि राखि परिणामनिकी स्थिरता करैगा अर धर्मसाधैगा तौ वाकौं भी निःपरिग्रह कहौ। ऐसैं गृहस्थधर्म मुनिधर्मविषै विशेष कहा रहैगा। जाकै परीषह सहनेकी शक्ति न होय, सो परिग्रह राखि धर्म साधै ताका नाम गृहस्थधर्म, अर जाकै परिणाम निर्मल भए परीषहकरि व्याकुल न होय, सो परिग्रह न राखै अर धर्म साधै, ताका नाम मुनिधर्म, इतना विशेष है। बहुरि कहोगे, शीतादिकी परीषहकरि व्याकुल कैसैं न होय। सो व्याकुलता तौ मोहके उदयके निमित्ततैं है। सो मुनिकै षष्ठादि गुणस्थाननिविषै तीन चौकड़ीका उदय नाहीं। अर संज्वलनकै सर्वघाती स्पर्द्धक-निका उदय नाहीं। देशघाती स्पर्द्धकनिका उदय है, सो किछू तिनका बल नाहीं। जैसैं वेदक सम्यग्दृष्टीकै सम्यक्मोहनीयका उदय है सो सम्यक्त्वकौं घात न करि सकै; तैसैं देशघाती संज्व-लनका उदय परिणामनिकौं व्याकुल करि सकै नाहीं। मुनिकै अर औरनिकै परिणामनिकी समानता है नाहीं। और सबनिकै सर्व-घातीका उदय है, इनकै देशघातीका उदय है तातैं औरनिकै जैसे परिणाम होंय, तैसे उनकै कदाचित् न होंय। तातैं जिनिकै सर्वघातीकषायनिका उदय होय, ते गृहस्थ ही रहैं अर जिनकै देशघातीका उदय होय ते मुनिधर्म अंगीकार करैं। ताकै शीता-

दिककरि परिणाम व्याकुल न होय, तातैं वस्त्रादिक राखैं नाहीं। बहुरि कहौगे—जैन शास्त्रनिविषै चौदह उपकरण मुनि राखैं, ऐसा कह्या है। सो तुम्हारे ही शास्त्रनिविषै कह्या है, दिगंबर जैनशास्त्रविषै तौ कह्या नाहीं। तहां तौ लंगोटमात्र परिग्रह रहे भी ग्यारहीं प्रतिमाका धारक श्रावक ही कह्या है। सो अब यहां विचारौ, दोऊनिमैं कल्पित वचन कौन है। प्रथम तौ कल्पित रचना, कषायी होय सो करै। बहुरि कषायी होय, सो ही नीचापदविषै उच्चपनौ प्रगट करै। सो यहां दिगंबरविषै वस्त्रादि राखे धर्म होय ही नाहीं ऐसा तौ न कह्या परंतु तहां श्रावकधर्म कह्या। श्वेतंबरविषै मुनि धर्म कह्या। सो यहां जानै नीची क्रिया होतैं, उच्चत्व पद प्रगट किया, सो ही कषायी है। इस कल्पित कहनेकरि आपकौं वस्त्रादि राखतैं भी लोक मुनि मानने लगैं, तातैं मानकषाय पोष्या गया। अर औरनिकौं सुगमक्रियाविषै उच्चपदका होना दिखाया, तातैं घने लोक लगि गए। जे कल्पित मत भए हैं, ते ऐसैं ही भए हैं। तातैं श्वेतांबरमतविषै वस्त्रादि होतै मुनिपना कह्या है, सो पूर्वोक्त युक्तिकरि विरुद्ध भासै है। तातैं ए कल्पितवचन हैं, ऐसा जानना। बहुरि कहौगे—दिगंबरविषै भी शास्त्र पींछी आदि मुनिकै उपकरण कहे हैं, तैसैं हमारै चौदह उपकरण कहे हैं। ताका समाधान—

जाकरि उपकार होय, ताका नाम उपकरण है। सो यहां शीतादिककी वेदना दूरि करणेतैं उपकरण ठहराईए, तौ सर्वपरिग्रह सामग्री उपकरण नाम पावैं। सो धर्मविषै इनका कहा प्रयोजन?

ए तौ पापका कारण हैं। धर्मविषै तौ धर्मका उपकारी जे होंय, तिनिका नाम उपकरण है। सो शास्त्र ज्ञानकौं कारण, पींछी दयाकौं, कमंडलु शौचकौं कारण, सो ए तौ धर्मके उपकारी भए, वस्त्रादिक कैसैं धर्मके उपकारी होंय, । वै तौ शरीरका सुखहीकै अर्थि धारिए है। बहुरि जो शास्त्र राखि महंतता दिखावैं, पींछी-करि बुहारी दें कमंडलुकरि जलादिक पीवैं वा मैल उतारैं, तौ शास्त्रादिक भी परिग्रह ही हैं। सो मुनि ऐसे कार्य करै नाहीं। तातैं धर्मके साधनकौं परिग्रह संज्ञा नाहीं। भोगके साधनकौ परिग्रह संज्ञा हो है ऐसा जानना। बहुरि कहोगे—कमंडलुतैं तौ शरीरहीका मल दूरि करिए है, सो मुनि मल दूरि करनेकीइच्छा-करि कमंडलु नाहीं राखैं हैं। शास्त्र बांचना आदि कार्य करैं, अर मललिप्त होंय, तौ तिनिका अविनय होय, लोकनिंद्य होंय, तातैं इस धर्मके अर्थि कमंडलु राखिए है ऐसैं पींछी आदि उपकरण संभवैं, वस्त्रादिककौं उपकरण संज्ञा संभवै नाहीं। काम अरतिआदि मोहका उदयतैं विकार बाह्य प्रगट होय, अर शीतादिक सहे न जाँय, तातैं विकार ढांकनेकौं, वा शीतादि घटावनेकौं, वा वस्त्रादिक राखि मानके उदयतैं अपनी महंतता भी चाहैं तातैं, कल्पित-युक्तिकरि उपकरण ठहराईए है। बहुरि घरघर याचनाकरि आहार ल्यावना ठहराय है। सो प्रथम तौ यह पूछिए है, जो याचना धर्मका अंग है कि पापका अंग है। जो धर्मका अंग है, तौ मांगनेवाले सब धर्मात्मा भए। अर पापका अंग है, तौ मुनिकै कैसैं संभवै। बहुरि जो तू कहैगा, लोभकरि किछू धनादिक याचैं

तौ पाप होय; यह तौ धर्म साधनकै अर्थि शरीरकी स्थिरता किया चाहै हैं। ताका समाधान,—

आहारादिककरि धर्म होता नाहीं, शरीरका सुख हो है। शरीरका सुखकै अर्थि अतिलोभ भए याचना करिए हैं। जो अति लोभ न होता, तो आप काहेकौं मांगता। वै ही देते तौ देते न देते तौ न देते। बहुरि अतिलोभ भए यहां ही पाप भया, तब मुनिधर्म नष्ट भया और धर्म कहा साधैगा। अब वह कहै है—मनविषै तौ आहारकी इच्छा होय अर याचै नाहीं, तौ मायाकपाय भया अर याचनेमैं हीनता आवै है, सो गर्वकरि याचै नाहीं, तौ मानकषाय भया। आहार लेना था, सो मांगि लिया। यामैं अतिलोभ कहा भया अर यातैं मुनिधर्म कैसैं नष्ट भया, सो कहौ। ताकौं कहिए है—

जैसैं काहू व्यापारीकै कुमावनेकी इच्छा मंद है, सो हाटि (दूकान) ऊपरि तौ बैठै अर मनविषै व्यापारकरनेकी इच्छा भी है परंतु काहूकौं वस्तु लेनेदेनेरूप व्यापारकै अर्थ प्रार्थना नाहीं करै है। स्वयमेव कोई आवै अर अपनी विधि मिलै, तौ व्यापार करै है। तौ ताकै लोभकी मंदता है, माया वा मान नाहीं हैं। माया वा मानकषाय तौ तब होय, जब छलकरनेकै अर्थि वा अपनी महंतताकै अर्थि ऐसा स्वांग करै। सो भले व्यापारीकै ऐसा प्रयोजन नाहीं। तातैं वाकै माया मान न कहिए। तैसैं मुनिनकै आहारादिककी इच्छा मंद है, सो आहार लेनेकौं आवैं अर मनविषै आहारलेनेकी इच्छा भी है; परंतु आहारकै अर्थि प्रार्थना नाहीं करै हैं। स्वयमेव कोई

दे, तौ अपनी विधि मिले अहार ले हैं। तौ उनकै लोभकी मंदता है, माया वा मान नाहीं है। माया मान तौ तब होय, जब छल करनेकै अर्थि वा महंततांकै अर्थि ऐसा स्वांग करै। सो मुनिनकै ऐसैं प्रयोजन हैं नाहीं। तातैं इनिकै माया मान नाहीं है। जो ऐसैं ही माया मान होय, तौ जे मनहीकरि पाप करैं वचनकायकरि न करैं, तिन सबनिकैं माया ठहरै। अर जे उच्चपदके धारक नीचवृत्ति नाहीं अंगीकार करै हैं, तिन सबनिकै मान ठहरै। ऐसैं अनर्थ होय। बहुरि तैं कह्या-"आहार मागनेमैं अतिलोभ कहा भया" सो अतिकषाय होय, तब लोकनिंद्य कार्य अंगीकार-करिकैं भी मनोरथ पूर्ण किया चाहै, सो मांगना लोकनिंद्य है, ताकौं भी अंगीकारकरि आहारकी इच्छा पूर्ण करनेकी चाहि भई। तातैं यहां अतिलोभ भया। बहुरि तैं कह्या—"मुनिधर्म कैसैं नष्ट भया," सो मुनिधर्मविषै ऐसी तीव्रकषाय संभवै नाहीं। बहुरि काहूका आहारदेनेका परिणाम न था, यानै वाका घरमैं जाय-याचना करी। तहां वाकै सकुचना भया वा न दिए लोकनिंद्य-होनेका भय भया। तातैं वाकौं आहार दिया, सो वाका अंतरंग-प्राण पीड़नेतैं हिंसाका सद्भाव आया। जो आप वाका घरमैं न जाते, उसहीकै देनेका उपाय होता, तौ देता। वाकैं हर्ष होता। यह तौ दबायकरि कार्य करावना भया। बहुरि अपना कार्यके अर्थि याचनारूप वचन हैं, सो पापरूप है। सो यहां असत्यवचन भी भया। बहुरि वाकै देनेकी इच्छा न थी, यानै जाच्या, तब वानै अपनी इच्छातैं दिया नाहीं—सकुचिकरि दिया। तातैं अदत्त-

ग्रहण भी भया। बहुरि गृहस्थके घरमैं स्त्री जैसैं तैसैं तिष्ठै थी, यह चल्या गया। तहां ब्रह्मचर्यकी बाड़िका भंग भया। बहुरि आहार ल्याय, केतेक काल राख्या। आहारादिक राखनेंकौं पात्रादिक राखे, सो परिग्रह भया। ऐसैं पांच महाव्रतनिका भंग होनेतैं मुनिधर्म नष्ट हो है तातैं याचनाकरि आहार लेना मुनिकौं युक्त नाहीं। बहुरि वै कहै हैं—मुनिकै बाईस परीषहनि विषै याचनापरिषह कही है, सो मांगेविना तिस परीषहका सहना कैसैं होय? ताका समाधान—

याचना करनेका नाम याचनापरीषह नाहीं है। याचना न करनी ताका नाम याचनापरीषह है। जातैं अरति करनेका नाम अरतिपरीषह नाहीं, अरति न करनेका नाम अरतिपरीषह है तैसैं जानना। जो याचना करना, परीषह ठहरै, तौ रंकादि घनी याचना करै हैं, तिनिकै घना धर्म होय। अर कहोगे, मान घटावनेंतैं याकौं परीषह कहै हैं, तौ कोई कषायी कार्यके अर्थि कोइ कषाय छोरे भी पापी ही होय। जैसैं कोई लोभकै अर्थि अपना अपमानकौं भी न गिनैं, तौ ताकै लोभकी तीव्रता है। उस अपमान करावनेतैं भी महापाप हो है। अर आपकै इच्छा किछू नाहीं, कोई स्वयमेव अपमान करै है, तौ वाकै महाधर्म हो है। सो यहा तौ भोजनका लोभकै अर्थि याचनाकरि अपमान कराया, तातैं पाप ही है धर्म नाहीं। बहुरि वस्त्रादिकके भी अर्थि याचना करै हैं सो वस्त्रादिक कोई धर्मका अंग नाहीं है। शरीरसुखका कारण है तातैं पूर्वोक्तप्रकार ताका निषेध जानना। अपना धर्म-

रूप उच्चपदकौं याचनाकरि नीचा करै हैं, सो यामैं धर्मकी हीनता हो है। इत्यादि अनेकप्रकारकरि मुनिधर्मविषै याचनाआदि नाहीं संभवै है। सो ऐसी असंभवती क्रियाके धारक साधु गुरु. कहै हैं तातैं गुरुका स्वरूप अन्यथा कहैं हैं। बहुरि धर्मका स्वरूप अन्यथा कहै हैं। सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र इनकी एकता मोक्षमार्ग है, सो ही धर्म है सो इनिका स्वरूप अन्यथा प्ररूपै हैं। सो ही कहिए है—

तत्वार्थश्रद्धान सम्यग्दर्शन है, ताकी तौ प्रधानता नाहीं। आप जैसैं अरहंत देव साधु गुरु दया धर्मकौं निरूपै हैं, तिनका श्रद्धानकौं सम्यग्दर्शन कहै हैं। सो प्रथम तौ अरहंतादिकका स्वरूप अन्यथा कहैं। बहुरि इतने ही श्रद्धानतैं तत्त्वश्रद्धान भए विना सम्यक्त्व कैसैं होय, तातैं मिथ्या कहै हैं। बहुरि तत्वनिका श्रद्धानकौं सम्यक्त्व कहै हैं। प्रयोजनलिए तत्त्वनिका श्रद्धान नाहीं कहै हैं। गुणस्थान मार्गणादिरूप जीवका, अणुस्कंधादिरूप अजीवका, पुण्यपापके स्थाननिका, अविरतिआदि आश्रवनिका व्रतादिरूप संवरका, तपश्चरणादिरूप निर्जराका, सिद्ध होनेके लिंगादिके भेदनिकरि मोक्षका स्वरूप जैसैं उनके शास्त्रविषै कह्या है, तैसैं सीखि लीजिए। अर केवलीका वचन प्रमाण है, ऐसैं तत्त्वार्थश्रद्धानकरि सम्यक्त्व भया मानै हैं सो हम पूछैं हैं, ग्रैवेयिक जानेवाला द्रव्यलिंगी मुनिकै ऐसा श्रद्धान हो है कि नाहीं। जो हो है, तौ ताकौं मिथ्यादृष्टी काहेकौं कहौ। अर न हो है, तौ वानैं तौ जैनलिंग धर्मबुद्धिकरि धारया है, ताकै देवा-

दिकी प्रतीति कैसैं नाहीं भई। अर वाकै बहुत शास्त्राभ्यास है,
सो वानै जीवादिकके भेद कैसैं न जाने। अर अन्यमतका लवलेश
भी अभिप्रायमैं नाहीं, ताकै अरहंतवचनकी कैसैं प्रतीति नाहीं
भई। तातैं वाकै ऐसा श्रद्धान तौ होय, परंतु सम्यक्त्व न भया।
बहुरि नारकी भोगभूमियां तिर्यंचआदिकै ऐसा श्रद्धानहोनेका
निमित्त नाहीं अर तिनिकै बहुतकालपर्यंत सम्यक्त्व रहै है। तातैं
वाकै ऐसा श्रद्धान नाहीं हो है, तौ भी सम्यक्त्व भया। तातैं
सम्यक्श्रद्धानका यह स्वरूप नाहीं। सांचा स्वरूप है, सो आगैं
वर्णन करेंगे, सो जानना। बहुरि जो उनके शास्त्रनिका अभ्यास
करना, ताकौं सम्यग्ज्ञान कहै हैं। सो द्रव्यलिंगी मुनिकै शास्त्राभ्या-
स होतैं भी मिथ्याज्ञान कह्या। असंयत सम्यग्दृष्टीकै विषयादिरूप
जानना ताकौं सम्यग्ज्ञान कह्या। तातैं यह स्वरूप नाहीं, सांचा
स्वरूप आगैं कहैंगे सो जानना। बहुरि उनकरि निरूपित अणुव्रत
महाव्रतादिरूप श्रावक यतीका धर्म धारनेकरि सम्यक्चारित्र भया
मानै। सो प्रथम तौ व्रतादिका स्वरूप अन्यथा कहैं, सो किछू पूर्वै
गुरुवर्णनविषै कह्या है। बहुरि द्रव्यलिंगीकै महाव्रत होतैं भी
सम्यक्चारित्र न हो है। अर उनका मतकै अनुसारि गृहस्थादि-
ककै महाव्रतआदि बिना अंगीकार किए भी सम्यक्चारित्र हो है,
तातैं यह स्वरूप नाहीं। सांचा स्वरूप अन्य है, सो आगैं कहैंगे।
यहां वह कहै है—द्रव्यलिंगीकै अंतरंगविषै पूर्वोक्त श्रद्धानादिक
भए, सो बाह्य ही भए, तातैं सम्यक्त्वादि न भए। ताका उत्तर—
जो अंतरंग नाहीं अर बाह्य धारै, सो तौ कपटकरि धारै। सो

वाकै कपट होय, तौ ग्रैवेयिक कैसैं जाय, नरकादिविषै जाय। बंध तौ अंतरंग परिणामनितैं हो है। सो अंतरंग जिनधर्मरूप परिणाम भए विना ग्रैवेयक जाना संभवै नाहीं। बहुरि व्रतादिरूप शुभोपयोगहीतैं देवका बंध मानै, अर याहीकौं मोक्षमार्ग मानै, सो बंधमार्ग मोक्षमार्गकौं एक किया, सो यह मिथ्या है। बहुरि व्यवहारधर्मविषै अनेक विपरीत निरूपै हैं। निंदककौं मारनेमैं पाप नाहीं, ऐसा कहै हैं। सो अन्यमती निंदक तीर्थंकरादिकके होतै भी भए, तिनकौं इंद्रादिक मारे नाहीं। सो पाप न होता, तौ इंद्रादिक क्यौं न मारे। बहुरि प्रतिमाकै आभरणादि बनावै हैं; सो प्रतिबिंब तौ वीतरागभाव बधावनेकौं कारण स्थापन किया था। आभरणादि बनाए, अन्यमतकी मूर्तिवत् यह भी भए। इत्यादि कहां तांई कहिए, अनेक अन्यथा निरूपण करे हैं। या प्रकार श्वेतांबरमत कल्पित जानना। यहां सम्यग्दर्शनका अन्यथा निरूपणतैं मिथ्यादर्शनादिकहीकौं पुष्टता हो है। तातैं याका श्रद्धानादि न करना।

बहुरि इन श्वेतांबरनिविषै ही ढूंढिया प्रगट भए हैं, ते आपकौं सांचे धर्मात्मा मानै हैं, सो भ्रम है। काहेतैं सो कहिए है,—

केई तौ भेष धारि साधु कहावै हैं, सो उनके ग्रंथनिकै अनुसार भी व्रत समिति गुप्तिआदिका साधन नाहीं भासै है। बहुरि मन वचन काय कृत कारित अनुमोदनाकरि सर्व सावद्ययोग त्याग करनेकी प्रतिज्ञा करैं पीछैं पालै नाहीं। बालककौं वा भोलाकौं वा शूद्रादिककौं ही दीक्षा दें। सो ऐसैं त्याग करैं अर

त्याग करतैं ही किछू विचार न करैं, जो कहा त्याग करौं हौं। पीछैं पालै भी नाहीं अर ताकौं सर्व साधु मानैं। बहुरि यह कहैं,— पीछैं धर्म्मबुद्धि होय जाय, तब तौ याका भला हो है। सो पहले ही दीक्षा देनेवालेनैं प्रतिज्ञाभंग होती जाणि प्रतिज्ञाभंग कराई, अर यानैं प्रतिज्ञा अंगीकारकरी भंग करी, सो यह पाप कोनकों लाग्या। पीछैं धर्मात्मा होनैका निश्चय कहा। बहुरि जो साधुका धर्म्म अंगीकारकरि यथार्थ न पालै, ताकौं साधु मानिए कै न मानिए। जो मानिए, तौ जे साधु मुनि नाम धरावै हैं, अर भ्रष्ट हैं, तिन सबनिकौं साधु मानौं। न मानिए, तौ इनकै साधुपना न रह्या. तुम जैसे आचरणतैं साधु मानौ हौ ताका भी पालना कोऊ विरलाकै पाईए है। सबनिकौं साधु काहेकौं मानौ हौ यहां कोऊ कहै - हम तौ जाकै यथार्थ आचरण देखैंगे, ताकौं साधु मानैंगे औरकौं न मानैंगे। ताकौं पूछिए है—एकसंघविषै बहुत भेषी हैं। तहां जाकै यथार्थ आचरण मानौ हौ, सो यह औरनिकौं साधु मानै है कि न मानै है। जो मानै है, तौ तुमतैं भी अश्रद्धानी भया, ताकौं पूज्य कैसैं मानौ हौ। अर न मानै है, तौ उनसेती साधुका व्यवहार काहेकौं वर्त्तै है। बहुरि आप तौ उनकौं साधु न मानै अर अपने संघविषै राखि औरनि पासि साधु मनाय औरनिकौं अश्रद्धानी करै, ऐसा कपट काहेकौं करै। बहुरि तुम जाकौं साधु न मानौगे, तब अन्य जीवनिकौं भी ऐसा ही उपदेश देवौगे इनकौं साधु मति मानौ, ऐसैं धर्म्मपद्धतिविषै विरुद्ध होय। अर जाकौं तुम साधु मानो हौ, तिसतैं भी तुम्हारा विरुद्ध भया।

जातैं वह वाकौं साधु मानै है। वहुरि तुम जाकैं यथार्थ आचरण मानौ हौ, सो विचारकरि देखौ, वह भी यथार्थ मुनिधर्म्म नाहीं पालै है। कोऊ कहै--अन्य भेषधारीनितैं तौ घने आछे हैं-तातैं हम मानै हैं। सो अन्यमतीनिविषै तौ नानाप्रकार भेष संभवै, जातैं तहां रागभवका निषेध नाहीं। इस जैनमतविषै तौ जैसा कह्या, तैसा ही भए साधु संज्ञा होय। यहां कोऊ कहैं--शील संयमादि पालै हैं, तपश्चरणादि करै हैं, सो जेता करैं तितना ही भला है। ताका समाधान,--

यह सत्य है, धर्म्म थोरा भी पाल्याहुवा भला है। परंतु प्रतिज्ञा तौ बड़े धर्म्मकी करिए अर पालिए थोरा, तौ तहां प्रतिज्ञाभंगतैं महापाप हो है। जैसैं कोऊ उपवासकी प्रतिज्ञाकरि एकवार भोजन करै, तौ बहुतवार भोजनका संयम होतैं भी प्रतिज्ञाभंगतैं पापी कहिए। तैसें मुनिधर्म्मकी प्रतिज्ञा करि कोई किंचित् धर्म्म न पालै, तौ वाकौं शीलसंयमादि होतैं भी पापी ही कहिए। अर जैसैं एकंतकी (एकासनकी) प्रतिज्ञाकरि एकबार भोजन करै, तौ धर्मात्मा ही है। तैसैं अपना श्रावकपद धारि थोरा भी धर्म्म साधन करै, तौ धर्मात्मा ही है। यहां तौ ऊंचा नाम धराय नीची क्रिया करनेतैं पापीपना संभवै है। यथायोग्य नाम धराय धर्मक्रिया करतैं, तौ पापीपना होता नाहीं। जेता धर्म्म साधै, तेता ही भला है। यहां कोऊ कहै—पंचमकालका अंतपर्यंत चतुर्विधि संघका सद्भाव कह्या है। इनकौं साधु न मानिए, तौ किसकौ मानिए। ताका उत्तर—

जैसैं इस कालविषै हंसका सद्भाव कह्या है अर गम्यक्षेत्रविषै हंस नाहीं दीसै हैं, तौ औरनिकौं तौ हंस माने जाते नाहीं, हंस-कासा लक्षण मिले ही हंस माने जाय। तैसैं इस कालविषै साधुका सद्भाव है, अर गम्यक्षेत्रविषै साधु न दीसै हैं, तौ औरनिकौं तौ साधु माने जाते नाहीं। साधुके लक्षणमिलैं ही साधु माने जाय। बहुरि इनका भी अबार थोरे ही क्षेत्रविषै सद्भाव दीसै है तहांतैं परैं क्षेत्रविषै साधुका सद्भाव कैसैं मानै। जो लक्षण मिले मानौ, तौ यहां भी ऐसैं ही मानौ। अर विनालक्षण मिले ही मानौ, तौ तहां अन्य कुलिंगी हैं तिनहीकौं साधु मानौ। ऐसैं मानैतैं विपरीति होय, तातैं बनैं नाहीं। कोऊ कहै—इस पंचमकालमैं ऐसैं भी साधुपद हो है, तौ ऐसा सिद्धांतका वचन बतावौ। विना ही सिद्धांत तुम मानो हौ, तौ पापी होवोगे। ऐसैं अनेक युक्तिकरि इनकै साधुपना बनैं नाहीं है। अर साधुपना विना साधु माने गुरु माने मिथ्यादर्शन हो है। जातैं भले साधुकौं ही गुरु माने, सम्यग्दर्शन हो है।

बहुरि श्रावकका धर्म्मकी अन्यथा प्रवृत्ति करावै हैं। त्रसकी हिंसा स्थूल मृषादि होतैं भी जाका किछू प्रयोजन नाहीं, ऐसा किंचित् त्याग कराय वाकौं देशव्रती भया कहैं। सो वै त्रसघातादि जामैं होय ऐसा कार्य करैं। सो देशव्रत गुणस्थानविषैं तौ ग्यारह अविरति कहे हैं, तहां त्रसघात कैसैं संभवै। बहुरि ग्यारह प्रतिमाभेद श्रावकके हैं, तिनविषै दशमी ग्यारमी प्रतिमाधारक श्रावक तौ कोई होता नाहीं, अर साधु होय। पूछैं, तब कहैं—

पडिमाधारी श्रावक अबार होय सकता नाहीं । सो देखो, श्रावक धर्म्म तौ कठिन अर मुनिधर्म्म सुगम ऐसा विरुद्ध भाषै हैं। बहुरि ग्यारमी प्रतिमाधारककै थोरा परिग्रह मुनिकै बहुतपरिग्रह बतावैं, सो संभवता वचन नाहीं । बहुरि कहैं, ए प्रतिमा तौ थोरे ही काल पालि छोडि दीजिए है । सो कार्य उत्तम है, तौ धर्म्मबुद्धि ऊंची क्रियाकौं काहेकौं छोरै । अर नीचे कार्य हैं, तौ काहेकौं अंगीकार करै । यह संभवै ही नाहीं । बहुरि कुदेव कुगुरुकौं नमस्कारादि करतैं भी श्रावकपना बतावैं । कहैं, धर्म्मबुद्धिकरि तौ नाहीं बंदैं हैं, लौकिक व्यवहार है । सो सिद्धांतविषै तौ तिनिकी प्रशंसा स्तवनकौं भी सम्यक्त्वका अतिचार कहैं अर गृहस्थनिका भला मनावनैंकै अर्थि बंदना करतैं भी किछू न कहैं । बहुरि कहौगे—भय लज्जा कुतूहलादिकरि बंदै हैं, तौ इन कारणनिकरि कुशीलादि सेवतैं भी पाप मति कहौ । अंतरंगविषै पाप जान्या चाहिए । ऐसैं सर्व आचरनविषै विरुद्ध होगा । मिथ्यात्वसारिखे महापापकी प्रवृत्ति छुडावनैंकी तौ मुख्यता नाहीं, अर पवनकायकी हिंसा ठहराय उघारे मुख बोलना छुडावनेकी मुख्यता पाईए । सो क्रमभंग उपदेश है । बहुरि धर्म्मके अंग बहुत हैं तिनविषै एक परजीवकी दया ताकौं मुख्य कहै हैं । ताका भी विवेक नाहीं । जलका छानना अन्नका शोधना, सदोष वस्तुका भक्षण न करना, हिंसादिकरूप व्यापार न करना, इत्यादि याके अंगनिकी तौ मुख्यता नाहीं । बहुरि पाटीका बांधना, शौचादिक थोरा करना इत्यादि कार्यनिकी मुख्यता करै हैं । सो मैलयुक्त पाटीकै थूकका

संबंधतैं जीव उपजैं, तिनका तौ यत्न नाहीं अर पवनकी हिंसाकां यत्न बतावैं । सो नासिकाकरि बहुत पवन निकसै, ताका तौ यत्न करते ही नाहीं । बहुरि जो उनका शास्त्रकै अनुसारि बोलनेहीका यत्न किया; तौ सर्वदा काहेकौं राखिए । बोलिए, तब यत्न कर लीजिए । बहुरि जो कहैं—भूलि जाय । तौ इतनी भी याद न रहै, तौ अन्य धर्म्मसाधन कैसैं होगा । बहुरि शौचादिक थोरे करिए, सो संभवता शौच तौ मुनि भी करै हैं । तातैं गृहस्थकौं अपने योग्य शौच करना । स्त्रीसंगमादिकरि शौच किए विना सामायिकादि क्रियाकरनेतैं अविनय विक्षिप्तताआदिकरि पाप उपजै । ऐसैं जिनकी मुख्यता करैं, तिनका भी ठिकाना नाहीं । अर केई दयाके अंग योग्य पालै हैं हरितकायत्याग आदि करैं, जल थोरा नाखै, इनका हम निषेध करते नाहीं । बहुरि इस अहिंसाका एकांत पकड़ि प्रतिमा चैत्यालयपूजनादि क्रियाका उत्थापन करै हैं । सो उनहीके शास्त्रनिविषै प्रतिमाआदिका निरूपण हैं, ताकौं आग्रहकरि लोपै हैं । भगवतीसूत्रविषै ऋद्धिधारी मुनिका निरूपण है । तहां मेरुगिरिआदिविषै जाय "तत्थ चेययाइं वंदइ" ऐसा पाठ है । याका अर्थ यह—तहां चैत्यनिकौं वंदै है । सो चैत्य नाम प्रतिमाका प्रसिद्ध है । बहुरि वै हठकरि कहै हैं—चैत्य शब्दके ज्ञानादिक अनेक अर्थ निपजै हैं, सो अन्य अर्थ है प्रतिमाका अर्थ नाहीं । याकौं पूछिए है—मेरुगिरि नंदीश्वरद्वीपविषै जाय जाय तहां चैत्यवंदना करी, सो तहां ज्ञानादिककी वंदना करनेका अर्थ कैसैं संभवै । ज्ञानादिककौं वंदना तौ सर्वत्र

संभवै। जो वंदने योग्य चैत्य तहां ही संभवै अर सर्वत्र न संभवै, ताकौं तहां वंदनाकरनेका विशेष संभवै, सो ऐसा संभवता अर्थ प्रतिमा ही है। अर चैत्यशब्दका मुख्य अर्थ प्रतिमा ही है; सो प्रसिद्ध है। इस ही अर्थकरि चैत्यालय नाम संभवै है। याकौं हठकरि काहेकौं लोपिए। बहुरि नंदीश्वर द्वीपादिकविषै जाय, देवादिक पूजनादि क्रिया करै हैं, ताका व्याख्यान उनकै जहां तहां पाईए है। बहुरि लोकविषै जहां तहां अकृत्रिम प्रतिमाका निरूपण है। सो या रचना अनादि है। यह भोग कुतूहलादिककै अर्थ तौ है नाहीं। अर इंद्रादिकनिके स्थाननिविषै निःप्रयोजन रचना संभवै नाहीं। सो इंद्रादिक तिनकौं देखि कहा करै हैं। कै तौ अपने मंदरनिविषै निःप्रयोजन रचना देखि, उसतैं उदासीन होते होंगे तहां दुःख होता होगा, सो संभवै नाहीं। कै आछी रचना देखि विषय पोषते होंगे, सो अर्हंत मूर्त्तिकरि सम्यग्दृष्टी अपना विषय पोषै, यह भी संभवै नाहीं। तातैं तहां तिनकी भक्त्यादिक ही करै हैं, यह ही संभवै है। सो उनकै सूर्याभदेवका व्याख्यान है। तहां प्रतिमाजीके पूजनेका विशेष वर्णन किया है। याकौं गोपनेकैं अर्थि कहै है, देवनिका ऐसा ही कर्त्तव्य है। सो सांच, परंतु कर्त्तव्यका तौ फल होय ही होय। सो तहां धर्म्म हो है कि पाप हो है। जो धर्म्म हो है, तौ अन्यत्र पाप होता था यहां धर्म्म भया। याकौं औरनिकै सदृश कैसैं कहिए। यह तौ योग्य कार्य भया। अर पाप हो है तौ तहां **'णमोत्थुणं'** का पाठ पढ़्या, सो पापकै ठिकानैं ऐसा पाठ

काहेकौं पढ्या । बहुरि एक विचार यहां यह आया, जो 'णमोत्थुणं'के पाठविषै तौ अरहंतकी भक्ति है। सो प्रतिमाजीकै आगैं जाय यह पाठ पढ्या, तातैं प्रतिमाजीकै आगैं जो अरहंत भक्तिकी क्रिया है, सो करनी युक्त भई । बहुरि जो वह ऐसा कहै—देवनिकै ऐसा कार्य है मनुष्यनिकै नाहीं । जातैं मनुष्यनिकै प्रतिमाआदि बनावनेविषै हिंसा हो है। तौ उनहीके शास्त्रविषै ऐसा कथन है, द्रोपदी राणी प्रतिमाजीका पूजनादिक जैसैं सूर्याभदेव किया, तैसैं करते भई। तातैं मनुष्यनिकै भी ऐसा कार्य कर्त्तव्य है। यहां एक यह विचार आया-चैत्यालय प्रतिमा बनावनेकी प्रवृत्ति न थी, तौ द्रोपदी कैसैं प्रतिमाका पूजन किया। बहुरि प्रवृत्ति थी, तौ बनावनेवाले धर्मात्मा थे कि पापी थे। जो धर्म्मात्मा थे तौ गृहस्थनिकौं ऐसा कार्य करना योग्य भया। अर पापी थे, तौ तहां भोगादिकका प्रयोजन तौ था नाहीं, काहेकौं बनाया। बहुरि द्रोपदी तहां 'णमोत्थुणं' का पाठ किया वा पूजनादि किया सो कुतूहल किया कि धर्म्म किया। जो कुतूहल किया, तौ महापापिनी भई। धर्म्मविषै कुतूहल कहा। अर धर्म किया, तौ औरनिकौं भी प्रतिमाजीकी स्तुति पूजा करनी युक्त है।

बहुरि वै ऐसी मिथ्यायुक्ति बनावै हैं—जैसैं इंद्रकी स्थापनातैं इंद्रकी कार्यसिद्धि नाहीं, तैसैं अरहंतप्रतिमाकरि कार्यसिद्धि नाहीं सो अरहंत काहूकौं भक्त मानि भला करते होंय, तौ ऐसैं भी मानै। सो तौ वै भी वीतराग हैं। यह जीव भक्तिरूप अपने भावनितैं शुभफल पावै है। जैसैं स्त्रीका आकाररूप काष्ठ पाषाणकी मूर्ति

देखि, तहां विकाररूप होय अनुराग करै तौ, ताकै पापबंध होय। तैसैं अरहंतका आकाररूप धातु काष्ठ पाषाणकी मूर्ति देखि, धर्म्म बुद्धितैं तहां अनुराग करै, तौ शुभकी प्राप्ति कैसैं न होय। तहां वह कहै है, बिना प्रतिमा ही हम अरहंतविषै अनुराग उपजावैंगे। तौ उनकौं कहिए है-आकार देखे जैसा भाव होय, तैसा परोक्ष स्मरण किए होय नाहीं। याहीतैं लोकविषै भी स्त्रीका अनुरागी स्त्रीका चित्र बनावै है। तातैं प्रतिमाका अवलंबनकरि विशेष भक्ति होनेतैं विशेष शुभकी प्राप्ति हो है। कोऊ कहै-प्रतिमाकौं देखो परंतु पूजनादिक करनेका कहा प्रयोजन है। ताका उत्तर

जैसैं कोऊ किसी जीवका आकार बनाय, रुद्रभावनितैं घात करै तौ वाकै उस जीवकी हिंसा किएकासा पाप लगै, वा कोऊ काहूका आकार बनाय द्वेषबुद्धितैं वाकी बुरी अवस्था करै,तौ जाका आकार बनाया, वाकी बुरी अवस्था किएकासा फल निपजै। तैसैं अरहंतका आकार बनाय रागबुद्धितैं पूजनादि करै, तौ अरहं. तके पूजनादि किएकासा शुभ फल निपजै। अतिअनुराग भए प्रत्यक्ष दर्शन न होतैं आकार बनाय पूजनादि करिए है। इस धर्म्मानुरागतैं महापुण्य उपजै है। बहुरि ऐसी कुतर्क करै हैं—जो जाकै जिस वस्तुका त्याग होय, ताकै आगै तिस वस्तुका धरना हास्य करना है। तातैं वंदनादिकरि अरहंतका पूजन युक्त नाहीं। ताका समधान,-

मुनिपद लेतैं ही सर्व परिग्रहका त्याग किया था, पीछैं केवलज्ञान भए तीर्थंकरदेवकै समवसरणादि बनाए, छत्र चामरादि

किए, सो हास्य करी कि भक्ति करी। हास्य करी तौ इंद्र महापापी भया सो बनैं नाहीं। भक्ती करी, तौ पूजनादिकविषै भी भक्ति ही करिए है। छद्मस्थके आगैं त्याग करी वस्तुका धरना हास्य है। जातैं वाकै विक्षिप्तता होय आवै है। केवलीकै वा प्रतिमाकै आगैं अनुरागकरि उत्तम वस्तु धरनेका दोष नाहीं। उनकै विक्षिप्तता होती नाहीं। धर्म्मानुरागतैं जीवका भला होय। बहुरि वह कहै है—प्रतिमा बनावनेविषै, चैत्यालयादि करावनेविषै, पूजनादि करावनेविषै हिंसा होय अर धर्म्म अहिंसा है। तातैं हिंसाकरि धर्म्म माननेतैं महापाप हो है, तातैं हम इन कार्यनिको निषेधैं हैं। ताका उत्तर—

उनहीके शास्त्रविषै ऐसा वचन है,—

सुच्चा जाणइ कल्लाणं सुच्चा जाणइ पावगं—।
उभयं पि जाणये सुच्चा जं सेयं तं समायर ॥ १ ॥

यहां कल्याण पाप उभय ए तीन, शास्त्र सुनिकरि जाणै, ऐसा कह्या। सो उभय तौ पाप अर कल्याण मिलें होय, ऐसा कार्यका भी होना ठहर्‍या। तहां पूछिए है—केवल धर्मतैं तौ उभय घाटि है ही, अर केवल पापतैं उभय बुरा है कि भला है। जो बुरा है, तौ यामैं तौ किछू कल्याणका अंश मिल्या, पापतैं बुरा कैसें कहिए। भला है, तौ केवल पाप छोड़ि ऐसा कार्य करना ठहर्‍या। बहुरि युक्तिकरि भी ऐसैं हीं संभवै है। कोऊ त्यागी होय, मंदिरादिक नाहीं करावै है, वा सामायिकादि निरवद्य कार्यनिविषैं प्रवर्तैं है। ताकौं तौ छोरि प्रतिमादि करावना पूजनादि करना

उचित नाहीं। परंतु कोई अपने रहनेकै वास्तै मंदिर आदि बनावै तिसतैं तौ चैत्यालयादि करावनेवाला हीन नाहीं। हिंसा तौ भई, परंतु वाकै तौ लोभ पापानुरागकी वृद्धि भई, याकै लोभ छूट्या, धर्मानुराग भया। बहुरि कोई व्यापारादि कार्य करै, तिसतैं पूजनादि कार्य करना हीन नाहीं। वहां तौ हिंसादि बहुत हो है, लोभादि बधै है पापहीकी प्रवृत्ति है। यहां हिंसादिक भी किंचित् हो है लोभादि घटै है, धर्म्मानुराग बधै है। ऐसैं जे त्यागी न होंय, अपने धनकौं पापविषै खरचते होंय तिनिकौं चैत्यालयादि करावना। अर निरवद्य सामायिकादि कार्यनिविषै उपयोगकौं नाहीं लगाय सकै तिनकौं पूजनादि करना निषेध नाहीं। बहुरि तुम कहौगे निरवद्य सामायिक कार्य ही क्यों न करैं, धर्म्मविषै काल गमावना तहां ऐसे कार्य काहेकौं करै। ताका उत्तर—

जो शरीरकरि पाप छोरें ही निरवद्यपना होय, तौ ऐसैं ही करैं। सो तौ है नाहीं। परिणामनितैं पाप छूटें निरवद्यपना हो है। सो विना अवलंबन सामायिकादिविषै जाका परिणाम लागै नाहीं, सो पूजनादिकरि तहां उपयोग लगावै है। तहां नाना प्रकार आलंबनकरि उपयोग लगि जाय है। जो तहां उपयोगकौं न लगावै, तौ पापकार्यनिविषै उपयोग भटकै, तब बुरा होय। तातैं तहां प्रवृत्ति करनी युक्त है। बहुरि तुम कहो हौ— धर्म्मकै अर्थ हिंसा किए तौ महा पाप हो है, अन्यत्र हिंसा किए थोरा पाप हो है, सो यह प्रथम तौ सिद्धांतका वचन नाहीं। अर युक्तितैं भी मिलै नाहीं। जातैं ऐसैं मानैं इंद्र जन्मकल्याणविषै बहुत जलकरि

अभिषेक करै है। समवसरणविषै देव पुष्पवृष्टि चमरढारना इत्यादि कार्य करै हैं, सो ये महापापी होंय। जो तुम कहोगे, उनका ऐसा ही व्यवहार है, तौ क्रियाका फल तौ भए विना रहता नाहीं। जो पाप है, तौ इंद्रादिक तौ सम्यग्दृष्टी हैं, ऐसा कार्य काहेकौं करैं। अर धर्म्म है, तौ काहेकौं निषेध करो हौ। वहुरि तुमकौं ही पूछैं हैं---तीर्थंकर वंदनाकौं राजादिक गए, वा साधुवंदनाकौं दूरि जाईए है सिद्धात सुनने आदि कार्यनिकौं गमनादि करिए है। तहां मार्गविषै हिंसा भई। वहुरि साधर्म्मी जिमाईए है, साधुका मरण भए ताका संस्कार करिए है, साधु होतैं उत्सव करिए हैं, इत्यादि प्रवृत्ति अव भी दीसै है। सो यहां भी हिंसा हो है, सो ये कार्य्य तौ धर्म्महीकै अर्थ हैं अन्य कोई प्रयोजन नाहीं। जो यहां महापाप उपजै है, तौ पूर्वै ऐसे कार्य किए तिनिका निषेध करौ। अर अब मी गृहस्थ ऐसा कार्य करै हैं, तिनिका त्याग कहौ। वहुरि जो धर्म्म उपजै है तौ धर्म्मके अर्थि हिंसाविषै महापाप वताय, काहेकौं भ्रमावो हौ। तातैं ऐसैं मानना युक्त है। जैसैं थोरा धन ठिगाए, बहुत धनका लाभ होय, तौ वह कार्य करना, तैसैं थोरा हिंसादिक पाप भए बहुत धर्म्म निपजै, तौ वह कार्य्य करना। जो थोरा धनका लोभकरि कार्य विगारै, तौ मूर्ख है। जैसैं थोरी हिंसाका भयतैं बड़ा धर्म्म छोरै, तो पापी ही होय। वहुरि कोऊ बहुत धन ठिगावै, अर स्तोक धन निपजावै वा न उपजावै, तौ वह मूर्ख है। जैसैं बहुत हिंसादिककरि बहुत पाप उपजावै अर भक्ति आदि

धर्मविषै स्तोक प्रवर्तै वा न प्रवर्तै, तौ वह पापी ही होय है। बहुरि जैसैं विना ठिगाए ही धनका लाभ होतैं ठिगावै, तो मूर्ख है तैसैं निरवद्य धर्म्मरूप उपयोग होतैं सावद्य धर्म्म विषै उपयोग लगावना युक्त नाहीं। ऐसैं अनेक परिणामनिकरि अवस्था देखि भला होय, सो करना। एकांतपक्ष कार्यकारी नाहीं। बहुरि अहिंसा ही केवल धर्म्मका अंग नाहीं है। रागादिकनिका घटना धर्म्मका मुख्य अंग है। तातैं जैसैं परिणामनिविषै रागादि घटैं, सो कार्य करना।

बहुरि गृहस्थनिकौं अणुव्रतादिकका साधन भएविना ही सामायिक, पडिकमणो, पोसह आदि क्रियानिका मुख्य आचरन करावै हैं। सो सामायिक तौ रागद्वेषरहित साम्यभाव भए होय, पाठमात्र पढ़ैं वा उठना बैठना किए ही तौ होता नाहीं। बहुरि कहौगे, अन्य कार्य करता, तातैं तौ भला है। सो सत्य, परंतु सामायिकपाठविषै प्रतिज्ञा तौ ऐसी करै, जो मनवचनकायकरि सावद्यकौं न करूंगा, न कराऊंगा अर मनविषै तौ विकल्प हुवा ही करै। अर वचनकायविषै भी कदाचित् अन्यथा प्रवृत्ति होय, तहां प्रतिज्ञाभंग होय। सो प्रतिज्ञाभंग करनेतैं न करना भला। जातैं प्रतिज्ञाभंगका महापाप है। बहुरि हम पूछैं हैं—कोऊ प्रतिज्ञा भी न करै है, अर भाषापाठ पढ़ै है। ताका अर्थ जानि तिसविषै उपयोग राखै है। अर कोऊ प्रतिज्ञा करै, ताकौं तौ नीकैं पालैं नाहीं, अर प्राकृतादिकका पाठ पढ़ै, ताके अर्थका आपकौं ज्ञान नाहीं, विना अर्थ जानै तहां उपयोग रहै नाहीं, तब

उपयोग अन्यत्र भटकै। ऐसैं इन दोऊनिविषैं विशेष धर्म्मात्मा कौन। जो पहलेकौं कहोगे, तौ ऐसा ही उपदेश क्यों न कीजिए। दूसरेकौं कहोगे, तौ प्रतिज्ञाभंगका पाप न भया वा परिणामनिके अनुसार धर्म्मात्मापना न ठहऱ्या। पाठादिकरनेके अनुसार ठहऱ्या। तातैं अपना उपयोग जैसैं निर्मल होय, सो कार्य करना। सधै सो प्रतिज्ञा करनी। जाका अर्थ जानिए, सो पाठ पढ़ना। पद्धतिकरि नाम धरावनेमैं नफा नाहीं। बहुरि पडिकमणो नाम पूर्वदोष निराकरण करनेका है। सो 'मिच्छामि दुक्कडं' इतना कहे ही तौ दुष्कृत मिथ्या न होय, । मिथ्या होने योग्य परिणाम भए दुष्कृत मिथ्या होय। तातैं पाठ ही कार्यकारी नाहीं। बहुरि पडिकमणाका पाठविषै ऐसा अर्थ है, जो बारह व्रतादिकविषै जो दुष्कृत लाग्यो होय, सो मिथ्या होय। सो व्रतधारे विना ही तिनिका पडिकमणा करना कैसैं संभवै। जाकै उपवास न होय, सो उपवासविषै लाग्या दोषका निराकरणपना करै, तौ असंभवपना होय। तातैं यह पाठ पढ़ना कौनप्रकार बनै नाहीं। बहुरि पोसहविषै भी सामायिकवत् प्रतिज्ञाकरि नाहीं पालै हैं। तातैं पूर्वोक्त ही दोष है। बहुरि पोसह नाम तौ पर्वका है। सो पर्वके दिन भी केतायक कालपर्यंत पापक्रिया करै, पीछैं पोसहधारी होय। सो जेतै काल बनैं तेतै काल साधन करनेका तौ दोष नाहीं। परंतु पोसहका नाम करिए, सो युक्त नाहीं। संपूर्ण पर्वविषैं निरवद्य रहें ही पोसह होय। जो थोरा भी कालतैं पोसह नाम होय, तौ सामायिककौं भी पोसह कहौ,

नाहीं, शास्त्रविषै प्रमाण बतावौ । जो जघन्य पोसहका इतना काल है, सो वड़ा नाम धराय लोगनिकौं भ्रमावना, यह प्रयोजन भासै है । बहुरि आखड़ी लेनेका पाठ तौ और पढ़ै, अंगीकार और करै । सो पाठविषै तौ "मेरै त्याग है" ऐसा वचन हैं,तातैं जो त्याग करै सो ही पाठ पढ़ै यह चाहिए । जो पाठ न आवै तौ भाषाहीतैं कहैं । परंतु पद्धतिकै अर्थ यह रीति है । बहुरि प्रतिज्ञा ग्रहण करने करावनेकी मुख्यता है अर यथाविधि पालनेकी शिथिलता है, भावनिर्मल होनेका विवेक नाहीं । आर्त्तपरिणाम-निकरि वा लोभादिककरि भी उपवासादिक करै, तहां धर्म्म मानै । सो फल तौ परिणामनितैं हो है । इत्यादि अनेक कल्पित वातैं कहै हैं, सो जैनधर्म्मविषै संभवै नाहीं । ऐसैं यह जैनविषै श्वेता-वरमत है, सो भी देवादिकका वा तत्त्वनिका वा मोक्षमार्गा-दिकका अन्यथा निरूपण करै है । तातैं मिथ्यादर्शनादिकका पोषक है, सो त्याज्य है सांचा जिनधर्म्मका स्वरूप आगैं कहैं हैं । ताकरि मोक्षमार्गविषै प्रवर्त्तना योग्य है । तहां प्रवर्तैं तुम्हारा कल्याण होगा ।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक शास्त्रविषै अन्यमतनिरूपक पांचवाँ अधिकार समाप्त भया ॥ ५ ॥

दोहा ।

मिथ्या देवादिक भजे, हो है मिथ्याभाव ।
तज तिनकौं सांचे भजौ, यह हितहेत उपाव ॥ १ ॥

अर्थ-- अनादितैं जीवनिकै मिथ्यादर्शनादिक भाव पाईए है, तिनकी पुष्टताकौं कारण कुदेवकुगुरुकुधर्म्मसेवन है। ताका त्याग भए मोक्षमार्ग्गविषै प्रवृत्ति होय। तातैं इनका निरूपण कीजिए है। तहां जे हितका कर्त्ता नाहीं अर तिनकौं भ्रमतैं हितका कर्त्ता जानि सेवै सो कुदेव है। तिनका सेवन तीनप्रकार प्रयोजनलिए करिए है। कहीं तौ मोक्षका प्रयोजन है। कहीं परलोकका प्रयोजन है। कहीं इसलोकका प्रयोजन है। सो ये प्रयोजन तौ सिद्ध होंय नाहीं। किछू विशेषहानि होय। तातैं तिनका सेवन मिथ्याभाव है। सो ही दिखाईए है--

अन्यमतविषै जिनके सेवनतैं मुक्ति होनी कही है, तिनकौं केई जीव मोक्षकै अर्थ सेवन करै हैं, सो मोक्ष होय नाहीं। तिनका वर्णन पूर्वैं अन्यमत अधिकार विषै कह्या ही है। बहुरि अन्यमतविषैं कहे देव, तिनिकौं केई परलोकविषै सुख होय दुःख न होय, ऐसे प्रयोजन लिए सेवै हैं। सो ऐसी सिद्धि तौ पुण्य उपजाए अर पाप न उपजाए हो है,। सो आप तौ पाप उपजावै है, अर कहै ईश्वर हमारा भला करैगा। तौ तहां अन्याय ठहरया। काहूकौं पापका फल दे काहूकौं न दे ऐसा तौ है नाहीं। जैसा अपना परिणाम करैगा, तैसा ही फल पावैगा। काहूका बुरा भला करनेवाला ईश्वर है नाहीं। बहुरि तिन देवनिका सेवन करतैं तिन देवनिका तौ नाम करैं, अर अन्य जीवनिकी हिंसा करैं, वा भोजन नृत्यादि-ककरि अपनी इंद्रियनिका विषय पोषैं सो पापपरिणामनिका फल तौ लागे विना रहनेका नाहीं। हिंसा विषय कषायनिकौं सर्व

पाप कहै हैं। अर पापका फल भी खोटा ही सर्व मानै हैं। बहुरि कुदेवनका सेवनविषै हिंसा विषयादिकहीका अधिकार है। तातैं कुदेवनके सेवनतैं परलोकविषै भला न हो है। बहुरि घने जीव इस पर्यायसंबधी शत्रुनाशादिक वा रोगादिक मिटावना धनादिककी प्राप्ति वा पुत्रादिककी प्राप्ति इत्यादि दुःख मेटनेका वा सुख पावनेका अनेकप्रयोजन लिए कुदेवनिका सेवन करै हैं। बहुरि हनुमानादिककौं पूजै हैं। बहुरि देवीनिकौं पूजै हैं। बहुरि गणगौर सांझी आदि बनाय पूजै हैं। चौथि शीतला दिहाड़ी आदिकौं पूजै हैं। बहुरि अऊत पितर व्यंतरादिककौं पूजै हैं। बहुरि सूर्य चंद्रमा शनैश्चरादि ज्योतिषीनिकौं पूजै हैं। बहुरि पीर पैगंबरादिकनिकौं पूजै हैं। बहुरि गऊ घोटकादि तिर्यंचनिकौं पूजै हैं अग्नि जलादिककौं पूजै हैं। शस्त्रादिककौं पूजै हैं। बहुत कहा कहिए रोड़ी इत्यादिककौं भी पूजै हैं। सो ऐसे कुदेवनिका सेवन मिथ्यादृष्टितै हो है। काहेतैं, प्रथम तो जाका सेवन करैं, सो केई तौ कल्पनामात्र ही देव हैं। सो तिनिका सेवन कार्यकरी कैसैं होय। बहुरि केई व्यंतरादिक हैं, सो ए काहूका भला बुरा करनेकौं समर्थ नाहीं। जो वै ही समर्थ होंय, तौ वै ही कर्त्ता ठहरैं। सो तौ उनका किया किछू होता दीसता नाहीं। प्रसन्न होय, धनादिक देय सकैं नाहीं। द्वेषी होय बुरा कर सकते नाहीं। इहां कोऊ कहै—दुःख तौ देते देखिए है, मानेतैं दुःख देते रहि जाय हैं। ताका उत्तर,—

याकैं पापका उदय होय, तब ऐसी ही उनके कुतूहल बुद्धि होय ताकरि चेष्टा करैं। चेष्टा करतैं यह दुःखी होय। बहुरि कुतूहलतैं वै किछू कहैं अर यह उनका कह्या न करै, तब वह चेष्टा करनेतैं रहि जाय। बहुरि याकौं शिथिल जानि कुतूहल किया करैं। बहुरि जो याकै पुण्यका उदय होय, तौ किछू कर सकते नाहीं। सो दिखाइए है- कोऊ जीव उनकौं पूजै नाहीं वा उनकी निंदा करै तौ वे भी उसतैं द्वेष करैं। परंतु ताकौं दुख देइ सकैं नाहीं। वा ऐसे भी कहते देखिए है, जो हमकौं फलाना मानै नाहीं, सो उसतैं हमारा वश नाहीं। तातैं व्यंतरादिक किछू करणेकौं समर्थ नाहीं। याका पुण्यपापहीतैं दुख हो है। उनके माने पूजे उलटा रोग लागै है। किछू कार्यसिद्धि नाहीं। बहुरि ऐसा जानना-जे कल्पित देव हैं, तिनिका भी कहीं अतिशय चमत्कार होता देखिए है, सो व्यंतरादिककरि किया हो है। कोई पूर्व पर्यायविषै इनका सेवक था, पीछैं मरि व्यंतरादि भया, तहां ही कोई निमित्ततैं ऐसी बुद्धि भई तब वह लोकविषै तिनिके सेवनेकी प्रवृत्ति करावनेके अर्थि कोई चमत्कार देखि तिस कार्यविषै लग जाय है। जैसैं जिन प्रतिमादिकका भी अतिशय होता सुनिए वा देखिए है। सो जिनकृत नाहीं जैनी व्यंतरादिकृत हो है। तैसैं कुदेवनिका कोई चमत्कार होय, सो उनके अनुचर व्यंतरादिकनिकरि किया हो है। बहुरि अन्यमतविषै भक्तनिकी सहाय परमेश्वर करी वा प्रत्यक्ष दर्शन दिए इत्यादि कहै हैं। तहां कोई तौ कल्पित बातैं कहै हैं। कोई उनके अनुचर व्यंतरादिककरि किए कार्य-

निकौं परमेश्वरके किए कहै हैं । जो परमेश्वरके किए होय, तौ परमेश्वर तौ त्रिकालज्ञ है । सर्वप्रकार समर्थ है । भक्तकौं दुःख काहेकौं होने दे । बहुरि अब हू भी देखिए है । म्लेच्छ आय भक्तनकौं उपद्रव करै हैं, धर्मविध्वंस करै हैं मूर्तिको विघ्न करै हैं सो परमेश्वरकौं ऐसे कार्यका ज्ञान न होय तौ सर्वज्ञपनों रहै नाहीं । जाने पीछैं सहाय न करै तौ भक्तवत्सलता गई वा सामर्थ्य हीन भया । बहुरि साक्षीभूत रहै है, तौ आगैं भक्तनकी सहाय करी कहिए है सो झूंठ है । उनकी तौ एकसी वृत्ति है । बहुरि जो कहौगे—वैसी भक्ति नाहीं है । तौ म्लेच्छनितैं तौ भले हैं, वा मूर्तिआदि तौ उनहीकी स्थापन थी, तिनका विघ्न तौ न होने देना था बहुरि म्लेच्छपापीनिका उदय हो हैं, सो परमेश्वरका किया है कि नाहीं । जो परमेश्वरका किया है, तौ निंदकनिकौं सुखी करै, भक्तनकौं दुःखी करै, तहां भक्तवत्सलपना कैसैं रह्या । अर परमेश्वरका किया न हो है, तौ परमेश्वर सामर्थ्यहीन भया । तातैं परमेश्वरकृत कार्य नाहीं । कोई अनुचर व्यंतरादिक ही चमत्कार दिखावै है । ऐसा ही निश्चय करना । बहुरि कोऊ पूछै कि, कोई व्यंतर अपना प्रभुत्त्व कहै, वा अप्रत्यक्षकौं बताय दे, कोऊ कुस्थानवासादिक बताय अपनी हीनता कहै, पूछिए सो न बतावै, भ्रमरूपवचन कहै वा औरनिकौं अन्यथा परिणमावै, औरनिकौं दुख दे इत्यादि विचित्रता कैसैं है, ताका उत्तर--

व्यंतरनिविषै प्रभुत्त्वकी अधिकता हीनता तौ है, परंतु जो कुस्थानविषै वासादिक बताय हीनता दिखावै है सो तौ कुतूहलतैं

वचन कहै है। व्यंतर बालकवत् कुतूहल किया करै। सो जैसैं बालक कुतूहलकरि आपकौं हीन दिखावै, चिड़ावै, गाली सुनैं, [1]बार पाड़ै, पीछै हंसने लगि जाय, तैसैं ही व्यंतर चेष्टा करै हैं। जो कुस्थानहीके वासी होंय, तौ उत्तमस्थानविषै आवै हैं तहां कौनके ल्याए आवैं हैं। आपहीतैं आवै हैं, तौ अपनी शक्ति होतैं कुस्थानविषै काहेकौं रहैं। तातैं इनका ठिकाना तौ जहां उपजै हैं तहां इस पृथ्वीकै नीचै वा ऊपरि है सो मनोज्ञ है। कुतूहलकै लिए चाहै सो कहै हैं। बहुरि जो उनकौं पीड़ा होती होय, तौ रोवते रोवते हंसने कैसैं लगि जांय। इतना है, मंत्रादिककी अचिंत्यशक्ति है सो कोई सांचा मंत्रकै निमित्त नैमित्तिक संबंध होय, तौ वाकै किंचित् गमनादि न होय सकै वा किंचित् दुःख उपजै वा केई प्रबल वाकौं मनैं करै, तब रहि जाय। वा आप ही रहि जाय। इत्यादि मंत्रकी शक्ति है। परंतु जलावना आदि न हो है। मंत्रवाला जलाया कहै। सो वैक्रियक शरीरका जलावना आदि संभवै नाहीं। अप्रगट हो जाय सकै है। बहुरि व्यंतर-निकै अवधिज्ञान काहूकै स्तोकक्षेत्रकाल जाननेका है, काहूकै बहुत है। तहां वाकै इच्छा होय अर आपकै बहुत ज्ञान होय तौ अप्रत्यक्षकौं पूछै ताका उत्तर दे, वा आपकै स्तोकज्ञान होय तौ अन्य महत्‌ज्ञानीकौं पूछि आयकरि जुवाब दे। बहुरि आपकै स्तोक ज्ञान होय वा इच्छा न होय, तौ पूछै ताका उत्तर न दे, ऐसा जानना। बहुरि स्तोकज्ञानवाला व्यंतरादिककै उपजता केतेक काल

---

1 ऊंचे स्वरसे रोवै।

ही पूर्व जन्मका ज्ञान होय सकै, पीछै स्मरण मात्र रहै है। तातैं तहां कोई इच्छाकरि आप किछू चेष्टा करैं तौ करै। बहुरि पूर्व जन्मकी वातैं कहै। कोऊ अन्य वार्ता पूछै, तौ अवधि तौ थोरा, विनाजाने कैसैं कहै। बहुरि ताका उत्तर आप न देय सकै, वा इच्छा न होय, तहां मान कुतूहलादिकतैं उत्तर न दे, वा झूंठ बोलै। ऐसा जानना। बहुरि देवनिमैं ऐसी शक्ति है, जो अपनें वा अन्यके शरीरकौं वा पुद्गलस्कंधकौं इच्छा होय तैसैं परिणमावैं। तातैं नाना आकारादिरूप आप होय, वा अन्य नानाचरित्र दिखावै। बहुरि अन्य जीवके शरीरकौं रोगादियुक्त करै। यहां इतना है— अपनै शरीरकौं वा अन्य पुद्गलस्कंधनिकौं तौ जेती शक्ति होय तितनैं ही परिणमाय सकै। जातैं सर्व कार्य करनेकी शक्ति नाहीं। बहुरि अन्य जीवनिके शरीरादिककौं वाका पुण्य पापकै अनुसार परिणमाय सकै। वाकै पुण्यउदय होय, तौ आप रोगादिरूप न परिणमाय सकै। अर पापउदय होय, तौ वाका इष्टकार्य न करिसकै। ऐसैं व्यंतरादिकनिकी शक्ति जाननी। यहां कोऊ कहै—इतनी जिनकी शक्ति पाईए, तिनके मानने पूजनेमैं दोष कहा ताका उत्तर,— आपकै पापउदय होतैं सुख न देय सकै, पुण्यउदय होतैं दुख न देय सकै, वा तिनिके पूजनेतैं कोई पुण्यबंध होय नाहीं, रागादिककी वृद्धि होतैं पाप ही होय है। तातैं तिनिका मानना पूजना कार्यकारी नाहीं—बुरा करनेवाला है। बहुरि व्यंतरादिक मनावै हैं, पुजावै हैं, सो कुतूहलादिक करै हैं, किछू विशेष प्रयोजन नाहीं राखै हैं। जो उनकौं मानै पूजै, तिससेती कुतूहल किया

करैं। जो न मानै पूजै तासूं किछू न कहैं। जो उनकै प्रयोजन ही होय, तौ न माननें पूजनेवालेकौं घना दुखी करैं। सो तौ जिनकै न मानने पूजनेका अवगाढ़ है, तिनिकौं किछू भी कहते दीसते नाहीं। बहुरि प्रयोजन तौ क्षुधादिककी पीड़ा होय तौ होय, सो उनकै व्यक्त होय नाहीं। जो होय, तौ उनकै अर्थि नैवेद्यादिक दीजिए है ताकौं ग्रहण क्यों न करैं, या औरनिकै जिमावने आदि करनेहीकौं काहेकौं कहैं। तातैं उनकै कुतूहलमात्र क्रिया है। सो आपकौं उनके कुतूहलका ठिकाना भए दुःख होय, हीनता होय तातैं उनकौं मानना पूजना योग्य नाहीं। बहुरि कोऊ पूछै कि व्यंतर ऐसैं कहै हैं—गया आदि पिंडप्रदान करो, तौ हमारी गति होय, हम बहुरि न आवैं, सो कहा है। ताका उत्तर,—

जीवनिकै पूर्वभवका संस्कार तौ रहै ही है। व्यंतरनिकै पूर्व—भवका स्मरणादिकतैं विशेष संस्कार है। तातैं पूर्वभवविषै ऐसी ही वासना थी, जो गयादिकविषै पिंडप्रदानादि किए गति हो है। तातैं ऐसे कार्य करनेकौं कहैं हैं। मुसलमानआदि मरि व्यंतर हो हैं, ते ऐसैं कहैं नाहीं। वै अपने संस्काररूप ही वचन कहैं। तातैं सर्व व्यंतरनिकी गति तैसैं ही होती होय, तौ सब ही समान प्रार्थना करैं। सो है नाहीं, ऐसा जानना। ऐसैं व्यंतरादिकनिका-स्वरूप जानना।

बहुरि सूर्य चंद्रमा ग्रहादिक ज्योतिषी हैं, तिनकौं पूजे हैं सो भी भ्रम है। सूर्यादिककौं भी परमेश्वरका अंश मानि पूजे हैं। सो वाकै तौ एक प्रकाशका ही आधिक्य भासै है। सो प्रकाशमान्

अन्य रत्नादिक भी हो हैं । अन्य कोई ऐसा लक्षण नाहीं, जातैं वाकौं परमेश्वरका अंश मानिए । बहुरि चंद्रमादिककौं धनादिककी प्राप्तिके अर्थ पूजै हैं । सो उसके पूजनेंतैं ही धन होता होय, तौ सर्वदरिद्री इस कार्यकौं करैं । तातैं ए मिथ्याभाव है । बहुरि ज्योतिषके विचारतैं खोटे ग्रहादिक आए, तिनिका पूजनादिक करैं हैं, ताकै अर्थ दानादिक दे हैं । सो जैसैं हिरणादिक स्वयमेव गमनादि करै हैं, पुरुषकै दाहिणें बावैं आए सुख दुःख होनेका आगामी ज्ञानको कारण हो हैं, किछू सुख दुख देनेकौं समर्थ नाहीं । तैसैं ग्रहादि स्वयमेव गमनादि करै हैं । प्राणीकै यथा—संभव योगकौं प्राप्त होतैं सुख दुःख होनेका आगामी ज्ञानकौं कारण हो हैं । किछू सुख दुःख देनेकौं समर्थ नाहीं । कोउ तौ उनका पूजनादि करै, ताकै भी इष्ट न होय, कोऊ न करै, ताकै भी इष्ट होय । तातैं तिनिका पूजनादि करना मिथ्याभाव है । यहां कोऊ कहै—देना तौ पुण्य है, सो भला ही है । ताका उत्तर,—

धर्म्मकै अर्थि देना पुण्य है । यह तौ दुःखका भयकरि वा सुखका लोभकरि दे है, सो पाप ही है । इत्यादि अनेकप्रकारकरि ज्योतिषी देवनिकौं पूजैं हैं, सो मिथ्या है ।

बहुरि देवी दिहाड़ी आदि हैं, ते केई तौ व्यंतरी वा ज्योति—षिणी हैं, तिनिका अन्यथा स्वरूप मानि पूजनादि करै हैं । केई कल्पित हैं, सो तिनिका कल्पनाकरि पूजनादि करै हैं । ऐसैं व्यंतरादिकके पूजनेका निषेध किया । यहां कोऊ कहै—क्षेत्रपाल दिहाड़ी पद्मावती आदि देवी यक्ष यक्षिणी आदि जे जिनमतकौं

अनुसरै हैं, तिनके पूजनादि करनेमैं तौ दोष नाहीं। ताका उत्तर,—

जिनमतविषै संयम धारे पूज्यपनौ हो है। सो देवनिकै संयम होता ही नाहीं। बहुरि इनकौं सम्यक्त्वी मानि पूजिए है, तौ भवनत्रिकमैं सम्यक्त्वकी भी मुख्यता नाहीं। जो सम्यक्त्वकरि ही पूजिए, तौ सर्वार्थसिद्धिके देव लौकांतिकदेव तिनकौं ही क्यों न पूजिए। बहुरि कहौगे—इनकै जिनभक्ति विशेष है। सो भक्तिकी विशेषता भी सौधर्म्म इंद्रकै है वा सम्यग्दष्टी भी है। वाकौं छोरि इनकौं काहेकौं पूजिए। बहुरि जो कहौगे, जैसैं राजाके प्रतीहारादिक हैं, तैसैं तीर्थंकरकै क्षेत्रपालादिक हैं। सो समवसरणादिविषै इनका अधिकार नाहीं। यह झूंठी मानि है। बहुरि जैसैं प्रतीहारादिकका मिलाया राजासौं मिलिए, तैसैं ये तीर्थंकरकौं मिलावते नाहीं। वहां तौ जाकै भक्ति होय, सो ही तीर्थंकरका दर्शनादिक करो। किछू किसीकैं आधीन नाहीं। बहुरि देखो अज्ञानता, आयुधादिक लीए रौद्रस्वरूप जिनका तिनकी गाय गाय भक्ति करैं। सो जिनमतविषै भी रौद्ररूप पूज्य भया, तौ यह भी अन्यमतकै ही समान भया। तीव्र मिथ्यात्वभावकरि जिनमतविषै ऐसी विपरीत प्रवृत्तिका मानना हो है। ऐसैं क्षेत्रपालादिककौं भी पूजना योग्य नाहीं।

बहुरि गऊ सर्प्पादि तिर्यंच हैं, ते प्रत्यक्ष ही आपतैं हीन भासै हैं। इनका तिरस्कारादिक करि सकिए है। इनकी निंधदशा प्रत्यक्ष देखिए है। बहुरि वृक्ष अग्नि जलादिक स्थावर हैं, ते

तिर्यंचनिहूतैं अत्यंत हीनअवस्थाकौं प्राप्त देखिए है। बहुरि शस्त्र दवात आदि अचेतन हैं, सो सर्वशक्तिकरि हीन प्रत्यक्ष देखिए है। पूज्यपनेका उपचार भी संभवै नाहीं। तातैं इनका पूजना महा मिथ्याभाव है। इनकौं पूजे प्रत्यक्ष वा अनुमानकरि भी किछू फलप्राप्ति नाहीं भासै है। तातैं इनकौं पूजना योग्य नाहीं। या प्रकार सर्व ही कुदेवनिका पूजना मानना मिथ्या है। देखो मिथ्यात्वकी महिमा, लोकविषै आपतैं नीचेकौं नमतैं आपकौं निंद्य मानैं, अर मोहित होय रोड़ीपर्यंतकौं पूजना भी निंद्य न मानैं। बहुरि लोकविषै तौ जातैं प्रयोजन सिद्ध होता जानै, ताहीकी सेवा करैं। अर मोहित होय कुदेवनितैं मेरा प्रयोजन कैसैं सिद्ध होगा, ऐसा विना विचारे ही कुदेवनिका सेवन करैं। बहुरि कुदेवनिका सेवन करते हजारों विघ्न होय, ताकौं तौ गिनै नाहीं। कोई पुण्यके उदयतैं इष्टकार्य होय जाय, ताकौं कहैं, इनके सेवनतैं यह कार्य भया। बहुरि कुदेवादिकका सेवन किए विना जे इष्ट कार्य होंय, तिनकौं तौ गिनै नाहीं, अर कोई अनिष्ट होय, ताकौं कहैं, याका सेवन न किया, तातैं अनिष्ट भया। इतना नाहीं विचारैं हैं, जो इनहीके आधीन इष्ट अनिष्ट करना होय, तौ जे पूजैं तिनकै इष्ट होय, न पूजैं तिनकै अनिष्ट होय। सो तौ दीसता नाहीं। जैसैं काहूकै शीतलाकौं बहुत माने भी पुत्रादि मरते देखिए है। काहूकै विना माने भी जीवते देखिए है। तातैं शीतलाका मानना किछू कार्यकारी नाहीं। ऐसैं ही सर्व कुदेवनिका मानना किछू कार्यकारी नाहीं। इहां कोऊ कहै—कार्यकारी

नाहीं, तौ मति होहु, तिनके मानने तैं किछू विगार भी होता नाहीं। ताका उत्तर,—

जो विगार न होय, तौ हम काहेकौं निषेध करैं। परंतु एक तौ मिथ्यात्वादि दृढ होनेतैं मोक्षका मार्ग दुर्लभ होय जाय है। सो यह बड़ा विगार है। बहुरि इनतैं पापबंध हो है, अर पापबंध होनेतैं आगामी दुःख पाईए है, यहु विगार है। यहां पूछै– मिथ्यात्वादिभाव तौ अतत्त्वश्रद्धानादि भए होय हैं। अर पापबंध खोटे कार्य किए होय हैं, सो तिनके माननेतैं मिथ्यात्वादि कैसैं होय। ताका उत्तर,–

प्रथम तौ परद्रव्यनिकौं इष्ट अनिष्ट मानना ही मिथ्या है। जातैं कोऊ द्रव्य काहूका मित्र शत्रु है नाहीं। बहुरि जो इष्ट अनिष्ट बुद्धि पाईए है, तौ ताका कारण पुण्य पाप है। तातैं जैसैं पुण्यबंध होय, पापबंध न होय, सो करै। बहुरि जो पुण्यउदयका भी निश्चय न होय, केवल इष्ट अनिष्टके बाह्य कारण तिनके संयोग वा वियोगका उपाय करै। सो तौ कुदेवके माननेतैं इष्ट अनिष्टबुद्धि दूरि होती नाहीं। केवल वृद्धिकौं प्राप्त हो है। बहुरि पुण्यबंध भी नाहीं होता, पापबंध हो है। बहुरि कुदेव काहूकौं धनादिक देते खोसते देखे नाहीं। तातैं ए बाह्य कारण भी नाहीं। इनका मानना किस अर्थ कीजिए है जब अत्यंत भ्रमबुद्धि होय, जीवादिक तत्त्वनिका श्रद्धान ज्ञानका अंश भी न होय, अर रागद्वेषकी अति तीव्रता होय, तब जे कारण नाहीं तिनकौं भी इष्ट अनिष्टका कारण मानै। तब कुदेवनिका मानना हो है। ऐसैं तीव्र

मिथ्यात्वादि भए मोक्षमार्ग अति दुर्लभ हो है। आगैं कुगुरुके श्रद्धानादिककौं निषेधिए है,—

जे जीव विषयकषायादि अधर्म्मरूप तौ परिणमैं अर माना-दिकतैं आपकौं धर्म्मात्मा मनावैं, धर्म्मात्मा योग्य नमस्कारादि क्रिया करावैं, अथवा किंचित् धर्म्मका कोई अंग धारि वड़े धर्म्मात्मा कहावैं, वड़े धर्म्मात्मा योग्य क्रिया करावैं, ऐसैं धर्म्मका आश्रयकरि आपकौं वड़ा मनावैं, ते सर्व कुगुरु जानने। जातैं धर्मपद्धतिविषै तौ विषयकषायादि छूटैं जैसा धर्म्मकौं धारै तैसा ही अपना पद मानना योग्य है। तहां कोई तौ कुलकरि आपकौं गुरु मानै है। तिनविषै केई ब्राह्मणादिक तौ कहै हैं, हमारा कुल ही ऊंचा है, तातैं हम सर्व कुलके गुरु हैं सो उस कुलकी उच्चता तौ धर्म्म-साधनतैं है। जो उच्चकुलविषै उपजि हीन आचरण करै, तौ वाकौं उच्च कैसैं मानिए। जो कुलविषै उपजनेहीतैं उच्चपना रहै, तौ मांसाभक्षणादि किए भी वाकौं उच्च ही मानौ। सो बनै नाहीं भारतविषै भी अनेक प्रकार ब्राह्मण कहे हैं तहां "जो ब्राह्मण होय चांडालकार्य करै, ताकौं चांडालब्राह्मण कहिए" ऐसा कह्या है। सो कुलहीतैं उच्चपना होय, तौ ऐसी हीनसंज्ञा काहेकौं दई है। बहुरि वैष्णवशास्त्रनिविषै ऐसा भी कहै हैं—वेदव्यासादिक मछली आदिकतैं उपजे तहां कुलका अनुक्रम कैसैं रह्या। बहुरि मूलउत्पत्ति तौ ब्रह्मातैं कहै हैं। तातैं सर्वका एक कुल है। भिन्न-कुल कैसैं रह्या। बहुरि उच्चकुलकी स्त्रीकै नीचकुलके पुरुषतैं अर नीचकुलकी स्त्रीकै उच्चकुलके पुरुषतैं संगम होतैं संतति होती

देखिए है। तहां कुलका प्रमाण कैसैं रह्या। जो कदाचित् कहौगे, ऐसैं है, तौ उच्च नीचकुलका विभाग काहेकौं मानो हौ। सो लौकिक कार्यविषै तौ असत्य भी प्रवर्त्ति संभवै, धर्म्मकार्यविषै तौ असत्यता संभवै नाहीं। तातैं धर्म्मपद्धतिविषै कुलअपेक्षा महंतपना नाहीं संभवै है। धर्म्मसाधनहीतैं महंतपना होय। ब्राह्मणादि कुलनिविषै महंतता है, सो धर्म्म प्रवृत्तितैं है सो धर्म्मकी प्रवृत्तिकौं छोरि हिंसादिक पापप्रवृत्तिविषै प्रवर्त्तै महंतपना कैसैं रहै बहुरि केई कहै हैं—जो हमारे बड़े भक्त भए हैं। वा सिद्ध भए हैं, वा धर्म्मात्मा भए हैं। हम उनकी संततिविषै हैं, तातैं हम गुरु हैं। सो उन बड़निके बड़े तौ ऐसे थे नाहीं। तिनकी संततिविषै उत्तमकार्य किए उत्तम मानौ हौ, तौ उत्तमपुरुषकी संततिविषै जो उत्तमकार्य न करै, ताकौं उत्तम काहेकौं मानो हौ। बहुरि शास्त्रनिविषै वा लोकविषै यह प्रसिद्धि है। पिता शुद्ध कार्यकरि उच्चपदकौं पावै, पुत्र अशुभकार्यकरि नीचपदकौं पावै, वा पिता अशुभकार्यकरि नीचपदकौं पावै, पुत्र शुभकार्यकरि उच्चपदकौं पावै। तातैं बड़ेनिकी अपेक्षा महंत मानना योग्य नाहीं ऐसैं कुलकरि गुरुपना मानना मिथ्याभाव जानना। बहुरि केई पट्टकरि गुरुपनौं मानै हैं। सो कोई पूर्वै महंतपुरुष भया होय, ताकै पाटि जे शिष्य प्रतिशिष्य होते आए, तहां तिनविषै तिस महंतपुरुषकैसे गुण न होंय, तौ भी गुरुपनौं मानिए, सो ऐसैं ही होय तौ उस पाटविषै कोई परस्त्रीगमनादि महापापकार्य करैगा, सो भी धर्मात्मा होगा, सुगतिकौं प्राप्त होगा, सो संभवै नाहीं। अर वह महापापी है, सो तौ

पाटका अधिकार कहां रह्या। जो गुरुपदयोग्य कार्य करैं, सो ही गुरु है। बहुरि केई पहलैं तौ स्त्री आदिके त्यागी थे, पीछै भ्रष्ट होय विवाहादि कार्यकरि गृहस्थ भए, तिनकी संतति आपकौं गुरु मानै है। सो भ्रष्ट भए पीछै गुरुपना कैसैं रह्या। अर गृहस्थवत् ए भी भए। इतना विशेष भया, जो ए भ्रष्ट होय गृहस्थ भए। इनिकौं मूल गृहस्थधर्मी गुरु कैसें मानै। वहुरि केई अन्य तौ सर्व पापकार्य करैं, एक स्त्री परणै नाहीं, इस ही अंगकरि गुरुपनो मानै हैं। सो एक अब्रह्म ही तौ पाप नाहीं, हिंसा परिग्रहादिक भी पाप हैं, तिनकौं करते धर्म्मात्मा गुरु कैसैं मानिए। बहुरि वह धर्म्मबुद्धितैं विवाहादिकका त्यागी नाहीं भया है। कोई आजीविका वा लज्जाआदि प्रयोजनकौं लिए विवाह न करै है। जो धर्म्मबुद्धि-होती, तौ हिंसादिककौं काहेकौं बधावता। बहुरि जाकै धर्मबुद्धिं नाहीं, ताकै शीलकी भी दृढता रहै नाहीं। अर विवाह करै नाहीं तब परस्त्रीगमनादि महापापकौं उपजावै। ऐसी क्रिया होतैं गुरुपना मानना महाभ्रमबुद्धि है। बहुरि केई काहूप्रकारका भेषधारनेतैं गुरुपनौ मानैं है। सो भेष धारे कौन धर्म्म भया, जातैं धर्म्मात्मा गुरु मानै। तहां केई टोपी दे हैं, केई गूदरी राखै हैं, केई चोला पहरै हैं, केई चादरि ओढ़ै हैं, केई लालवस्त्र राखै हैं, केई स्वेतवस्त्र राखै हैं, केई भगवां राखै हैं, केई टाट पहरै हैं, केई मृगछाला पहरै हैं, केई राख लगावै हैं, इत्यादि केई स्वांग बनावै हैं। सो जो शीत उष्णादिक सहे न जाते थे, लज्जा न छुटै थी, तौ पाग, जामा इत्यादि प्रवृत्तिरूप वस्त्रादिकका त्याग काहेकौं किया

गृहस्थनिकौं ठिगनेकै अर्थ ऐसे भेष जानने । जो गृहस्थसारिसा अपने स्वांग राखै, तौ गृहस्थ कैसै ठिगावै । अर इनकौं उनकरि आजीविका वा धनादिकका वा मानादिकका प्रयोजन साधना, तातैं तैसा स्वांग बनावै हैं । जगत भोला तिस स्वांगकौ देखि ठिगावै, अर धर्म्म भया मानै, सो यह भ्रम है । सोई कह्या है—

जह कुवि वेस्सारत्तो मुसिज्जमाणो विमण्णए हरिसं ।
तह मिच्छवेसमुहिया गयं पि ण मुणंति धम्मणिहिं ॥ १ ॥

याका अर्थ--जैसै कोई वेश्यासक्त पुरुष धनादिककौं मुसावता हुवा भी हर्ष मानै है, तैसैं मिथ्याभेषकरि ठिगे गए जीव ते नष्ट होता धर्म्म धनकौं नाहीं जानै हैं । भावार्थ, यह मिथ्याभेष वाले जीवनिकी शुश्रूषा आदितैं अपना धर्म्म धन नष्ट होय, ताका विषाद नाहीं, मिथ्याबुद्धितैं हर्ष करै हैं । तहां केई तौ मिथ्या शास्त्रनिविषै भेष निरूपण किए हैं, तिनकौं धारैं हैं । सो उन शास्त्रनिका करणहारा पापी सुगमक्रियातैं उच्चपद प्ररूपणतैं मेरी मानि हो है, वा अन्य जीव इस मार्गविषै बहुत लागैं, इस अभिप्रायतैं मिथ्याउपदेश दिया । ताकी परंपराकरि विचाररहित जे जीव ते इतना तौ विचारैं नाहीं, जो सुगमक्रियातैं उच्चपद होना बतावैं हैं, सो यहां किछू दगा है । अर भ्रमकरि तिनका कह्या मार्गविषै प्रवर्त्तैं हैं । बहुरि केई शास्त्रनिविषै तौ मार्ग कठिन निरूपण किया, सो तौ सधै नाहीं, अर अपना ऊंच नाम धराए विना लोक मानै नाहीं, इस अभिप्रायतैं यति मुनि आचार्य उपा-

ध्याय साधु भट्टारक सन्यासी योगी तपस्वी नग्न इत्यादि नाम तौ ऊंचा धरावै हैं, अर इनिका आचरनिकौं नाहीं साधि सकैं हैं, तातैं इच्छाअनुसार नानाभेष बनावै हैं । बहुरि केई अपनी इच्छा अनुसार ही तौ नवीन नाम धरावै हैं, अर इच्छाअनुसार ही भेष बनावै हैं ! ऐसैं अनेक भेष धारनेतैं गुरुपनो मानै हैं, सो यह मिथ्या है । इहां कोऊ पूछै-भेष तौ बहुत प्रकारके दीसैं, तिन-विषै सांचे झूंठे भेषकी कैसैं पहचान होय । ताका समाधान,—

जिस भेषनिविषै विषयकषायका किछू लगाव नाहीं, ते भेष सांचे हैं । सो सांचे भेष तीन प्रकार हैं, अन्य सर्व भेष मिथ्या हैं । सो ही षट्पाहुड़विषै कुंदकुंदाचार्यकरि कह्या है—

एगं जिणस्स रूवं विदियं उक्किट्ठ सावयाणं तु ।
अवरट्ठियाण तिदयं चउत्थं पुण लिंग दंसणे णत्थि ॥ १ ॥

याका अर्थ-एक तौ जिनका स्वरूप निर्ग्रंथ दिगंबर मुनिलिंग, अर दूसरा उत्कृष्ट श्रावकनिका रूप दसईं ग्यारईं प्रतिमाका धारक श्रावकका लिंग, अर तीसरा आर्यिकानिका रूप यह स्त्रीनिका लिंग ऐसैं ए तीन लिंग तौ श्रद्धानपूर्व्वक हैं । बहुरि चौथा लिंग सम्य-ग्दर्शनस्वरूप नाहीं है । भावार्थ, यह इन तीनलिंग विना अन्य लिंगकौं मानै, सो श्रद्धानी नाहीं , मिथ्यादृष्टी है । बहुरि इन भेष-निविषै केई भेषी अपने भेषकी प्रतीति करावनेके अर्थि किंचित् धर्म्मका अंगकौं भी पालै हैं । जैसैं खोटा रुपैया चलावनेवाला तिसविषैं किछू रूपाका भी अंश राखै है, तैसैं धर्म्मका कोऊ-अंग दिखाय अपना उच्चपद मनावै हैं । इहां कोऊ कहै—धर्म्म

साधन किया, ताका तौ फल होगा। ताका उत्तर—

जैसैं उपवासका नाम धराय कणमात्रका भी भक्षण करै, तौ पापी है। अर एकंतका (एकासनका) नाम धराय किंचित् ऊन भोजन करै, तौ भी धर्म्मात्मा है। तैसैं उच्चपदवीका नाम धराय तामैं किंचित् भी अन्यथा प्रवर्तैं, तौ महापापी हैं। अर नीची-पदवीका नाम धराय, किछू भी धर्म्म साधन करै, तौ धर्म्मात्मा है। तातैं धर्म्मसाधन तौ जेता बनै, तेता कीजिए। यामैं किछू दोष नाहीं। परंतु ऊंचा धर्म्मत्मा नाम धराय नीची क्रिया किए महापापी ही हो है। सोई षट्पाहुड़विषै कुंदकुंदाचार्यकरि कह्या है—

जह जायरूवसारिसो तिलतुसमित्तं ण गहदि अत्थेसु।
जइ लेइ अप्प बहुलय तत्तो पुण जाइ णिग्गोयं॥ १॥

याका अर्थ—मुनिपद है, सो यथाजातरूप सदृश है। जैसा जन्म होतैं था, तैसा नग्न है। सो वह मुनि अर्थ जे धन वस्त्रादिक वस्तु तिनविषै तिलतुषमात्र भी ग्रहण न करै। बहुरि कदाचित् अल्प वा बहुत्व ग्रहै, तौ तिसतैं निगोद जाय। सो देखो, गृहस्थपनेमैं बहुत परिग्रह राखि किछू प्रमाण करै, तौ भी स्वर्गमोक्षका अधिकारी हो है अर मुनिपनेमैं किंचित् परिग्रह अंगीकार किए भी निगोद जानेवाला हो है। तातैं ऊंचा नाम धराय नीची प्रवृत्ति युक्त नाहीं। देखो, हुंडावसर्पिणी कालविषै यह कलिकाल प्रवर्त्तै है। ताका दोषकरि जिनमतविषै भी मुनिका स्वरूप तौ ऐसा जैसा बाह्य अभ्यंतर परिग्रहका लगाव

नाहीं, केवल अपने आत्माकौं आपो अनुभवते शुभाशुभभावनितैं उदासीन हो है। अर अब विषय कषायासक्त जीव मुनिपद धारैं, तहां सर्वसावद्यका त्यागी होय पंच महाव्रतादि अंगीकार करैं। बहुरि स्वेत रक्तादि वस्त्रनिकौ ग्रहैं, वा भोजनादिविषै लोलुपी होंय, वा अपनी अपनी पद्धति बधावनेकौं उद्यमी होंय, वा केई धनादिक भी राखैं, वा हिंसादिक करैं, नाना आरंभ करैं। सो स्तोकपरिग्रह ग्रहणेका फल निगोद कह्या है, तौ ऐसे पापनिका फल तौ अनंतसंसार होय ही होय। बहुरि लोकनिकी अज्ञानता देखो, कोई एक छोटी प्रतिज्ञा भंग करै, ताकौं तौ पापी कहैं अर ऐसी बड़ी प्रतिज्ञा भंग करते देखैं, तिनकौं गुरु मानैं, मुनिवत् तिनका सन्मानादि करैं। सो शास्त्रविषै कृतकारित अनुमोदनाका फल कह्या है। तातैं वैसा ही फल इनकौं भी लागै है। मुनिपद लेनेका तौ क्रम यह है—पहलैं तत्त्वज्ञान होय, पीछैं उदासीन परिणाम होय, परिषहादि सहनेकी शक्ति होय, तब वह स्वयमेव मुनि भया चाहै। तब श्रीगुरु मुनिधर्म्म अंगीकार करावैं। यह कौन विपरीत जे तत्त्वज्ञानरहित विषय-कषायासक्त जीव तिनकौं मायाकरि वा लोभ दिखाय मुनिपद देना, पीछैं अन्यथा प्रवृत्ति करावनी, सो यह बड़ा अन्याय है। ऐसैं कुगुरुका वा तिनके सेवनका निषेध किया। अब इस कथनके दृढ़करनेकौं शास्त्रनिकी साक्षी दीजिए है। तहां उपदेश-सिद्धांतरत्नमालाविषै ऐसा कह्या है,—

गुरुणो भट्टा जाया सद्दे थुणिऊण लिंति दाणाइं ।
दोण्णावि अमुणिअसारा दूसमिसमयम्मि बुड्ढंति ॥ १ ॥

कालदोषतैं गुरु जे हैं ते भाट भए । भाटवत् शब्दकरि दातारकी स्तुतिकरिकैं दानादि ग्रहै हैं । सो इस दुखमा कालविषै दातार वा पात्र दोऊ ही संसारविषै डूबै हैं । बहुरि तहां कह्या है,--

सप्पे दिट्ठे णासइ लोओ णहि कोवि किंपि अक्खेई ।
जो चयइ कुगुरु सप्पं हा मूढा भणइ तं दुट्ठं ॥ २ ॥

सर्पकौं देखि कोई भागै, ताकौं तौ लोक किछू भी कहै नाहीं । हाय हाय देखो, जो कुगुरुसर्पकौं छोरै, ताहि मूढ दुष्ट कहैं बुरा बोलैं ।

सप्पो इक्कं मरणं कुगुरु अणंताइ देइ मरणाइं ।
तो वर सप्पं गहियं मा कुगुरुसेवणं भद्द ॥ १ ॥

अहो सर्पकरि तौ एक ही बार मरण होय अर कुगुरु अनंतमरण दे है, अनंतवार जन्म मरण करावै है । तातैं हे भद्र सांपका ग्रहण तो भला अर कुगुरुका ग्रहण भला नाहीं । बहुरि संघपट्टविषै ऐसा कह्या है-

क्षुत्क्षामः किल कोपि रंकशिशुकः प्रव्रज्य चैत्ये क्वचित्
कृत्वा किंच न पक्षमक्षतकलिः प्राप्तस्तदाचार्यकम् ।
चित्रं चैत्यगृहे गृहीयति निजे गच्छे कुटुम्बीयति
स्वं शक्रीयति बालिशीयति बुधान् विश्वं वराकीयति ॥

याका अर्थ--देखो क्षुधाकरि कृश कोई रंकका बालक सो कहीं चैत्यालयादिविषै दीक्षा धारि कोई पक्षकरि पापरहित न

होतासंता आचार्यपदकौं प्राप्त भया। वहुरि वह चैत्यालयविष अपने गृहवत् प्रवर्तै है, निजगच्छविषै कुटुंववत् प्रवर्तै है, आपकौं इंद्रवत् महान् मानै है, ज्ञानीनिकौं वालकवत् अज्ञानी मानै हैं, सर्वगृहस्थनिकौं रंकवत् मानै है। सो यह वड़ा आश्चर्य भया है। वहुरि 'यैर्जातो न च वर्द्धितो न च न च क्रीतो' इत्यादि काव्य है। जिनकरि जन्म भया नाहीं, वध्या नाहीं, मोल लिया नाहीं, देणदार भया नाहीं, इत्यादि कोई प्रकार संबंध नाहीं, अर गृहस्थनिकौं वृषभवत् वहावै जोरावरी दानादिक ले, सो हाय हाय यह जगत् राजाकरि रहित है। कोई न्याय पूछनेवाला नाहीं। यहां कोऊ कहै, ए तौ श्वेतांवरविरचित उपदेश है तिनकी साक्षी काहेकौं दई। ताका उत्तर—

जैसैं नीचापुरुष जाका निषेध करै, ताका उत्तमपुरुषकै तौ सहज ही निषेध किया। तैसैं जिनकै वस्त्रादि उपकरण कहे, वे हू जाकरि निषेध करैं, तौ दिगंवरधर्म्मविषै तौ ऐसी विपरीतिका सहज ही निषेध भया। वहुरि दिगंवरग्रंथनिविषै भी इस श्रद्धानके पोषक वचन हैं। तहां श्रीकुंदकुंदाचार्य षट्पाहुड़विषै (दर्शन--पाहुडमें) ऐसा कह्या है,—

दंसणमूलो धम्मो उवइट्ठं जिणवरेहिं सिस्साणं।
तं सोऊण सकण्णे दंसणहीणो ण वंदिव्वो॥ २॥

जिनवरकरि सम्यग्दर्शन है मूल जाका ऐसा धर्म्म उपदेश्या है। ताकौं सुनकरि हे कर्णसहित हो, यह मानौ—सम्यक्त्वरहित जीव वंदनेयोग्य नाहीं। जे आप कुगुरु ते कुगुरुका श्रद्धानसहित

सम्यक्ती कैसैं होय। विना सम्यक्त अन्य धर्म्म भी न होय। धर्म्म विना वंदनेयोग्य कैसैं होय। बहुरि कहै हैं, -

जे दंसणेसु भट्ठा णाणे भट्ठा चरित्तभट्ठाय।
एदे भट्ठाविभट्ठा सेसंपि जणं विणासंति॥ ८॥

जे दर्शनविषै भ्रष्ट हैं, ज्ञानविषै भ्रष्ट हैं, चारित्रभ्रष्ट हैं, ते जीव भ्रष्टतैं भ्रष्ट हैं। और भी जीव जो उनका उपदेश मानैं हैं, तिनि जीवनिका नाश करै हैं—बुरा करै हैं बहुरि कहै हैं,---

जे दंसणेसु भट्टा पाए पाडंति दंसणधराणं।
ते हुंति लुल्लमूया वोही पुण दुल्लहा तेसिं॥ १२॥

जे आप तौ सम्यक्ततैं भ्रष्ट हैं, अर सम्यक्तधारकनिकौं अपने पगां पड़ाया चाहै हैं, ते लूले गूंगे हो हैं वा स्थावर हो हैं। बहुरि तिनकै बोधकी प्राप्ति महादुर्लभ हो है।

जेवि पडंति च तेसिं जाणंता लज्जगारवभएण।
तेसिंपि णत्थि वोही पावं अणुमोयमाणाणं॥ १३॥

जो जाणता हुवा भी लज्जागारव भयकरि तिनिकै पगां पड़ै हैं, तिनकै भी बोधी जो सम्यक्त सो नाहीं है। कैसे हैं ए जीव, पापकी अनुमोदना करते हैं। पापीनिका सन्मानादि किए तिस पापकी अनुमोदनाका फल लागै है। बहुरि (सूत्रपाहुड़में) कहै हैं—

जस्स परिग्गहगहणं अप्पं बहुयं च हवइ लिंगस्स।
सो गरहिउ जिणवयणे परिगहरहिओ णिरायारो॥ १९॥

जिस लिंगकै थोरा वा बहुत परिग्रहका अंगीकार होय,

सो जिनवचनविषै निंदायोग्य है । परिग्रहरहित ही अनगार हो है । बहुरि (भावपाहुड़में) कहै हैं—

धम्मम्मि णिप्पिवासो दोसावासो य इक्खुफुल्लसमो ।
णिप्फलणिग्गुणयारो णडसवणो णग्गरूवेण ॥ ७१ ॥

जो धर्म्मविषै निरुद्यमी है दोषनिका घर है, इक्षुफूल समान निष्फल है, गुणका आचरणकरि रहित है, सो नग्नरूपकरि नट श्रमण है। भांडवत् भेषधारी है । सो नग्न भए भांडका दृष्टांत संभवै है । परिग्रह राखैं तौ यह भी दृष्टांत बनै नाहीं ।

बहुरिमोक्षपाहुड़में कहा है—

जे पावमोहियमई लिंगं धत्तूण जिणवरिंदाणं ।
पावं कुणंति पावा ते चत्ता मोक्खमग्गम्मि ॥ ७८ ॥

पापकरि मोहित भई है बुद्धि जिनकी ऐसे जे जीव जिनवरिनिका लिंग धारि पाप करै हैं, ते पापमूर्ति मोक्षमार्गविषै भ्रष्ट जानने । बहुरि ऐसा कह्या है——

जे पंचचेलसत्ता गंथग्गाहीय जायणासीला ।
आधाकम्मम्मिरया ते चत्ता मोक्खमग्गम्मि ॥ ७८ ॥

जे पंचप्रकार वस्त्रविषै आसक्त हैं. परिग्रहके ग्रहणहारे हैं, याचनासहित हैं, अधःकर्म्म आदि दोषनिविषै रत हैं, ते मोक्षमार्गविषै भ्रष्ट जानने । बहुरि कुंदकुंदाचार्य कृतलिंगपाहुड़ है ताविषै मुनिलिंगधारि जो हिंसा आरंभ यंत्रमंत्रादि करै हैं, ताका निषेध बहुत किया है । बहुरि गुणभद्राचार्यकृत आत्मानुशासनविषै ऐसा कह्या है,——

इतस्ततश्च त्रस्यन्तो विभावर्य्यां यथा मृगाः।
वनाद्वसन्त्युपग्रामं कलौ कष्टं तपस्विनः ॥ १९७ ॥

कलिकालविषै तपस्वी मृगवत् इधर उधरतैं भयवान् होय वनतैं नगरकै समीप वसै हैं, यह महाखेदकारी कार्य भया है। यहां नगरसमीप ही रहना निषध्या, तौ नगरविषै रहना तौ निसिद्ध भया ही।

वरं गार्हस्थ्यमेवाद्य तपसो भाविजन्मनः।
सुस्त्रीकटाक्षलुण्टाकलुप्तवैराग्यसम्पदः ॥ २०० ॥

अबार होनहार है अनंतसंसार जातैं ऐसे तपतैं गृहस्थपना ही भला है। कैसा है वह तप प्रभात ही स्त्रीनिके कटाक्षरूपी लुटेरेनिकरि लूटी है वैराग्य संपदा जाकी ऐसा है बहुरि योगी-न्द्रदेवकृत परमात्मप्रकाशविषै ऐसा कह्या है—

दोहा।

चिल्ला चिल्ली पुत्थयहिं, तूसइ मूढ णिभंतु।
एयहिं लज्जइ णाणियउ वंधहहेउ मुणंतु ॥ २१४ ॥

चेला चेली पुस्तकनिकरि मूढ संतुष्ट हो हैं। भ्रांतिरहित ऐसैं ही है। बहुरि ज्ञानी इनकौं वंधका कारण जानता संता इनकरि लज्जायमान हो है।

केणवि अप्पा वंचियउ, सिर लुंचिवि छारेण।
सयलवि संग ण परिहरिय, जिणवरलिंगधरेण ॥ २१६ ॥

किसी जीवकरि अपना आतमा ठिग्या। सो कौन, जिह जीव जिनवरका लिंग धारया अर राखकरि माथाका लोंचकरि समस्त

परिग्रह छांड्या नाहीं ।

जे जिणलिंग धरेवि मुणि इट्ठपरिग्गह लिंति ।
छदिकरेवि णु तेवि जिय, सो छद्दि गिलंति ॥२८७॥

हे जीव! जे मुनि लिंगधारि इष्टपरिग्रहकौं ग्रहैं हैं ते छर्दि करि तिस ही छर्दिकूं बहुरि भखै हैं। भावार्थ—यह निंदनीय है। इत्यादि तहां कहै हैं ऐसैं शास्त्रनिविषै कुगुरुका वा तिनके आचरनका वा तिनकी सुश्रूषाका निषेध किया है, सो जानना। बहुरि जहां मुनिकै धात्रीदूतआदि छीयालीस दोष आहारादिविषै कहे हैं, तहां गृहस्थनिके बालकनिकौं प्रसन्न करना, समाचार कहना, मंत्र औषधि ज्योतिषादि कार्य बतावना इत्यादि, बहुरि किया कराया अनुमोद्या भोजन लेना इत्यादि क्रियाका निषेध किया है। सो अब कालदोषतैं इनही दोषनिकौं लगाय आहारादि ग्रहै हैं। बहुरि पार्श्वस्थ कुशीलादि भ्रष्टाचारी मुनिनिका निषेध किया है, तिनहीका लक्षणनिकौं धरै हैं। इतना विशेष—वै द्रव्यां तौ नग्न रहै हैं; ए नानापरिग्रह राखै हैं। बहुरि तहां मुनिनिकै भ्रमरी आदि आहार लेनेकी विधि कही है। ए आसक्त होय दातारके प्राण पीड़ि आहारादि ग्रहै हैं। बहुरि गृहस्थधर्मविषै भी उचित नाहीं वा अन्याय लोकनिंद्य पापरूप कार्य तिनकूं करते देखिए हैं। बहुरि जिनबिम्ब शास्त्रादिक सर्वोत्कृष्ट पूज्य तिनका तौ अविनय करै हैं। बहुरि आप तिनतैं भी महंतता राखि ऊंचा बैठना आदि प्रवृत्तिकौं धारै हैं इत्यादि अनेक विपरीतिता प्रत्यक्ष भासै अर आपकौं मुनि मानैं, मूलगुणादिकके धारक कहावैं। ऐसैं

ही अपनी महिमा करावैं। बहुरि गृहस्थ भोले उनकरि प्रशंसादिककरि ठिगे हुए धर्म्मका विचार करैं नाहीं। उनकी भक्तिविषै तत्पर हो हैं। सो बड़े पापकौं बड़ा धर्म्म मानना, इस मिथ्यात्वका फल कैसैं अनंतसंसार न होय। एक जिनवचनकौं अन्यथा माने महापापी होना, शास्त्रविषै कह्या है। यहां तौ जिनवचनकी किछू बात राखी ही नाहीं। इस समान और पाप कौन है। अब यहां कुयुक्तिकरि जे तिन कुगुरुनिका स्थापन करै हैं, तिनका निराकरण कीजिए है। तहां वह कहै हैं,—गुरूविना तौ निगुरा होय, अर वैसे गुरु अबार दीसै नाहीं। तातैं इनहीकौं गुरु मानना। ताका उत्तर—

निगुरा तौ वाका नाम है, जो गुरु मानै ही नाहीं। बहुरि जो गुरुकौं तौ मानै अर इस क्षेत्रविषै गुरुका लक्षण न देखि काहूकौं गुरु न मानै, तौ इस श्रद्धानतैं तौ निगुरा होता नाहीं। जैसैं नास्तिक्य तौ वाका नाम है, जो परमेश्वरकौं मानै ही नाहीं। बहुरि जो परमेश्वरकौं तौ मानै अर इस क्षेत्रविषै परमेश्वरका लक्षण न देखि काहूकौं परमेश्वर न मानै, तौ नास्तिक्य होता नाहीं तैसैं ही यह जानना। बहुरि वह कहै है, जैनशास्त्रनिविषै अबार केवलीका तौ अभाव कह्या है, मुनिका तौ अभाव कह्या नाहीं। ताका उत्तर,—

ऐसा तौ कह्या नाहीं, इन देशनिविषै सद्भाव रहैगा। भरत क्षेत्रविषै कहै हैं, सो भरतक्षेत्र तौ बहुत बड़ा है। कहीं सद्भाव होगा, तातैं अभाव न कह्या है। जो तुम रहो हो, जिसही

क्षेत्रविषै सद्भाव मानौगे, तौ जहां ऐसे भी मुनि न पावौगे, तहां जावौगे तब किसकौं गुरु मानौंगे, । जैसैं हंसनिका सद्भाव अबार कह्या है अर हंस दीसते नाहीं, तौ और पक्षीनिकौं तौ हंसपना मान्या जाता नाहीं । तैसैं मुनिनिका सद्भाव अवार कह्या है । अर मुनि दीसते नाहीं, तौ औरनिकौं तो मुनि मान्या जाय नहीं । बहुरि वह कहै है, एक अक्षरका दाताकौं गुरु मानै हैं । जे शास्त्र सिखावैं वा सुनावैं, तिनकौं गुरु कैसैं न मानिए, ताका उत्तर—

गुरु नाम बड़ेका है । सो जिस प्रकारकी महंतता जाकै संभवै, तिस प्रकार ताकौं गुरुसंज्ञा संभवै । जैसैं कुलअपेक्षा मातापिताकौं गुरुसंज्ञा है, तैसैं ही विद्या पढ़ावनेवालेकौं विद्याअपेक्षा गुरुसंज्ञा है । यहां तौ धर्म्मका अधिकार है । तातैं जाकै धर्म्मअपेक्षा महंतता संभवै, सो ही गुरु जानना । सो धर्म्म नाम चारित्रका हैं । **चारित्तं खलु धम्मो,** ऐसा शास्त्रविषै कह्या है । तातैं चारित्रका धारकहीकौं गुरुसंज्ञा है । बहुरि जैसैं भूतादिकका नाम भी देव है, तथापि यहां देवका श्रद्धानविषै अरहंतदेवहीका ग्रहण है । तैसैं औरनिका भी नाम गुरु है, तथापि श्रद्धानविषै निर्ग्रंथ हीका ग्रहण है । सो जिनधर्म्मविषै अरहंत देव निरग्रंथ गुरु ऐसा प्रसिद्धवचन है । यहां प्रश्न—जो निरग्रंथविना और गुरु न मानिए, सो कारण कहा । ताका उत्तर—

निर्ग्रंथविना अन्य जीव सर्वप्रकरि महंतता नाहीं धारै हैं । जैसैं लोभी शास्त्रव्याख्यान करै, तहां वह वाकौं शास्त्र सुनावनेंतैं महंत भया । वह वाकौं धनवस्त्रादि देनेंतैं महंत भया । यद्यपि

बाह्य शास्त्र सुनावनेवाला महंत रहे, तथापि अंतरंग लोभी होय, सो दाताकौं उच्च मानै। अर दातार लोभीकौं नीचा मानैं, तातैं वाकै सर्वथा महंतता न भई। यहां कोऊ कहै निर्ग्रंथ भी तौ आहार ले हैं ताका उत्तर—

लोभी होय दातारकी सुश्रूषाकरि दीनतातैं आहार न ले है। तातैं महंतता घटै नाहीं। जो लोभी होय, सो हीनता पावै है ऐसैं ही अन्य जीव जानने। तातैं निर्ग्रंथ ही सर्वप्रकार महंतता-युक्त है। बहुरि निर्ग्रंथविना अन्य जीव सर्वप्रकार गुणवान् नाहीं। तातैं गुणनिकी अपेक्षा महंतता अर दोषनिकी अपेक्षा हीनता भासै, तब निःशंक स्तुति करी जाय नाहीं। बहुरि निर्ग्रंथविना अन्य जीव जैसा धर्म्म साधन करैं तैसा वा तिसैंत अधिक गृहस्थ भी धर्म्मसाधन करि सकै। तहां गुरुसंज्ञा किसकौं होय। तातैं बाह्यअभ्यंतरपरिग्रहरहित निर्ग्रंथमुनि हैं, सो ही गुरु हैं। यहां कोऊ कहै, ऐसे गुरु तौ अबार यहां नाहीं, तातैं जैसैं अरहंतकी स्थापना प्रतिमा है, तैसैं गुरुनिकी स्थापना ए भेषधारी हैं—ताका उत्तर—

जैसैं राजाकी स्थापना चित्रमादिककरि किए तौ प्रतिपक्षी नाहीं। अर कोई सामान्य मनुष्य आपकौं राजा मनावै, तौ तिसका प्रतिपक्षी हो है। तैसैं अरहंतादिककी पाषाणादिविषै स्थापना बनावै, तौ तिनका प्रतिपक्षी नाहीं अर कोई सामान्य मनुष्य आपकौं मुनि मनावै, तौ वह मुनिनिका प्रतिपक्षी भया। ऐसैं ही स्थापना होती होय, तौ अरहंत भी आपकौं मनावो।

वहुरि उनकी स्थापना होय, तौ बाह्य तौ ऐसैं ही भए चाहिए। वै निर्ग्रंथ ए वहुतपरिग्रहके धारी, यह कैसैं बनैं। वहुरि कोई कहै—अब श्रावक भी तौ जैसे संभवै तैसे नाहीं। तातैं जैसे श्रावक तैसे मुनि ताका उत्तर—

श्रावकसंज्ञा तौ शास्त्रविषै सर्वगृहस्थ जैनीकौं है। श्रेणिक भी असंयमी था, ताकौं उत्तरपुराणविषै श्रावकोत्तम कह्या। वारह-सभाविषै श्रावक कहे, तहां सर्व व्रतधारी न थे। जो सर्वव्रतधारी होते, तौ असंयत मनुष्यनिकी जुदी संख्या कहते, सो कही नाहीं। तातैं गृहस्थ जैनी श्रावक नाम पावै हैं। अर मुनिसंज्ञा तौ निर्ग्रंथ विना कहीं कही नाहीं। वहुरि श्रावककै तौ आठ मूलगुण कहे हैं। सो मद्य मांस मधु पंचउदंवरादि फलनिका भक्षण श्रावकनिकै है नाहीं, तातैं काहू प्रकारकरि श्रावकपना तौ संभवै भी है। अर मुनिकै अट्ठाईस मूलगुण हैं, सो भेषीनिकै दीसते ही नाहीं। तातैं मुनिपनौ काहूप्रकारकरि संभवै नाहीं। वहुरि गृहस्थअवस्थाविषै तौ पूर्वैं जंवूकुमारादिक वहुत हिंसादिककार्य किए सुनिए है। मुनि होयकरि तौ काहूने हिंसादिक कार्य किए नाहीं, परिग्रह राखे नाहीं, तातैं ऐसी युक्ति कारिजकारी नाहीं वहुरि देखो, आदि-नाथजीके साथ च्यारि हजार राजा दीक्षा लेय वहुरि भ्रष्ट भए, तब देव उनकौं कहते भए, जिनलिंगी होय अन्यथा प्रवर्त्तौगे तौ हम दंड देंगे। जिनलिंग छोरि तुह्मारी इच्छा होय, सो ही करो। तातैं जिनलिंगी कहाय अन्यथा प्रवर्त्तै, तौ दंड योग्य है। वंदना-दियोग्य कैसे होय। अब वहुत कहा कहिए, जे जिनमतविषै

कुभेष धारैं हैं, ते महापाप उपजावैं हैं । अन्य जीव उनकी सुश्रूषा आदि करैं हैं ते भी पापी हो हैं । पद्मपुराणविषै यह कथा है-- जो श्रेष्ठी धर्म्मात्मा चारण मुनिनिकैं भ्रमतैं भ्रष्ट जानि आहार न दिया, तौ प्रत्यक्ष भ्रष्ट तिनकौं दानादिक देना कैसैं संभवै । यहां कोऊ कहै, हमारै अंतरंगविषै श्रद्धान तौ सत्य है, परंतु बाह्य लज्जादिकरि शिष्टाचार करैं हैं, सो फल तौ अंतरंगका होगा, ताका उत्तर---

षट्पाहुडविषैं लज्जादिकरि वंदनादिकका निषेध दिखाया था, सो पूर्वैं ही कह्या था । बहुरि कोऊ जोरावरी मस्तक नमाय हाथ जुड़ावै, तब तौ यह संभवै, जो हमारा अंतरंग न था । अर आपही मानादिकतैं नमस्कारदि करै. तहां अंतरंग कैसैं न कहिए । जैसैं कोई अंतरंगविषै तौ मासकौं बुरा जानै अर राजादिकका भला मनावनेकौं मांस भक्षण करै, तौ वाकौं व्रती कैसैं मानिए । तैसैं अंतरंगविषै तौ कुगुरुसेवनकौं बुरा जानैं अर तिनका वा लोकनिका भला मनावनेकौं सेवन करैं, ते श्रद्धानी कैसैं कहिए । तातैं बाह्य किए ही अंतरंग त्याग संभवै हैं । तातैं जे श्रद्धानी जीव हैं, तिनकौं काहूप्रकारकरि भी कुगुरुनिकी सुश्रूषाआदि करनी योग्य नाहीं । याप्रकार कुगुरुसेवनका निषेध किया । यहां कोऊ कहै—काहू तत्त्वश्रद्धानीकौं कुगुरुसेवनतैं मिथ्यात्व कैसैं भया । ताका उत्तर---

जैसैं शीलवती स्त्री परपुरुषसहित भर्तारवत् रमणक्रिया सर्वथा करै नाहीं, तैसैं तत्वश्रद्धानी पुरुष कुगुरुसहित सुगुरूवत् नमस्का-

रादिक्रिया सर्वथा करै नाहीं। काहेतैं, यह तौ जीवादितत्त्वनिका श्रद्धानी भया है। तहां रागादिककौं निषिद्ध श्रद्दहै है, वीतरागभाव श्रेष्ठ मानै है, तातैं तिनकै वीतरागता पाईए। वैसे ही गुरुकौं उत्तम जानि नमस्कारादि करै हैं। जिनकै रागादिक पाइए, तिनकौं निषिद्ध जानि नमस्कारादि कदाचित् करै नाहीं। कोऊ कहै, जैसैं राजादिककौं करै, तैसैं इनकौं भी करै है। ताका उत्तर—

राजादिक धर्म्मपद्धतिविषै नाहीं। गुरूका सेवन धर्म्मपद्धतिविषै है। सो राजादिकका सेवन तौ लोभादिकतैं हो है तहां चारित्र-मोहहीका उदय संभवै है। अर गुरुनिकी जायगा कुगुरुनिकौं सेए। तत्त्वश्रद्धानके कारण गुरु थे, तिनतैं प्रतिकूली भया। सो लज्जादिकतैं जानैं कारणविषै विपरीतिता उपजाई ताकै कार्यभूत तत्त्वश्रद्धानविषै दृढता कैसैं संभवै। तातैं तहां दर्शनमोहका उदय संभवै है। ऐसैं कुगुरुनिका निरूपण किया। अब कुधर्म्मका निरूपण कीजिए है—

जहां हिंसादिकपाप उपजैं वा विषयकषायनिकी वृद्धि होय, तहां धर्म मानिए, सो कुधर्म्म जानना। तहां यज्ञादिकक्रिया-निविषै महा हिंसादिक उपजावैं बड़े जीवनिका घात करै अर तहां इंद्रियनिके विषय पोषैं। तिन जीवनिविषै दुष्टबुद्धिकरि रौद्रध्यानी होय तीव्रलोभतैं औरनिका बुराकरि अपना कोई प्रयोजन साध्या चाहै ऐसा कार्यकरि तहां धर्म्म मानैं सो कुधर्म्म है। बहुरि तीर्थनिविषै वा अन्यत्र स्नानादिकार्य करै तहां बडे छोटे घने

जीवनिकी हिंसा होय शरीरकौं चैन उपजै, तातैं विषयपोषण होय, तातैं कामादिक बधै, कुतूहलादिककरि तहां कषायभाव बधावै बहुरि तहां धर्म्म मानै सो कुधर्म्म है। बहुरि संक्रांति, ग्रहण, व्यतीपातादिकविषै दान दे, वा खोटा ग्रहादिककै अर्थि दान दे, बहुरि पात्र जानि लोभीपुरुषनिकौं दान दे बहुरि दानविषै सुवर्ण हस्ती घोड़ा तिलआदि वस्तुनिकौं दान दे, सो संक्रांतिआदि पर्व धर्म्मरूप नाहीं। ज्योतिषी संचारादिककरि संक्रांतिआदि हो है। बहुरि दुष्टग्रहादिककै अर्थ दिया, तहां भय लोभादिकका आधिक्य भया। तातैं तहां दान देनैमैं धर्म्म नाहीं। बहुरि लोभीपुरुष देनेयोग्य पात्र नाहीं। जातैं लोभी नाना असत्ययुक्ति करि ठिगै हैं। किछू भला करते नाहीं। भला तौ तब होय, जब याका दानका सहायकरि वह धर्म्म साधै। सो वह तौ उलटा पापरूप प्रवर्त्तै। पापका सहाईका भला कैसैं होय। सो ही रयणसार शास्त्रविषै कह्या है—

सप्पुरिसाणं दाणं कप्पतरूणां फलाण सोहं वा ॥
लोहीणं दाणं जइ विमाणसोहा सवस्स जाणेह ॥ १ ॥

सत्पुरुषनिकौं दान देना, कल्पवृक्षनिके फलनिकी शोभा समान है अर सुखदायक है। बहुरि लोभीपुरुषनिकौं दान देना जो होय, सो शव जो मड्या ताका विमाण जो चक्रडोल ताकी शोभासमान जानहु। शोभा तौ होय, परंतु धनीकौ परमदुखदायक हो है। तातैं लोभीपुरुषनिकौं दान देनेमैं धर्म्म नाहीं। बहुरि द्रव्य तौ ऐसा दीजिए, जाकरि वाकै धर्म्म वधै। सुवर्ण हस्तीआदि

दीजिए, तिनकरि हिंसादिक उपजै वा मान लोभादिक वधै। ताकरि महापाप होय। ऐसी वस्तुनिका देनेवालाकौं पुण्य कैसैं होय। बहुरि विषयासक्त जीव रतिदानादिकविषै पुण्य ठहरावै हैं। सो प्रत्यक्ष कुशीलादि पाप जहां होय, तहांपुण्य कैसैं होय। अर युक्ति मिलावनेकौं कहैं, जो वह स्त्री सुख पावै है। तौ स्त्री तौ विषयसेवन किए सुख पावै ही पावै, शीलका उपदेश काहेकौं दिया। रतिसमयविना भी वाका मनोरथ अनुसार न प्रवर्त्तैं दुःख पावै। सो ऐसी असत् युक्ति बनाय विषयपोषनेका उपदेश देहैं। ऐसैं ही दयादान वा पात्रदानविना अन्य दान देय धर्म्म मानना सबै कुधर्म है।

बहुरि व्रतादिककरिकैं तहां हिंसादिक वा विषयादिक वधावै हैं। सो व्रतादिक तौ तिनका घटावनेकै अर्थि कीजिए है। बहुरि जहां अन्नका तौ त्याग करै अर कंदमूलादिकनिका भक्षण करै, तहां हिंसा विशेष भई—स्वादादिकविषय विशेष भए। बहुरि दिवसविषै तौ भोजन करैं नाहीं, अर रात्रिविषै करैं। सो प्रत्यक्ष दिवसभोजनतैं रात्रिभोजनविषै हिंसा विशेष भासै, प्रमाद विशेष होय। बहुरि व्रतादिकरि नाना श्रृंगार बनावैं, कुतूहल करैं, जुवाआदिरूप प्रवर्त्तैं, इत्यादि पापक्रिया करैं, बहुरि व्रतादिकका फल लौकिक इष्टकी प्राप्ति अनिष्टका नाशकौं चाहैं तहां कषायनिकी तीव्रता विशेष भई। ऐसैं व्रतादिकरि धर्म्म मानै हैं, सो कुधर्म्म है।

बहुरि भक्त्यादिकार्यनिविषै हिंसादिक पाप वधावैं, वा गीत

नृत्यादिक वा इष्ट भोजनादिक वा अन्य सामग्रीनिकरि विषयनिकौं पोषैं, कुतूहल प्रमादादिरूप प्रवर्तें। तहां पाप तौ बहुत उपजावैं, अर धर्म्मका किछू साधन नाहीं। तहां धर्म मानैं, सो सर्व कुधर्म है। बहुरि केई शरीरकौं तौ क्लेश उपजावैं अर तहां हिंसादिक निपजावैं, कषायादिरूप प्रवर्तें। जैसैं पंचाग्नि तापैं, सो अग्निकरि बड़े छोटे जीव जलैं, हिंसादिक वधै, यामैं धर्म कहा भया। बहुरि अधोमुख झूलैं, ऊर्ध्वबाहु राखै, इत्यादि साधनकरि तहां क्लेश ही होय। किछू ए धर्मके अंग नाहीं। बहुरि पवनसाधन करै तहां नेती धोती आदि कार्यनिविषै जलादिककरि हिंसादिक उपजै, चमत्कार कोई उपजै तातैं मानादिक वधै, किछू तहां धर्मसाधन नाहीं। इत्यादि क्लेश करैं, विषयकषाय घटावनेका कोई साधन करैं नाहीं। अंतरंगविषै क्रोध मान माया लोभका अभिप्राय है वृथा क्लेशकरि धर्म्म मानैं हैं, सो कुधर्म्म है। बहुरि केई इस लोकविषै दुख सह्या न जाय, वा परलोकविषै इष्टकी इच्छा वा अपनी पूजा बढ़ावनेके अर्थि वा कोइ क्रोधादिककरि अपघात करैं। जैसैं पतिवियोगतैं अग्निविषैं जलकरि सती कहावै है, वा हिमालय गलै है, काशीकरोत ले है, जीवित मारी ले है, इत्यादि कार्यकरि धर्म मानै हैं। सो अपघातका तौ बड़ा पाप है। शरीरादिकतैं अनुराग घट्या था, तौ तपश्चरणादि किया होता। मरि जाणेमैं कौन धर्म्मका अंग भया। जातैं अपघात करना कुधर्म्म है। ऐसैं ही अन्य भी घने कुधर्म्मके अंग हैं। कहां ताईं कहिए जहां विषय कषाय वधै, अर धर्म्म मानिए,

सो सर्व कुधर्म्म जानने। देखो कालका दोष, जैनधर्मविषै भी कुधर्म्मकी प्रवृत्ति भई। जैनमतविषै जे धर्म्मपर्व कहे हैं, तहां तौ विषयकषाय छोरि संयमरूप प्रवर्त्तना योग्य है। ताकौं तौ आदरै नाहीं। अर व्रतादिकका नाम धराय तहां नाना शृंगार बनावैं, वा गरिष्ठभोजनादि करैं, वा कुतूहलादि करैं, वा कषाय-वधावनेके कार्य करैं, जूवा इत्यादि महा पापरूप प्रवर्त्तैं।

वहुरि पूजानादि कार्यविषै उपदेश तौ यह था,—**सावद्य-लेशो बहुपुण्यराशौ दोषाय नालं**। पापका अंश बहुत पुण्यसमूहविषै दोषके अर्थ नाहीं। इस छलकरि पूजाप्रभावनादि कार्यनिविषै रात्रिविषै दीपकादिकरि वा अनंतकायादिकका संग्रह करि वा अयत्नाचार प्रवृत्तिकरि हिंसादिकरूप पाप तौ बहुत उपजावैं, अर स्तुति भक्ति आदि शुभपरिणामनिविषै प्रवर्तै नाहीं, वा थोरे प्रवर्तै, सो टोटा घना नफा थोरा, वा नफा किछू नाहीं। ऐसा कार्यकरनेमैं तौ बुरा ही दीखना होय। बहुरि जिनमंदिर तौ धर्म्मका ठिकाना है। तहां नाना कुकथा करनी, सोवना इत्यादिक प्रमादरूप प्रवर्त्तैं, वा तहां बाग वाड़ी इत्यादि बनाय विषयकषाय पोषै, बहुरि लोभी पुरुषनिकौं दानादिक दें, वा तिनकी असत्य स्तुतिकरि महंतपनो मानैं, इत्यादि प्रकारकरि विषयकषायनिकौं तौ वधावैं, अर धर्म्म मानैं, सो जिनधर्म्म तौ वीतराग-भावरूप है। तिसविषै ऐसी प्रवृत्ति कालदोषतैं ही देखिए है। याप्रकार कुधर्म्मसेवनका निषेध किया। अब इसविषै मिथ्यात्व-भाव कैसैं भया, सो कहिए है—

तत्वश्रद्धानविषै प्रयोजनभूत एक यह है रागादिक छोड़ना। इस ही भावका नाम धर्म्म है। जो रागादिक भावनिकौं वधाय धर्म्म मानैं, तहां तत्वश्रद्धान कैसैं रह्या। बहुरि जिनआज्ञातैं प्रतिकूली भया। बहुरि रागादिभाव तो पाप हैं। तिनकौं धर्म्म मान्या, सो यह झूठश्रद्धान भया। तातैं कुधर्म्म सेवनविषै मिथ्यात्वभाव है। ऐसैं कुदेव कुगुरु कुशास्त्रसेवनविषै मिथ्यात्वभावकी पुष्टता होती जानि, याका निरूपण किया। सो ही षट्पाहुड़विषै कह्या है--

कुच्छियदेवं धम्मं कुच्छियलिंगं च वंदए जोइ।
लज्जभयगारवदो मिच्छादिट्ठी हवे सो दु॥ १॥

जो लज्जातैं भयतैं बड़ाईतैं भी कुत्सित् देवकौं वा कुत्सित् धर्म्मकौं वा कुत्सित् लिंगकौं वंदे हैं, सो मिथ्यादृष्टी हो हैं। तातैं जो मिथ्यात्वका त्याग किया चाहै, सो पहलैं कुदेव कुगुरु कुधर्म्मका त्यागी होय। सम्यक्त्वके पचीस मलनिके त्यागविषै भी अमूढदृष्टि वा षडायतनविषै भी इनहीका त्याग कराया है। तातैं इनका अवश्य त्याग करना। बहुरि कुदेवादिकके सेवनतैं जो मिथ्यात्वभाव हो है, सो यह हिंसादिकपापनितैं महापाप है। याके फलतैं निगोद नरकादिपर्याय पाईए है। तहां अनंतकालपर्यंत महासंकट पाईए है। सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति महादुर्लभ होय जाय है। सो ही षट्पाहुडविषै (भाव पाहुड़में) कह्या है——

कुच्छियधम्मम्मि रओ, कुच्छियपासंडिभत्तिसंजुत्तो।
कुच्छियतवं कुणंतो कुच्छिय गइभायणो होई॥ १४०॥

जो कुत्सितधर्म्मविषै रत है, कुत्सित पाखंडीनिकी भक्तिकरि संयुक्त है, कुत्सित तपकौं करता है, सो जीव कुत्सित जो खोटी गति ताकौं भोगनहारा हो है। सो हे भव्य हो, किंचिन्मात्रलोभतैं वा भयतैं कुदेवादिकका सेवनकरि जातैं अनंतकालपर्यंत महा-दुःख सहना होय ऐसा मिथ्यात्वभाव करना योग्य नाहीं। जिन-धर्मविषै यह तौ आम्नाय है। पहलैं बड़ा पाप छुड़ाय पीछैं छोटा पाप छुड़ाया। सो इस मिथ्यात्वकौं सप्तव्यसनादिकतैं भी वड़ापाप-जानि पहलैं छुड़ाया है। तातैं जे पापके फलतैं डरैं हैं, अपने अत्माकौं दुखसमुद्रमैं न डुबाया चाहैं हैं, ते जीव इस मिथ्यात्वकौं अवश्य छोड़ो। निंदा प्रशंसादिकके विचारतैं शिथिल होना योग्य नाहीं। जातैं नीतिविषै भी ऐसा कह्या है—

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वास्तु मरणं तु युगान्तरे वा
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥ १ ॥

जै निंदै हैं तौ निंदौ, अर स्तवै हैं तौ स्तवो, बहुरि लक्ष्मी आवो वा जावो, वहुरि अब ही मरण होहु वा युगांतरविषै होहु, परंतु नीतिविषै निपुणपुरुष न्यायमार्गतैं पैंड़हू चलैं नाहीं। ऐसा न्याय विचारि निंदाप्रशंसादिकका भयतैं लोभादिकतैं अन्यायरूप मिथ्यात्वप्रवृत्ति करनी युक्त नाहीं। अहो, देव गुरु धर्म्म तौ सर्वोत्कृष्ट पदार्थ हैं इनकै आधार धर्म्म है। इनविषै शिथिलता राखैं अन्यधर्म्म कैसैं होय तातैं बहुत कहनेकरि कहा, सर्वथाप्रकार

कुदेव कुगुरु कुधर्म्मका त्यागी होना योग्य है। कुदेवादिकका त्याग न किए मिथ्यात्वभाव बहुत पुष्ट हो है। अर अबार यहां इनकी प्रवृत्ति विशेष पाईए है। तातैं इनका निषेधरूप निरूपण किया है। ताकौं जानि मिथ्यात्वभाव छोड़ि अपना कल्याण करो।

इति मोक्षमार्गप्रकाशकनाम शास्त्रविषै कुदेवकुगुरुकुधर्म्म-निषेधवर्णनरूप छठा अधिकार समाप्त भया ॥ ६ ॥

दोहा।

इस भवतरुको मूल इक, जानहु मिथ्याभाव।
ताकौं करि निर्मूल अब, करिए मोक्ष उपाव ॥ १ ॥

अथ,- जे जीव जैनी हैं, जिन आज्ञाकौं मानैं हैं, अर तिनकै भी मिथ्यात्व रहै है ताका वर्णन कीजिए है—जातैं इस मिथ्यात्ववैरीका अंश भी बुरा है, तातैं सूक्ष्ममिथ्यात्व भी त्यागने योग्य है। तहां जिन आगमविषै निश्चय व्यवहाररूप वर्णन है। तिन-विषै यथार्थका नाम निश्चय है। उपचारका नाम व्यवहार है। सो इनके स्वरूपकौं न जानते अन्यथा प्रवर्तैं हैं, सोई कहिए है—केई जीव निश्चयकौं न जानते निश्चयाभासके श्रद्धानी होय आपकौं मोक्षमार्गी मानैं हैं। अपने आत्माकौं सिद्धसमान अनुभवै हैं। सो आप प्रत्यक्ष संसारी हैं। भ्रमकरि आपकौं सिद्ध मानैं सोई मिथ्यादृष्टी है। शास्त्रनिविषै जो सिद्धसमान आत्माकौं कह्या है, सो द्रव्यदृष्टिकरि कह्या है, पर्याय अपेक्षा समान नाहीं हैं। जैसैं राजा अर रंक मनुष्यपनेकी अपेक्षा समान हैं, राजापना रंकपनाकी अपेक्षा तौ समान नाहीं। तैसैं सिद्ध अर संसारी जीवत्त्वपनेकी

अपेक्षा समान हैं, सिद्धपना संसारीपनाकी अपेक्षा तौ समान नाहीं। यह जैसें सिद्ध शुद्ध हैं, तैसें ही आपकौं शुद्ध मानै। सो शुद्ध अशुद्ध अवस्था पर्याय है। इस पर्यायअपेक्षा समानता मानिए, सो यह मिथ्यादृष्टि है। बहुरि आपकै केवलज्ञानादिकका सद्भाव मानै, सो आपकै तौ क्षयोपशमरूप मतिश्रुतादि ज्ञानका सद्भाव है। क्षायिकभाव तौ कर्म्मका क्षय भए हो हैं। यह भ्रमतैं कर्म्मका क्षय विना भए ही क्षायिकभाव मानै। सो यह मिथ्यादृष्टी है। शास्त्रनिविषै सर्वजीवनिका केवलज्ञानस्वभाव कह्या है, सो शक्तिअपेक्षा कह्या है। सर्वजीवनिविषै केवलज्ञानादिरूप होनेकी शक्ति है। वर्तमान व्यक्तता तौ व्यक्त भए ही कही। कोऊ ऐसा मानै है, आत्माके प्रदेशनिविषै तौ केवलज्ञान ही है; ऊपरि आवरणतैं प्रगट न हो है। सो यह भ्रम है। जो केवलज्ञान होय, तौ वज्रपटलादि आड़े होतैं भी वस्तुकौं जानै। कर्म्मके आड़े आए कैसैं अटकै। तातैं कर्म्मके निमित्ततैं केवलज्ञानकौं अभाव ही है। जो याका सर्वदा सद्भाव रहै तौ याकौं पारिणामिक भाव कहते, सो यह तौ क्षायिकभाव है। सर्वभेद जामैं गर्भित ऐसा चैतन्यभाव सो पारिणामिक भाव है। याकी अनेक अवस्था मतिज्ञानादिरूप वा केवलज्ञानादिरूप हैं, सो ए पारिणामिकभाव नाहीं। तातैं केवलज्ञानका सर्वदा सद्भाव न मानना। बहुरि जो शास्त्रनिविषै सूर्यका दृष्टान्त दिया है, ताका इतना ही भाव लेना, जैसैं मेघपटल होतैं सूर्यप्रकाश प्रगट न हो है, तैसैं कर्म्मउदय होतैं केवलज्ञान न हो है। बहुरि ऐसा भाव

न लेना, जैसैं सूर्यविषै प्रकाश रहै है, तैसैं आत्माविषै केवलज्ञान रहै है। जातैं दृष्टांत सर्वप्रकार मिलै नाहीं। जैसैं पुद्गलविषै वर्ण-गुण है, ताकी हरित पीतादि अवस्था हैं। सो वर्त्तमानविषै कोई अवस्था होतैं अन्य अवस्थाका अभाव ही है। तैसैं आत्माविषै चैतन्य गुण है, ताकी मतिज्ञानादिरूप अवस्था हैं। सो वर्त्तमान कोई अवस्था होतैं अन्य अवस्थाका अभाव ही है। बहुरि कोऊ कहै कि, आवरण नाम तौ वस्तुकौं आच्छादनेका है, केवलज्ञानका सद्भाव नाहीं हैं, तौ केवलज्ञानावरण काहेकौं कहो हौ ताका उत्तर—

यहां शक्ति है ताकौं व्यक्त न होने दे, ताकी अपेक्षा आवरण कह्या है। जैसैं देशचारित्रका अभाव होतैं शक्ति घातनेकी अपेक्षा अप्रत्याख्यानावरण कह्या; तैसैं जानना। बहुरि ऐसैं जानौ,— वस्तुविषै जो परनिमित्ततैं भाव होय, ताका नाम औपाधिकभाव है। अर परनिमित्तविना जो भाव होय, सो ताका नाम स्वभाव-भाव है। सो जैसैं जलकै अग्निका निमित्त होतैं, उष्णपनो भयो तहां शीतलपनाका अभाव ही है। परंतु अग्निका निमित्त मिटे शीतलता ही होय जाय। तातैं सदाकाल जलका स्वभाव शीतल कहिए। जातैं ऐसी शक्ति सदा पाइए है। बहुरि व्यक्त भए स्वभाव व्यक्त भया कहिए। कदाचित् व्यक्तरूप हो है। तैसैं आत्माकै कर्म्मका निमित्त होतैं अन्यरूप भया, तहां केवलज्ञानका अभाव ही है। परंतु कर्म्मका निमित्त मिटे सर्वदा केवलज्ञान होय जाय। तातैं सदाकाल आत्माका स्वभाव केवलज्ञान कहिए है।

जातैं ऐसी शक्ति सदा पाईए है । व्यक्त भए स्वभाव व्यक्त भया कहिए । बहुरि जैसैं शीतलस्वभावकरि उष्ण जलकौं शीतल मानि पानादि करै, तौ दाझना ही होय । तैसैं केवलज्ञानस्वभावकरि अशुद्ध आत्माकौं केवलज्ञानी मानि अनुभवै तौ दुखी ही होय । ऐसैं जे केवलज्ञानादिकरूप आत्माकौं अनुभवै हैं, ते मिथ्यादृष्टी हैं । बहुरि रागादिक भाव आपकै प्रत्यक्ष होतैं भ्रमकरि आत्माकौं रागादिरहित मानैं सो पूछिए है—ए रागादिक तौ होते देखिए है, ए किसद्रव्यके अस्तित्वविषै है । जो शरीर वा कर्मपुद्गलके अस्तित्वविषै होंय तौ ए भाव अचेतन वा मूर्त्तीक होंय । सो तो ए रागादिक प्रत्यक्ष चेतनता लिए अमूर्त्तीकभाव भासै हैं । तातैं ए भाव आत्माहीके हैं । सो ही समयसारके कलशविषै कह्या है—

कार्यत्वादकृतं न कर्म्म न च तज्जीवप्रकृत्योर्द्वयो-
रज्ञायाः प्रकृतेः स्वकार्यनुभवाभावान्न चेयं कृतिः ।
नैकस्याःप्रकृतेरचित्त्वलसनाज्जीवस्य कर्त्ता ततो
जीवस्यैव च कर्म्म तच्चिदनुगं ज्ञाता न वै पुद्गलः ॥ १ ॥

यह रागादिरूप भावकर्म्म है, सो काहूकरि किया नाहीं है तातैं यह कार्यभूत है । बहुरि जीव अर कर्म्मप्रकृति इन दोऊनिका भी कर्तव्य नाहीं । जातैं ऐसैं होय, तौ अचेतनकर्म्मप्रकृतिकै भी तिस भावकर्म्म फल सुख दुख ताकौं भोगना होय, सो असंभव है । बहुरि एकली कर्म्मप्रकृतिका भी यह कर्त्तव्य नाहीं । जातैं वाकै अचेतनपनो प्रगट है । तातैं इस रागादिकका जीव ही कर्त्ता है । अर सो रागादिक जीवहीका कर्म्म है । जातैं भावकर्म्म तौ

चेतनका अनुसारी है, चेतना विना न होय। अर पुद्गल ज्ञाता है नाहीं। ऐसैं रागादिकभाव जीवके अस्तित्वविषै हैं। जो रागादिक भावनिका निमित्त कर्म्महीकौं मानि आपकौं रागादिकका अकर्त्ता मानै हैं, सो कर्त्ता तौ आप अर आपकौं निरुद्यमी होय प्रमादी रहना, तातैं कर्म्महीका दोष ठहरावै हैं। सो यह दुखदायक भ्रम है। सोई समयसारका कलशाविषै कह्या है—

रागजन्मनि निमित्ततां परद्रव्यमेव कलयन्ति ये तु ते।
उत्तरन्ति न हि मोहवाहिनीं शुद्धबोधविधुरान्धबुद्धयः॥

जे जीव रागादिककी उत्पत्तिविषै परद्रव्यहीकौं निमित्तपनो मानै हैं, ते जीव भी शुद्धज्ञानकरि रहित हैं अंधबुद्धि जिनकी ऐसे होतसंतैं मोहनदीकौं नाहीं उत्तरैं हैं। बहुरि समयसारका 'सर्व-विशुद्धि अधिकार विषै जो, आत्माकौं अकर्त्ता मानै है, अर यह कहै है—कर्म्म ही जगावै सुवावै हैं, परघात कर्म्मतैं हिंसा है, वेदकर्म्मतैं अब्रह्म है, तातैं कर्म्म ही कर्त्ता है, तिस जैनीकौ सांख्यमती कह्या है। जैसैं सांख्यमती आत्माकौं शुद्ध मानि स्वच्छन्द हो है, तैसैं ही यह भया। बहुरि इस श्रद्धानतैं यह दोष भया, जो रागादिक अपने न जानै, आपकौ अकर्त्ता मान्या, तब रागादिक होनेका भय रह्या नाहीं, वा रागादिक मेटनेका उपाय रह्या नाहीं, तब स्वच्छंद होय खोटे कर्म बांधि अनंतसंसार-विषै रुलै है। यहां प्रश्न—जो समयसारविषैं ही ऐसा कह्या है—

वर्णाद्या वा रागमोहादयो वा
भिन्ना भावाः सर्व्व एवास्य पुंसः।

अर्थ-वर्णादिक वा रागादिकभाव हैं, ते सर्व ही इस आत्मातैं भिन्न हैं। बहुरि तहां ही रागादिककौं पुद्गलमय कहे हैं। बहुरि अन्य शास्त्रनिविषै भी रागादिकतैं भिन्न आत्माकौं कह्या है, सो कैसैं है ताका उत्तर—

रागादिकभाव परद्रव्यके निमित्ततैं उपाधिकभाव हो हैं। अर यह जीव तिनिकौं स्वभाव जानै है। जाकौं स्वभाव जानै, ताकौं बुरा कैसैं मानै, वा ताके नाशका उद्यम काहेकौं करै। सो यह श्रद्धान भी विपरीत है। ताके छुड़ावनेकौं स्वभावकी अपेक्षा रागदिककौं भिन्न कहे हैं। अर निमित्तकी मुख्यताकरि पुद्गलमय कहे हैं। जैसैं वैद्य रोग मेट्या चाहै है। जो शीतका अधिकार देखै, तौ उष्ण औषधि बतावै अर आतापका आधिक्य देखै, तौ शीतल औषधि बतावै। तैसैं श्रीगुरु रागादिक छुड़ाय चाहै है। जो रागादिक परका मानि स्वच्छन्द होय, निरुद्यमी होय, ताकौं उपादानकारणकी मुख्यताकरि रागादिक आत्माका है ऐसा श्रद्धान कराया। बहुरि जो रागादिक आपका स्वभाव मानि तिनिका नाशका उद्यम नाहीं करै है, ताकौं निमित्तकारणकी मुख्यताकरि रागादिक परभाव हैं, ऐसा श्रद्धान कराया है। दोऊ विपरीत श्रद्धानतैं रहित भए सत्यश्रद्धान होय, तब ऐसा मानै—ए रागादिक भाव आत्माका स्वभाव तौ नाहीं, कर्मके निमित्ततैं आत्माके अस्तित्वविषै विभावपर्याय निपजै हैं। निमित्त मिटे इनका नाश होतैं स्वभाव भाव रहि जाय है। तातैं इनके नाशका उद्यम करना।

यहां प्रश्न—जो कर्मका निमित्ततैं ए हो हैं, तौ कर्मका उदय रहै

तावत् विभाव दूरि कैसैं होय। तातैं याका उद्यम करना तौ निरर्थक है। ताका उत्तर—

एक कार्य होनेविषै अनेक कारण चाहिए है। तिनिविषै जे कारण बुद्धिपूर्वक होंय, तिनकौं तौ उद्यम करि मिलावै अर अबुद्धिपूर्वक कारण स्वयमेव मिलैं—तब कार्यसिद्धि होय। जैसैं पुत्र होनेका कारण बुद्धिपूर्वक तौ विवाहादिक करना है, अर अबुद्धिपूर्वक भवितव्य है। तहां पुत्रका अर्थी विवाहादिकका तौ उद्यम करै, अर भवितव्य स्वयमेव होय, तब पुत्र होय। तैसैं विभाव दूरि करनेके कारण बुद्धिपूर्वक तौ तत्त्वविचारादिक हैं अर अबुद्धिपूर्वक मोहकर्मका उपशमादिक हैं। सो ताका अर्थी तत्त्वविचारादिकका तौ उद्यम करै, अर मोहकर्मका उपशमादिक स्वयमेव होय, तब रागादिक दूरि होंय। यहां ऐसा कहै कि-जैसैं विवाहादिक भी भवितव्य आधीन हैं, तैसैं तत्वविचारादिक भी कर्मका क्षयोपशमादिककै आधीन हैं, तातैं उद्यम करना निरर्थक है ताका उत्तर—

ज्ञानावरणका तौ क्षयोपशम तत्वविचारादि करनेयोग्य तेरै भया है। याहीतैं उपयोगकौं यहां लगावनेका उद्यम कराइए है। असंज्ञी जीवनिकै क्षयोपशम नाहीं है, तौ उनकौं काहेकौं उपदेश दीजिए है। बहुरि वह कहै है—होनहार होय, तौ तहां उपयोग लागै, विना होनहार कैसैं लागै। ताका उत्तर—

जो ऐसा श्रद्धान है, तौ सर्वत्र कोई ही कार्यका उद्यम मति करै। तू खान पान व्यापारादिकका तौ उद्यम करै, अर यहां

होनहार बतावै। सो जानिए है, तेरा अनुराग यहां नाहीं। मानादिककरि ऐसी झूंठी वातैं बनावै है। याप्रकार जे रागादिक होतैं तिनकरि रहित आत्माकौं मानै हैं, ते मिथ्यादृष्टि जानने।

बहुरि कर्म नोमकर्मका संबंध होतैं आत्माकौं निर्बंध मानैं, सो प्रत्यक्ष इनका बंधन देखिए है। ज्ञानावरणादिकतैं ज्ञानादिकका घात देखिए है। शरीरकरि ताकै अनुसार अवस्था होती देखिए है। बंधन कैसैं नाहीं। जो बंधन न होय, तौ मोक्षमार्गी इनके नाशका उद्यम काहेकौं करैं। यहां कोऊ कहै—शास्त्रनिविषै आत्माकौं कर्म नोकर्मतैं भिन्न अवद्धस्पृष्ट कैसैं कह्या है। ताका उत्तर—

संबंध अनेक प्रकार हैं। तहां तादात्म्यसंबंधअपेक्षा आत्माकौं कर्म नोकर्मतैं भिन्न कह्या है। तहां द्रव्य पलटकरि एक नाहीं होय जाय हैं अर इस ही अपेक्षा अवद्धस्पृष्ट कह्या है। बहुरि निमित्तनैमित्तिकसंबंध अपेक्षा बंधन है ही। उनके निमित्ततैं आत्मा अनेक अवस्था धरै ही है। तातैं सर्वथा निर्बंध आपकौं मानना मिथ्यादृष्टि है। यहां कोऊ कहै-हमकौं तौ बंध मुक्तिका विकल्प करना नाहीं, जातै शास्त्रविषै ऐसा कह्या है—

"जो बंधउ मुक्कउ मुणइ, सो बंधई ण भंति।"

याका अर्थ—जो जीव बंध्या अर मुक्त भया मानै हैं, सो निःसदेह बंधै है। ताकौं कहिए है—

जे जीव केवल पर्यायदृष्टि होय, बंधमुक्त अवस्थाहीकौं

मानै हैं, द्रव्य स्वभावका ग्रहण नाहीं करै हैं, तिनकौं ऐसैं उपदेश दिया है, जो द्रव्यस्वभावकौं न जानता जीव बंध्या मुक्त मानै, सो बंध है। बहुरि जो सर्वथा ही बंधमुक्ति न होय, तौ सो जीव बंध है, ऐसा काहेकौं कहैं। अर बंधके नाशका मुक्त होनेका उद्यम काहेकौं करिए है। तातैं द्रव्यदृष्टिकरि एकदशा है। पर्यायदृष्टिकरि अनेक अवस्था हो हैं, ऐसा मानना योग्य है। ऐसैं ही अनेक प्रकारकरि केवल निश्चयनयका अभिप्रायतैं विरुद्ध श्रद्धानादिक करै हैं। जिनवानीविषै तौ नाना नयअपेक्षा कहीं। कैसा कहि कैसा निरूपण किया है। यह अपने अभिप्रायतैं निश्चयनयकी मुख्यताकरि जो कथन किया होय, ताहीकौं ग्रहिकरि मिथ्यादृष्टिकौं धारै है। बहुरि जिनवानीविषै तौ सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी एकता भए मोक्षमार्ग कह्या है। सो याकै सम्यग्दर्शन ज्ञानविषै सप्ततत्त्वनिका श्रद्धान वा जानना भया चाहिए। सो तिनका विचार नाहीं। अर चारित्रविषै रागादिक दूरि किया चाहिए, ताको उद्यम नाहीं। एक अपने आत्माकौं शुद्ध अनुभवना इसहीको मोक्षमार्ग मानि संतुष्ट भया है। ताका अभ्यास करनेकौं अंतरंगविषै ऐसा चिंतवन किया चाहै है—मैं सिद्धसमान शुद्ध हौं, केवलज्ञानादि सहित हौं, द्रव्यकर्म नोकर्म रहित हौं, परमानंदमय हौं, जन्ममरणादि दुःख मेरै नाहीं, इत्यादि चिंतवन करै है। सो यहां पूछिए है-यह चिंतवन जो द्रव्यदृष्टिकरि करो हौ, तौ द्रव्य तौ शुद्ध अशुद्ध सर्वपर्यायनिका समुदाय है। तुम शुद्ध ही अनुभव काहेकौं करौ हौ। अर

पर्यायदृष्टिकरि करो हौ, तौ तुम्हारै तौ वर्त्तमान अशुद्धपर्याय है। तुम आपाकौं शुद्ध कैसैं मानौ हो। बहुरि जो शक्तिअपेक्षा शुद्ध मानो हौ, तौ मैं ऐसा होनेयोग्य हौं, ऐसा मानौ। ऐसैं काहेकौं मानौं हौ। तातैं आपकौं शुद्धरूप चिंतवन करना भ्रम है। काहेतैं तुम आपकौं सिद्धसमान मान्या, तौ यह संसार अवस्था कौनकी है अर तुम्हारै केवलज्ञानादिक हैं, तौ ये मतिज्ञानादिक कौनके हैं। अर द्रव्यकर्म नोकर्मरहित हौ, तौ ज्ञानादिककी व्यक्तता क्यों नहीं। परमानंदमय हो, तौ अब कर्त्तव्य कहा रह्या। जन्म मरणादि दुःख ही नाहीं, तौ दुखी कैसैं होत हौ। तातैं अन्य अवस्थाविषै अन्य अवस्था मानना भ्रम है। यहां कोऊ कहै— शास्त्रविषै शुद्धचिंतवन करनेका उपदेश काहेकौं दिया है। ताका उत्तर—

एक तौ द्रव्यअपेक्षा शुद्धपना है, एक पर्यायअपेक्षा शुद्धपना है। तहां द्रव्यअपेक्षा तौ परद्रव्यतैं भिन्नपनौ वा अपने भावनितैं अभिन्नपनौ ताका नाम शुद्धपना हैं। अर पर्याय अपेक्षा उपाधिकभावनिका अभाव होना, ताका नाम शुद्धपना है सो शुद्धचिंतवनविषै द्रव्य अपेक्षा शुद्धपना ग्रहण किया है। सोई समयसारव्याख्याविषै कह्या है—

एष एवाशेषद्रव्यान्तरभावेभ्यो भिन्नत्वेनोपास्यमानः शुद्ध इत्यभिधीयते।

याका अर्थ—जो आत्मा प्रमत्त अप्रमत्त नाहीं है। सो यह ही समस्त परद्रव्यनिके भावनितैं भिन्नपनेकरि सेवा हुवा शुद्ध

ऐसा कहिए है। बहुरि तहां ही ऐसा कह्या—

समस्तकारकचक्रप्रक्रियोत्तीर्णनिर्मलानुभूतिमात्रत्वाच्छु—द्धः।

याका अर्थ—समस्त ही कर्त्ता कर्म आदि कारकनिका समूहकी प्रक्रियातैं पारंगत ऐसी जो निर्म्मल अनुभूति जो अभेदज्ञान तन्मात्र है, तातैं शुद्ध है। तातैं ऐसैं शुद्ध शब्दका अर्थ जानना। बहुरि ऐसैं ही केवल शब्दका अर्थ जानना। जो परभवतैं भिन्न निःकेवल आप ही ताका नाम केवल है। ऐसैं ही अन्य यथार्थ अर्थ अवधारना। पर्यायअपेक्षा शुद्धपनो मानैं, वा केवली आप मानै महाविपरीति होय। तातैं आपकौं द्रव्यपर्यायरूप अवलोकना। द्रव्यकरि सामान्यस्वरूप अवलोकना, पर्यायकरि अवस्थाविशेष अवधारना। ऐसैं ही चिंतवन किए सम्यग्दृष्टि हो है। जातैं सांचा अवलोके विना सम्यग्दृष्टी कैसैं नाम पावै बहुरि मोक्षमार्गविषै तौ रागादिक मेटनेका श्रद्धान ज्ञान आचरण करना है। सो तौ विचार ही नाहीं। आपका शुद्ध अनुभवनतैं ही आपकौं सम्यग्दृष्टी मानि अन्य सर्व साधनिका निषेध करै है, शास्त्राभ्यासकरना निरर्थक बतावै है, द्रव्यादिकका गुणस्थान मार्गणा त्रिलोकादिका विचारकौं विकल्प ठहरावै है, तपश्चरण करना वृथा क्लेश करना मानै है, व्रतादिकका करना बंधनमैं परना ठहरावै हैं, पूजना इत्यादि सर्वकार्यनिकौं शुभास्रव जानि हेय प्ररूपै है, इत्यादि सर्व साधनिकौं उठाय प्रमादी होय परिणमै है। सो शास्त्राभ्यास निरर्थक होय, तौ मुनिनकै भी तौ ध्यान अध्ययन

दोय ही कार्य मुख्य हैं। ध्यानविषै उपयोग न लागै, तब अध्यं-यनहीविषै उपयोगकूं लगावै है, अन्य ठिकाना बीचमैं उपयोग लगावने योग्य है नाहीं। बहुरि शास्त्रकरि तत्त्वनिका विशेष जाननेतैं सम्यग्दर्शन ज्ञान निर्मल होय है। बहुरि तहां यावत् उपयोग रहै, तावत् कषाय मंद रहै। बहुरि आगामी वीतरागभा-वनिकी वृद्धि होय। ऐसे कार्यकौं निरर्थक कैसैं मानिए। बहुरि वह कहै—जो जिनशास्त्रनिविषै अध्यात्मउपदेश है, तिनिका अभ्यास करना अन्य शास्त्रनिका अभ्यासकरि किछू सिद्धि नाहीं। ताकौं कहिए है—

जो तेरै सांची दृष्टि भई हैं तौ सर्व ही जैनशास्त्र कार्यकारी हैं। तहां भी मुख्यपनैं अध्यात्मशास्त्रनिविषै तौ आत्मस्वरूपका मुख्य कथन है। सो सम्यग्दृष्टी भए आत्मस्वरूपका तौ निर्णय होय चुकै, तब तौ ज्ञानकी निर्मलताकै अर्थि वा उपयोगकौं मंद-कषायरूप राखनेकै अर्थि अन्य शास्त्रनिका अभ्यास मुख्य चाहिए। अर आत्मस्वरूपका निर्णय भया है, ताका स्पष्ट राखनेकै अर्थि अध्यात्मशास्त्रनिका भी अभ्यास चाहिए। परंतु अन्य शास्त्रनिविषै अरुचि न चाहिए। जाकै अन्य शास्त्रनिकी अरुचि है ताकै अध्यात्मकी रुचि सांची नाहीं। जैसैं जाकै विषयासक्तपना होय, सो विषयासक्त पुरुषनिकी कथा भी रुचितैं सुनै वा विषयके विशेषकौं भी जानै, वा विषयके आचरननिविषै जो साधन होय, ताकौं भी हितरूप जानै वा विषयका स्वरूपकौं भी पहिचानै। तैसैं जाकै आत्मरुचि भई होय, सो आत्मरुचिके धारक तीर्थंकरा-

दिक तिनका पुराण भी जानै, बहुरि आत्माके विशेष जाननेकौं गुणस्थानादिककौं भी जानै, बहुरि आत्मआचरणविषै जे व्रता-दिक साधन हैं, तिनकौं भी हितरूप मानै, बहुरि आत्माके-स्वरूपकौं भी पहिचानै। तातैं च्यार्‍यौं ही अनुयोग कार्यकारी हैं। बहुरि तिनका नीका ज्ञान होनेकै अर्थि शब्दन्यायशास्त्रादिक भी जानना चाहिए। सो अपनी शक्तिके अनुसार थोरा वा बहुत अभ्यासकरना योग्य है। बहुरि वह कहै है, 'पद्मनंदिपच्चीसी' विषै ऐसा कह्या है—जो आत्मस्वरूपतैं निकसि बाह्य शास्त्रनिविषै बुद्धि विचरै हैं सो वह बुद्धि व्यभिचारणी है। ताका उत्तर—

यह सत्य कह्या है बुद्धि तौ आत्माकी है, ताकौं छोरि पर-द्रव्य शास्त्रनिविषै अनुरागिणी भई, ताकौं व्यभिचारिणी ही कहिए। परंतु जैसैं स्त्री शीलवती है, तौ योग्य ही है। अर न रह्या जाय, तौ उत्तमपुरुषकौं छोड़ि चांडालादिकका सेवन किए तौ अत्यंत निंदनीक होय। तैसैं बुद्धि आत्मस्वरूपविषै प्रवर्तै, तौ योग्य ही है। अर न रह्या जाय, तौ प्रशस्त शास्त्रादि परद्रव्यकौं छोरि अप्रशस्त विषयादिविषै लगै तौ महानिंदनीक ही होय। सो मुनिनिकै भी बहुत काल स्वरूपविषै बुद्धि रहै नाहीं, तौ तेरी कैसैं रह्या करै। तातैं शास्त्राभ्यासविषै बुद्धि लगावना युक्त है। बहुरि जो द्रव्यादिकका वा गुणस्थानादिकका विचारकौं विकल्प ठहरावै है, सो विकल्प तो है, परंतु निर्विकल्प उपयोग न रहै, तब इन विकल्पनिकौं न करै तौ अन्य विकल्प होय, ते बहुत रागादिगर्भित होय हैं। बहुरि निर्विकल्पदशा सदा रहै नाहीं।

जातैं छद्मस्थका उपयोग एकरूप उत्कृष्ट रहै तौ अंतर्मुहूर्त रहै। बहुरि तू कहैगा "मैं आत्मस्वरूपहीका चिंतवन अनेक प्रकार किया करूंगा; सो सामान्य चिंतवनविषै तौ अनेकप्रकार बनै नाहीं। अर विशेष करैगा, तब द्रव्य गुण पर्याय गुणस्थान मार्गणा शुद्ध अशुद्ध अवस्था इत्यादि विचार होयगा। बहुरि केवल आत्मज्ञान-हीतैं तौ मोक्षमार्ग होय नाहीं। सप्ततत्वनिका श्रद्धान ज्ञान भए, वा रागादिक दूरि किए मोक्षमार्ग होगा। सो सप्ततत्त्वनिका विशेष जाननेकौं जीव अजीवके विशेष वा कर्मके आस्रव बंधादिकका विशेष अवश्य जानना योग्य है जातैं सम्यग्दर्शन ज्ञानकी प्राप्ति होय। बहुरि तहां पीछैं रागादिक दूरि करनेसौं जे रागादिक बधावनेके कारण तिनिकौं छोड़ि जे रागादिक घटावनेके कारण होंय, तहां उपयोगकौं लगावना सो द्रव्यादिकका वा गुणस्थानादिकका विचार रागादिक घटावनेकौं कारण है। इनविषै कोई रागादिकका निमित्त नाहीं, तातैं सम्यग्दृष्टी भए पीछैं भी यहां ही उपयोग लगावना। बहुरि वह कहै है—रागादि मिटावनेकौं कारण होंय तिनविषै तौ उपयोग लगावना, परंतु त्रिलोकवर्त्ती जीवनिकी गति आदि विचार करना, वा कर्म्मका बंध उदयसत्तादिकका घणा विशेष जानना, वा त्रिलोकका आकार प्रमाणादिक जानना इत्यादि विचार कौन कार्यकारी है। ताका उत्तर—

इनकौं भी विचारतैं रागादिक बधते नाहीं। जातैं ए ज्ञेय याकै इष्ट अनिष्टरूप हैं नाहीं। तातैं वर्त्तमान रागादिककौं कारण नाहीं। बहुरि इनकौं विशेष जानै तत्त्वज्ञान निर्मल होय, तातैं

आगामी रागादिक घटावनेकौं ही कारण हैं। तातैं कार्यकारी हैं। बहुरि वह कहै है- स्वर्ग नरकादिककौं जानै तहां राग द्वेष हो है। ताका समाधान--

ज्ञानीकै तौ ऐसी बुद्धि होय नाहीं, अज्ञानीकै होय। जहां पाप छोड़ि पुण्यकार्यविषै लागै, तहां किछू रागादि घटै ही है। बहुरि वह कहै है---शास्त्रविषै ऐसा उपदेश है, प्रयोजनभूत थोरा ही जानना कार्यकारी है। तातैं विकल्प काहेकौं कीजिए। ताका उत्तर--

जे जीव अन्य बहुत जानैं, अर प्रयोजनभूतकौं न जानैं अथवा जिनकी बहुत जाननेकी शक्ति नाहीं, तिनकौं यह उपदेश दिया है। बहुरि जाकौं बहुत जाननेकी शक्ति होय, ताकौं तौ यह कह्या नाहीं जो बहुत जानै बुरा होगा। जेता बहुत जानैगा तेता ही प्रयोजनभूत जानना निर्मल होगा। जातैं शास्त्रविषैं ऐसा कह्या है--

सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान् भवेत्।

याका अर्थ—यह सामान्य शास्त्रैंत विशेष बलवान् है। विशेषहीतैं नीकै निर्णय हो है। तातैं विशेष जानना योग्य है। बहुरि वह तपश्चरणकौं वृथाक्लेश ठहरावै है। सो मोक्षमार्ग भए तौ संसारी जीवनितैं उलटी परणति चाहिए। संसारी जीवनिकै इष्ट अनिष्ट सामग्रीतैं रागद्वेष हो है, याकै रागद्वेष न चाहिए। तहां राग छोड़नेकै अर्थि इष्ट सामग्री भोजनादिकका त्यागी हो है। अर द्वेष छोडनेकै अर्थि अनिष्टसामग्री अनशनादिककौं अंगीकार

करै है। स्वाधीनपनैं ऐसा साधन होय, तौ पराधीन इष्ट अनिष्ट सामग्री मिले भी राग द्वेष न होय। सो चाहिए तौ ऐसैं, तेरै अनशनादिकतैं द्वेष भया। तातै ताकौं क्लेश ठहरावै है। जब यह क्लेश भया, तब भोजन करना स्वयमेव ही सुख ठहरया। तहां राग आया, सो ऐसी परिणति तौ संसारीनिकै पाईए ही हैं। तैं मोक्षमार्गी होय, कहा किया। बहुरि जो तू कहैगा, केई सम्यग्दृष्टी भी तपश्चरण नाहीं करै हैं। ताका उत्तर—

यह कारण विशेषतैं तप न होय सकै है। परन्तु श्रद्धान विषै तौ तपकौं भला जानै है ताके साधनका उद्यम राखै है। तेरे तौ श्रद्धान यह तप करना क्लेश है। बहुरि तपका तेरै उद्यम नाहीं तातैं तेरै सम्यग्दृष्टि कैसैं होय। बहुरि वह कहै है—शास्त्रविषै ऐसा कह्या है तप आदिक क्लेश करै हैं, तौ करो ज्ञानविना सिद्धि नाहीं। ताका उत्तर—

जे जीव तत्त्वज्ञानतैं तौ पराङ्मुख हैं अर तपहीतैं मोक्ष मानै हैं, तिनकौं ऐसा उपदेश दिया है। तत्त्वज्ञानविना केवल तपहीतैं मोक्ष न होय। बहुरि तत्त्वज्ञान भए रागादिक मेटनेकै अर्थि तपकरनेका तौ निषेध है नाहीं। जो निषेध होय, तौ गणधरादिक तप काहेकौं करैं। तातैं अपनी शक्तिअनुसार तप करना योग्य है। बहुरि वह तपादिककौं बंधन मानै है। सो स्वच्छन्दवृत्ति तौ अज्ञानअवस्थाहीविषै थी। ज्ञान पाए तौ परिणतिकौं रोकै ही है। बहुरि तिस परिणति रोकनेकै अर्थि बाह्य हिंसादिक कारणनिका त्यागीं अवश्य भया चाहिए। बहुरि वह कहै है—हमारै

परिणाम तो शुद्ध हैं बाह्य त्याग न किया, तो न किया । ताका उत्तर—

जे ए हिंसादिकार्य तेरे परिणामबिना स्वयमेव होते होंय, तौ हम ऐसैं मानैं । अर तू अपना परिणामकरि कार्य करै, तहां तेरे परिणाम शुद्ध कैसैं कहिए । विषयसेवनादिक क्रिया वा प्रमादगमनादि क्रिया परिणामबिना कैसैं होय । सो क्रिया तौ आप उद्यमी होय तू करै, अर तहां हिंसादिक होय ताकौं तू गिनै नाहीं, परिणाम शुद्ध मानै सो ऐसैं मानै तौ तेरे परिणाम अशुद्ध ही रहैंगे । बहुरि वह कहै है—परिणामनिकौं रोकै हू ए बाह्य हिंसादिक घटाईए । परंतु प्रतिज्ञाकरनेमैं बंध हो है, तातैं प्रतिज्ञारूप व्रत नाहीं अंगीकार करना । ताका समाधान—

जिस कार्यके करनेकी आशा रहै, ताकी प्रतिज्ञा न लीजिए है । अर आशा रहे तिसतैं राग रहै है । तिस रागभावतैं बिना कार्य किए भी अविरतिका बंध हुवा करै । तातैं प्रतिज्ञा अवश्य करनी युक्त है । बहुरि कार्यकरनेकौं बंधन भए बिना परिणाम कैसैं रुकैंगे । प्रयोजन पडै तद्रूपपरिणाम होंय ही होंय । वा बिना प्रयोजन पडै भी ताकी आशा रहै । तातैं प्रतिज्ञा करनी युक्त है बहुरि वह कहै है—न जानिए कैसा उदय आवै, पीछैं प्रतिज्ञाभंग होय, तौ महापाप लागै । तातैं प्रारब्ध अनुसार कार्य बनै, सो बनै प्रतिज्ञाका विकल्प न करना । ताका समाधान—

प्रतिज्ञा ग्रहण करतैं जाका निर्वाह होता न जानै, तिस प्रतिज्ञाकौं तौ करै नाहीं ! प्रतिज्ञा लेतैं ही यह अभिप्राय रहै, प्रयोजन पडै

छोड़ि द्योंगा, वह प्रतिज्ञा कौन कार्यकारी भई। अर प्रतिज्ञा ग्रहण करतैं तौ यह परिणाम है, मरणांत भए भी न छोडोंगा ऐसी प्रतिज्ञाकरनी युक्त ही है। विना प्रतिज्ञा किए अविरत संबंधी बंध मिटै नाहीं। बहुरि आगामी उदयकरि प्रतिज्ञा न लीजिए सो उदयकौं विचारें सर्व ही कर्त्तव्यको नाश होय। जैसैं आपकौं पचता जानै, तितना भोजन करै। कदाचित् काहूकै भोजनतैं अजीर्ण भया होय, तिस भयतैं भोजन छांड़ै तौ मरण ही होय। तैसैं आपकौं निर्वाह होता जानै, तितनी प्रतिज्ञा करै। कदाचित् काहूकै प्रतिज्ञातैं भ्रष्टपना भया होय तौ तिस भयतैं प्रतिज्ञा करनी छाड़ै तौ असंयम ही होय। तातै बनै सो प्रतिज्ञा लेनी युक्त है। बहुरि प्रारब्ध अनुसार तौ कार्य बनैं ही है, तू उद्यमी होय भोजनादि काहेकौं करै है। जो तहां उद्यम करै, तौ त्याग करनेका भी उद्यम करना युक्त ही है। जब प्रतिमावत् तेरी दशा होय जायगी, तब हम प्रारब्ध ही मानैंगे—तेरा कर्त्तव्य न मानैंगे। तातैं काहेकौं स्वच्छंद होनेकी युक्ति बनावै है। बनै सो प्रतिज्ञाकरि व्रत धारना योग्य है। बहुरि वह पूजनादि कार्यनिकौं शुभास्रव जानि हेय मानै है। सो यह सत्य है। परंतु जो इन कार्यनिकौं छोड़ि शुद्धोपयोगरूप होय तौ भलै ही है। अर विषय कषायरूप अशुभरूप प्रवर्त्तै, तौ अपना बुरा ही किया। शुभोपयोगतैं स्वर्गादि होय वा भली वासनातैं वा भला निमित्ततैं कर्मका स्थिति अनुभाग घटि जाय, तौ सम्यक्त्वादिककी भी प्राप्ति होय जाय। बहुरि अशुभोपयोगतैं नरक निगोदादि होय, वा बुरी

वासनातैं वा बुरा निमित्ततैं कर्म्मका स्थिति अनुभाग बधि जाय, तौ सम्यक्तादिक महा दुर्लभ होय जाय। बहुरि शुभोपयोगहीतैं कषाय मंद हो हैं। अशुभोपयोगतैं तीव्र हो है। सो मंदकषायका कारण छोरि तीव्रकषायका कारण तौ ऐसा है, जैसैं कड़वी वस्तु न खानी अर विष खाना। सो यह अज्ञानता है। बहुरि वह कहै है—शास्त्रविषै शुभ अशुभकौं समान कह्या है तातैं हमकौं तौ विशेष जानना युक्त नाहीं। ताका समाधान—

जे जीव शुभोपयोगकौं मोक्षका कारण मानि उपादेय मानै हैं, शुद्धोपयोगकौं नाहीं पहिचानै हैं, तिनकौं शुभ अशुभ दोऊनिकैं, अशुद्धताकी अपेक्षा वा बंधकारणकी अपेक्षा समान दिखाईए है, बहुरि शुभ अशुभनिका परस्पर विचार कीजिए, तौ शुभभावनिकै विषै कषायमंद हो है, तातैं बंध हीन हो है। अशुभभावनिविषै कषायतीव्र हो है, तातैं बंध बहुत हो है। ऐसैं विचार किए अशुभकी अपेक्षा सिद्धांतविषै शुभकौं भला भी कहिए। जैसैं रोग तौ थोरा वा बहुत बुरा ही है। परंतु बहुत रोगकी अपेक्षा थोरा रोगकूं भला भी कहिए। तातैं शुभोपयोग नाहीं होय, तब अशुभतैं छूटि शुभविषै प्रवर्त्तना युक्त है। शुभकौं छोरि अशुभविषै प्रवर्त्तना युक्त नाहीं। बहुरि वह कहै है—जो कामादिक वा क्षुधादिक मिटावनेकौं अशुभरूप प्रवृत्ति तौ भए विना रहती नाहीं, अर शुभप्रवृत्ति चाहिकरि करनी परै है। ज्ञानीकै चाहि चाहिए नाहीं। तातैं शुभका उद्यम नाहीं करना। ताका समाधान—

शुभप्रवृत्तिविषै उपयोग लागनेकरि वा ताके निमित्ततैं विरा-

गता वधनेकरि कामादिक हीन हो हैं। अर क्षुधादिकविषै भी संकलेश थोरा हो है । तातैं शुभोपयोगका अभ्यास करना। उद्यम किए भी जो कामादिक वा क्षुधादिक रहै, तौ ताकै अर्थि जैसैं थोरा पाप लागै, सो करना। बहुरि शुभोपयोगकौं छोड़ि निःशंक पापरूप प्रवर्त्तना तौ युक्त नाहीं। बहुरि तू कहै है— ज्ञानीकै चाहि नाहीं अर शुभोपयोग चाहि किए होय, सो जैसैं पुरुष किंचिन्मात्र भी अपना धन दिया चाहै नाहीं, परंतु जहां बहुत द्रव्य जाता जानै, तहां चाहिकरि स्तोक द्रव्य देनेका उपाय करै है। तैसैं ज्ञानी किंचिन्मात्र भी कषायरूप कार्य किया चाहै नाहीं। परंतु जहां बहुत कषायरूप अशुभकार्य होता जानै, तहां चाहिकरि स्तोक कषायरूप शुभकार्य करनेका उद्यम करै। ऐसैं यह बात सिद्ध भई—जहां शुद्धोपयोग होता जानै, तहां तौ शुभ-कार्यका निषेध ही है अर जहां अशुभोपयोग होता जानै तहां शुभकौं उपायकरि अंगीकार करना युक्त है। या प्रकार अनेक व्यवहारकार्यकौं उथापि स्वच्छंदपनाकौं स्थापै है, ताका निषेध किया अब तिस ही केवल निश्चयावलंबी जीवकी प्रवृत्ति दिखाइए है—

एक शुद्धात्माकौं जाने ज्ञानी होय है—अन्य किछू चाहिए नाहीं, ऐसा जानि कबहू एकांत तिष्ठकरि ध्यानमुद्रा धारि मैं सर्वकर्म्मउपाधिरहित सिद्धसमान आत्मा हौं, इत्यादि विचारकरि संतुष्ट हो है। सो ए विशेषण कैसैं संभवैं ? असंभव हैं, ऐसा विचार नाहीं। अथवा अचल अखंडित अनुपम आदि विशेषण-

निकरि आत्माकौं ध्यावै हैं, सो ए विशेषण अन्य द्रव्यनिविषै भी संभवै हैं। बहुरि ए विशेषण किस अपेक्षा हैं, सो विचार नाहीं। बहुरि कदाचित् सूता बैठ्या जिस तिस अवस्थाविषै ऐसा विचार राखि आपकौं ज्ञानी मानै है। बहुरि ज्ञानीकै आश्रव बंध नाहीं, ऐसा आगमविषै कह्या है। तातैं कदाचित् विषयकषायरूप हो है। तहां बंध होनेका भय नाहीं है। स्वच्छंद भया रागादिकरूप प्रवर्तै है। सो आपा परकौ जाननेका तौ चिह्न वैराग्यमात्र है, सो समयसारविषै कह्या है——

सम्यग्दृष्टेर्भवति नियतं ज्ञानवैराग्यशक्तिः।

याका अर्थ—— यह सम्यग्दृष्टीकै निश्चयसौं ज्ञानवैराग्यशक्ति होय। बहुरि कह्या है——

सम्यग्दृष्टिः स्वयमयमहं जातु बन्धो न मे स्या—
दित्युत्तानोत्पुलकवदना रागिणोप्याचरन्तु।
आलम्ब्यन्तां समितिपरतां ते यतोद्य पि पापाः
आत्मानात्मावगमविरहात्सन्ति सम्यक्त्वशून्याः॥ १ ॥

याका अर्थ-स्वयमेव यह मैं सम्यग्दृष्टी हौं, मेरै कदाचित् बंध नाहीं, ऐसैं ऊंचा फुलाया है मुख जिननैं ऐसे रागी वैराग्य-शक्तिरहित भी आचरण करै हैं, तौ करौ, बहुरि पंचसमितिकी सावधानीकौ अवलंबै हैं, तौ अवलंबौ, ज्ञानशक्ति विना अजहू पापी ही हैं। ए दोऊ आत्मा अनात्माका ज्ञानरहितपनातैं सम्यक्त्व-रहित ही हैं।

बहुरि पूछिए है ——परकौं पर जान्या, तौ परद्रव्यविषै रागादि

करनेका कहा प्रयोजन रह्या। तहां वह कहै है--मोहके उदयतैं रागादि हो हैं। पूर्वै भारतादि ज्ञानी भए, तिनिकै भी विषय कषायरूप कार्य भया सुनिए है। ताका उत्तर--

ज्ञानकै भी मोहके उदयतैं रागादिक हो हैं यह सत्य, परंतु बुद्धिपूर्वक रागादिक होते नाहीं। सो विशेष वर्णन आगै करैंगे बहुरि जाकै रागादि होनेका किछू विषाद नाहीं तिनिके नाशका उपाय नाहीं, ताकै रागादिक बुरे हैं ऐसा श्रद्धान भी नाहीं संभवै है। ऐसे श्रद्धानविना सम्यग्दृष्टी कैसैं होय। जीवाजीवादि तत्त्वनिके श्रद्धान करनेका प्रयोजन तौ इतना ही श्रद्धान है। बहुरि भरतादि सम्यग्दृष्टीनिकै विषय कषायनिकी प्रवृति जैसैं हो है, सो भी विशेष आगैं कहैंगे। तू उनका उदाहरणकरि स्वच्छंद होगा, तौ तेरै तीव्र आस्रव बंध होगा सो ही कह्या है--

मग्नाः ज्ञाननयैषिणोऽपि यदि ते स्वच्छन्दमन्दोद्यमाः।

याका अर्थ--यह ज्ञाननयके अवलोकनहारे भी जे स्वच्छंद मंदउद्यमी हो हैं, ते संसारविषैं बूड़े। और भी तहां "**ज्ञानिनः कर्म्म न जातु कर्त्तुमुचितं**"--इत्यादि कलशाविषै वा "**तथापि न निरर्गलं चरितुमिष्यते ज्ञानिनः**"--इत्यादि कलशाविषै स्वच्छंद होना निषेध्या है। विना चाहि जो कार्य्य होय सो कर्मबंधका कारण नाहीं। अभिप्रायतैं कर्त्ता होय करै अर ज्ञाता रहै, तौ बनैं नाहीं इत्यादि निरूपण किया है। तातैं रागादिक बुरे अहितकारी जानि तिनका नाशके अर्थ उद्यम राखना। तहां अनुक्रमविषै पहलैं तीव्ररागादि छोड़नेके अनेक अशुभ कार्य छोड़ि

शुभकार्यविषै लागना पीछैं मंदरागादि भी छोड़नेके अर्थ शुभकौं छोड़ शुद्धोपयोगरूप होना। बहुरि केई जीव व्यापारादि कार्य वा स्त्रीसेवनादि कार्यनिकौं भी घटावै हैं। बहुरि शुभकौं हेय जानि शास्त्राभ्यासादि कार्यनिविषै नाहीं प्रवर्त्तैं हैं। वीतरागभावरूप शुद्धोपयोगकौं प्राप्त भए नाहीं, ते जीव अर्थ काम धर्म्म मोक्षरूप पुरुषार्थतैं रहित होतसतैं आलसी निरुद्यमी हो हैं। तिनकी निंदा पंचास्तिकायकी व्याख्याविषै कीनी है। तिनकौं दृष्टांत दिया है—जैसैं बहुत खीर खांड़ खाय पुरुष आलसी हो है, वा जैसैं वृक्ष निरुद्यमी हैं, तैसैं ते जीव आलसी निरुद्यमी भए हैं। अब इनकौं पूछिए है —तुम बाह्य तौ शुभ अशुभ कार्यनिकौं घटाया, परंतु उपयोग तौ आलंबनविना रहता नाहीं, सो तुम्हारा उपयोग कहां रहै है, सो कहो। जो वह कहै—आत्माका चिंतवन करैं हैं तौ शास्त्रादिकरि अनेक प्रकारका आत्माका विचारकौं तौ तुम विकल्प ठहराया अर कोई विशेषण आत्माके जाननेमैं बहुत काल लागै नाहीं वारंवार एकरूप चिंतवनविषै छद्मस्थका उपयोग लागता नाहीं। गणधरादिकका भी उपयोग ऐसैं न रहि सकै, तातैं तेहू शास्त्रादि कार्यनिविषै प्रवर्त्तैं हैं। तेरा उपयोग गणधरादिकतैं भी शुद्ध भया कैसैं मानिए तातैं तेरा कहना प्रमाण नाहीं! जैसैं कोऊ व्यापारादिविषै निरुद्यमी होय ठाला जैसैं तैसैं काल गमावै तैसैं तू धर्म्मविषै निरुद्यमी होय प्रमादी यौं ही काल गमावै है। कबहू किछू चिंतवनसा करै, कबहू बातैं बनावै, कबहू भोजनादि करै, अपना उपयोग निर्मल करनेकौं

शास्त्राभ्यास तपश्चरण भक्तिआदि कार्यनिविषै प्रवर्त्तता नाहीं। सूनासा होय प्रमादी होनेका नाम शुद्धोपयोग ठहराय, तहां क्लेश थोरा होनेतैं जैसैं कोई आलसी होय पर्‌या रहनेमैं सुख मानै, तैसैं आनंद मानै है। अथवा जैसैं सुपनेविषै आपकौं राजा मानि सुखी होय, तैसैं आपकौं भ्रमतैं सिद्ध समान शुद्ध मानि आप ही आनंदित हो है। अथवा जैसैं कहीं रति मानि सुखी हो हैं, तैसैं किछू विचार करनेविषै रति मानि सुखी होय, ताकौं अनुभवजनित आनंद कहै हैं। बहुरि जैसैं कहीं अरति मानि उदास होय, तैसैं व्यापारादिक पुत्रादिककौं खेदका कारण जानि तिनतैं उदास रहैं है, ताकौं वैराग्य मानै है। सो ऐसा ज्ञान वैराग्य तौ कषायगर्भित है। जो वीतरागरूप उदासीन दशाविषै निराकुलता होय, सो सांचा आनंद ज्ञान वैराग्य ज्ञानी जीवनिकै चारित्रमोहकी हीनता भए प्रगट हो है। बहुरि वह व्यापारादि क्लेश छोड़ि यथेष्ट भोजनादिकरि सुखी हुवा प्रवर्तैं है। आपकौं तहां कषायरहित मानै है, सो ऐसैं आनंदरूप भए तौ रौद्रध्यान हो है। जहां सुखसामग्री छोड़ि दुखसामग्रीका संयोग भए संक्लेश न होय रागद्वेष न उपजै, तहां निःकषायभाव हो है। ऐसैं भ्रमरूप तिनकी प्रवृत्ति पाईए है। या प्रकार जे जीव केवल निश्चयाभासके अवलंबी हैं, ते मिथ्यादृष्टी जानने। जैसैं वेदाती वा सांख्यमतवाले जीव केवल शुद्धात्माके श्रद्धानी हैं, तैसैं ए भी जानने। जातैं श्रद्धानकी समानताकरि उनका उपदेश इनकौं इष्ट लागै है, इनका उपदेश उनकौं इष्ट लागै है। बहुरि तिन जीवनिकै ऐसा श्रद्धान

है--जो केवल शुद्धात्माका चिंतवनतैं तौ संवर निर्ज्जरा हो है वा मुक्तात्माका सुखका अंश तहां प्रगट हो है। बहुरि जीवके गुण-स्थानादि अशुद्ध भावनिका वा आप विना अन्य जीव पुद्गलादिकका चिंतवन किए आस्रव बंध हो है! तातैं अन्य विचारतैं पराङ्मुख रहै हैं। सो यह भी सत्य श्रद्धान नाहीं। जातैं शुद्ध स्वद्रव्यका चिंतवन करौ, वा अन्य चिंतवन करौ। जो वीतरागता लिए भाव, होय तौ तहां संवर निर्ज्जरा ही है। अर जहां रागादिरूप भाव हो तहां आस्रव बंध है। जो परद्रव्यके जानेहीतैं आस्रव बंध होय तौ केवली तौ समस्त परद्रव्यकौ जानैं हैं तिनिकै भी आस्रव बंध होय। बहुरि वह कहै है—जो छद्मस्थकै परद्रव्य चिंतवन होतैं आस्रव बंध हो है। सो भी नाहीं, जातैं शुक्लध्यानविषै भी मुनि-निकै छहों द्रव्यनिका द्रव्यगुणपर्यायनिका चिंतवन होना निरूपण किया है वा अवधिमनःपर्ययादिविषै परद्रव्यके जाननेकी विशेषता हो है। बहुरि चौथा गुणस्थानविषै कोई अपने स्वरूपका चिंतवन करै है, ताकै भी आस्रव बंध अधिक है, वा गुणश्रेणी निर्ज्जरा नाहीं है। पंचम षष्ठम गुणस्थानविषै आहार विहारादि क्रिया होतैं परद्रव्य चिंतवनतैं भी आस्रव बंध थोरा हो है वा गुण. श्रेणी निर्जरा हुवा करै है। तातैं स्वद्रव्य परद्रव्यका चिंतवनतैं निर्जरा बंध नाहीं। रागादिक घटे निर्जरा है, रागादिक भए बंध है। ताकौं रागादिकके स्वरूपका यथार्थ ज्ञान नाहीं, तातैं अन्यथा मानै है। तहां वह पूछै है कि, ऐसैं है तौ निर्विकल्पदशाविषै नयप्रमाण निक्षेपादिकका वा दर्शन ज्ञानादिकका भी विकल्प

करनेका निषध किया है, सो कैसें है। ताका उत्तर—

जे जीव इनही विकल्पनिविषैं लागि रहे है, अभेदरूप एक आपकौं नाहीं अनुभवै हैं, तिनकौं ऐसा उपदेश दिया है जो ए सर्व विकल्प वस्तुका निश्चयकरनेकौं कारन हैं। वस्तुका निश्चय भए इनका प्रयोजन किछू रहता नाहीं। तातैं इन विकल्पनिकौं भी छोड़ि अभेदरूप एक आत्माका अनुभव करना। इनके बिचाररूप विकल्पनिहीविषै फँसि रहना योग्य नाहीं। बहुरि वस्तुका निश्चय भए पीछैं ऐसा नाहीं, जो सामान्यरूप स्वद्रव्यहीका चिंतवन रह्या करै। स्वद्रव्यका वा परद्रव्यका सामान्यरूप वा बिशेषरूप जानना होय, परंतु वीतरागता लिए होय, तिसहीका नाम निर्विकल्पदशा है। तहां वह पूछै है—यहां तौ बहुत विकल्प भए, निर्विकल्पदशा कैसैं संभवै। ताका उत्तर —

निर्विचार होनेका नाम निर्विकल्प नाहीं है। तातैं छद्मस्थकै जानना विचार लिए है। ताका अभाव मानें ज्ञानका अभाव होय, तब जड़पना भया। सो आत्माके होता नाहीं। तातैं विचार तौ रहै। बहुरि जो कहिए एक सामान्यका ही विचार रहता है, विशेषका नाहीं। तौ सामान्यका विचार तौ बहुतकाल रहता नाहीं वा विशेषका अपेक्षाविना सामान्यका स्वरुप भासता नाहीं। बहुरि कहिए—आपहीका विचार रहता है, परका नाहीं तौ परविषै परबुद्धि भए विना आपविषै निजबुद्धि कैसैं आवै। तहां वह कहै है समयसारविषै ऐसा कह्या है—

भावयेद्भेदविज्ञानमिदमच्छिन्नधारया ।
तावद्यावत्पराच्च्युत्वा ज्ञानं ज्ञाने प्रतिष्ठिते ॥ १ ॥

याका अर्थ-यह भेदविज्ञान तावत् निरंतर भावना, यावत् परतैं छूटे ज्ञान है सो ज्ञानविषै स्थिति होय । तातैं भेदविज्ञान छूटैं परका जानना मिटि जाय है । केवल आपहीकौं आप जान्या करै है ।

सो यहां तौ यह कह्या है-पूर्वं आपा परकौं एक जाने था, पीछैं जुदा जाननेकौं-भेदविज्ञानकौं तावत् भावना ही योग्य है यावत् ज्ञान पररूपकौं भिन्न जानि अपने ज्ञानस्वरूपहीविषै निश्चित होय । पीछैं भेदविज्ञान करनेका प्रयोजन रह्या नाहीं । स्वयमेव परकौं पररूप आपकौं आपरूप जान्या करै है । ऐसा नाहीं, जो परद्रव्यका जानना ही मिटि जाय है । जातैं परद्रव्यका जानना वा स्वद्रव्यका विशेष जाननेका नाम विकल्प नाहीं है । तौ कैसे है, सो कहिए है—राग द्वेषके वशतैं किसी ज्ञेयके जाननेविषै उपयोग लगावना । ऐसैं वारंवार उपयोगकौं भ्रमावना। ताका नाम विकल्प है । बहुरि जहां वीतराग होय जाकौं जानैं है ताकौं यथार्थ जानै है । अन्य अन्य ज्ञेयके जाननेके अर्थि उपयोगकौं नाहीं भ्रमावे है । तहां निर्विकल्पदशा जाननी । यहां कोऊ कहै--छद्मस्थका उपयोग तौ नाना ज्ञेयनिषै भ्रमै ही भ्रमै । तहां निर्विकल्पता कैसैं संभवै है । ताका उत्तर----

जेतै काल एक जाननेरूप रहै, तेतै निर्विकल्प नाम पावै । सिद्धांतविषै ध्यानका लक्षण ऐसा ही किया है "एकाग्रचिंता-

निरोधो ध्यानम्" । एकका मुख्य चिंतवन होय अर अन्य चिंता रुकै, ताका नाम ध्यान है । सर्वार्थसिद्धि सूत्रांकी टीकाविषै यह विशेष कह्या है । जो सर्व चिंता रुकनेका नाम ध्यान होय, तौ अचेतनपनो होय जाय । बहुरि ऐसी भी विविक्षा है—जो संतान अपेक्षा नाना ज्ञेयका भी जानना होय । परंतु यावत् वीतरागता रहै, रागादिककरि आप उपयोगकौं भ्रमावै नाहीं, तावत् निर्विकल्पदशा कहिए है । बहुरि वह कहै-ऐसैं है, तौ परद्रव्यतैं छुड़ाय स्वरूपविषै उपयोग लगावनेका उपदेश काहेकौं दिया है । ताका समाधान—

जो शुभ अशुभ भावनिकौं कारण परद्रव्य हैं, तिनविषै उपयोग लगे जिनकै राग द्वेष होय आवै है, अर स्वरूपाचिंतवन करै तौ राग द्वेष घटै है, ऐसे नीचली अवस्थावारे जीवनिकौं पूर्वोक्त उपदेश है । जैसैं कोऊ स्त्री विकारभावकरि काहूकै घर जाय थी, ताकौं मनैं करी- परघर मति जाय, घरमैं बैठि रहौ । बहुरि जो स्त्री निर्विकार भावकरि काहूकै घर जाय, यथायोग्य प्रवर्तै, तौ किछू दोष है नाहीं । तैसैं उपयोगरूप परणति राग-द्वेषभावकरि परद्रव्यनिविषै प्रवर्तै थी, ताकौं मनैं करी—परद्रव्यनिविषै मति प्रवर्तै, स्वरूपविषै मग्न रहौ । बहुरि जो उपयोगरूप परणति वीतरागभावकरि परद्रव्यकौं जानि यथायोग्य प्रवर्तै, तौ किछू दोष है नाहीं । बहुरि वह कहै है--ऐसैं है, तौ महा मुनि परिग्रहादिक चिंतवनका त्याग काहेकौं करैं हैं । ताका समाधान--

जैसैं विकाररहित स्त्री कुशीलके कारण परघरनिका त्याग करै, तैसैं वीतरागपरणति राग द्वेषके कारण परद्रव्यनिका त्याग करै है। बहुरि जे व्यभिचारके कारण नाहीं, ऐसे परघर जानेका त्याग है नाहीं। तैसैं जे राग द्वेषके कारण नाहीं, ऐसे परद्रव्य जाननेका त्याग है नाहीं। बहुरि वह कहै है--जो जैसैं स्त्री प्रयोजन जानि पितादिककै घर जाय तौ जावो, विना प्रयोजन जिस तिसके घर जाना तौ योग्य नाहीं। तैसैं परिणतिकौं प्रयोजन जानि सप्ततत्त्वनिका विचार करना। विना प्रयोजन गुणस्थानादिकका विचार करना योग्य नाहीं। ताका समाधान--

जैसैं स्त्री प्रयोजन जानि पितादिक वा मित्रादिककै भी घर जाय, जैसैं परणति तत्त्वनिका विशेष जाननेकौं कारण गुणस्थानादिक कर्म्मादिककौं भी जानै। बहुरि यहां ऐसा जानना-जैसैं शीलवती स्त्री उद्यमकरि तौ विटपुरुषनिकै स्थान न जाय, अर परवश जाना बनि जाय, तौ तहां कुशील न सेवै, तौ स्त्री शीलवती ही है। तैसैं वीतरागपरणति उपायकरि तौ रागादिकके कारण परद्रव्यनिविषै न लागै। जो स्वयमेव तिनका जानना होय जाय, अर तहां रागादि न करै तौ परणति शुद्ध ही है। तैसैं स्त्री आदिकी परीषह मुनिनकै होय, तिनकौं जानैं ही नाहीं, अपनै स्वरूपहीका जानना रहै है, ऐसा मानना मिथ्या है। उनकौं जानै तौ है, परंतु रागादिक नाहीं करै है। या प्रकार परद्रव्यनिकौं जानतैं भी वीतरागभाव हो है, ऐसा श्रद्धान करना। बहुरि वह कहै है--ऐसैं है तौ शास्त्रविषै ऐसैं कैसैं कह्या है, जो

आत्माका श्रद्धान ज्ञान आचरण सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र है।
ताका समाधान—

अनादितैं परद्रव्यविषै आपका श्रद्धान ज्ञान आचरण था, ताकौं छुड़ावनेकौं यह उपदेश है; आपहीविषै आपका श्रद्धान ज्ञान आचरण भए परद्रव्यविषै रागद्वेषादिपरणतिका श्रद्धान वा ज्ञान वा आचरण मिटि जाय, तब सम्यग्दर्शनादि हो है। जो परद्रव्यका परद्रव्यरूप श्रद्धानादि करनेतैं सम्यग्दर्शनादि न होते होंय, तौ केवलीकैं भी तिनका अभाव होय। जहां परद्रव्यकौं बुरा जानना, निजद्रव्यकौं भला जानना, तहां तौ राग द्वेष सहज ही भया। तहां आपकौं आपरूप परकौं पररूप यथार्थ जान्या करैं, तैसैं ही श्रद्धानादिरूप प्रवर्तैं, तब ही सम्यग्दर्शनादि हो है। ऐसैं जानना। तातैं बहुत कहा कहिए, जैसैं रागादि मिटावनेका श्रद्धान होय, सो ही श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। बहुरि जैसैं रागादि मिटावनेका जानना होय, सो ही जानना सम्यक्ज्ञान है। बहुरि जैसैं रागादि मिटैं, सो ही आचरण सम्यक्चारित्र है। ऐसा ही मोक्षमार्ग मानना योग्य है। या प्रकार निश्चयनयका आभास लिए एकांतपक्षके धारी जैनाभास तिनकै मिथ्यात्वका निरूपण किया।

अब व्यवहाराभास पक्षके जैनाभासनिकै मिथ्यात्वका निरूपण कीजिए है—जिनआगमविषैं जहां व्यवहारकी मुख्यताकरि उपदेश है, ताकौं मानि बाह्यसाधनादिकहीका श्रद्धानादिक करै है, तिनिकै सर्व धर्मके अंग अन्यथारूप होय मिथ्याभावकौं प्राप्त होंय हैं।

यहां ऐसा जानि लेना–व्यवहारधर्मकी प्रवृत्तितैं पुण्यबंध होय है, तातैं पापप्रवृत्ति अपेक्षा तौ याका निषेध है नाहीं। परंतु इहां जो जीव व्यवहार प्रवृत्तिहीकरि सन्तुष्ट होइ, सांचा मोक्षमार्गविषै उद्यमी न होय है, ताकौं मोक्षमार्गविषै सन्मुख करनेकौं तिस शुभरूप मिथ्याप्रवृत्तिका भी निषेधरूप निरूपण कीजिए है। जो यहु कथन कीजिए हैं ताकौं सुनि जो शुभवृत्ति छोड़ि अशुभविषै प्रवृत्ति करौगे, तौ तुम्हारा बुरा होगा और जो यथार्थ श्रद्धानकरि मोक्षमार्गविषै प्रवृत्त होवौगे, तौ तुम्हारा भला होगा। जैसैं कोऊ रोगी निर्गुण औषधिका निषेध सुनि औषधि साधन छोड़ि कुपथ्य करैगा, तौ मरैगा, वैद्यका कछू दोष है नाहीं। तैसैं ही कोउ संसारी पुण्यरूप धर्मका निषेध सुनि धर्मसाधन छोड़ि विषय कषायरूप प्रवर्त्तैगा तौ वह ही नरकादिविषै दुख पावैगा। उपदेश दाताका तौ दोष नाहीं। उपदेश देनेवालेका अभिप्राय असत्य श्रद्धानादि छुड़ाय मोक्षमार्गविषै लगावनेका जानना। सो ऐसा अभिप्रायतैं इहां निरूपण कीजिए है। इहां कोई जीव तौ कुलक्रमकरि ही जैनी हैं, जैनधर्मका स्वरूप जानते नाहीं। परन्तु कुलविषै जैसी प्रवृत्ति चली आई, तैसैं प्रवर्त्तैं हैं। सो जैसैं अन्यमती अपने कुलधर्मविषै प्रवृत्तै हैं, तैसैं ही यहु प्रवृत्तै हैं। जो कुलक्रमहीतै धर्म होय, तौ मुसलमान आदि सर्व ही धर्मात्मा होंइ। जैनधर्मका विशेष कहा रह्या। सोई कह्या है—

लोयम्मि रायणीई णायं ण कुलकम्म कइयावि।
किं पुण तिलोयपहुणो जिणंदधम्माहिगारम्मि॥ १॥

लोकविषै यह राजनीति है- कदाचित् कुलक्रमकरि न्याय नाहीं होय है। जाका कुल चोर होय, ताकौं चोरकरि पकरै तौ वाका कुलक्रम जानि छोड़ै नाहीं, दंड ही दे। तौ त्रिलोक-प्रभु जिनेन्द्रदेवके धर्मका अधिकारविषै कहा कुलक्रम अनुसारि न्याय संभवै। बहुरि जो पिता दरिद्री होय आप धनवान् होय, तहां तौ कुलक्रम विचारि आप दरिद्री रहता ही नाहीं। धर्मविषै कुलका कहा प्रयोजन है। बहुरि पिता नरकि जाय, पुत्र मोक्ष जाय। तहां कुलक्रम कैसैं रह्या। जो कुल ऊपरि दृष्टि होय, तौ पुत्र भी नरकगामी होय। तातैं धर्मविषै किछू कुलक्रमका प्रयोजन नाहीं। शास्त्रनिका अर्थ विचारि जो काल-दोष तैं जिनधर्मविषै भी पापी पुरुषनिकरि कुदेव कुगुरु कुधर्म सेवनादिरूप वा विषयकषायपोषणादिरूप विपरीति प्रवृत्ति चलाई होइ, ताका त्याग करि जिनआज्ञा अनुसारि प्रवर्तना योग्य है। इहां कोऊ कहै—परंपरा छोड़ि नवीन मार्गविषै प्रवर्तना योग्य नाहीं। ताकौं कहिए है----

जो अपनी बुद्धिकरि नवीन मार्ग प्रवर्तै, तौ युक्त नाहीं। जो परंपरा अनादिनिधन जैनधर्मका स्वरूप शास्त्रनिविषै लिख्या है, ताकी प्रवृत्ति मेटि पापीपुरुषां अन्यथा प्रवृत्ति चलाई, तौ ताकौ परंपराय मार्ग कैसैं कहिए। बहुरि ताकौं छोड़ि पुरातन जैनशास्त्रनिविषै जैसा धर्म लिख्या था तैसे प्रवर्तै, तौ ताकौं नवीन मार्ग कैसैं कहिए। बहुरि जो कुलविषै जैसे जिन-देवकी आज्ञा है, तैसैं ही धर्मकी प्रवृत्ति है, तौ आपको भी

तैसैं ही प्रवर्त्तना योग्य है । परंतु ताका कुलाचरण जानना, धर्म जानि ताके स्वरूप फलादिकका निश्चय करि अंगीकार करना । जो सांचा भी धर्मको कुलाचार जानि प्रवर्तै हैं, तौ ताकौं धर्मात्मा न कहिए । जातैं सर्व कुलके उस आचरणको छोडैं, तौ आप भी छोड़ि दे । बहुरि जो वह आचरण करै है, सो कुलका भयकरि करै है । किछू धर्मबुद्धितैं नाहीं करै है । तातैं वह धर्मात्मा नाहीं । ऐसे विवाहादि कुलसंबंधी कार्यनिविषै तौ कुलक्रमका विचार करना और धर्मसंबंधी कार्यविषै कुलका विचार न करना । जैसैं धर्ममार्ग सांचा है, तैसैं प्रवर्तना योग्य है । बहुरि कोई आज्ञा अनुसारि जैनी हैं । जैसैं शास्त्रविषै आज्ञा है, तैसैं मानैं हैं । परन्तु आज्ञाकी परीक्षा करैं नाहीं । सो आज्ञा ही मानना धर्म होय, तौ सर्व मतवारे अपनें २ शास्त्रकी आज्ञा मानि धर्मात्मा होइ । तातैं परीक्षाकरि जिनवचनको सत्यपनो पहिचानि जिनआज्ञा माननी योग्य है । विना परीक्षा किए सत्य असत्यका निर्णय कैसैं होय । और विना निर्णय किए जैसैं अन्यमती अपनें २ शास्त्रनिकी आज्ञा मानैं हैं, तैसैं यानें जैनशास्त्रकी आज्ञा मानी । यहु तो पक्षकरि आज्ञा मानना है । कोउ कहै—शास्त्रविषै दश प्रकार सम्यक्त्वविषै आज्ञासम्यक्त्व कह्या है, वा आज्ञाविचयधर्मध्यानका भेद कह्या है, वा निःशंकित अंगविषै जिनवचनविषै संशय करना निषेध्या है, सो कैसे है ? ताका समाधान—

शास्त्रविषै केई कथन तौ ऐसे हैं, जिनका प्रत्यक्ष अनुमान

करि सकिए है। बहुरि केई कथन ऐसे हैं जो प्रत्यक्ष अनुमा-नादिगोचर नाहीं। तातैं आज्ञाहीकरि प्रमाण होय है। तहां नाना शास्त्रनिविषै जो कथन समान होय, तिनकी तौ परीक्षा करनेका प्रयोजन ही नाहीं। बहुरि जो कथन परस्परविरुद्ध होइ, तिनिविषै जो कथन प्रत्यक्ष अनुमानादिगोचर होय, तिनकी तौ परीक्षा करनी। तहां जिन शास्त्रके कथनकी प्रमाणता ठहरे, तिनि शास्त्रविषै जो प्रत्यक्ष अनुमानगोचर नाहीं, ऐसे कथन किए होंय, तिनकी भी प्रमाणता करनी। बहुरि जिन शास्त्रनिके कथन की प्रमाणता न ठहरै, तिनके सर्व हू कथनकी अप्रमाणता माननी। इहां कोऊ कहै—परीक्षा किए कोई कथन कोई शास्त्रविषै प्रमाण भासै, कोई कथन कोई शास्त्र विषै अप्रमाण भासै तौ कहा करिए। ताका समाधान—

जो आप्तके भासे शास्त्र हैं, तिनिविषै कोई ही कथन प्रमाण-विरुद्ध न होइ। जातै कै तौ जानपना ही न होइ, कै राग द्वेष होय, ते असत्य कहैं। सो आप्त ऐसा होय नाहीं, तातैं परीक्षा नीकी नाहीं कीनी है, तातैं भ्रम है। बहुरि वह कहै है-छद्मस्थकै अन्यथा परीक्षा होय जाय, तौ कहा करै। ताका समाधान—

सांची झूंठी दोऊ वस्तुनिकौं मीड़े अर प्रमाद छोड़ि परिक्षा किए तौ सांची ही परीक्षा होइ। जहां पक्षपातकरि नीकै परीक्षा न करै, तहां ही अन्यथा परीक्षा होय है। बहुरि वह कहै है, जो शास्त्रनिविषै परस्पर विरुद्ध कथन तो घने,—कौन २ की परीक्षा करिए। ताका समाधान—

मोक्षमार्गविषै देव गुरु धर्म वा जीवादि तत्व वा बंधमोक्षमार्ग प्रयोजनभूत हैं, सो इनकी परीक्षा करिलैनी। जिन शास्त्रनिविषै ए सांचे कहे तिनकी सर्व आज्ञा माननी। जिनविषै ए अन्यथा प्ररूपे तिनकी आज्ञा न माननी। जैसैं लोकविषै जो पुरुष प्रयोजनभूत कार्यनिविषै झूठ न बोलै, सो प्रयोजनरहितविषै कैसैं झूठ बोलैगा। तैसैं जिन शास्त्रनिविषै प्रयोजनभूत देवादिका स्वरूप अन्यथा न कह्या, तिनविषैं प्रयोजनरहित द्वीप समुद्रादिकका कथन अन्यथा कैसैं होगा जातैं देवादिकका कथन अन्यथा किए वक्ताके विषय कषाय पोखे जांय हैं। इहां प्रश्न --जो देवादिकका कथन तो अन्यथा विषयकषायतैं किया, तिन ही शास्त्रनिविषै अन्य कथन अन्यथा काहेकौं किया। ताका समाधान--

जो एक ही कथन अन्यथा कहै, वाका अन्यथापना शीघ्र ही प्रगट होय जाइ। जुदी पद्धती ठहरै नाहीं। तातैं घनै कथन अन्यथा करनैतैं जुदी पद्धती ठहरै। तहां तुच्छबुद्धी भ्रममें पड़ि-जाय----यह भी मत है। तातैं प्रयोजनभूतका अन्यथापनाका मेलनेके अर्थि अप्रयोजनभूत भी अन्यथा कथन घने किए। बहुरि प्रतीति अनावनेके अर्थि कोई २ सांचा भी कथन किया। परंतु स्याना होय, सो भ्रममैं परै नाहीं। प्रयोजनभूत कथनकी परीक्षाकरि जहां सांच भासै, तिस मतकी सर्व आज्ञा मानै, सो परीक्षा किए जैनमत ही सांचा भासै है। जातैं याका वक्ता सर्वज्ञ वीतराग है, सो झूंठा काहेकौं कहै। ऐसैं जिन आज्ञा मानै, सो सांचा श्रद्धान होइ, ताका नाम आज्ञासम्यक्त्व है। बहुरि जहां

एकाग्र चिन्तवन होय, ताका नाम आज्ञाविचय धर्मध्यान है। जो ऐसैं न मानिए अर विना परीक्षा किए आज्ञा माने सम्यक्त्व वा धर्मध्यान होय जाय, तौ द्रव्यलिंगी आज्ञा मानि मुनि भया, आज्ञाअनुसारि साधनकरि ग्रैवेयिक पर्यंत प्राप्त होय, ताकै मिथ्यादृष्टिपना कैसैं रह्या। तातैं किछू परीक्षाकरि आज्ञा माने ही सम्यक्त्व वा धर्मध्यान होय है। लोकविषै भी कोई प्रकार परीक्षा किए पुरुषकी प्रतीति कीजिए है। वहुरि तैं कह्या—जिन-वचनविषै संशय करनेतैं सम्यक्त्वको शंका नाम दोष होय, सो 'न जानिए यह कैसैं है', ऐसा मानि निर्णय न कीजिए तो तहां शंका नाम दोष होय। वहुरि जहां निर्णय करनेको विचार करते ही सम्य-क्त्वको दोप लागै, तौ **अष्टसहस्री**विषै आज्ञाप्रधानतैं परीक्षाप्रधानको उत्तम काहेकौं कह्या। पृच्छना आदि स्वाध्यायके अंग कैसैं कहे। प्रमाण नयतैं पदार्थनिका निर्णय करनेका उपदेश काहेकौं दिया। तातैं परिक्षाकरि आज्ञा माननी योग्य है। बहुरि केई पापी पुरुषां अपना कल्पित कथन किया है अर तिनिकौं जिनवचन ठहरावै हैं, तिनिकौं जैनमतका शास्त्र जानि प्रमाण न करना। तहां भी प्रमाणादिकतैं परीक्षाकरि वा परस्पर शास्त्रनतैं विधि मिलाय वा ऐसैं संभव है कि नाहीं, ऐसा विचारकरि विरुद्ध अर्थको मिथ्या ही जानना। जैसे ठिग आप पत्र लिखि तामैं लिखनवारेका नाम किसी साहूकारका धरया, नामके भ्रमतैं धनको ठिगावै, तौ दारिद्री ही होय। तैसैं पापी आप ग्रंथादि वनाया, तहां कर्ताका नाम जिन गणधर आचार्यनिका धरया, तिस नामके भ्रमतैं झूंठा श्रद्धान करै

तौ मिथ्यादृष्टी ही होय । बहुरि वह कहै है —**गोमटसारविषै** ऐसा कह्या है--सम्यग्दृष्टी जीव अज्ञानगुरुकै निमित्ततैं झूठा भी श्रद्धान करै, तौ आज्ञा माननेतैं सम्यग्दृष्टी होय है । सो यह कथन कैसैं किया है । ताका उत्तर—जो प्रत्यक्ष अनुमानादि-गोचर नाहीं, सूक्ष्मपनैंतैं जिनका निर्णय न होइ सकै, तिनिकी अपेक्षा यह कथन है । मूलभूत देव गुरु धर्मादि वा तत्त्वादिकका अन्यथा श्रद्धान भए, तौ सर्वथा सम्यक्त्व रहै नाहीं, यहु निश्चय करना । तातैं विना परीक्षा किए केवल आज्ञाहीकरि जैनी, हैं, ते भी मिथ्यादृष्टी जानने । बहुरि केई परीक्षा भी करि जैनी होय हैं, परंतु मूल परीक्षा नाहीं करै हैं दया शील तप संयमादि क्रियानिकरि वा पूजा प्रभावनादि कार्यनिकरि वा अतिशय चमत्कारादिकरि वा जिनधर्मतैं इष्ट प्राप्ति होनेकरि जिनमतकौं उत्तम जानि प्रीतवंत होय जैनी होय हैं । अन्यमतविषै हू ए कार्य तौ होय हैं, तातैं इन लक्षणनिविषै अतिव्याप्ति पाइए है । कोऊ कहै—जैसैं जिनधर्मविषै ए कार्य हैं, तैसैं अन्यमतविषै न पाइए है। तातैं अतिव्याप्ति नाहीं । ताका साधन—

यह तौ सत्य है, ऐसैं ही है । परंतु जैसैं तू दयादिक मानै है तैसैं तौ वै भी निरूपै हैं । परजीवनिकी रक्षाकौं दया तू कहै, सो ही वे कहै हैं । ऐसैं ही अन्य जानने ।

बहुरि वह कहै---उनकै ठीक नाहीं । कबहू दया प्ररूपैं, कबहूं हिंसा प्ररूपैं । ताका उत्तर--तहां दयादिकका अंशमात्र तौ आया । तातैं अतिव्याप्तिपना इनि लक्षणनिकरि पाइए है । इनि-

करि सांची परीक्षा होय नाहीं। तौ कैसैं होय। जिनधर्मविषै सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र मोक्षमार्ग कह्या है। तहां सांचे देवादिकका वा जीवादिका श्रद्धान किए सम्यक्त्व होय, वा तिनिकौं जाने सम्यग्ज्ञान होइ, वा सांचा रागादिक मिटैं सम्यक्चारित्र होइ, सो इनिका स्वरूप जैसैं जिनमतविषैं निरूपण किया है, तैसैं कहीं निरूपण किया नाहीं। वा जैनीविना अन्यमती ऐसा कार्य करि सकते नाहीं। तातैं यहु जिनमतका सांचा लक्षण है। इस लक्षणकौं पहचानि जे परीक्षा करैं, तेई श्रद्धानी हैं। इनं विना अन्य प्रकारकरि परीक्षा करै हैं, ते मिथ्यादृष्टी ही रहै हैं।

बहुरि केई संगतिकरि जैनधर्म धारै हैं। कोई महान्पुरुषको जिनधर्मविषै प्रवर्त्तता देखि आप भी प्रवर्तै हैं। केई देखा देखी जिनधर्मकी शुद्ध वा अशुद्ध क्रियानिविषै प्रवर्तै हैं। इत्यादि अनेकप्रकारके जीव आप विचारकरि जिनधर्मका रहस्य नाहीं पहिचानै हैं अर जैनी नाम धरावै हैं, ते सर्व मिथ्यादृष्टी ही जानने। इतना तौ है, जिनमतविषै पापकी प्रवृत्ति विशेष नाहीं होय सकै है अर पुण्यके निमित्त घने हैं। अर सांचा मोक्षमार्गके भी कारण तहां बनि रहे हैं। तातैं जे कुलादिकरि भी जैनी हैं, ते भी औरनितैं तौ भले ही हैं बहुरि जे जीव कपटकरि आजीवकाके अर्थि वा बड़ाईके अर्थि वा किछू विषयकषायसंबंधी प्रयोजनविचारि जैनी हो हैं, ते पापी ही हैं। अति तीव्रकषाय भए ऐसी बुद्धि आवै है। उनका सुलझना भी कठिन है। जैनधर्म तौ संसारका नाशिके अर्थि सेवै है। ताकरि जो संसारके

प्रयोजन साध्या चाहै, सो बड़ा अन्याय करै हैं। तातैं ते तौ मिथ्यादृष्टि हैं ही।

इहां कोऊ कहै—हिंसादिककरि जिन कार्यनिकौं करिए, ते कार्य धर्मसाधनकरि सिद्ध कीजिए, तौ बुरा कहा भया। दोऊ प्रयोजन सधै। ताकौं कहिए है—पापकार्य अर धर्मकार्यका एक साधन किए पाप ही होय। जैसें कोऊ धर्मका साधन चैत्यालय बनाय, तिसहीकौं स्त्रीसेवनादि पापनिका भी साधन करै, तौ पाप ही होइ। हिंसादिककरि भोगादिकके अर्थि जुदा मंदिर बनावै, तौ बनावौ। परंतु चैत्यालयविषै भोगादि करना युक्त नाहीं। तैसें धर्मका साधन पूजा शास्त्रादि कार्य हैं, तिनिहीकौं आजीविका आदि पापका भी साधन करै, तौ पापी ही होय। हिंसादिकरि आजीविकादिकके अर्थि व्यापारादि करै, तौ करौ। परंतु पूजादि कार्यनिविषै तौ आजीविका आदिका प्रयोजन विचारना युक्त नाहीं। इहां प्रश्न—जो ऐसें है तौ मुनि भी धर्मसाधि परघर भोजन करैं हैं वा साधर्मीका उपकार करैं करावैं है, सो कैसें बनै। ताका उत्तर—

जो आप किछू आजीविका आदिका प्रयोजन विचारि धर्म नाहीं साधै है, आपकौं धर्मात्मा जानि केइ स्वयमेव भोजन उपकारादि करै हैं, तौ किछू दोष है नाहीं। बहुरि जो आप ही भोजनादिकका प्रयोजन विचारि धर्म साधै है, तो पापी है ही। जे विरागी होय मुनिपनो अंगीकार करै हैं, तिनिकै भोजनादिकका प्रयोजन नाहीं। शरीरकी स्थितिके अर्थि स्वयमेव भोजनादिक

कोई दे तौ लें, नाहीं तौ समता राखें। संक्लेशरूप होय नाहीं। बहुरि आप हितकै अर्थि धर्म साधै है। उपकार करावनेका अभिप्राय नाहीं है। आपकै जाका त्याग नाहीं, ऐसा उपकार करावैं। कोई साधर्मी स्वयमेव उपकार करै, तौ करौ अर न करै तौ आपकै किछू संकलेश होता नाहीं। सो ऐसैं तौ योग्य हैं। अर आप ही आजीविका आदिका प्रयोजन विचारि बाह्य धर्मका साधन करै तहां भोजनादिक उपकार कोई न करै तहां संक्लेश करै, याचना करै, उपाय करै, वा धर्मसाधनविषै शिथिल होय जाय, सो पापी ही जानना। ऐसैं संसारिक प्रयोजन लिए धर्म साधै हैं ते पापी भी हैं अर मिथ्यादृष्टि हैं ही। याप्रकार जिनमतवाले भी मिथ्यादृष्टि जानने। अब इनकै धर्मका साधन कैसैं पाइए है, सो विशेष दिखाइए है—

तहां जीव कुलप्रवृत्तिकरि वा देख्यां देखी लोभादिकका अभिप्रायकरि धर्म साधै हैं, तिनकै तौ धर्मदृष्टि नाहीं। जो भक्ति करै है तौ चित्त तौ कहीं है, दृष्टि फिरया करै है। अर मुखतै पाठादि करै है वा नमस्कारादि करै है। परंतु यह ठीक नाहीं - मैं कौन हौं, किसकी स्तुति करूं हूं, किस प्रयोजनके अर्थि स्तुति करौं हौं, पाठविषै कहा अर्थ है, सो किछू ठीक नाहीं। बहुरि कदाचित् कुदेवादिककी भी सेवा करने लगि जाय। तहां सुदेव गुरुशास्त्रादिविषै विशेष पहिचानै नाहीं। बहुरि जो दान दे है, तौ पात्र अपात्रका विचाररहित जैसैं अपनी प्रशंसा होय, तैसैं दान दे है। बहुरि तप करै है, तौ भूखा रहनेकरि महंतपनौ

होय सो कार्य करै है। परिणामिनकी पहिचान नाहीं। बहुरि व्रतादिक धारै है, तहां बाह्यक्रिया ऊपरि दृष्टि है। सो भी कोई सांची क्रिया करै हैं, कोई झूंठी करै है। अर अंतरंग रागादिक भाव पाइए है, तिनिका विचार ही नाहीं। वा बाह्य भी रागादि पोषनेका साधन करै है। बहुरि पूजा प्रभावना आदि कार्य करै है। तहां जैसैं लोकविषै बड़ाई होय वा विषय कषाय पोषे जांय तैसैं कार्य करै है। बहुरि बहुत हिंसादिक निपजावै है। सो ए कार्य तौ अपना वा अन्य जीवनिका परिणाम सुधारनेके अर्थि कहे हैं। बहुरि तहां किंचित् हिंसादिक भी निपजै है, तौ थोरा अपराध होय गुण बहुत होय, सो कार्य करना कह्या है। सो परिणामनिकी पहचानि नाहीं। अर यहां अपराध केता लागै है, गुण केता हो है, सो नफा टोटाका ज्ञान नाहीं, वा विधि अविधिका ज्ञान नाहीं। बहुरि शास्त्राभ्यास करै है। तहां पद्धतिरूप प्रवर्तै है। जो वांचै है, तौ औरनिकौं सुनाय दे है। जो पढ़ै है, तौ आप पढ़ि जाय है। सुनै है तौ, कहै है सो सुनि ले है। जो शास्त्राभ्यासका प्रयोजन है, ताकौं आप नाहीं अवधारै है। इत्यादि धर्मकार्यनिका धर्मकौं नाहीं पहिचानै। केई तौ कुलविषै जैसैं बड़े प्रवर्तै, तैसैं हमकौं भी करना, अथवा और करै हैं, तैसैं हमकौं भी करना, वा ऐसैं किए हमारा लोभदिककी सिद्धि होगी, इत्यादि विचार लिए अभूतार्थ धर्मको साधै हैं। बहुरि केई जीव ऐसे हैं, जिनकै किछू तौ कुलादिरूप बुद्धि है, किछू धर्मबुद्धि भी है, तातैं पूर्वोक्तप्रकार भी धर्मका साधन करै

हैं। अर किछू आगैं कहिए है, तिस प्रकार अपने परिणामनिकौं भी सुधारै हैं। मिश्रपनो पाईए है। बहुरि केई धर्म्मबुद्धिकरि धर्म्म साधै हैं। परंतु निश्चयधर्म्मकौं न जानै हैं। तातैं अभूतार्थ धर्मकौं साधै हैं। तहां व्यवहार सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्रकौं मोक्षमार्ग जानि तिनिका साधन करै हैं। तहां शास्त्रविषै देव गुरु धर्म्मकी प्रतीति लिए सम्यक्त्व होना कह्या है। ऐसी आज्ञा मानि अरहंत देव निर्ग्रंथ गुरु जैनशास्त्र विना औरनिकौं नमस्कारादि करनेका त्याग किया है। परंतु तिनका गुण अवगुणकी परीक्षा नाहीं करै हैं। अथवा परीक्षा भी करैं, तौ तत्वज्ञानपूर्वक सांची परीक्षा नाहीं करै हैं। बाह्यलक्षणनिकरि परीक्षा करै हैं। ऐसैं प्रतीतिकरि सुदेव गुरु शास्त्रनिकी भक्तिविषै प्रवर्त्तै हैं। तहां अरहंत देव है, सो इंद्रादिकरि पूज्य है अनेक अतिशयसहित हैं, क्षुधादिदोषरहित है, शरीरकी सुंदरताकौं धरै है, स्त्रीसंगमादि रहित है, दिव्यध्वनिकरि उपदेश दे है, केवलज्ञानकरि लोकालोक जानै है, काम क्रोधादि नष्ट किए हैं, इत्यादि विशेषण कहै है। तहां इनविषै केई विशेषण पुद्गलके आश्रय हैं, केई जीवके आश्रय हैं। तिनकौं भिन्न भिन्न नाहीं पाहिचानै है। जैसैं असमानजातीय मनुष्यादि पर्यायनिविषै भिन्न न जानि मिथ्यादृष्टि धरै है, तैसैं यह असमान जातीय अरहंतपर्यायविषै जीव पुद्गलके विशेषणनिकौं भिन्न न जानि मिथ्यादृष्टिता धरै है। बहुरि जो बाह्य विशेषण हैं, तिनकौं तौ जानि तिनकरि अरहंतदेवको महंतपनो विशेष मानै है। अर जे जीवके विशेषण हैं, तिनकौं

यथावत् न जानि तिनकरि अरहंतदेवको महंतपनो आज्ञा अनुसार मानै है। अथवा अन्यथा मानै है। जातैं यथावत् जीवको विशेषण जाने मिथ्यादृष्टी रहै नाहीं। बहुरि तिन अरहंतनिकौं स्वर्गमोक्षका दाता, दीनदयाल अधमउधारक पतितपावन मानै है। सो अन्यमती कर्तृत्वबुद्धितैं ईश्वरकौं जैसैं मानै है, तैसैं यह अरहंतकौं मानै है। ऐसा नाहीं जानै है–फल तौ अपने परिणामनिका लागै है, अरहंतनिकौं निमित्त मानै हैं, तातैं उपचारकरि वै विशेषण संभवै हैं। अपने परिणाम शुद्ध भए विना अरहंत हू स्वर्गमोक्षादिका दाता नाहीं। बहुरि अरहंतादिकके नामादिकतैं श्वानादिक स्वर्ग पाया। तहां नामादिकका ही अतिशय मानै हैं विना परिणाम नाम लेनेवालेकैं भी स्वर्गकी प्राप्ति न होय, तौ सुननेवालेकैं कैसैं होय। श्वानादिककैं नाम सुननेके निमित्ततैं मंदकषायरूप भाव भए हैं। तिनका फल स्वर्ग भया है। उपचार करि नामहीकी मुख्यता करी है। बहुरि अरहंतादिकके नाम पूजनादिकतैं अनिष्ट सामग्रीका नाश इष्ट सामग्रीकी प्राप्ति मानि रोगादि मेटनेके अर्थि वा धनादिकी प्राप्तिके अर्थि नाम ले है वा पूजनादि करै है। सो इष्ट अनिष्टके तौ कारण पूर्वकर्मका उदय है। अरहंत तौ कर्त्ता है नाहीं। अरहंतादिककी भक्तिरूप शुभोपयोग परिणामनितैं पूर्व पापका संक्रमणादि होय जाय है। तातैं उपचारकरि अनिष्टका नाशकौं इष्टकी प्राप्तिकौं कारण अरहंतादिककी भक्ति कहिए है। अर जो जीव पहलैं ही संसारी प्रयोजन लिए भक्ति करै, ताकै तौ पापहीका अभिप्राय रह्या

कांक्षारूप भाव भए तिनकरि पूर्वपापका संक्रमणादि कैसैं होय। बहुरि तिनका कार्यसिद्ध न भया। बहुरि केई जीव भक्तिकौं मुक्तिका कारण जानि तहां अति अनुरागी होय प्रवर्तैं हैं। सो अन्यमती जैसैं भक्तितैं मुक्ति मानै हैं, तैसैं यांकै भी श्रद्धान भया। सो भक्ति तौ रागरूप है। रागतैं बंध है। तातैं मोक्षका कारण नाहीं। जब रागका उदय आवै, तब भक्ति न करै, तौ पापानुराग होय। तातैं अशुभ राग छोड़नेकौं ज्ञानी भक्तिविषै प्रवर्तैं हैं। वा मोक्षमार्गकौं बाह्य निमित्तमात्र भी जानै हैं। परंतु यहां ही उपादेयपना मानि संतुष्ट न हो हैं। शुद्धोपयोगका उद्यमी रहै हैं। सो ही पंचास्तिकायव्याख्याविषै कह्या है—

इयं भक्तिः केवलभक्तिप्रधानस्याज्ञानिनो भवाति। तीव्ररागद्वेषविनोदार्थमस्थानरागनिषेधार्थं क्वचित् ज्ञानिनोपि भवति॥

याका अर्थ—यह भक्ति केवलभक्ति ही है प्रधान जाकै ऐसा अज्ञानीजीवकै ही है। बहुरि तीव्र रागज्वर मेटनेके अर्थ वा कुठिकानैं रागनिषेधनेके अर्थि कदाचित् ज्ञानीकै भी हो है। तहां वह पूछै है—ऐसैं है, तौ ज्ञानीतैं अज्ञानीकै भक्तिकी विशेषता होती होगी ताका उत्तर—

यथार्थपनेकी अपेक्षा तौ ज्ञानकै सांची भक्ति है—अज्ञानीकै नाहीं है। अर रागभावकी अपेक्षा अज्ञानीकै श्रद्धानविषै भी मुक्तिकारण जाननेतैं अति अनुराग है। ज्ञानीकै श्रद्धानविषै शुभबंधकारण जाननेतैं तैसा अनुराग नाहीं है। बाह्य कदाचित्

ज्ञानीकै अनुराग घना हो है, कदाचित् अज्ञानीकै हो है ऐसा जानना। ऐसैं देवभक्तिका स्वरूप दिखाया। अव गुरुभक्ति याकैं कैसैं हो है, सो कहिए है—

केई जीव आज्ञानुसारी हैं। ते तौ ए जैनके साधु हैं, हमारे गुरु हैं, तातैं इनकी भक्ति करनी, ऐसैं विचारि तिनकी भक्ति करैं हैं। वहुरि केई जीव परीक्षा भी करै हैं। तहां ए मुनि दया पालैं है शील पालैं है, धनादि नाहीं राखै है, उपवासादि तप करैं हैं, क्षुधादि परीषह सहै हैं, किसीसौं क्रोधादि नाहीं करैं हैं उपदेश देय औरनिकौं धर्म्मविषै लगावै हैं इत्यादि गुण विचारि तिनविषै भक्तिभाव करै हैं। सो ऐसे गुण तौ परमहंसादिक परमती हैं, तिनविषै वा जैनी मिथ्यादृष्टीनिविषै भी पाईए। तातैं इनविषै अतिव्याप्तपनो है। इनकरि सांची परीक्षा होय नाहीं। वहुरि जिन गुणनिकौं विचारैं है, तिनविषै केई जीवाश्रित हैं, केई पुद्गलाश्रित हैं, तिनका विशेष न जानना असमानजातीय मुनिपर्यायविषै एकत्व बुद्धितैं मिथ्यादृष्टि ही रहै हैं। वहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी एकतारूप मोक्षमार्ग सोई मुनिनका सांचा लक्षण है। ताकौं पहिचानै नाहीं। जातैं यह पहिचानि भए मिथ्यादृष्टी रहता नाहीं। ऐसैं मुनिनका सांचा स्वरूप ही न जानैं, तौ सांची भक्ति कैसैं होय। पुण्यवंधकौं कारणभूत शुभक्रियारूप गुणनिकौं पहचानि, तिनकी सेवातैं अपना भला होना जानि तिनविषैं अनुरागी होय भक्ति करै है। ऐसा रुभक्तिका स्वरूप कह्या। अव शास्त्रभक्तिका स्वरुप कहिए है—

केई जीव तौ यह केवली भगवानकी वानी है तातैं केवलीके पूज्यपनातैं यह भी पूज्य है, ऐसा जानि भक्ति करै हैं। बहुरि केई ऐसैं परिक्षा करै हैं—इन शास्त्रनिविषै विरागता दया क्षमा शील संतोषादिकका निरूपण है तातैं उत्कृष्ट हैं ऐसा जानि भक्ति करै हैं। सो ऐसा कथन तौ अन्य शास्त्र वेदान्तादिक तिनविषै भी पाईए है। बहुरि इन शास्त्रनिविषै त्रिलोकादिकका गंभीर निरूपन है। तातैं उत्कृष्टता जानि भक्ति करै हैं। सो यहां अनुमानादिकका तौ प्रवेश नाहीं। यहां अनेकांतरूप सांचा जीवादितत्त्वनिका निरूपन है। अर सांचा रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग दिखाया है। ताकरि जैनशास्त्रनिकी उत्कृष्टता है। ताकौं नाहीं पहिचानै है। जातैं यह पहचानि भए मिथ्यादृष्टि रहै नाहीं। ऐसैं शास्त्रभक्तिका स्वरूप कह्या।

या प्रकार यकै देव गुरु शास्त्रकी प्रतीति भई, तातैं व्यवहार-सम्यक्त्व भया मानैं है। परंतु उनका सांचास्वरूप भास्या नाहीं तातैं प्रतीति भी सांची भई नाहीं। सांची प्रतीतिविना सम्यक्तकी प्राप्ति नाहीं। तातैं मिथ्यादृष्टी रहै है। बहुरि शास्त्रविषैं "**तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्**" ऐसा वचन कह्या है। तातैं जैसैं शास्त्रनिविषै जीवादि तत्त्व लिखे हैं, तैसैं आप सीखि ले है। तहां ही उपयोग लगावै है। औरनिकौं उपदेश दे है, परन्तु तिनका भाव भासता नाहीं। अर यहां तिस वस्तुका भावहीका नाम तत्त्व कह्या। सो भाव भासे विना तत्त्वार्थश्रद्धान कैसैं होय। भावभासना कहा, सो कहिए है—

जैसैं कोऊ पुरुष चतुर होनेका अर्थि शास्त्रकरि स्वर ग्राम मूर्छना रागनिका स्वरूप ताल तानके भेद तिनकौं सीखै है। परंतु स्वरादिकका स्वरूप नाहीं पहिचानै है। स्वरूपपहिचानि भए विना अन्य स्वरादिककौ अन्य स्वरादिकरूप मानै है। वा सत्य भी मानै है, तौ निर्णयकरि नाहीं मानै है। तातैं वाकै चतुरपनो होय नाहीं। तैसैं कोऊ जीव सम्यक्ती होनेकैं अर्थि शास्त्रकरि जीवादि तत्त्वनिका स्वरूपकौं सीखै है। परंतु तिनका स्वरूपकौ नाहीं पहिचानै है। स्वरूप पहिचाने विना अन्य तत्त्वनिकौं अन्य तत्त्वरूप मानि ले है। वा सत्य भी मानै है, तौ निर्णयकरि नाहीं मानै है। तातैं वाकै सम्यक्त्व होय नाहीं। बहुरि जैसे कोई शास्त्रादि पढ्या है, वा न पढ्या है, जो स्वरादिकका स्वरूपकौं पहिचानै है, तौ वह चतुर ही है। तैसैं शास्त्र पढ्या है वा न पढ्या है, जो जीवादिकका स्वरूप पहिचानै है, तौ वह सम्यग्दृष्टी ही है। जैसैं हिरण रागादिकका नाम न जानै है, अर ताका स्वरूपकौं पहिचानै है। तैसैं तुच्छबुद्धि जीवादिकका नाम न जानै है, अर तिनका स्वरूपकौं पहिचानै है। यह मैं हूं, यह पर है, ए भाव बुरे हैं, ए भले है, ऐसैं स्वरूप पहिचानै ताका नाम भावभासना है। शिवभूति मुनि जीवादिकका नाम न जानै था, अर "तुषमाषभिन्न" ऐसा घोषने लागा, सो यह सिद्धान्तका शब्द था नाहीं। परंतु आपा परका भावरूप ध्यान किया, तातैं केवली भया। अर ग्यारह अंगका पाठी जीवादितत्त्वनिका विशेषभेद जानै, परंतु भासै नाहीं, तातैं मिथ्यादृष्टी ही रहै हैं। अब याकै

तत्त्वश्रद्धान किसप्रकार हो है, सो कहिए है—

जिनशास्त्रविषै कहे जीवके त्रस स्थावरादिरूप वा गुणस्थान-मार्गणादिरूप भेदनिकौं जानै हैं अर जीवके पुद्गलादि भेदनिकौं वा तिनके वर्णादि विशेष तिनकौं जानै है। परंतु अध्यात्मशास्त्रनिविषै भेदविज्ञानकौं कारणभूत वा वीतरागदशा होनेकौं कारणभूत जैसैं निरूपण किया है, तैसैं न जानै है। बहुरि किसी प्रसंगतैं तैसैं भी जानना होय तौ शास्त्र अनुसार जानि ले है। परंतु आपकौं आप जानि परका अंश भी न मिलावना अर आपका अंश भी परविषै न मिलावना, ऐसा सांचा श्रद्धान नाहीं करै है। जैसैं अन्य मिथ्यादृष्टी निर्धारविना पर्यायबुद्धिकरि जानपनाविषै वा वर्णादिविषै अहंबुद्धि धारै हैं, तैसैं यह भी आत्माश्रित ज्ञानादिविषै वा शरीराश्रित उपदेश उपवासादि क्रियानिविषै आपो मानै है। बहुरि शास्त्रकै अनुसार कबहू सांची बात भी बनावै; परंतु अंतरंग निर्द्धाररूप श्रद्धान नाही। तातैं जैसैं मतवाला माताकौं माता भी कहै, तौ स्याना नाहीं। तैसैं याकौ सम्यक्ती न कहिए। बहुरि जैसैं कोई औरहीकी बातैं करता होय, तैसैं आत्माका कथन करै। परंतु यह आत्मा मैं हूं, ऐसा भाव नाहीं भासै। बहुरि जैसैं कोई औरकूं औरतैं भिन्न बतावता होय, तैसैं आत्मा शरीरकी भिन्नता प्ररूपै। परन्तु मैं इस शरीरादिकतैं भिन्न हूं, ऐसा भाव भासै नाहीं। बहुरि पर्यायविषै जीव पुद्गलकै परस्पर निमित्ततैं अनेक क्रिया हो हैं, तिनकौं दोय द्रव्यका मिलापकरि निपजी जानै। यह जीवकी क्रिया है, ताका पुद्गल निमित्त है, यह

पुद्गलकी क्रिया है, ताका जीव निमित्त है, ऐसा भिन्न भिन्न भाव भासै नाहीं। इत्यादि भाव भासे विना जीव अजीवका सांचा श्रद्धानी न कहिए। तातैं जीव अजीव जाननेका तौ यह ही प्रयोजन था सो भया नाहीं। बहुरि आश्रवतत्वविषै जे हिंसादि-रूप पापास्रव हैं, तिनिकौं हेय जानैं हैं। अहिंसादिरूप पुण्यास्रव है तिनिकौं उपदेश मानै है। सो ए तौ दोऊ ही कर्मबंधके कारण इनविषै उपादेयपना मानना सोई मिथ्यादृष्टि है। सोई समय-सारका बंधाधिकार विषै कह्या है—

सर्व जीवनिकै जीवन मरण सुख दुःख अपने कर्मके निमित्त तैं हो है। जहां अन्य जीव अन्य जीवकै इन कार्यनिका कर्त्ता होय, सोई मिथ्याध्यवसाय बंधका कारण है। तहां अन्य जीवकौं जिवावनेका वा सुखी करनेका अध्यवसाय होय सो तौ पुण्यबंधकौं कारण है, अर मारनेका या दुखी करनेका अध्यवसाय होय, सो पापबंधका कारण है। ऐसैं अहिंसावत् सत्यादिक तौ पुण्यबंधकौं कारण हैं, अर हिंसावत् असत्यादिक पापबंधकौं कारण हैं। ए सर्व मिथ्याध्यवसाय हैं, ते त्याज्य हैं। तातैं हिंसादिवत् अहिंसा-दिककौं भी बंधका कारण जानि हेय ही मानना। हिंसाविषै मारनेकी बुद्धि होय, सो वाका आयु पूरा हुवा विना मरै नाहीं। अपनी द्वेषपरणतिकरि आप ही पाप बांधै है। अहिंसाविषै रक्षा करनेकी बुद्धि होय, सो वाका आयु अवशेषविना जीवै नाहीं, अपनी प्रशस्त रागपरणतिकरि आप ही पुण्य बांधै है। ऐसैं ए दोऊ होय हैं। जहां वीतराग होय दृष्टा ज्ञाता प्रवर्त्तै, तहां निर्बंध

है। सो उपादेय है। सो ऐसी दशा न होय, तावत् प्रशस्त रागरूप प्रवर्त्तौ। परंतु श्रद्धान तौ ऐसा राखौ-यह भी बंधका कारण है—हेय है। श्रद्धानविषै याकौं मोक्षमार्ग जाने मिथ्या-दृष्टी ही है।

बहुरि मिथ्यात्व अविरत कषाय योग ए आस्रवके भेद हैं तिनिकौं बाह्यरूप तौ मानै, अंतरंग इन भावनिकी जातिकौं पहिचानै नाहीं। तहां अन्य देवादिकसेवनेरूप गृहीतमिथ्यात्वकौं मिथ्यात्व जानै, अर अनादि अगृहीतमिथ्यात्व है, ताकौं न पहिचानै। बहुरि बाह्य त्रस स्थावरकी हिंसा वा इंद्रिय मनके विषयनिविषै प्रवृत्ति ताकौं अविरत जानै। हिंसाविषै प्रमादपरणति मूल है, अर विषयसेवनविषै अभिलाष मूल है। ताकौं न अवलोकै बहुरि बाह्य क्रोधादि करना, ताकौं कषाय जानै, अभिप्रायविषै रागद्वेष रहै ताकौं न पहिचानै। बहुरि बाह्य चेष्टा होय, ताकौं योग जानै, शक्तिभूत योगनिकौं न जानै। ऐसैं आस्रवनिका स्वरूप अन्यथा जानै। बहुरि राग द्वेष मोहरूप जे आस्रवभाव हैं, तिनका तौ नाश करनेकी चिंता नाहीं। अर बाह्यक्रिया वा बाह्य निमित्त मेटनेका उपाय राखै, सो तिनके मैटे आश्रव मिटता नाहीं। द्रव्यलिंगीमुनि अन्य देवादिककी सेवा न करै है, हिंसा वा विषयनिविषै न प्रवर्तै हैं, क्रोधादि न करै हैं, मन वचन कायकौं रोकै है, तौ भी वाकै मिथ्यात्वादि च्यारौं आस्रव पाईए हैं। बहुरि कपटकरि भी ए कार्य न करै हैं। कपटकरि करै तौ ग्रैवेयकपर्यंत कैसैं पहुंचै। तातैं जो अंतरंग अभिप्रायविषै मिथ्या-

त्वादिरूप रागादिभाव हैं, सोई आस्रव हैं । ताकौं न पहिचानै तातैं याकै आस्रवतत्त्वका भी सत्य श्रद्धान नाहीं । बहुरि बंधतत्वविषै जे अशुभभावनिकरि नरकादिरूप पापका बंध होय, ताकौं तौ बुरा जानै अर शुभभावनिरूप पुण्यका बंध होय, ताकौं भला जानै। सो सर्व ही जीवनिकै दुखसामग्रीविषै द्वेष सुखसामग्री विषै राग पाईए, सो ही याकै राग द्वेष करनेका श्रद्धान भया। जैसा इस पर्यायसंबंधी सुखदुखसामग्रीविषै राग द्वेष करना, तैसा ही आगामी पर्यायसंबंधी सुखदुखसामग्रीविषै राग द्वेष करना । बहुरि शुभअशुभभावनिकरि पुण्यपापका विशेष तौ अघाति कर्मनिविषै हो है । सो अघातिकर्म्म आत्माके गुणके घातक नाहीं। बहुरि शुभ अशुभ भावनिविषै घातिकर्मनिका तौ निरंतरबंध होय। ते सर्व पापरूप ही हैं । अर तेई आत्मगुणके घातक हैं। तातैं अशुद्ध भावनिकरि कर्म्मबंध होय, तिसविषै भला बुरा जानना सोई मिथ्याश्रद्धान है । सो ऐसे श्रद्धानतैं बंधका भी याकै सत्यश्रद्धान नाहीं । बहुरि संवरतत्त्वविषै अहिंसादिरूप शुभास्रव भाव तिनकौं संवर जानै है । सो एक कारणतैं पुण्यबंध भी मानै अर संवर भी मानैं, सो बनै नाहीं । यहां प्रश्न- जो मुनिनिकै एकै काल ए भाव हो हैं । तहां उनकै बंध भी हो है अर संवर निर्जरा भी हो है, सो कैसैं है । ताका समाधान—

वह भाव मिश्ररूप है । किछू वीतराग भया है किछू सराग भया है । जे अंश वीतराग भए तिनकरि संवर है ही अर जे अंश सराग रहे, तिनकरि बंध है । सो एकभावतैं तौ दो कार्य बनै

परंतु एक प्रशस्तरागहीतैं पुण्यास्रव भी मानना अर संवरनिर्जरा भी मानना सो भ्रम है। मिश्रभावविषै भी, यह सरागता है, यह विरागता है, ऐसी पहचानि सम्यग्दृष्टीहीकैं होय। तातैं अवशेष सराग ताकौं हेय श्रद्दहै है। मिथ्यादृष्टीकै ऐसी पहचानि नाहीं। तातैं सराग भावविषै संवरका भ्रमकरि प्रशस्त रागरूप कार्यनिकौं उपादेय श्रद्दहै। बहुरि सिद्धांतविषै गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परीषह-जय चारित्र इनकरि संवर हो है, ऐसा कह्या है। सो इनकौं भी यथार्थ न श्रद्दहै है। कैसैं, सो कहिए है—

बाह्य मन वचन कायकी चेष्टा मेटै, पापचिंतवन न करै, मौन धरै, गमनादि न करै, सो गुप्ति मानै है। सो यहां तौ मनविषै भक्तिआदिरूप प्रशस्तरागादि नानाविकल्प हो हैं, वचन कायकी चेष्टा आप रोकि राखै है, तहां शुभप्रवृत्ति है, अर प्रवृत्तिविषै गुप्तिपनो बनै नाहीं। तातैं वीतरागभाव भए जहां मन वचन कायकी चेष्टा न होय, सो ही सांची गुप्ति है। बहुरि परजीवनिकी रक्षाकै अर्थ यत्नाचारप्रवृत्ति ताकौं समिति मानै है। सो हिंसाके परिणामनितैं तौ पाप हो है, अर रक्षाके परिणामनितैं संवर कहौगे, तौ पुण्यबंधका कारण कौन ठहरैगा। बहुरि एषणासमिति-विषै दोष टालै है। तहां रक्षाका प्रयोजन है नाहीं। तातैं रक्षाहीकै अर्थ समिति नाहीं है। तौ समिति कैसैं हो है— मुनिनकै किंचित् राग भए गमनादि क्रिया हो है। तहां तिन क्रियानिविषै अति आसक्तताके अभावतैं प्रमादरूप प्रवृत्ति न हो

है । बहुरि और जीवनिकौं दुखी करि अपना गमनादि प्रयोजन न साधै है । तातैं स्वयमेव ही दया पलै है । ऐसैं सांची समिति है । बहुरि बंधादिकके भयतैं वा स्वर्गमोक्षकी चाहितैं क्रोधादि न करै है, सो यहां क्रोधादिकरनेका अभिप्राय तौ गया नाहीं । जैसैं कोई राजादिकका भयतैं वा महंतपनाका लोभतैं परस्त्री न सेवै है, तौ वाकौं त्यागी न कहिए । तैसैं ही यह क्रोधादिका त्यागी नाहीं । तौ कैसैं त्यागी होय । पदार्थ अनिष्ट इष्ट भासैं क्रोधादि हो है । जब तत्वज्ञानके अभ्यासतैं कोई इष्ट अनिष्ट न भासै, तब स्वयमेव ही क्रोधादिक न उपजैं, तब सांचा धर्म हो है । बहुरि अनित्यादि चिंतवनतैं शरीरादिककौं बुरा जानि हितकारी न जानि तिनतैं उदास होना ताका नाम अनुप्रेक्षा कहै हैं । सो यह तौ जैसैं कोऊ मित्र था, तब उसतैं राग था, पीछैं वाका अवगुण देखि उदासीन भया, तैसैं शरीरादिकतैं राग था पीछैं अनित्यत्वादि अवगुण अवलोकि उदासीन भया । सो ऐसी उदासीनता तौ द्वेषरूप है । जहां जैसा अपना वा शरीरादिकका स्वभाव है, तैसा पहचानि भ्रमकौं मेटि भला जानि राग न करना, बुरा जानि द्वेष न करना, ऐसी सांची उदासीनताकै अर्थि यथार्थ अनित्यत्वादिकका चिंतवन सो ही सांची अनुप्रेक्षा है । बहुरि क्षुधादिक भए तिनके नाशका उपाय न करना, वाकौं परीषह सहना कहै हैं । सो उपाय तौ न किया, अर अंतरंग क्षुधादि अनिष्ट सामग्री मिले दुखी भया, रति आदिका कारण मिले सुखी भया, तौ सो दुख-सुखरूप परिणाम है, सोई आर्तध्यान रौद्रध्यान है । ऐसे

भावनितैं संवर कैसैं होय। तातैं दुखका कारण मिलै दुखी न होय सुखका कारण मिले सुखी न होय, ज्ञेयरूपकरि तिनका जाननहारा ही रहैं; सोई सांची परीषहका सहना है। बहुरि हिंसादि सावद्य योगका त्यागकौं चारित्र मानै हैं। तहां महाव्रतादिरूप शुभयोगकौं उपादेयपनैंकरि ग्रहण मानै हैं। सो तत्त्वार्थसूत्रविषै आस्रव-पदार्थका निरूपण करते महाव्रत अणुव्रत भी आस्रवरूप कहे हैं। ए उपादेय कैसैं होय। अर आस्रव तौ बंधका साधक है, चारित्र मोक्षका साधक है। तातैं महाव्रतादिरूप आस्रवभावनिकैं चारित्र पनो संभवै नाहीं। सकल कषायरहित जो उदासीनभाव ताहीका नाम चारित्र हैं। जो चारित्रमोहके देशघाती स्पर्द्धकनिके उदयतैं महामंद प्रशस्त राग हो है, सो चारित्रका मल है। याकौ छूटता न जानि याका त्याग न करै है। सावद्ययोग ही त्याग करै है। परंतु जैसैं कोई पुरुष कंदमूलादि बहुत दोषीक हरितकायका त्याग करै हैं; अर कैई हरितकायनिकौं भखै है। परंतु ताकौं धर्म न मानै है। तैसैं मुनि हिंसादि तीव्रकषायरूप भावनिका त्याग करै है अर कैई मंदकषायरूप महाव्रतादिकौं पालै है। परंतु ताकौं मोक्षमार्ग न मानै है। यहां प्रश्न—जो ऐसैं है, तौ चारित्रके तेरह भेदनिविषै महाव्रतादि कैसैं कहे हैं। ताका समाधान—

यह व्यवहारचारित्र कह्या है। व्यवहार नाम उपचारका है। सो महाव्रतादिक भए ही वीतरागचारित्र हो है। ऐसा संबंध जानि महाव्रतादिविषै चारित्रका उपचार किया है। निश्चयकरि निःकषाय भाव है सो ही सांचा चारित्र है। या प्रकार संवरका

कारणनिकौं अन्यथा जानता संता सांचा श्रद्धानी न हो है। बहुरि यह अनशनादि तपतैं निर्जरा मानै है। सो केवल बाह्यतप ही तौ किए निर्जरा होय नाहीं। बाह्यतप तौ शुद्धोपयोग वधावनेके अर्थि कीजिए है। शुद्धोपयोग निर्जराका कारण है। तातैं उपचारकरि तपकौं भी निर्जराका कारण कह्या है। जो बाह्य दुख सहना ही निर्जराका कारण होय, तौ तिर्यंचादि भी भूख तृषादि सहै हैं। तब वह कहै है—स्वाधीनपनै धर्मबुद्धितैं उपवासादिरूप तप करै ताकै निर्जरा हो है। ताका समाधान—

धर्मबुद्धितैं बाह्य उपवासादिक तो किए, बहुरि तहां उपयोग अशुभ शुभ शुद्धरूप जैसैं परिणमैं तैसैं परिणमो। घने उपवासादि किए घनी निर्जरा होय, थोरे किए थोरी निर्जरा होय। जो ऐसैं नियम ठहरै, तौ उपवासादिक ही मुख्य निर्जराका कारण ठहरै। सो तौ बनै नाहीं। परिणाम दुष्ट भए उपवासकरतैं निर्जरा होनी कैसैं संभवै। बहुरि जो कहिए—जैसा अशुभ शुभ शुद्धरूप उपयोग परिणमैं, ताकैं अनुसार बंधनिर्जरा है। तौ उपसादि तप मुख्य निर्जराका कारण कैसैं रह्या। अशुभ शुभ परिणाम बंधके कारन ठहरे, शुद्ध परिणाम निर्जराके कारण ठहरे। यहां प्रश्न—जो तत्त्वार्थसूत्रविषै "**तपसा निर्जरा च**" ऐसा कैसैं कह्या है? ताका समाधान—

शास्त्रविषै "**इच्छानिरोधस्तपः**" ऐसा कह्या है। इच्छाका रोकना ताका नाम तप है। सो शुभ अशुभ इच्छा मिटे उपयोग शुद्ध होय, तहां निर्जरा हो है। तातैं तपकरि निर्जरा कही है।

यहां कोऊ कहैं, आहारादिरूप अशुभकी तौ इच्छा दूरि भए ही तप होय। परंतु उपवासादिक वा प्रायश्चित्तादि शुभकार्य हैं, तिनकी इच्छा तौ रहै ताका समाधान—

ज्ञानी जननिकै उपवासादिककी इच्छा नाहीं हैं। एक शुद्धोपयोगकी इच्छा है। उपवासादि किए शुद्धोपयोग बधै है, तातैं उपवासादि करै हैं। बहुरि जो उपवासादिकतैं शरीरकी वा परिणमनिकी शिथिलताकरि शुद्धोपयोग शिथिल होता जानैं, तहां आहारादिक ग्रहै हैं। जो उपवासादिकहीतैं सिद्धि होय, तौ अजितनाथादिक तेईस तीर्थंकर दीक्षा लेय दोय उपवास ही कैसैं धरते। उनकी तौ शक्ति भी बहुत थी। परंतु जैसैं परिणाम भए तैसैं बाह्यसाधनकरि एक वीतराग शुद्धोपयोगका अभ्यास किया।

यहां प्रश्न—जो ऐसैं है, तौ अनशनादिककौं तपसंज्ञा कैसैं भई। ताका समाधान—

इनकौं बाह्यतप कहै हैं। सो बाह्यका अर्थ यह है, जो बाह्य औरनिकौं दीखै, यह तापसी है। बहुरि आप तौ फल जैसा अंतरंग परिणाम होगा, तैसा ही पावैगा। जातैं परिणामशून्य शरीरकी क्रिया फलदाता नाहीं। बहुरि यहां प्रश्न—जो शास्त्रविषै तौ अकामनिर्जरा कही है। तहां विना चाहि भूख तृषादि सहे निर्जरा हो है। तौ उपवासादिकरि कष्ट सहे कैसैं निर्जरा न होय। ताका समाधान—

अकामनिर्जराविषै भी बाह्य निमित्त तौ विना चाहि भूख तृषाकौं सहना भया है। अर तहां मंदकषायरूप भाव होय, तौ

पापकी निर्जरा होय, देवादि पुण्यका बंध होय। अर जो तीव्रकषाय भए भी कष्ट सहे पुण्यबंध होय, तौ सर्व तिर्यंचादिक देव ही होंय। सो बनै नाहीं। तैसें ही चाहिकरि उपवासादि किए तहां भूख तृषादि कष्ट सहिए है। सो यह बाह्यनिमित्त है। यहां जैसा परिणाम होय, तैसा फल पावै है। जैसें अन्नकौं प्राण कह्या। ऐसैं बाह्यसाधन भए अंतरंगतपकी वृद्धि हो है। तातैं उपचारकरि इनकौं तप कहे हैं। जो बाह्यतप तौ करै अर अंतरंगतप न होय, तौ उपचारतैं भी वाकौं तपसंज्ञा नहीं। सोई कह्या है—

कषायविषयाहारो त्यागो यत्र विधीयते।
उपवासः स विज्ञेयः शेषं लङ्घनकं विदुः॥

जहां कषाय विषय आहारका त्याग कीजिए, सो उपवास जानना। शेषकौं लंघन श्री गुरु कहैं हैं। यहां कहैगा, जो ऐसैं है तौ हम उपवासादि न करैंगे। ताकौं कहिए है—

उपदेश तौ ऊंचा चढ़नेकौ दीजिए है। तू उलटा नींचा पड़ैगा, तौ हम कहा करैंगे। जो तू मानादिकतैं उपावासादि करै है, तौ करि वा मति करै, किछू सिद्धि नाहीं। अर जो धर्मबुद्धितैं अहारादिकका अनुराग छोड़ै है, तौ जेता राग छूट्या तेता ही छूट्या। परंतु इसहीकौं तप जानि इसतैं निर्जरा मानि संतुष्ट मति होहु। बहुरि अंतरंग तपनिविषै प्रायश्चित्त विनय वैयावृत्त्य स्वाध्याय, त्याग, ध्यानरूप जो क्रिया ताविषै बाह्यप्रवर्तन, सो तौ बाह्य तपवत् ही जानना। जैसैं अनशनादि बाह्यक्रिया हैं, तैसैं ए भी बाह्यक्रिया हैं। तातैं प्रायश्चित्तादि बाह्यसाधन अंतरंग--

तप नाहीं हैं। ऐसा बाह्य प्रवर्त्तन होतैं, जो अंतरंग परिणामनिकी शुद्धता होय, तहां तौ निर्जरा ही है, बंध नाहीं हो है। अर स्तोक शुद्धताका भी अंश रहै, तौ जेती शुद्धता भई ताकरि तौ निर्जरा है। अर जेता शुभभाव है ताकरि बंध है। ऐसा मिश्रभाव युगपत् हो है, तहां बंध वा निर्जरा दोऊ हो हैं। यहां कोऊ कहै, शुभभावनितैं पापकी निर्जरा हो है, पुण्यका बंध हो है, शुद्धभावनितैं दोऊनिकी निर्जरा हो है, ऐसा क्यौं न कहौ। ताका उत्तर—

मोक्षमार्गविषै स्थितिका तौ घटना सर्व ही प्रकृतीनिका होय। तहां पुण्यपापका विशेष है ही नाहीं। अर अनुभागका घटना पुण्यप्रकृतीनिका शुद्धोपयोगतैं भी होता नाहीं। ऊपरि ऊपरि पुण्यप्रकृतीनिका अनुभागका तीव्रउदय हो है, अर पापप्रकृतिके परमाणु पलटि शुभप्रकृतिरूप होय ऐसा संक्रमण शुभ शुद्ध दोऊ भाव होतैं होय। तातैं पूर्वोक्त नियम संभवै नाहीं। विशुद्धताहीकै अनुसार नियम संभवै है। देखो, चतुर्थगुणस्थानवाला शास्त्राभ्यास आत्माचिंतवनादि कार्य करै, तहां भी निर्जरा नाहीं, बंध भी घना होय। बहुरि पंचमगुणस्थानवाला उपवासादि वा प्रायश्चितादि तप करै, तिस कालविषै भी वाकै निर्जरा थोरी, अर छठागुणस्थानवाला आहार विहारादि क्रिया करै, तिस कलाविषैं भी वाकै निर्जरा घनी। उसतैं भी बंध थोरा होय। तातैं बाह्य प्रवृत्तिकै अनुसार निर्जरा नाहीं है। अंतरंग कषायशक्ति घटैं विशुद्धता भए निर्जरा हो है। सो इसका प्रगटस्वरूप आगैं निरूपण करैंगे, तहां जानना। ऐसैं अनशनादि क्रियाकौं तपसंज्ञा उपचारतैं

जाननी। याहीतैं इनकौं व्यवहार तप कह्या है। व्यवहार उपचारका एक अर्थ है। बहुरि साधनतैं ऐसा जो वीतराग भावरूप विशुद्धता होय, सो सांचा तप निर्जराका कारण जानना। यहां दृष्टांत—जैसैं धनकौं वा अन्नकौं प्राण कह्या। सो धनतैं अन्न ल्याय भक्षण किए प्राण पोषे जांय, तातैं धन अन्नकौं प्राण कह्या। कोई इंद्रियादिक प्राणनिकौं न जानै, अर इनहीकौं प्राण जानि संग्रह करै, तौ मरण ही पावै। तैसैं अनशनादिकौं वा प्रायश्चित्तादिकौं तप कह्या, सो अनशनादि साधनतैं प्रायश्चित्तादिरूप प्रवर्तै वीतरागभावरूप सत्य तप पोष्या जाय। तातैं उपचारकरि अनशनादिकौं वा प्रायश्चित्तादिकौं तप कह्या। कोई वीतरागभावरूप तपकौं न जानै अर इनहीकौं तप जानि संग्रह करै, तौ संसारहीमैं भ्रमै। बहुत कहा, इतना समझि लेना—निश्चय धर्म तौ वीतरागभाव है। अन्य नाना विशेष बाह्यसाधन अपेक्षा उपचारतैं किए हैं, तिनकौं व्यवहारमात्र धर्म संज्ञा जाननी। इस रहस्यकौं न जानै तातैं वाकै निर्जराका भी सांचा श्रद्धान नाहीं है।

बहुरि सिद्ध होना ताकौं मोक्ष मानै है। बहुरि जन्म जरा मरण रोग क्लेशादि दुख दूरि अनंतज्ञानकरि लोकालोकका जानना भया, त्रिलोकपूज्यपना भया इत्यादि रूपकरि ताकी महिमा जानै है। सो सर्व जीवनिकै दुख दूर करनेकी वा ज्ञेय जाननेकी वा पूज्य होनेकी चाहि है। इनहीकै अर्थ मोक्षकी चाहि कीनी, तौ याकै और जीवनिका श्रद्धानतैं कहा विशेषता

भई। बहुरि याकै ऐसा भी अभिप्राय है—स्वर्गविषै सुख है, तातैं अनंतगुणा मोक्षविषै सुख है सो इस गुणकारविषै स्वर्ग मोक्ष सुखकी एक जाति जानै है। तहां स्वर्गविषै तौ विषयादि सामग्रीजनित सुख हो है, ताकी जाति याकौं भासै है अर मोक्षविषै विषयादि सामग्री है नाहीं, सो वहांका सुखकी जाति याकौं भासै तौ नाहीं; परंतु स्वर्गतैं भी उत्तम मोक्षकौं महापुरुष कहै हैं, तातैं यह भी उत्तम ही मानै है। जैसैं कोऊ गानका स्वरूप न पहिचानै, परंतु सर्व सभाके सराहैं, तातैं आप भी सराहै है। तैसैं यह मोक्षकौं उत्तम मानै है। यहां वह कहै है—शास्त्रविषै भी तौ इंद्रादिकतैं अनंतगुणा सुख सिद्धनिकै प्ररूपै हैं।

ताका उत्तर—

जैसैं तीर्थंकरके शरीरकी प्रभाकौं सूर्यप्रभातैं कोट्यां गुणी कही। तहां तिनकी एक जाति नाहीं। परंतु लोकविषै सूर्यप्रभाकी महिमा हैं, तातैं भी बहुत महिमा जनावनेकौं उपमालंकार कीजिए है। तैसैं सिद्धसुखकौं इंद्रादिसुखतैं अनंतगुणा कह्या। तहां तिनकी एकजाति नाहीं। परंतु लौकविषै इंद्रादिसुखकी महिमा है, तातैं भी बहुत महिमा जनावनेकौं उपमालंकार कीजिए है। बहुरि प्रश्न—जो सिद्धसुख अर इंद्रादिसुखकी एकजाति वह जानै है, ऐसा निश्चय तुम कैसैं किया। ताका समाधान—

जिस धर्मसाधनका फल स्वर्ग मानै है, तिस धर्मसाधनहीका फल मोक्ष मानै है। कोई जीव इंद्रादिपद पावै, कोई मोक्ष पावै,

तहां तिन दोऊनिकै एकजाति धर्मका फल भया मानै। ऐसा तौ मानै, जो जाकैं साधन थोरा हो है, सो इंद्रादिपद पावै है, जाकै संपूर्ण साधन होय, सो मोक्ष पावै है। परंतु तहां धर्मकी जाति एक जानै है। सो जो कारणकी एक जाति जानै, ताकौं कार्यकी भी एक जातिका श्रद्धान अवश्य होय। जातैं कारण विशेष भए ही कार्य विशेष हो है। तातैं हम यह निश्चय किया, वाकै अभिप्रायविषै इंद्रादिसुख अर सिद्धसुखकी जातिका एक जातिका श्रद्धान है। बहुरि कर्मनिमित्ततैं आत्माकै औपाधिक भाव थे, तिनिका अभाव होतैं शुद्धस्वभावरूप केवल आत्मा आप भया। जैसैं परमाणु स्कंधतैं विछुरें शुद्ध हो हैं, तैसैं यह कर्मादिकतैं भिन्न भया शुद्ध हो है। विशेष इतना—वह दोऊ अवस्थाविषै दुखी सुखी नाहीं, आत्मा अशुद्ध अवस्थाविषै दुखी था, अब ताकै अभाव होनेतैं निराकुललक्षण अनंतसुखकी प्राप्ति भई। बहुरि इंद्रादिकनिकै जो सुख है, सो कषाय भावनिकरि आकुलतारूप है। सो वह परमार्थतैं दुखी ही है। तातैं वाकी याकी एकजाति नाहीं। बहुरि स्वर्गसुखका कारण प्रशस्तराग है, मोक्षसुखका कारण वीतरागभाव है, तातैं कारणविषैं भी विशेष है। सो ऐसा भाव याकौं भासै नाहीं। तातैं मोक्षका भी याकैं सांचा श्रद्धान नाहीं है। या प्रकार याकैं सांचा तत्त्वश्रद्धान नाहीं है। याहीतैं समयसारविषै कह्या है —"अभव्यकै तत्त्वश्रद्धान भए भी मिथ्यादर्शन ही रहै है।" वा प्रवचनसारविषै कह्या है—"आत्मज्ञानशून्य तत्वार्थश्रद्धान कार्यकारी नाहीं।" बहुरि यह व्यवहारदृष्टिकरि

सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे हैं, तिनकौं पाले है। पचीस दोष कहे हैं, तिनकौं टाले है। संवेगादिक गुण कहे हैं, तिनकौं धारै है। परंतु जैसैं बीज बोए विना खेतकी सावधानी किए भी अन्न होता नाहीं, तैसैं सांचा तत्त्वश्रद्धान भए विना सम्यक्त्व होता नाहीं। सो पंचास्तिकायव्याख्याविषैं जहां अंतविषै व्यवहाराभासवालेका वर्णन किया, तहां ऐसा ही कथन किया हैं। या प्रकार याकै सम्यग्दर्शनके अर्थि साधन करतैं भी सम्यग्दर्शन न हो है।

अब यह सम्यग्ज्ञानकै अर्थि शास्त्रविषै शास्त्राभ्यास किए सम्यग्ज्ञान होना कह्या है, तातैं जे शास्त्राभ्यासविषै तत्पर रहै हैं, तहां सीखना सिखावना यादि करना वांचना पढ़ना आदि क्रियाविषै तौ उपयोगकौं रमावै हैं। परंतु वाकै प्रयोजन ऊपरि दृष्टि नाहीं है। इस उपदेशविषैं मुझकौं कारिजकारी कहा, सो अभिप्राय नाहीं। आप शास्त्राभ्यासकरि औरनिकौं उपदेश देनेका अभिप्राय राखै है। घने जीव उपदेश मानैं तहां संतुष्ट हो है। सो ज्ञानाभ्यास तौ आपकै अर्थ कीजिए है और प्रसंग पाय परका भी भला करै। बहुरि कोई उपदेश न सुनै, तौ मति सुनौ, आप काहेकौं विषाद कीजिए। शास्त्रार्थका भाव जानि आपका भला करना। बहुरि शास्त्राभ्यासविषै भी केई तौ व्याकरण न्याय काव्य आदि शास्त्रनिकौं बहुत अभ्यासैं हैं। सो ए तौ लोकविषै पंडितता प्रगट करनेके कारण हैं। इनविषै आत्महितनिरूपण तौ है नाहीं। इनका तौ प्रयोजन इतना ही है। अपनी बुद्धि

बहुत होय तौ थोरा बहुत इनका अभ्यासकरि पीछै आत्महितके साधक शास्त्र तिनका अभ्यास करना। जो बुद्धि थोरी होय, तौ आत्महितके साधक सुगम शास्त्र तिनहीका अभ्यास करै। ऐसा न करना, जो व्याकरणादिकका ही अभ्यास करतैं करतैं आयु पूरा होय जाय, अर तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति न बनै। यहां कोऊ कहै—ऐसैं हैं, तौ व्याकरणादिकका अभ्यास न करना। ताकौं कहिए है—तिनका अभ्यासविना महान् ग्रंथनिका अर्थ खुलै नाहीं। तातैं तिनका भी अभ्यास करना योग्य है। बहुरि यहां प्रश्न—महान् ग्रंथ ऐसे क्यौं किए, जिनका अर्थ व्याकरणादि विना न खुलै भाषाकरि सुगमरूप हितोपदेश क्यौं न लिख्या। उनकै किछू प्रयोजन तौ था नाहीं। ताका समाधान—

भाषाविषै भी प्राकृत संस्कृतादिकके ही शब्द हैं। परंतु अपभ्रंश लीए हैं। बहुरि देशनिविषैं भाषा अन्य अन्य प्रकार है। सो महंत पुरुष शास्त्रनिविषै अपभ्रंश शब्द कैसैं लिखैं। बालक तोतला बोलै, तौ बड़े तौ न बोलैं। बहुरि एकदेशकी भाषारूप शास्त्र दूसरे देशविषै जाय, तौ तहां ताका अर्थ कैसैं भासै। न्यायविना लक्षण परीक्षा आदि यथावत् न होय सकै। इत्यादि वचनद्वारि वस्तुका स्वरूपनिर्णय व्याकरणादि विना नीकै न होता जानि तिनकी आम्नाय अनुसार कथन किया। भाषाविषै भी तिनकी थोरी बहुत आम्नाय आप ही उपदेश होय सकै हैं। तिनकी बहुत आम्नायतैं नीकै निर्णय होय सकै है। बहुरि जो कहैंगे—ऐसैं है तौ अब भाषारूप ग्रंथ काहेकौं बनाईए है।

ताका समाधान—

कालदोषतैं जीवनिकी मंदबुद्धि जानि केई जीवनिकै जेता ज्ञान होगा, तेता ही होगा, ऐसा अभिप्राय विचारि भाषाग्रंथ कीजिए है। सो जे जीव व्याकरणादिकका अभ्यास न करि सकैं, तिनकौं ऐसे ग्रंथनिकरि ही अभ्यास करना। बहुरि जे जीव शब्दनिकी नाना युक्त लिए अर्थ करनेकौं व्याकरण अवगाहै हैं, वादादिकरि महंत होनेकौं न्याय अवगाहै हैं, चतुरपना प्रगट करनेके अर्थि काव्य अवगाहै हैं, इत्यादि लौकिक प्रयोजन लिए इनका अभ्यास करै हैं ते धर्मात्मा नाहीं। बनै जेता थोरा बहुत अभ्यास इनका करि आत्महितकै अर्थि तत्त्वादिकका निर्णय करैं हैं, सोई धर्मात्मा पंडित जानना। बहुरि कोई जीव पुण्य पापादिक फलके निरूपक पुराणादि शास्त्र वा पुण्य पापक्रियाके निरूपक आचारादि शास्त्र वा गुणस्थान मार्गणा कर्मप्रकृति त्रिलो-कादिकके निरूपक करणानुयोगके शास्त्र तिनका अभ्यास करै हैं। सो जो इनका प्रयोजन आप न विचारै, तब तौ सूवाकासा ही पढ़ना भया। बहुरि जो इनका प्रयोजन विचारै है, तहां पापकौं बुरा जानना; पुण्यकौं भला जानना, गुणस्थानादिकका स्वरूप जानि लेना, इनका अभ्यास करैंगे तितना हमारा भला है इत्यादि प्रयोजन विचारया, सो इसतैं इतना तौ होगा——नरकादिका छेद स्वर्गादिकी प्राप्ति, परंतु मोक्षमार्गकी तौ प्राप्ति होय नाहीं। पहलैं सांचा तत्त्वज्ञान होय, तहां पीछैं पुण्यपापका फलकौं संसार जानैं, शुद्धोपयोगतैं मोक्ष मानैं; गुणस्थानादिरूप जीवका व्यवहार निरूपण

जानैं, इत्यादि जैसाका तैसा श्रद्धान करता संता इनका अभ्यास करै, तौ सम्यग्ज्ञान होय। सो तत्त्वज्ञानकौं कारण अध्यात्मरूप द्रव्यानुयोगके शास्त्र हैं। बहुरि केई जीव तिन शास्त्रनिका भी अभ्यास करैं है। परंतु जहां जैसैं लिख्या है, तैसैं आप निर्णय करि आपकौं आपरूप, परकौं पररूप, आस्रवादिककौं आस्रवादिरूप न श्रद्धान करै हैं। मुखतैं तौ यथावत् निरूपण ऐसा भी करैं, जाके उपदेशतैं और जीव सम्यग्दृष्टी होय जांय। परंतु जैसैं लड़का स्त्रीका स्वांगकरि ऐसा गान करै, जाकौं सुनतैं अन्य पुरुष स्त्री कामरूप होय जांय। परंतु वह जैसैं सीख्या तैसैं कहै हैं, वाकौं किछू भाव भासै नाहीं, तातैं आप कामासक्त न हो है। तैसैं यह जैसैं लिख्या, तैसैं उपदेश दे, परंतु आप अनुभव नाहीं करै है। जो आपकै श्रद्धान भया होता, तौ और तत्त्वका अंश और तत्वविषै न मिलावता, सो याकै थल नाहीं, तातैं सम्यग्ज्ञान होता नाहीं। ऐसैं यह ग्यारह अंगपर्यंत पढ़ै तौ भी सिद्धि होती नाहीं। सो समयसारादिविषै मिथ्यादृष्टीकै ग्यारह अंगका ज्ञान होना लिख्या है। यहां कोऊ कहै—ज्ञान तौ इतना हो है, परंतु जैसैं अभव्यसेनकै श्रद्धानरहित ज्ञान भया, तैसैं हो है। ताका समाधान—

वह तौ पापी था, जाकै हिंसादिकी प्रवृत्तिका भय नाहीं। परंतु जो जीव ग्रैवेयिकआदिविषै जाय है, ताकैं ऐसा ज्ञान हो है, सो तौ श्रद्धानरहित नाहीं। वाकै तौ ऐसा ही श्रद्धान है, ए ग्रंथ सांचे हैं परंतु तत्त्वश्रद्धान सांचा न भया। समयसारविषै

एक ही जीवकै धर्म्मका श्रद्धान एकादशांगका ज्ञान महाव्रतादि-कका पालना लिख्या है। प्रवचनसारविषै ऐसा लिख्या है—आगमज्ञान ऐसा भया जाकरि सर्वपदार्थनिकौं हस्तामलकवत् जानै है। यह भी जानै है इनका जाननहारा मैं हूं। परंतु मैं ज्ञानस्वरूप हों ऐसा आपकौं परद्रव्यतैं भिन्न केवल चैतन्यद्रव्य नाहीं अनुभवै है। तातैं आत्मज्ञानशून्य आगमज्ञान भी कार्यकारी नाहीं। या प्रकार सम्यग्ज्ञानके अर्थि जैनशास्त्रनिका अभ्यास करै है, तौ भी याकैं सम्यग्ज्ञान नाहीं।

बहुरि इनिकै सम्यक्चारित्रकै अर्थि कैसैं प्रवृति हैं, सो कहिए है—बाह्यक्रियाऊपरि तौ इनकै दृष्टी है, अर परिणाम सुधरने बिगरनेका विचार नाहीं। जो परिणामनिका भी विचार होय, तौ जैसा अपना परिणाम होता दीसै, तिनहीकै ऊपरि दृष्टि रहै है। परंतु उन परिणामनिकी परंपरा विचारें अभिप्राय विषै जो वासना है, ताकौं न विचारै है। अर फल लागै है, सो अभिप्रायविषै वासना है, ताका फल लागै है। सो इसका विशेष व्याख्यान आगैं करैंगे। तहां स्वरूप नीकै भासैगा। ऐसी पहिचानि विना बाह्य आचरणका ही उद्यम है। तहां केई जीव तौ कुलक्रमकरि वा देखादेखी वा क्रोध मान माया लोभादिकतैं आचरण आचरै हैं। सो इनकै तौ धर्मबुद्धि ही नाहीं। सम्यक्चारित्र काहेतैं होय। ए जीव कोई तौ भोले हैं वा कषायी हैं, सो अज्ञानभाव कषाय होतैं सम्यक्चारित्र होता नाहीं। बहुरि केई जीव ऐसा मानै हैं; जो जाननेमैं कहा है, अर माननेमैं कहा है, किछू करैगा तौ

फल लागैगा। ऐसैं विचारि व्रत तप आदि क्रियाहीका उद्यमी रहै हैं अर तत्वज्ञानका उपाय न करै हैं। सो तत्वज्ञान विना महाव्रतादिकका आचरण भी मिथ्याचारित्र ही नाम पावै है। अर तत्वज्ञान भए किछू भी व्रतादि नाहीं है, तौ भी असंयत सम्यग्दृष्टी नाम पावै है। तातैं पहलैं तत्वज्ञानका उपाय करना, पीछैं कषाय घटावनेकौं बाह्य साधन करना। सो ही **योगींद्रदेव-कृत श्रावकाचारविषै** कह्या है—

दंसणभूमिह बाहिरा, जिय वयरुक्ख ण होंति।

याका अर्थ-यह सम्यग्दर्शनभूमिका विना हे जीव व्रतरूपी वृक्ष न होय। भावार्थ--जिन जीवनिकै तत्वज्ञान नाहीं, ते यथार्थ आचरण न आचरै हैं। सोई विशेष दिखाईए है--

केई जीव पहलैं तौ बड़ी प्रतिज्ञा धरि बैठैं अर अंतरंगविषै कषायवासना मिटी नाहीं। तब जैसैं तैसैं प्रतिज्ञा पूरि किया चाहैं, तहां तिस प्रतिज्ञाकरि परिणाम दुखी होय हैं। जैसैं बहुत उपवासकरि बैठैं पीछैं पीड़ातैं दुखी हुवा रोगीवत् काल गमावै, धर्म्मसाधन न करै। सो पहलैं ही सधती जानिए तितनी ही प्रतिज्ञा क्यौं न लीजिए। दुखी होनेमैं आर्त्तध्यान होय, ताका फल भला कैसैं लागैगा? अथवा उस प्रतिज्ञाका दुख सह्या न जाय, तब ताकी एवज विषयपोषनेकौं अन्य उपाय करै। जैसैं तृषा लागै, तब पानी तौ न पीवै अर अन्य शीतल उपचार अनेक प्रकार करै। वा घृत तौ छोड़ै अर अन्य स्निग्धवस्तुकौं उपायकरि भखै। ऐसैं ही अन्य जानना। सो परीषह न सह्या जाय

था, विषयवासना न छूटै थी, तौ ऐसी प्रतिज्ञा काहेकौं करी। सुगमविषय छोड़ि विषमविषयनिका उपाय करना पड़ै, ऐसा कार्य काहेकौं कीजिए। यहां तौ उलटा रागभाव तीव्र हो है। अथवा प्रतिज्ञाविषै दुख होय, तब परिणाम लगावनेकौं कोई आलंबन विचारै। जैसैं उपवासकरि पीछैं क्रीड़ा करै। केई पापी जूवा आदि कुविसनविषैं लगै हैं। अथवा सोय रह्या चाहैं। यह जानैं, किसी प्रकारकरि काल पूरा करना। ऐसैं ही अन्य प्रतिज्ञाविषैं जाननं। अथवा केई पापी ऐसे भी हैं, पहलैं प्रतिज्ञा करैं पीछैं तिसतैं दुखी होय, तब प्रतिज्ञा छोड़ दें। प्रतिज्ञा लेना छोड़ना तिनकै ख्यालमात्र हैं। सो प्रतिज्ञा भंग करनेका महापाप है। इसतैं तौ प्रतिज्ञा न लेनी ही भली है। या प्रकार पहलैं तौ निर्विचार होय प्रतिज्ञा करैं, पीछैं ऐसी इच्छा होय। सो जैन धर्मविषै प्रतिज्ञा न लेनेका दंड तौ है नाहीं। जैनधर्मविषै तौ यह उपदेश है, पहिलैं तौ तत्त्वज्ञानी होय। पीछैं ताका त्याग करैं ताका दोष पहिचानै। त्याग किए गुण होय, ताकौं जानै। बहुरि अपने परिणामनिका ठीक करै। वर्त्तमान परिणामनिहीकै भरोसे प्रतिज्ञा न करि बैठै। आगामी निर्वाह होता जानै, तौ प्रतिज्ञा करै। बहुरि शरीरकी शक्ति वा द्रव्य क्षेत्र काल भावादिकका विचार करै। ऐसैं विचारें पीछैं प्रतिज्ञा करनी, सो भी ऐसी करनी जिस प्रतिज्ञातैं निरादरपना न होय, परिणाम चढ़ते रहैं। ऐसी जैनधर्मकी आम्नाय है। यहां कोऊ कहै, चांडालादिकौंनैं प्रतिज्ञा करीं, तिनकै इतना विचार कहां हो है। ताका समाधान—

मरणपर्यंत कष्ट होय, तौ होहु परंतु प्रतिज्ञा न छोड़नी, ऐसा विचारकारि प्रतिज्ञा करै हैं ।प्रतिज्ञाविषै निरादरपना नाहीं। अर सम्यग्दृष्टि प्रतिज्ञा करै है, सो तत्वज्ञानादिपूर्वक ही करै है। बहुरि जिनकै अंतरंग विरक्तता न भई अर बाह्य प्रतिज्ञा धरैं हैं, ते प्रतिज्ञाके पहलैं वा पीछैं जाकी प्रतिज्ञा करैं, ताविषै अति आसक्त होय लागै हैं। जैसैं उपवासके धारनैं पारनैं भोजनविषै अतिलोभी होय गरिष्ठादि भोजन करैं, शीघ्रता घनी करैं। सो जैसे जलकौं मूंदि राख्या था, छूट्या तब ही बहुत प्रवाह चलने लागा। तैसैं प्रतिज्ञाकरि विषयप्रवृत्ति मूंदि अंतरंग आसक्तता वधती गई। प्रतिज्ञा पूरी होनैं ही अत्यंत विषयप्रवृत्ति होने लागी सो प्रतिज्ञाका कालविषै विषयवासना मिटी नाहीं। आगें पीछैं तिसकी एवज अधिक राग किया, तौ फल तौ रागभाव मिटे होगा। तातैं जेती विरक्तता भई होय तितनी ही प्रतिज्ञा करनी। महामुनि भी, थोरी प्रतिज्ञा करैं पीछैं आहारादिविषै उछटि करैं। अर बड़ी प्रतिज्ञा करै हैं, सो अपनी शक्ति देखि करै हैं। जैसैं परिणाम चढ़ते रहैं, सो करैं हैं। प्रमाद भी न होय अर आकुलता भी न उपजै। ऐसी प्रवृत्ति कारिजकारी जाननी। बहुरि जिनकै धर्मऊपरि दृष्टि नाहीं, ते कबहू तौ बड़ा धर्म आचरैं कबहू अधिक स्वच्छन्द होय प्रवर्त्तैं। जैसैं कोई धर्मपर्वविषै तौ बहुत उपवासादि करै, कोई धर्मपर्वविषै वारंवार भोजनादि करै। सो धर्मबुद्धि होय, तौ सर्व धर्मपर्वनिविषै यथायोग्य संयमादि धरै। बहुरि कबहू तौ कोई धर्मकार्यनिविषै बहुत धन खरचै, कबहू

कोई धर्मकार्य आनि प्राप्त भया होय, तौ भी तहां थोरा भी धन न खरचै। सो धर्मबुद्धि होय, तौ यथाशक्ति यथायोग्य सर्व ही धर्मकार्यनिविषै धन खरच्या करै। ऐसैं ही अन्य जानना। बहुरि जिनकै सांचा धर्मसाधन नाहीं, ते कोई क्रिया तौ बहुत बड़ी अंगीकार करैं अर कोई हीनक्रिया किया करैं। जैसैं धनादिकका तौ त्याग किया, अर चोखा भोजन चोखा वस्त्र इत्यादि विषयनिविषै विशेष प्रवर्तैं। बहुरि कोई जामा पहरना, स्त्रीसेवन करना, इत्यादि कार्यनिका तौ त्यागकरि धर्मात्मापना प्रकट करैं, अर पीछैं खोटे व्यापारादि कार्य करैं। तहां लोकनिंद्य पापक्रियाविषै प्रवर्तैं। ऐसैं ही कोई क्रिया अति ऊंची, केई क्रिया अति नीची करैं। तहां लोकनिंद्य होय, धर्मकी हास्य करावैं। देखो अमुक धर्मात्मा ऐसे कार्य करै हैं। जैसैं कोई पुरुष एक वस्त्र तौ अति उत्तम पहरै, एक वस्त्र अति हीन पहरैं, तौ हास्य ही होय। तैसैं यह हास्य पावै हैं सांचा धर्मकी तौ यह आम्नाय है, जेता अपना रागादि दूरि भया होय, ताकै अनुसार जिस पदविषै जो धर्मक्रिया संभवै, सो सब अंगीकार करै। जो थोरा रागादि मिट्या होय, तौ नीचा ही पदविषै प्रवर्तैं। परंतु ऊंचा पद धराय, नीची क्रिया न करै। यहां प्रश्न—जो स्त्रीसेवनादिकका त्याग ऊपरिकी प्रतिमाविषै कह्या है, सो नीचली अवस्थावाला तिनका त्याग करै कि न करै। ताका समाधान—

सर्वथा तिनका त्याग नीचली अवस्थावाला कर सकता नाहीं। कोई दोष लागै है तातैं ऊपरिकी प्रतिमाविषै त्याग कह्या है।

नीचली अवस्थाविषै जिसप्रकार त्याग संभवै, तैसा नीचली अवस्थावाला भी करै। परंतु जिस नीचली अवस्थाविषै जो कार्य संभवै नाहीं, ताका करना तौ कषायभावनिहीतैं हो है। जैसैं कोऊ सप्तव्यसन सेवै, स्वस्त्रीका त्याग करै, कैसैं बनै। यद्यपि स्वस्त्रीका त्याग करना धर्म है, तथापि पहलैं सप्तव्यसनका त्याग होय, तब ही स्वस्त्रीका त्याग करना योग्य है ऐसैं ही अन्य जानने। बहुरि सर्व प्रकार धर्मकौं न जानै, ऐसा जीव कोई धर्मका अंगकौं मुख्यकरि अन्य धर्मनिकौं गौण करै है। जैसैं केई जीव दयाधर्मकौं मुख्यकरि पूजा प्रभावनादि कार्यकौं उथापै हैं, केई पूजा प्रभावनादि धर्मकौं मुख्यकरि हिंसादिकका भय न राखैं हैं केई तपकी मुख्यताकरि आर्तध्यानादिकरिकैं भी उपवासादि करैं वा आपकौं तपस्वी मानि निःशंक क्रोधादि करैं, केई दानकी मुख्यताकरि बहुत पाप करकैं भी धन उपजाय दान दे हैं केई आरंभत्यागकी मुख्यताकरि याचना करने लगि जांय हैं, केई जीव हिंसा मुख्यकरि स्नानशौचादि नाहीं करै हैं वा लौकिक कार्य आएं धर्म छोड़ि तहां लागि जाना इत्यादि करै हैं। इत्यादि प्रकारकरि कोई धर्मकौं मुख्यकरि अन्य धर्मकौं न गिनै हैं, वा वाकै आसरै पाप आचरै हैं। सो जैसै अविवेकी व्यापारीकौं काहू व्यापारके नफेके अर्थि अन्य प्रकारकरि घना तोटा होय है, तैसैं यह कार्य भया। सो जैसैं विवेकी व्यापारीका प्रयोजन नफा हैं, सर्व विचारकरि जैसैं नफा घना होय तैसैं करै। तैसैं ज्ञानीका प्रयोजन वीतरागभाव है। सर्व विचारकरि जैसैं वीतरागभाव

घना होय, तैसैं करै। जातैं मूलधर्म वीतरागभाव है। याही प्रकार अविवेकी जीव अन्यथा धर्म अंगीकार करै हैं, तिनकै तौ सम्यक्चारित्र आभास भी न होय। बहुरि केई जीव अणुव्रत महाव्रतादिरूप यथार्थ आचरण करै हैं। बहुरि आचरणकै अनुसार ही परिणाम हैं। कोई माया लोभादिकका अभिप्राय नाहीं है। इनकौं धर्म जानि मोक्षकै अर्थि इनका साधन करै हैं। कोई स्वर्गादिक भोगनिकी इच्छा न राखै, परंतु तत्त्वज्ञान पहलैं न भया तातैं आप तौ जानै मोक्षका साधन करौं हौं अर मोक्षका साधन जो है, ताकौं जानै भी नाहीं। केवल स्वर्गादिक-हीका साधन करै, सो मिश्रीकौं अमृत जानि भखै हैं अमृतका गुण तौ न होय। आपकी प्रतीतिकै अनुसार नफा फल होता नाहीं। फल जैसा साधन करै, तैसा ही लागै है। शास्त्रविषै ऐसा कह्या है—चारित्रविषै 'सम्यक्' पद है, सो अज्ञानपूर्वक आचरणकी निवृत्तिकै अर्थि है। तातैं पहलैं तत्वज्ञान होय, तहां पीछैं चारित्र होय, सो सम्यक्चारित्र नाम पावै है। जैसैं कोई खेतीवाला बीज तौ बोवै नाहीं अर अन्य साधन करै, तौ अन्नप्राप्ति कैसैं होय। घास फूस ही होय। तैसैं अज्ञानी तत्त्वज्ञानका तौ अभ्यास करै नाहीं, अर अन्य साधन करै, तौ मोक्षप्राप्ति कैसैं होय देवपदादिक ही होय। तहां केई जीव तौ ऐसे हैं, तत्त्वादिकका नीकै नाम भी न जानै, केवल व्रतादिकविषै ही प्रवर्त्तै हैं। केई जीव ऐसे हैं, पूर्वोक्तप्रकार सम्यग्दर्शन ज्ञानका अयथार्थ साधनकरि व्रतादिविषै प्रवर्त्तै हैं। सो यद्यपि व्रतादिक यथार्थ आचरैं, तथापि यथार्थ

श्रद्धान ज्ञानविना सर्व आचरण मिथ्याचारित्र ही है । सो ही समयसारका कलशाविषै कह्या है—

क्लिश्यन्तां स्वयमेव दुर्धरतरैर्मोक्षोन्मुखैः कर्मभिः
क्लिश्यन्तां च परे महाव्रततपोभारेण भग्नाश्चिरम् ।
साक्षान्मोक्ष इदं निरामयपदं संवेद्यमानं स्वयं
ज्ञानं ज्ञानगुणं विना कथमपि प्राप्तं क्षमन्ते न हि ॥ १ ॥

याका अर्थ—मोक्षतैं पराङ्मुख ऐसे अतिदुस्तर पंचाग्नि तपनादि कार्य तिनकरि आप ही क्लेश करै है, तौ करौ । बहुरि अन्य केई जीव महाव्रत अर तपका भारकरि चिरकालपर्यंत क्षीण होते क्लेश करै हैं, तौ करौ । परंतु यह साक्षात् मोक्षस्वरूप सर्वरोगरहित जो पद आपै आप अनुभवमैं आवै, ऐसा ज्ञान स्वभाव सो तौ ज्ञान-गुणविना अन्य कोई भी प्रकारकरि पावनेकौं समर्थ नाहीं है । बहुरि पंचास्तिकाय विषै जहां अंतविषै व्यवहाराभासवालोंका कथन किया है, तहां तेरहप्रकार चारित्र होतैं भी ताका मोक्षमार्गविषै निषेध किया है । बहुरि प्रवचनसारविषै आत्माज्ञानशून्य संयम-भाव अकार्यकारी कह्या है । बहुरि इनही ग्रंथनिविषै वा अन्य परमात्मप्रकाशादि शास्त्रनिविषै इस प्रयोजन लिए जहां तहां निरूपण है । तातैं पहलैं तत्त्वज्ञान भए ही आचरण कार्यकारी है । यहां कोऊ जानैगा, वाह्य तौ अणुव्रत महाव्रतादि साधै हैं, अंतरंग परिणाम नाहीं, वा स्वर्गादिककी वांछाकरि साधै है, सो ऐसैं साधैं तौ पापबंध होय । द्रव्यलिंगी मुनि ऊपरिम ग्रैवेयकपर्यंत जाय हैं । परावर्त्तननिविषै इकतीससागर पर्यंत देवायुकी प्राप्ति

अनंत वार होनी लिखी है। सो ऐसे ऊंचेपद तौ तब ही पावै; जब अंतरंग परिणामपूर्वक महाव्रत पालै, महामंदकषायी होय इस लोक परलोकका भोगादिककी चाहि न होय, केवल धर्मबुद्धितै मोक्षाभिलाषी हुवा साधन साधै। तातै द्रव्यलिंगीकै स्थूल तौ अन्यथापनो है नाहीं, सूक्ष्म अन्यथापनो है, सो सम्यग्दृष्टीकौं भासै है। अब इनकै धर्मसाधन कैसैं है, अर तामैं अन्यथापनो कैसैं है, सो कहिए है—

प्रथम तौ संसारविषै नरकादिकका दुख जानि स्वर्गादिविषै भी जन्म मरणादिका दुख जानि संसारतैं उदास होय, मोक्षकौं चाहै है। सो इन दुखनिकौं तौ दुख सब ही जानै हैं। इंद्र अहमिंद्रादिक विषयानुरागतैं इंद्रियजनित सुख भोगवै हैं ताकौं भी दुख जानि निराकुल सुखअवस्थाकौं पहचानि मोक्ष जानै हैं, सोई सम्यग्दृष्टि जानना। बहुरि विषयसुखादिकका फल नरकादिक है, शरीर अशुचि विनाशीक है, पोषनेयोग्य नाहीं, कुटुंबादिक स्वार्थके सगे हैं। इत्यादि परद्रव्यनिका दोष विचारि तिनका तौ त्याग करै है, व्रतादिकका फल स्वर्गमोक्ष है, तपश्चरणादि पवित्रफलके दाता हैं, तिनकरि शरीर सोखने योग्य है, देव गुरु शास्त्रादि हितकारी हैं। इत्यादि परद्रव्यनिका गुण विचारि तिनहीका अंगीकार करै है। इत्यादि प्रकारकरि कोई परद्रव्यकौं बुरा जानि अनिष्ट श्रदहै है। कोई परद्रव्यकौं भला जानि इष्ट श्रदहै है। सो परद्रव्यविषै इष्ट अनिष्टरूप श्रद्धान सो मिथ्या है। बहुरि इसही श्रद्धानतैं याकै उदासीनता भी द्वेषबुद्धिरूप हो है। जातैं काहूकौं बुरा जानन

ताहीका नाम द्वेष है। कोऊ कहैगा, सम्यग्दृष्टी भी तौ बुरा जानि परद्रव्यकौं त्यागै है। ताका समाधान —

सम्यग्दृष्टी परद्रव्यनिकौं बुरा न जानै है। अपना रागभावकौं बुरा जानै है। आप सरागभावकौं छोरै, तातैं ताका कारणका भी त्याग हो है। वस्तु विचारें कोई परद्रव्य तौ भला बुरा है नाहीं। कोऊ कहैगा, निमित्तमात्र तौ है। ताका उत्तर—

परद्रव्य जोरावरी तौ क्यौंई विगारता नाहीं। अपने भाव विगरैं तब वह भी बाह्यनिमित्त है। बहुरि वाका निमित्तविना भी भाव विगरै हैं। तातैं नियमरूप निमित्त भी नाहीं। ऐसे परद्रव्यका तौ दोष देखना मिथ्याभाव है। रागादिभाव ही बुरे हैं। सो याकै ऐसी समझि नाहीं। यह परद्रव्यनिका दोष देखि तिनविषै द्वेषरूप उदासीनता करै है। सांची उदासीनता तौ वाका नाम है, जो कोई ही परद्रव्यका गुण वा दोष न भासै, तातैं काहूकौं बुरा भला न जानै। आपकौं आप जानै, परकौं पर जानै, परतैं किछू भी प्रयोजन मेरा नाहीं, ऐसा मानि साक्षीभूत रहै। सो ऐसी उदासीनता ज्ञानीहीकै होय। बहुरि यह उदासीन होय शास्त्रविषै व्यवहारचारित्र अणुव्रत महाव्रतरूप कह्या है, ताकौं अंगीकार करै है, एकदेश वा सर्वदेश हिंसादिपापकौं छांड़ै है, तिनकी जायगा अहिंसादि पुण्यरूप कार्यनिविषै प्रवर्त्तै है। बहुरि जैसैं पर्यायाश्रित पापकार्यनिविषै कर्त्तापना मानै था तैसैं ही अब पर्यायाश्रित पुण्यकार्यनिविषै कर्त्तापना अपना मानने लगा, ऐसैं पर्यायाश्रित कार्यनिविषै अहंबुद्धि माननेकी समानता भई।

जैसैं मैं जीव मारों हौं, मैं परिग्रहधारी हौं, इत्यादिरूप मानि थी, तैसैंही मैं जीवनिकी रक्षा करौं हौं, मैं नग्न परिग्रहरहित हौं, ऐसी मानि भई। सो पर्यायाश्रित कार्यविषै अहंबुद्धि है, सो ही मिथ्यादृष्टि है। सोई समयसारविषै कह्या है–

ये तु कर्त्तारमात्मानं पश्यन्ति तमसावृत्ताः ॥
सामान्यजनवत्तेषां न मोक्षोपि मुमुक्षुतां ॥ १ ॥

याका अर्थ–जे जीव मिथ्याअंधकारव्याप्त होत संतैं आपकौं पर्यायाश्रित क्रियाका कर्त्ता मानै हैं, ते जीव मोक्षाभिलाषी हैं, तौऊ तिनकैं जैसैं अन्यमती सामान्य मनुष्यनिकै मोक्ष न होय, तैसैं मोक्ष न हो है। जातैं कर्त्तापनाका श्रद्धानकी समानता है। बहुरि ऐसैं आप कर्त्ता होय श्रावकधर्म वा मुनिधर्मकी क्रियाविषै मन वचन कायकी प्रवृत्ति निरंतर राखै है। जैसैं उन क्रियानिविषै मन भंग न होय, तैसैं प्रवर्तैं है। सो ऐसे भाव तौ सराग हैं। चारित्र हैं, सो वीतरागभावरूप है। तातैं ऐसे साधनकौं मोक्षमार्ग माननां मिथ्याबुद्धि है। यहां प्रश्न–जो सराग वीतराग भेदकरि दोयप्रकार चारित्र कह्या है, सो कैसैं है। ताका उत्तर– –

जैसैं तंदुल दोय प्रकार हैं–एक तुषरहित हैं, एक तुषसहित हैं। तहां ऐसा जानना–तुष है सो तंदुलका स्वरूप नाहीं। तंदुलविषै दोष है। अर कोई स्याना तुषसहित तंदुलका संग्रह करै था, ताकौं देखि कोई भोला तुषनिहीकौं तंदुल मानि संग्रह करैं, तौ वृथा खेदखिन्न ही होय। तैसैं चारित्र दोय प्रकार है-–एक सराग है एक वीतराग है। तहां ऐसा जानना-–राग है, सो चारित्रका

स्वरूप नाहीं। चारित्रविषै दोष है। अर केई ज्ञानी प्रशस्तराग--सहित चारित्र धारै हैं। तिनिकौं देखि कोई अज्ञानी प्रशस्तरागही-कौं चारित्र मानि संग्रह करै, तौ वृथा खेदखिन्न ही होय। यहां कोऊ कहैगा-पापक्रिया करतैं तीव्ररागादिक होते थे, अब इन क्रियानिकौं करतैं मंदराग भया। तातैं जेताअंश रागभाव घट्या, तितना अंश तौ चारित्र कहौ। जेता अंश राग रह्या, तेता अंश राग कहौ। ऐसैं याकै सरागचारित्र संभवै है। ताका समाधान—

जो तत्त्वज्ञानपूर्वक ऐसैं होय, तौ कहो हौ जैसैं ही है। तत्त्वज्ञानविना उत्कृष्ट आचरण होतैं भी असंयम ही नाम पावै है। जातैं रागभाव करनेका अभिप्राय नाहीं मिटै है। सोई दिखाईए है—

द्रव्यलिंगी मुनि राज्यादिककौं छोडि निर्ग्रंथ हो है, अठाईस मूलगुणनिकौं पालै है, उग्रोग्र अनशनादि घना तप करै है, क्षुधादिक बाईस परिषह सहै है, शरीरका खंड खंड भए भी व्यग्र न हो है, व्रतभंगके कारण अनेक मिलैं, तौं भी दृढ़ रहै है, कोईसेती क्रोध न करै है, ऐसा साधनका मान न करै है, ऐसे साधनविषै कोई कपटाई नाहीं है, इस साधनकरि इस लोक परलोकके विषयसुखकौं न चाहै है। ऐसी याकी दशा भई है। जो ऐसी दशा न होय, तौ ग्रैवेयकपर्यंत कैसैं पहुचै। परंतु याकौं मिथ्यादृष्टी असंयमी ही शास्त्रविषै कह्या। सो ताका कारण यह है—याकै तत्वनिका श्रद्धान ज्ञान सांचा भया नाहीं। पूर्वैं वर्णन किया, तैसैं तत्वनिका श्रद्धान ज्ञान भया है। तिस ही अभिप्राय सर्व साधन करै है। सो इन साधनिका अभिप्रायकी परंपराकौं

विचारें कषायनिका अभिप्राय आवे है। सो कैसैं सो सुनहु—

यह पापके कारण रागादिककौं तौ हेय जानि छोरे है, परंतु पुण्यका कारण प्रशस्तरागकौं उपादेय मानै है। ताके वधनेका उपाय करै है। सो प्रशस्तराग भी तौ कषाय है। कषायकौं उपादेय मान्या, तब कषाय करनेका ही श्रद्धान रह्या। अप्रशस्त परद्रव्यनिसौं द्वेषकरि प्रशस्त परद्रव्यनिविषै राग करनेका अभिप्राय भया। किछू परद्रव्यनिविषै साम्यभावरूप अभिप्राय न भया। यहां प्रश्न—जो सम्यग्दृष्टी भी तौ प्रशस्तरागका उपाय राखै है। ताका उत्तर—

जैसैं काहूकै बहुत दंड होता था, सो वह थोरा दंड देनेका उपाय राखै है। अर थोरा दंड दिए हर्ष भी मानै है परंतु श्रद्धानविषै दंड देना, अनिष्ट ही मानै है। तैसैं सम्यग्दृष्टीकै पापरूप बहुत कषाय होता था, सो यह पुण्यरूप थोरा कषाय-करनेका उपाय राखै है। अर थोरा कषाय भए हर्ष भी मानै है। परंतु श्रद्धानविषै कषायकौं हेय ही मानै है। बहुरि जैसैं कोऊ कुमाईका कारण जानि व्यापारादिकका उपाय राखै है। उपाय बनि आएं हर्ष मानै है। तैसैं द्रव्यलिंगी मोक्षका कारण जानि प्रशस्तरागका उपाय राखै है। उपाय बनि आए हर्ष मानै है। ऐसैं प्रशस्तरागका उपायविषै वा हर्षविषै समानता होतैं भी सम्यग्दृष्टीकै तौ दंडसमान मिथ्यादृष्टीकै व्यापारसमान श्रद्धान पाईए है। तातैं अभिप्रायविषै विशेष भया। बहुरि याकै परीषह तपश्चरणादिकके निमित्ततैं दुख होय, ताका इलाज तौ न करै है, परंतु दुख वेदै

है। सो दुखका वेदना कषाय ही है। जहां वीतरागता हो है, तहां तौ जैसें अन्य ज्ञेयकों जानै है, तैसें ही दुखका कारण ज्ञेयकों जानै है। सो ऐसी दशा याकी न हो है। बहुरि उनकों सहै है, सो भी कषायका अभिप्रायरूप विचारतें सहै है। सो विचार ऐसा हो है-जो परवशपनै नरकादिगतिविषै बहुत दुख सहे, ये परीषहादिकका दुख तौ थोरा है। याकों स्ववश सहैं स्वर्ग मोक्षसुखकी प्राप्ति हो है,। जो इनकों न सहिए अर विषय-सुख सेईए, तौ नरकादिककी प्राप्ति हो है, तहां बहुत दुख होगा। इत्यादि विचारविषै परीषहनिविषै अनिष्टबुद्धि रहै है। केवल नरकादिकके भयतैं वा सुखके लोभतैं तिनकों सहै है। सो ए सर्व कषायभाव ही है। बहुरि ऐसा विचार हो है—जे कर्म बांधे, ते भोगेविना छूटते नाहीं। तातैं मोकों सहने आए। सो ऐसे विचारतें कर्मफल चेतनारूप प्रवर्त्तै है। बहुरि पर्यायदृष्टितें जो परीषहादिकरूप अवस्था हो है, ताकौं आपकै भई मानै है। द्रव्यदृष्टितें अपनी वा शरीरादिककी अवस्थाकौं भिन्न न पहिचानै है। ऐसें ही नानाप्रकार व्यवहार विचारतें परीषहादिक सहै है। बहुरि यानैं राज्यादि विषयसामग्रीका त्याग किया है, वा इष्ट भोजनादिकका त्याग किया करै है। सो जैसें कोऊ दाहज्वरवाला वायु होनेके भयतैं शीतलवस्तु सेवनका त्याग करै है, परंतु यावत् शीतल वस्तुका सेवन रुचै, तावत् वाकै दाहका अभाव न कहिए। तैसें रागसहित जीव नरकादिकके भयतैं विषयसेवना त्याग करै है, परन्तु यावत् विषयसेवनरुचै, तावत् रागका अभाव न कहिए।

बहुरि जैसैं अमृतका आस्वादी देवकौं अन्य भोजन स्वयमेव न रुचै, तैसैं स्वरसका आस्वादकरि विषयसेवनकी रुचि याकै न हो है। या प्रकार फलादिककी अपेक्षा परीषहसहनादिकौं सुखका कारण जानै है। अर विषयसेवनादिकौं दुखका कारण जानै है। बहुरि तत्कालविषै परीषह सहनादिकतैं दुख होना मानै है। विषयसेवनादिकतैं सुख मानै है। बहुरि जिनतैं सुख दुख होना मानिए, तिनविषै इष्ट अनिष्ट बुद्धितैं राग द्वेषरूप अभिप्रायका अभाव होय नाहीं। बहुरि जहां रागद्वेष हैं, तहां चारित्र होय नाहीं। तातैं यह द्रव्यलिंगी विषयसेवन छोरि तपश्चरणादि करै है, तथापि असंयमी है। सिद्धांतविषै असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टीतैं भी याकौं हीन कह्या है। तातैं उनकै चौथा पांचवां गुणस्थान है, याकै पहला ही गुणस्थान है। यहां कोऊ कहै—असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टीकै कषायनिकी प्रवृत्ति विशेष है, अर द्रव्यलिंगी मुनिकै थोरी है, यातैं असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टी तौ सोलहवां स्वर्गपर्यंत ही जाय अर द्रव्यलिंगी ऊपरिम ग्रैवेयकपर्यंत जाय। तातैं भावलिंगी मुनितैं तौ द्रव्यलिंगीकौं हीन कहौ, असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टीतैं याकौं हीन कैसैं कहिए। ताका समाधान—

असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टीकै कषायनिकी प्रवृत्ति तौ है, परंतु श्रद्धानविषै किसी ही कषायके करनेका अभिप्राय नाहीं। बहुरि द्रव्यलिंगीकै शुभकषाय करनेका अभिप्राय पाईए है। श्रद्धानविषै तिनकौं भले जानै है। तातैं श्रद्धानअपेक्षा असंयत

सम्यग्दृष्टीतैं भी याकै अधिक कषाय है । बहुरि द्रव्यलिंगीकै योग-
निकी प्रवृत्ति शुभरूप घनी हो है । अर अघातिकर्मनिविषै पुण्य
पापबंधका विशेष शुभ अशुभ योगनिकै अनुसार है । तातैं उप-
रिम ग्रैवेयकपर्यंत पहुंचै है, सो किछू कार्यकारी नाहीं । जातैं अघा-
तिया कर्म आत्मगुणके घातक नाहीं । इनके उदयतैं ऊंचे नीचेपद
पाए तौ कहा भया । ए तौ बाह्य संयोगमात्र संसारदशाके स्वांग हैं ।
आप तौ आत्मा है, तातैं आत्मगुणके घातक ए कर्म्म हैं तिनका
हीनपना कार्यकारी है । सो घातिया कर्म्मनिका बंध बाह्य प्रवृत्तिकै
अनुसार नाहीं । अंतरंग कषायशक्तिकै अनुसार है । याहीतैं
द्रव्यलिंगीतैं असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टिकै घातिकर्म्मनिका बंध
थोरा है । द्रव्यलिंगीकै तौ सर्व घातिकर्मनिका बंध बहुत स्थिति
अनुभाग लिए होय । अर असंयत देशसंयत सम्यग्दृष्टिकै मि-
थ्यात्व अनंतानुबंधी आदि कर्मनिका तौ बंध है ही नाहीं । अवशे
षनिका बंध हो है, सो स्तोक स्थिति अनुभाग लिए हो है । बहुरि
द्रव्यलिंगीकै कदाचित् गुणश्रेणीनिर्जरा न होय, सम्यग्दृष्टीकै
कदाचित् हो है । देशसकलसंयम भए निरंतर हो है । याहीतैं
यह मोक्षमार्ग भया है । तातैं द्रव्यलिंगी मुनि असंयत देशसंयत
सम्यग्दृष्टीतैं हीन कह्या है । सो समयसारविषै द्रव्यलिंगी मुनिका
हीनपना गाथा वा टीका कलशानिविषै प्रगट किया है । बहुरि
पंचास्तिकायकी टीकाविषै जहां केवल व्यवहारावलंबीका कथन किया
है, तहां व्यवहार पंचाचार होतैं भी ताका हीनपना ही प्रगट किया
है । बहुरि प्रवचनसारविषै संसारतत्त्व द्रव्यलिंगीकौं कह्या । बहुरि

परमात्मप्रकाशादि अन्य शास्त्रनिविषैं भी इस व्याख्यानकौं स्पष्ट किया है। बहुरि द्रव्यलिंगीकै जो जप तप शील संयमादि क्रिया हैं, तिनकौं भी अकार्यकारी इन शास्त्रनिविषै जहां दिखाये हैं, सो तहां देखि लेना। यहां ग्रंथ वधनेके भयतैं नाहीं लिखिए है। ऐसैं केवल व्यवहाराभासके अवलंबी मिथ्यादृष्टी तिनका निरूपण किया।

अब निश्चय व्यवहार दोऊ नयनिके आभासकौं अवलंबै हैं, ऐसे मिथ्यादृष्टी तिनिका निरूपण कीजिए है—

जे जीव ऐसा मानै हैं–जिनमतविषै निश्चय व्यवहार दोय नय कहे हैं, तातैं हमकौं तिनि दोऊनिका अंगीकार करना। ऐसैं विचारि जैसैं केवल निश्चयाभासके अवलंबीनिका कथन किया था तैसैं तौ निश्चयका अंगीकार करै हैं अर जैसैं केवल व्यवहाराभासके अवलंबीनिका कथन किया था, तैसैं व्यवहारका अंगीकार करैं हैं। यद्यपि ऐसैं अंगीकार करनेविषै दोऊ नयनिविषैं परस्पर विरोध है, तथापि करैं कहा, सांचा तो दोऊ नयनिका स्वरूप भास्या नाहीं, अर जिनमतविषै दोय नय कहे तिनविषै काहूकौं छोड़ी भी जाती नाहीं। तातैं भ्रम लिए दोऊनिका साधन साधै हैं, ते भी जीव मिथ्यादृष्टि जानने।

अब इनिकी प्रवृत्तिका विशेष दिखाईए है-- अंतरंगविषै आप तौ निर्धार करि यथावत् निश्चय व्यवहार मोक्षमार्गकौ पहिचान्या नाहीं। जिनआज्ञा मानि निश्चय व्यवहाररूप मोक्षमार्ग दोय प्रकार मानै है। सो मोक्षमार्ग दोय नाहीं। मोक्षमार्गका निरूपण

दोय प्रकार है । जहां सांचा मोक्षमार्गकौं मोक्षमार्ग निरूपण सो निश्चय मोक्षमार्ग हैं । अर जहां जो मोक्षमार्ग तौ है नाहीं, परंतु मोक्षमार्गका निमित्त है, वा सहचारी है, ताकौं उपचार करि मोक्षमार्ग कहिए, सो व्यवहार मोक्षमार्ग है । जातैं निश्चय व्यवहारका सर्वत्र ऐसा ही लक्षण है । सांचा निरूपण सो निश्चय, उपचार निरूपण सो व्यवहार, तातैं निरूपण अपेक्षा दोय प्रकार मोक्षमार्ग जानना । एक निश्चयमोक्षमार्ग है, एक व्यवहारमोक्षमार्ग है । ऐसैं दोय मोक्षमार्ग मानना मिथ्या है । बहुरि निश्चय व्यवहार दोऊनिकूं उपादेय मानै है सो भी भ्रम है । जातैं निश्चय व्यवहारका स्वरूप तौ परस्पर विरोध लिए है । जातैं **समयसार**विषै ऐसा कह्या है—

ववहारो भूदत्थो भूदत्थो देसिऊण सुद्धणओ ।

याका अर्थ-व्यवहार अभूतार्थ है । सत्य स्वरूपकौं न निरूपै है । किसी अपेक्षा उपचारकरि अन्यथा निरूपै है । बहुरि शुद्ध नय जो निश्चय है, सो भूतार्थ है । जैसा वस्तुका स्वरूप है, तैसा निरूपै है । ऐसैं इनि दोऊनिका स्वरूप तो विरुद्धता लिए है । बहुरि तू ऐसैं मानैं है, जो सिद्धसमान शुद्ध आत्माका अनुभवन सो निश्चय अर व्रत शील संयमादिरूप प्रवृत्ति सो व्यवहार, सो ऐसा तेरैं मानना ठीक नाहीं । जातैं कोई द्रव्यभावका नाम निश्चय कोईका नाम व्यवहार, ऐसैं है नाहीं । एक ही द्रव्यके भावकौं तिसस्वरूप ही निरूपण करना, सो निश्चय नय है । उपचारकरि तिस द्रव्यके भावकौं अन्यद्रव्यके भावस्वरूप निरूपण

करनां; सो व्यवहार है। जैसें माटीके घड़ेकौं माटीका घड़ा निरू-पिए सो निश्चय, अर घृतसंयोगका उपचारकरि वाकौं ही घृतका घड़ा कहिए, सो व्यवहार। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। तातैं तू किसीकौं निश्चय मानै, किसीकौं व्यवहार मानै, सो भ्रम है। बहुरि तेरे मानने विषै भी निश्चय व्यवहारकै परस्पर विरोध आया। जो तू आपकौं सिद्ध मान शुद्ध मानै है, तौ व्रतादिक काहेकौं करै है। जो व्रतादिकका साधनकरि सिद्ध भया चाहै है, तौ वर्त्त-मानविषै शुद्ध आत्माका अनुभवन मिथ्या भया। ऐसैं दोऊ नयनिकै परस्पर विरोध है। तातैं दोऊ नयनिका उपादेयपना बनै नाहीं। यहां प्रश्न--जो समयसारादिविषै शुद्ध आत्माका अनुभवकौं निश्चय कह्या है। व्रत तप संयमादिककौं व्यवहार कह्या है, तैसैं ही हम मानै हैं। ताका समाधान—

शुद्ध आत्माका अनुभव सांचा मोक्षमार्ग है। तातैं वाकौं निश्चय कह्या। यहां स्वभावतैं अभिन्न परभावतैं भिन्न ऐसा शुद्ध-शब्दका अर्थ जानना। संसारीकौं सिद्ध मानना, ऐसा भ्रमरूप अर्थ शुद्धशब्दका न जानना। बहुरि व्रत तप आदि मोक्षमार्ग है नाहीं, निमित्तादिककी अपेक्षा उपचारतैं इनकौं मोक्षमार्ग कहिए है, तातैं इनकौं व्यवहार कह्या। ऐसैं भूतार्थ अभूतार्थ मोक्षमार्ग-पनाकरि इनकौं निश्चय व्यवहार कहे हैं। सो ऐसैं ही मानना। बहुरि ए दोऊ ही सांचे मोक्षमार्ग हैं। इन दोऊनिकौं उपादेय मानना; सो तौ मिथ्याबुद्धि ही है। तहां वह कहै है—श्रद्धान तौ निश्चयका राखै हैं, अर प्रवृत्ति व्यवहाररूप राखै हैं, ऐसैं हम

दोऊनिकौं अंगीकार करे हैं। सो भी बनै नाहीं। जातैं निश्चयका निश्चयरूप व्यवहारका व्यवहाररूप श्रद्धान करना युक्त है। एक ही नयका श्रद्धान भए एकांतमिथ्यात्व हो है। बहुरि प्रवृत्तिविषै नयका प्रयोजन ही नाहीं। प्रवृति तौ द्रव्यकी परणति है। तहां जिस द्रव्यकी परणति होय, ताकौं तिसहीकी प्ररूपिए सो निश्चय-नय अर तिसहीकौं अन्य द्रव्यकी प्ररूपिए, सो व्यवहारनय; ऐसैं अभिप्राय अनुसार प्ररूपणतैं तिस प्रवृत्तिविषै दोऊ नय बनैं हैं। किछु प्रवृति ही तौ नयरूप है नाहीं। तातैं या प्रकार भी दोऊ नयका ग्रहण मानना मिथ्या है। तौ कहा करिए, सो कहिए है— निश्चयनयकरि जो निरूपण किया होय, ताकौं तौ सत्यार्थ मानि ताका श्रद्धान अंगीकार करना अर व्यवहारनयकरि जो निरूपण किया होय, ताकौं असत्यार्थ मानि ताका श्रद्धान छोड़ना। सो ही समयसारविषै कह्या है—

सर्वत्राध्यवसायमेवमखिलं त्याज्यं यदुक्तं जिनै—
स्तन्मन्ये व्यवहार एव निखिलोऽप्यन्याश्रयस्त्याजितः।
सम्यग्निश्चयमेकमेव परमं निष्कम्प्यमाक्रम्य किं
शुद्धज्ञानघने महिम्नि न निजे बध्नन्ति सन्तो धृतिम् ॥१॥

याका अर्थ—जातैं सर्व ही हिंसादि वा अहिंसादिविषैं अध्य-वसाय है सो समस्त ही छोड़ना ऐसा जिनदेवनिकरि कह्या है। तातैं मैं ऐसैं मानौ हौं, जो पराश्रित व्यवहार है, सो सर्व ही छुड़ाया है। सन्तपुरुष एक निश्चयहीकौं भलै प्रकार निश्चयपनैं अंगीकारकरि शुद्धज्ञानघनरूप निजमहिमाविषै स्थिति क्यों न

करै हैं। भावार्थ–यहां व्यवहारका तौ त्याग कराया, तातैं निश्चयकौं अंगीकारकरि निजमहिमारूप प्रवर्त्तना युक्त है। बहुरि षट्पाहुड़विषै कह्या है--

जो सुत्तो ववहारे सो जोई जागदे सकज्जम्मि।
जो जागदि ववहारे सो सुत्तो अप्पणे कज्जे ॥ १ ॥

याका अर्थ--जो व्यवहारविषै सूता है, सो जोगी अपने कार्यविषै जागै है। बहुरि जो व्यवहारविषै जागै है, सो अपने कार्यविषै सूता है। तातैं व्यवहारनयका श्रद्धान छोड़ि निश्चय नयका श्रद्धान करना योग्य है। व्यवहारनय स्वद्रव्य परद्रव्यकौं वा तिनके भावनिकौं वा कारण कार्यादिककौं काहूकौं काहूविषै मिलाय निरूपण करै है। सो ऐसे ही श्रद्धानतैं मिथ्यात्व है। तातैं याका त्याग करना। बहुरि निश्चयनय तिनहीकौं यथावत् निरूपै है, काहूकौं काहूविषै न मिलावै है। ऐसे ही श्रद्धानतैं सम्यक्त हो है। तातैं याका श्रद्धान करना। यहां प्रश्न--जो ऐसैं है, तौ जिनमार्गविषै दोऊ नयनिका ग्रहण करना कह्या है, सो कैसैं। ताका समाधान--

जिनमार्गविषै कहीं तौ निश्चयनयकी मुख्यता लिए व्यवहार है ताकौ तौ 'सत्यार्थ ऐसैं ही है, ऐसा जानना। बहुरि कहीं व्यवहारनयकी मुख्यता लिए व्याख्यान है, ताकौं 'ऐसैं है नाहीं—निमित्तादि अपेक्षा उपचार किया है, ऐसा जानना। इस प्रकार जाननेका नाम ही दोऊ नयनिका ग्रहण है। बहुरि दोऊ नयनिके व्याख्यानकौं समान सत्यार्थ जानि ऐसैं भी है, ऐसैं भी है,

ऐसा भ्रमरूप प्रवर्त्तनेकरि तौ दोऊ नयनिका ग्रहण करना कह्या है नाहीं। बहुरि प्रश्न--जो व्यवहारनय असत्यार्थ है, तौ याका उपदेश जिनमार्गविषै काहेकौं दिया—एक निश्चयनयहीका निरूपण करना था। ताका समाधान—

ऐसा ही तर्क समयसारविषै किया है। तहां यह उत्तर दिया है——

जह णावि सक्कमणज्जो अणज्जभासं विणा उगाहेउं।
तह ववहारेण विणा परमत्थुवएसणमसक्कं ॥ १ ॥

याका अर्थ-जैसैं अनार्य जो म्लेछ सो ताहि म्लेछभाषा विना अर्थ ग्रहण करावनेकौं समर्थ न हूजे। तैसैं व्यवहार विना परमार्थका उपदेश अशक्य है। तातैं व्यवहारका उपदेश है। बहुरि इसही सूत्रकी व्याख्याविषै ऐसा कह्या है- **व्यवहारनयो नानुसर्त्तव्यः**। यह निश्चयके अंगीकार करावनेकौं व्यवहारकरि उपदेश दीजिए है। बहुरि व्यवहारनय है, सो अंगीकार करने योग्य नाहीं। यहां प्रश्न—व्यवहार विना निश्चयका उपदेश कैसैं न होय। बहुरि व्यवहारनय कैसैं अंगीकार करना, सो कहो। ताका समाधान—

निश्चयनयकरि तौ आत्मा परद्रव्यतैं भिन्न स्वभावनितैं अभिन्न स्वयंसिद्ध वस्तु है। ताकौं जे न पहिचानै, तिनकौं ऐसैं ही कह्या करिए तौ वह समझै नाहीं। तब उनकौं व्यवहारनयकरि शरीरादिक परद्रव्यनिकी सापेक्षकरि नर नारक पृथ्वीकायादिरूप जीवके विशेष किए। तब मनुष्य जीव है, नारकी जीव है, इत्यादि प्रकार

लिए वाकै जीवकी पहचानि भई। अथवा अभेदवस्तुविषै भेद उपजाय ज्ञानदर्शनादि गुणपर्यायरूप जीवके विशेष किए, तब जाननेवाला जीव है, देखनेवाला जीव है, इत्यादि प्रकार लिए वाकै जीवकी पहिचानि भई। बहुरि निश्चयकरि वीतरागभाव मोक्षमार्ग है। ताकौं जे न पहिचानैं, ताकौं ऐसैं ही कह्या करिए तौ वह समझै नाहीं। तब उनकौं व्यवहारनयकरि तत्त्वश्रद्धान-ज्ञानपूर्वक परद्रव्यका निमित्त मेटनेकी सापेक्षकरि व्रत शील संयमादिकरूप वीतरागभावके विशेष दिखाए, तब वाकै वीतराग-भावकी पहचानि भई। याही प्रकार अन्यत्र भी व्यवहारविना निश्चयका उपदेशका न होना जानना। बहुरि यहां व्यवहारकरि नर नारकादिपर्यायहीकौं जीव कह्या, सो पर्यायहीकौं जीव न मानि लेना। पर्याय तौ जीव पुद्गलका संयोगरूप है। तहां निश्चयकरि जीवद्रव्य जुदा है, ताहीकौं जीव मानना। जीवका संयोगतैं शरीरादिककौं भी उपचारकरि जीव कह्या, सो कहने मात्र ही है। परमार्थतैं शरीरादिक जीव होते नाहीं। ऐसा ही श्रद्धान करना। बहुरि अभेदआत्माविषै ज्ञानदर्शनादि भेद किए, सो तिनकौं भेदरूप ही न मानि लेने। भेद तौ समझावनेके अर्थ हैं। निश्चयकरि आत्मा अभेद ही है। तिसहीकौं जीववस्तु मानना। संज्ञा संख्यादिकरि भेद कहे, सो कहने मात्र ही हैं। परमार्थतैं जुदे जुदे हैं नाहीं। ऐसा ही श्रद्धान करना। बहुरि परद्रव्यका निमित्त मेटनेकी अपेक्षा व्रत शील संयमादिककौं मोक्षमार्ग कह्या। सो इनहीकौं मोक्षमार्ग न मानि लेना। जातैं

परद्रव्यका ग्रहण त्याग आत्माकै होय, तौ आत्मा परद्रव्यका कर्त्ता हर्त्ता होय ; सो कोई द्रव्य कोई द्रव्यकै आधीन है नाहीं । तातैं आत्मा अपने भाव रागादिक हैं, तिनकौं छोड़ि वीतरागी हो है । सो निश्चयकरि वीतराग भाव ही मोक्षमार्ग है ; वीतराग भावनिकै अर व्रतादिकनिकै कदाचित् कार्यकारणपनो है । तातैं व्रतादिककौं मोक्षमार्ग कहे, सो कहने मात्र ही हैं । परमार्थतैं बाह्यक्रिया मोक्षमार्ग नाहीं, ऐसा ही श्रद्धान करना । ऐसैं ही अन्यत्र भी व्यवहारनयका अंगीकार करना जानि लेना । यहां प्रश्न–जो व्यवहारनय परकौं उपदेशविषै ही कार्यकारी है कि, अपना भी प्रयोजन साधै है । ताका समाधान--

आप भी यावत् निश्चयनयकरि प्ररूपित वस्तुकौं न पहिचानै तावत् व्यवहारमार्गकरि वस्तुका निश्चय करै । तातैं नीचली दशाविषै आपकौं भी व्यवहारनय कार्यकारी है परंतु व्यवहारकौं उपचार मात्र मानि वाकै द्वारि वस्तुका ठीक करै, तौ कार्यकारी होय । बहुरि जो निश्चयवत् व्यवहार भी सत्यभूत मानि वस्तु ऐसैं ही है, ऐसा श्रद्धान करै, तौ उलटा अकार्यकारी होय जाय । सो ही पुरुषार्थ सिद्ध्युपायविषै कह्या है--

अबुधस्य बोधनार्थं मुनीश्वरा देशयन्त्यभूतार्थम् ।
व्यवहारमेव केवलमवैति यस्तस्य देशना नास्ति ॥६॥
माणवक एव सिंहो यथा भवत्यनवगीतसिंहस्य ।
व्यवहार एव हि तथा निश्चयतां यात्यनिश्चयज्ञस्य ॥७॥

इनका अर्थ----मुनिराज अज्ञानीके समझावनेकौं असत्यार्थ जो

व्यवहारनय ताकौं उपदेशै है। जो केवल व्यवहारहीकौं जानै है, ताकौं उपदेश ही देना योग्य नाहीं है। बहुरि जैसैं जो सांचा सिंहकौ न जानै, ताकै बिलाव ही सिंह है, तैसैं जो निश्चयकौं ना जानै, ताकै व्यवहार ही निश्चयपणाकौं प्राप्त हो है। यहां कोई निर्विचार पुरुष ऐसैं कहै--तुम व्यवहारकौं असत्यार्थ हेय कहो हौ, तौ हम व्रत शील संयमादिका व्यवहार कार्य काहेकौं करैं— सर्व छोड़ि देवैंगे। ताकौं कहिए है किछू व्रतशील संयमादिकका नाम व्यवहार नाहीं है। इनकौं मोक्षमार्ग मानना व्यवहार है, सो छोड़ि दे। बहुरि ऐसा श्रद्धानकरि जो इनकौं तौ बाह्य सहकारी जानि उपचारतैं मोक्षमार्ग कह्या है। ए तौ परद्रव्याश्रित हैं। बहुरि सांचा मोक्षमार्ग वीतरागभाव है, सो स्वद्रव्याश्रित है। ऐसैं व्यवहारकौं असत्यार्थ हेय जानना। व्रतादिककौं छोड़नेतैं तौ व्यवहारका हेयपना होता है नाहीं। बहुरि हम पूछैं है-व्रता-दिककौं छोड़ि कहा करैगा। जो हिंसादिरूप प्रवर्त्तैगा, तौ तहां तौ मोक्षमार्गका उपचार भी संभवै नाहीं। तहां प्रवर्त्तनेतैं कहा भला होयगा, नरकादिक पावैगा। तातैं ऐसै करना, तौ निर्वि-चारपना है। बहुरि व्रतादि परिणति मेटि केवल वीतराग उदासीन भावरूप होना बनै, तौ भलैं ही है। सो नींचली दशा विषै होय सकै नाहीं। तातैं व्रतादिसाधन छोड़ि स्वच्छंद होना योग्य नाहीं। या प्रकार श्रद्धानविषै निश्चयकौं, प्रवृत्तिविषै व्यवहारकौं, उपादेय मानना, सो भी मिथ्याभाव ही है।

बहुरि यह जीव दोऊ नयनिका अंगीकार करनेकै अर्थि

कदाचित् आपकौं शुद्ध सिद्धसमान रागादिरहित केवलज्ञानादि-सहित आत्मा अनुभवै है, ध्यानमुद्रा धारि ऐसे विचारविषै लागै है । सो ऐसा आप नाहीं, परंतु भ्रमकरि मैं ऐसा ही हौं, ऐसा मानि संतुष्ट हो है । कदाचित् वचनद्वारि निरूपण ऐसा ही करै है । सो निश्चय तौ यथावत् वस्तुकौं प्ररूपै, प्रत्यक्ष जैसा आप नाहीं तैसा आपकौं मानना, सो निश्चय नाम कैसैं पावै । जैसैं केवल निश्चयाभासवाला जीवकै पूर्वं अयथार्थपना कह्या था, तैसैं ही याकै जानना । अथवा यह ऐसैं मानै है, जो इस नयकरि आत्मा ऐसा है, इस नयकरि ऐसा है, सो आत्मा तौ जैसा है तैसा है ही, तिसविषै नयकरि निरूपण करनेका जो अभिप्राय है, ताकौं न पहिचानै है । जैसैं आत्मा निश्चयकरि तौ सिद्धसमान केवलज्ञानादिसहित द्रव्यकर्म—नोकर्म-भावकर्मरहित है, व्यवहार-नयकरि संसारी मतिज्ञानादिसहित वा द्रव्यकर्म-नोकर्म-भावकर्म-सहित है, ऐसा मानै है । सो एक आत्माके ऐसे दोय स्वरूप तौ होय नाहीं । जिस भावहीका सहितपना तिस भावहीका रहितपना एकवस्तुविषै कैसैं संभवै । तातैं ऐसा मानना भ्रम है । तौ कैसैं है—जैसैं राजा रंक मनुष्यपनेकी अपेक्षा समान है तैसैं सिद्ध संसारी जीवत्वपनेकी अपेक्षा समान कहे हैं । केवलज्ञानादि अपेक्षा समानता मानिए, सो है नाहीं । संसारीकै निश्चयकरि मतिज्ञानादिक ही हैं । सिद्धकै केवलज्ञान है । इतना विशेष है—संसारीकै मतिज्ञानादिक कर्मका निमित्ततैं है, तातैं स्वभावअपेक्षा संसारीकै केवलज्ञानकी शक्ति कहिए, तौ दोष नाहीं । जैसैं रंक-

मनुष्यकै राजा होनेकी शक्ति पाईए, तैसैं यह शक्ति जाननी। बहुरि द्रव्यकर्म नोकर्म पुद्गलकरि निपजे हैं, तातैं निश्चयकरि संसारीकै भी इनका भिन्नपना हैं। परंतु सिद्धवत् इनका कारण कार्यसंबंध भी न मानै, तौ भ्रम ही है। बहुरि भावकर्म आत्माका भाव है, सो निश्चयकरि आत्माहीका है। कर्मके निमित्ततैं हो है, तातैं व्यवहारकरि कर्मका कहिए है। बहुरि सिद्धवत् संसारीकै भी रागादिक न मानना, कर्महीका मानना यह भी भ्रम ही है। याही प्रकारकरि नयकरि एक ही वस्तुकौं एक-भावअपेक्षा वैसा भी मानना, वैसा भी मानना, सो तौ मिथ्या-बुद्धि है। बहुरि जुदे भावनिकी अपेक्षा नयनिकी प्ररूपणा है, ऐसैं मानि यथासंभव वस्तुकौं मानना सो सांचा श्रद्धान है। तातैं मिथ्यादृष्टी अनेकांतरूप वस्तुकौं मानैं, परंतु यथार्थ भावकौं पहिचानि मानि सकैं नाहीं, ऐसा जानना।

बहुरि इस जीवकै व्रत शील संयमादिकका अंगीकार पाईए है, सो व्यवहार करि 'ए भी मोक्षके कारण हैं', ऐसा मानि तिनकौं उपादेय मानै है। सो जैसैं केवल व्यवहारावलंबी जीवकै पूर्वैं अय-थार्थपना कह्या था, तैसैं ही याकैं भी अयथार्थपना जानना बहुरि यह ऐसैं भी मानै है—जो यथायोग्य व्रतादि क्रिया तौ करनी योग्य है, परंतु इनविषै ममत्त्व न करना सो जाका आप कर्त्ता होय, तिसविषै ममत्त्व कैसैं न करिए। अर आप कर्त्ता न हैं, तौ मुझकौं करनी योग्य है, ऐसा भाव कैसैं किया। अर जो कर्त्ता है, तौ वह अपना कर्म भया, तब कर्त्ताकर्मसंबंध स्वयमेव

ही भया। सो ऐसी मानि तौ भ्रम है। तौ कैसें है— बाह्य व्रतादिक हैं, सो तौ शरीरादि परद्रव्यकै आश्रय हैं। परद्रव्यका आप कर्त्ता है नाहीं। तातैं तिसविषै कर्तृत्वबुद्धि भी न करनी। अर तहां ममत्व भी न करना। बहुरि व्रतादिकविषै ग्रहण त्याग रूप अपनां शुभोपयोग होय, सो अपने आश्रय है ताका आप कर्त्ता है, तातैं तिसविषै कर्तृत्वबुद्धि भी माननी। अर तहां ममत्व भी करना। बहुरि इस शुभोपयोगकौं बंधका ही कारण जानना, मोक्षका कारण न जानना। जातैं बंध अर मोक्षकै तौ प्रतिपक्षीपना है। तातैं एक ही भाव पुण्यबंधकौं भी कारण होय अर मोक्षकौं भी कारण होय, ऐसा मानना भ्रम है। तातैं व्रत अव्रत दोऊ विकल्परहित जहां परद्रव्यके ग्रहण त्यागका किछू प्रयोजन नाहीं, ऐसा उदासीन वीतराग शुद्धोपयोग सोई मोक्षमार्ग है। बहुरि नीचली दशाविषै केई जीवनिकै शुभो-पयोग अर शुद्धोपयोगका युक्तपना पाईए है। तातैं उपचारकरि व्रतादिक शुभोपयोगकौं मोक्षमार्ग कह्या है। वस्तु विचारतैं शुभोपयोग मोक्षका घातक ही है। जातैं मोक्षकौं कारण सोई मोक्षका घातक है, ऐसा श्रद्धान करना। बहुरि शुद्धोपयो-गहीकौं उपादेय मानि ताका उपाय करना। शुभोपयोग अशुभो-पयोगकौं हेय जानि तिनके त्यागका उपाय करना। जहां शुभो-पयोग न होय सकै, तहां अशुभोपयोगकौं छोडि शुभहीविषै प्रवर्त्तना। जातैं शुभोपयोगतैं अशुभोपयोगविषै अशुद्धताकी अधिकता है। बहुरि शुद्धोपयोग होय, तब तौ परद्रव्यका साक्षी

भूत ही रहै है । तहां तौ किछू परद्रव्यका प्रयोजन ही नाहीं । बहुरि शुभोपयोग होय, तहां बाह्य व्रतादिककी प्रवृति होय, अर अशुभोपयोग होय तहां बाह्य अव्रतादिककी प्रवृत्ति होय । जातैं अशुभोपयोगकै अर परद्रव्यकी प्रवृत्तिकै निमित्त नैमित्तिक सबंध पाईए है । बहुरि पहलै अशुभोपयोग छूटि शुभोपयोग होय, पीछैं शुभोपयोग छूटि शुद्धोपयोग होय । ऐसी क्रमपरिपाटी है । बहुरि केई ऐसैं मानैं कि शुभोपयोग है, सो शुद्धोपयोगकौं कारण है । सो जैसैं अशुभोपयोग छूटि शुभोपयोग हो है, तैसैं शुभोपयोग छूटि शुद्धोपयोग हो है । ऐसैं ही कार्य कारणपना होय, तौ शुभोपयोगका कारण अशुभोपयोग ठहरै । अथवा द्रव्यलिंगीकै शुभोपयोग तौ उत्कृष्ट हो है, शुद्धोपयोग होता ही नाहीं । तातैं परमार्थतैं इनकै कारणकार्यपना है नाहीं । जैसैं रोगीकै बहुत रोग था, पीछैं स्तोक रोग भया, तौ वह स्तोक रोग तौ निरोग होनेका कारण है नाहीं । इतना है स्तोक रोग रहें निरोग होनेका उपाय करै, तौ होय जाय । बहुरि जो स्तोक रोगहीकौं भला जानि ताका राखनेका यत्न करै, तौ निरोग कैसैं होय । तैसैं कषायीकै तीव्रकषायरूप अशुभोपयोग था, पीछैं मंदकषायरूप शुभोपयोग भया, तौ वह शुभोपयोग तौ निःकषाय शुद्धोपयोग होनेकौं कारण है नाहीं । इतना है—शुभोपयोग भए शुद्धोपयोगका यत्न करै, तौ होय जाय । बहुरि जो शुभोपयोगहीकौं भला जानि ताका साधन किया करै, तौ शुद्धोपयोग कैसैं होय । तातैं मिथ्या दृष्टीका शुभोपयोग तौ शुद्धोपयोगकौं कारण है नाहीं । सम्यग्दृष्टीकै

शुभोपयोग भए निकट शुद्धोपयोग प्राप्ति होय, ऐसा मुख्यपनाकरि कहीं शुभोपयोगकौं शुद्धोपयोगका कारण भी कहिए है। ऐसा जानना। बहुरि यह जीव आपकौं निश्चय व्यवहाररूप मोक्षमार्गका साधक मानै है। तहां पूर्वोक्त प्रकार आत्माकौं शुद्ध मान्या, सो तौ सम्यग्दर्शन भया। तैसैं ही जान्या सो सम्यग्ज्ञान भया। तैसैं ही विचारविषै प्रवर्त्या सो सम्यक्चारित्र भया। ऐसैं तौ आपकै निश्चय रत्नत्रय भया मानै। सो मैं प्रत्यक्ष अशुद्ध सो शुद्ध कैसैं मानौं जानौं विचारौं हौं, इत्यादि विवेकरहित भ्रमतैं संतुष्ट हो है। बहुरि अरहंतादि विना अन्य देवादिककौं न मानैं हैं, वा जैनशास्त्र अनुसार जीवादिकके भेद सीख लिए हैं, तिनहीकौं मानै हैं औरकौं न मानै, सो तौ सम्यग्दर्शन भया। बहुरि जैनशास्त्रनिका अभ्यासविषै बहुत प्रवर्तै है, सो सम्यग्ज्ञान भया। बहुरि व्रतादिरूप क्रियानिविषै प्रवर्तै हैं, सो सम्यक्चारित्र भया। ऐसैं आपकै व्यवहार रत्नत्रय भया मानै। सो व्यवहार तौ उपचारका नाम है। सो उपचार भी तौ तब बनै, जब सत्यभूत निश्चय रत्नत्रयका कारणादिक होय। जैसैं निश्चय रत्नत्रय सधै, तैसैं इनकौं साधै, तौ व्यवहारपनो भी संभवै। सो याकै तौ सत्यभूत रत्नत्रयकी पहचानि ही भई नाहीं। यह ऐसैं कैसैं साधि सकै। आज्ञाअनुसारी हुवा देख्यांदेखी साधन करै है। तातैं याकै निश्चय व्यवहार मोक्षमार्ग न भया। आगैं निश्चय व्यवहार मोक्षमार्गका निरूपण करैंगे, ताका साधन भए ही मोक्षमार्ग होगा। ऐसैं यह जीव निश्चयाभासकौं जानै मानै है। परंतु व्यवहार

साधनेकौं भी भला जानै है, तातैं स्वच्छंद होय अशुभरूप न प्रवर्तै है। व्रतादिक शुभोपयोगरूप प्रवर्तै हैं, तातैं अंतिम ग्रैवेयक पर्यंत पदकौं पावै है। बहुरि जो निश्चयाभासकी प्रबलतातैं अशुभरूप प्रवृत्ति होय जाय, तौ कुगतिविषै भी गमन होय परिणामनिकै अनुसार फल पावै है। परंतु संसारका ही भोक्ता रहै हैं। सांचा मोक्षमार्गके पाए विना सिद्धपदकौं न पावै है। ऐसैं निश्चयाभास व्यवहाराभास दोऊनिके अवलंबी मिथ्यादृष्टी तिनिका निरूपण किया।

अब सम्यक्त्वके सन्मुख जे मिथ्यादृष्टी तिनका निरूपण कीजिए है—

कोई मंदकषायादिकका कारण पाय ज्ञानावरणादि कर्मनिका क्षयोपशम भया, तातैं तत्वविचार करनेकी शक्ति भई। अर मोह मंद भया। तातैं तत्त्वादिविचारविषै उद्यम भया। बहुरि बाह्य— निमित्त देव गुरु शास्त्रादिकका भया, तिनकरि सांचा उपदेशका लाभ भया, । तहां अपने प्रयोजनभूत मोक्षमार्गका, वा देवगुरु धर्मादिकका वा जीवादि तत्वनिका, वा आपा परका, वा आपकौं अहितकारी हितकारी भावनिका, इत्यादिकका उपदेशतैं सावधान होय, ऐसा विचार किया—अहो मुझकौं तौ इन बातनिकी खबरि नाहीं, मैं भ्रमतैं भूलि पर्यायहीविषै तन्मय भया। सो इस पर्यायकी तौ थोरे ही कालकी स्थिति है। बहुरि यहां मोकौं सर्व निमित्त मिले हैं। तातैं मोकौं इन बातनिका ठीक करना। जातैं इनविषै तौ मेरा ही प्रयोजन भासै है। ऐसैं विचारि जो उपदेश

सुन्या ताका निर्द्धार करनेका उद्यम किया। तहां उद्देश, लक्षण, निर्देश, परीक्षा द्वारकरि तिनका निर्द्धार होय। तातैं पहलै तौ तिनके नाम सीखैं, बहुरि तिनके लक्षण जानै, बहुरि ऐसै संभवै है कि नाहीं, ऐसा विचारलिए परीक्षा करने लगै। तहां नाम सीख लेना अर लक्षण जानि लेना ये दोऊ तौ उपदेशकै अनुसार हो है। जैसैं उपदेश दिया तैसैं याद करि लेना। बहुरि परीक्षाकरने विषै अपना विवेक चाहिए है। सो विवेककरि एकांत अपना उपयोगविषै विचारै--जैसैं उपदेश दिया तैसैं ही है कि अन्यथा है। तहां अनुमानादि प्रमाणकरि ठीक करै, वा उपदेश तौ ऐसैं है अर ऐसैं न मानिए तौ ऐसैं होय। सो इनविषै प्रबल युक्ति कौन है अर निर्बल युक्ति कौन है। जो प्रबल भासै ताकौं सांच जानै। बहुरि जो उपदेशतैं अन्यथा सांच भासै वा संदेह रहै निर्द्धार न होय, तौ बहुरि विशेष ज्ञानी होय तिनिकौं पूछै। बहुरि वह उत्तर दे, वाकौं विचारै। ऐसैं ही यावत् निर्द्धार न होय, तावत् प्रश्न उत्तर करै। अथवा समान बुद्धिके धारक होंय तिनिकौं आपकै जैसा विचार भया होय तैसा कहै। प्रश्न उत्तर परस्पर चर्चा करै। बहुरि जो प्रश्नोत्तरविषै निरूपण भया होय, ताकौं एकांतविषैं विचारै। याही प्रकार अपने अंतरंगविषै जैसैं उपदेश दिया था, तैसैं ही निर्णय होय भाव न भासै, तावत् ऐसैं ही उद्यम किया करै। बहुरि अन्यमतीनिकरि कल्पित तत्त्वनिका उपदेश दिया है, ताकरि जैन उपदेश अन्यथा भासै, संदेह होय, तौ भी पूर्वोक्त प्रकारकरि उद्यम करै। ऐसैं उद्यम किए जैसैं जिन-

देवका उपदेश है।, तैसैं ही सांच है। मुझकौं भी ऐसैं ही भासै है, ऐसा निर्णय होय। जातैं जिनदेव अन्यथावादी हैं नाहीं। यहां कोऊ कहै--जिनदेव अन्यथावादी नाहीं है, तौ जैसैं उनका उपदेश है, तैसै श्रद्धान करि लीजिए, परीक्षा काहेकौं कीजिए, ताका समाधान--

परीक्षा किए विना यह तौ मानना होय, जो जिनदेव ऐसैं कह्या है, सो सत्य है, परंतु उनका भाव आपकौं भासै नाहीं। बहुरि भाव भासे विना निर्मल श्रद्धान न होय। जाकी काहूका वचनहीकरि प्रतीति करिए, ताकी अन्यका वचनकरि अन्यथा भी प्रतीति होय जाय, तौ शक्तिअपेक्षा वचनकरि कीन्हीं प्रतीति अप्रतीतिवत् हैं। बहुरि जाका भाव भास्या होय, ताकौं अनेक प्रकारकरि भी अन्यथा न मानै। तातैं भाव भासें प्रतीति होय सोई सांची प्रतीति है। बहुरि जो कहौगे, पुरुषप्रमाणतैं वचन प्रमाण कीजिए है, तौ पुरुषकी भी प्रमाणता स्वयमेव न होय वाके कैई वचननिकी परीक्षा पहलैं करि लीजिए, तब पुरुषकी प्रमाणता होय। यहां प्रश्न---उपदेश तौ अनेक प्रकार, किस-किसकी परीक्षा करिए, ताका समाधान--

उपदेशविषै केई उपादेय केई हेय तत्त्व निरूपिए है। तहां उपादेय हेय तत्त्वनिकी तौ परीक्षा करि लेनी। जातैं इनविषै अन्यथापनों भए अपना बुरा हो है। उपादेयकौं हेय मानि लैं, तौ बुरा होय, हेयकौं उपादेय मानि लै, तौ बुरा होय। बहुरि जो कहौगे, आप परीक्षा न करी, अर जिनवचनहीतैं उपादेयकौं

उपादेय जानै, हेयकौं हेय जानै, तौ कैसैं बुरा होय। ताका समाधान —

अर्थका भाव भासे विना वचनका अभिप्राय न पहिचानै। यह तौ मानि ले, जो मैं जिनवचन अनुसार मानौं हौं। परंतु भाव भासे विना अन्यथापनो होय जाय। लोकविषै भी किंकरकौं किसी कार्यकौं भेजिए, सो वह उस कार्यका भाव जानै, तौ कार्यकौं सुधारै, जो भाव न भासै, तौ कहीं चूकि ही जाय। तातैं भाव भासनेके अर्थि हेय उपादेय तत्त्वनिकी परीक्षा अवश्य करनी। बहुरि वह कहै है—जो परीक्षा अन्यथा होय जाय तौ कहा करिए। ताका समाधान—

जिनवचन अर अपनी परीक्षा इनकी समानता होय तब तौ जानिए सत्य परीक्षा भई। यावत् ऐसैं न होय तावत् जैसैं कोई लेखा करै है, ताकी विधि न मिलै तावत् अपनी चूककौं ढूंढै। तैसैं यह अपनी परीक्षाविषै विचार किया करै। बहुरि जो ज्ञेयतत्व हैं, तिनकी परीक्षा होय सकै, तौ परीक्षा करै। नाहीं, यह अनुमान करै, जो हेय उपादेय तत्त्व ही अन्यथा न कहैं, तौ ज्ञेयतत्व अन्यथा किस अर्थ कहै। जैसैं कोऊ प्रयोजनरूप कार्यनिविषै झूठ न बोलै, सो अप्रयोजनविषै झूठ काहेकौं बोलै। तातैं ज्ञेयतत्वनिका परीक्षाकरि भी वा आज्ञाकरि स्वरूप जानिए। तिनका यथार्थ स्वरूप न भासै, तौ भी दोष नाहीं। याहीतैं जैन-शास्त्रनिविषै तत्वादिकका निरूपण किया, तहां तौ हेतुयुक्ति आदिकरि जैसैं याकै अनुमानादिकरि प्रतीति आवै, तैसैं कथन

किया। बहुरि त्रिलोक गुणस्थान मार्गणा पुराणादिकका कथन आज्ञा अनुसार किया। तातैं हेयोपादेय तत्वनिकी परीक्षा करनी योग्य है। तहां जीवादिक द्रव्य वा तत्व तिनकौं पहचानना। बहुरि त्यागने योग्य मिथ्यात्व रागादिक अर ग्रहणे योग्य सम्यग्दर्शनादिक तिनका स्वरूप पहचानना। बहुरि निमित्त नैमित्तादिक जैसैं हैं, तैसैं पहचानना। इत्यादि मोक्षमार्गविषै जिनके जानैं प्रवृत्ति होय तिनकौं अवश्य जाननैं। सो इनकी तौ परीक्षा करनी। सामान्यपनैं हेतुयुक्तिकरि इनकौं जाननैं, वा प्रमाण नयनिकरि जाननैं, वा निर्देश स्वाम्यत्वादिकरि, वा सत् संख्यादिकरि इनका विशेष जानना। जैसी बुद्धि होय जैसा निमित्त बनैं, तैसैं इनकौं सामान्य विशेषरूप पहचाननैं। बहुरि इस जाननैका उपकारी गुणस्थानमार्गणादिक वा पुराणादिक वा व्रतादिक क्रियादिकका भी जानना योग्य है। यहां परीक्षा होय सकै, तिनकी परीक्षा करनी, न होय सकै ताका आज्ञा अनुसारि जानपना करना। ऐसैं इस जाननेकै अर्थ कबहू आपही विचार करै है, कबहू शास्त्र बांचै है, कबहू सुनै है, कबहू अभ्यास करै है, कबहू प्रश्नोत्तर करै है। इत्यादिरूप प्रवर्तै है। अपना कार्य करनेका जानैं हर्ष बहुत है, तातैं अंतरंग प्रीतितै ताका समाधान करै। या प्रकार साधनकरतैं यावत् सांचा तत्त्वश्रद्धान न होय, 'यह ऐसैं ही है' ऐसी प्रतीति लिए जीवादि तत्त्वनिका स्वरूप आपकौं न भासै, जैसै पर्यायविषै अहंबुद्धि है, तैसैं केवल आत्मविषै अहंबुद्धि न आवै, हित अहितरूप अपने भाव न

पहिचानैं तावत् सम्यक्तके सन्मुख मिथ्यादृष्टी है। यह जीव थोरे ही कालमैं सम्यक्तकौं प्राप्त होगा। इस ही भवमैं वा अन्य पर्यायविषै सम्यक्तकौं पावैगा। इस भवमैं अभ्यासकरि परलोक–विषै तिर्यंचादिगतिविषै भी जाय—तौ तहां संस्कारके बलतैं देव गुरु शास्त्रका निमित्तविना भी सम्यक्त होय जाय। जातैं ऐसे अभ्यासके बलतैं मिथ्यात्वकर्मका अनुभाग हीन हो है। जहां वाका उदय न होय, तहां ही सम्यक्त होय जाय। मूल–कारण यह ही है। देवादिकका तौ बाह्य निमित्त है, सो मुख्य–ताकरि तौ इनके निमित्तहीतैं सम्यक्त हो है। तारतम्यतैं पूर्व अभ्यास संस्कारतैं वर्तमान इनका निमित्त न होय, तौ भी सम्यक्त होय सकै है। सिद्धांतविषै ऐसा सूत्र कह्या है—

"तन्निसर्गादधिगमाद्वा"

यह सो सम्यग्दर्शन निसर्ग वा अधिगमतैं हो है। तहां देवा-दिक बाह्य निमित्तविना होय, सो निसर्गतैं भया कहिए। देवा-दिकका निमित्ततैं होय सो अधिगमतैं भया कहिए। देखो तत्त्वविचारकी महिमा, तत्त्वविचाररहित देवादिककी प्रतीति करै, बहुत शास्त्र अभ्यासै, व्रतादिक तपश्चरणादि करै, ताकै तौ सम्यक्त होनेका अधिकार नाहीं। अर तत्त्वविचारवाला इन विना भी सम्यक्तका अधिकारी हो है। बहुरि कोई जीवकै तत्त्वविचारकै होने पहलैं किसी कारण पाय देवादिककी प्रतीति होय, वा व्रत तपका अंगीकार होय, पीछैं तत्त्वविचार करै। परंतु सम्यक्तका अधिकारी तत्वविचार भए ही हो है। बहुरि काहूकै तत्वविचार

भए पीछैं तत्वप्रतीति न होनेतैं सम्यक्त तौ न भया, अर व्यवहार धर्मकी प्रतीति रुचि होय गई, तातैं देवादिककी प्रतीति करै है, वा व्रत तपकौं अंगीकार करै है। काहूकै देवादिककी प्रतीति अर सम्यक्त युगपत् होय, अर व्रत तप सम्यक्तकी साथि भी होय, वा न भी होय, देवादिककी प्रतीतिका तौ नियम है। इस विना सम्यक्त न होय। व्रतादिकका नियम है नाहीं। घने जीव तौ पहलैं सम्यक्त होय पीछैं ही व्रतादिककौं धारैं हैं। काहूकै युगपत् भी हो जाय है। ऐसैं यह तत्वविचारवाला जीव सम्यक्तका अधिकारी है। परंतु याकै सम्यक्त होय ही होय, ऐसा नियम नाहीं। जातैं शास्त्रविषैं सम्यक्त होनेतैं पहले पंचलब्धिका होना कह्या है—क्षयोपशम, विशुद्धि, देशना, प्रायोग्य, करण। तहां जिसकौं होतसंतैं तत्वविचार होय सकै, ऐसा ज्ञानावरणादि कर्मनिका क्षयोपशम होय। उदयकालकौं प्राप्त सर्वघाती स्पर्द्धकनिके निषेकनिका उदयका अभाव सो क्षय, अर अनागतकालविषै उदयआवने योग्य तिनहीका, सत्तारूप रहना सो उपशम ऐसी देशघाती स्पर्द्धकनिका उदय सहित कर्मनिकी अवस्था ताका नाम क्षयोपशम है। ताकी प्राप्ति सो क्षयोपशमलब्धि है। बहुरि मोहका मंद उदय आवनेतैं मंदकषायरूप भाव होंय, तहां तत्त्वविचार होय सकै, सो विशुद्धलब्धि है। बहुरि जिनदेवका उपदेश्या तत्वका धारण होय, विचार होय सो देशनालब्धि है। जहां नरकादि विषै उपदेशका निमित्त न होय, तहां पूर्वसंस्कारतैं होय। बहुरि कर्मनिकी पूर्वसत्ता घटकरि अंतःकोटाकोटी सागर

प्रमाण रहि जाय, अर नवीनबंध अंतःकोटाकोटी प्रमाण ताकै संख्यातवें भागमात्र होय, सो भी तिस लब्धिकालतैं लगाय क्रमतैं घटता होय, केतीक पापप्रकृतिनिका बंध क्रमतैं मिटता जाय, इत्यादि योग्य अवस्था होना, सो प्रायोग्यलब्धि है। सो ए च्यारौं लब्धि भव्य वा अभव्यकै होय हैं। इन च्यारलब्धि भए पीछे सम्यक्त होयतौ होय, न होय तौ नहीं भी होय। ऐसैं लब्धिसारविषै कह्या है। तातैं तिस तत्त्वविचारवालाकै सम्यक्त होनेंका नियम नाहीं। जैसैं काहूकौं हितकी शिक्षा दई, ताकौं वह जानि विचार करै, यह सीख दई सो कैसैं है। पीछै विचारतां वाकै ऐसैं ही है, ऐसी प्रतीति होय जाय। अथवा अन्यथा विचार होय, वा अन्य विचारविषै लागि तिस सीखका निर्द्धार न करै तौ प्रतीति नाहीं भी होय। तैसैं श्रीगुरां तत्त्वो-पदेश दिया, ताकौं जानि विचार करै, यह उपदेश दिया, सो कैसैं है। पीछै विचार करनेतैं वाकै 'ऐसैं ही है' ऐसी प्रतीति होय जाय। अथवा अन्यथा विचार होय, वा अन्य विचारविषै लागि तिस उपदेशका निर्द्धार न करै, तौ प्रतीति नाहीं होय। ऐसा नियम है। याका उद्यम तौ तत्त्वविचारका करने मात्र ही है। बहुरि पांचई करणलब्धि भए सम्यक्त होय ही होय, ऐसा नियम है। सो जाकै पूर्वै कही थीं च्यारि लब्धि ते तौ भई होंय, अर अंतर्मुहूर्त्त पीछैं जाकै सम्यक्त होनो होय, तिसही जीवकै करणलब्धि हो है। सो इस करणलब्धिवालाकै बुद्धिपूर्वक तौ इतना ही उद्यम हो है—जिस तत्वविचारविषै उपयोगकौं

तद्रूप होय लगावै, ताकरि समय समय परिणाम निर्मल होते जाय हैं। जैसैं काहूकै सीखका विचार ऐसा निर्मल होनैं लग्या, जाकरि याकै शीघ्र ही ताकी प्रतीति होय जासी। तैसैं तत्वउपदेश ऐसा निर्मल होने लग्या, जाकरि याकै शीघ्र ही ताका श्रद्धान होसी। बहुरि इन परिणामनिका तारतम्य केवलज्ञानकरि देख्या, ताकरि निरूपण करणानुयोगविषै किया है। सो इस करणलब्धिके तीन भेद हैं—अधःकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण। इनका विशेष व्याख्यान तौ लब्धिसार शास्त्रविषै किया है, तिसतैं जानना। यहां संक्षेपसौं कहिए है—

त्रिकालवर्त्ती सर्व करणलब्धिवाले जीव तिनके परिणामनिकी अपेक्षा ए तीन नाम हैं। तहां करण नाम तौ परिणामका है। बहुरि जहां पहले पिछले समयनिके परिणाम समान होंय, सो अधःकरण है। जैसैं कोई जीवका परिणाम तिस करणके पहिले समय स्तोक विशुद्धता लिए भए, पीछैं समय समय अनंतगुणी विशुद्धताकरि वधते भए। बहुरि वाकै जैसैं द्वितीय तृतीयादि समयनिविषै परिणाम होंय, तैसैं केई अन्य जीवनिकै प्रथम समयविषै ही होंय। ताकै तिसतैं समय समय अनंती विशुद्धताकरि वधते होंय। ऐसैं अधःप्रवृत्तकरण जानना। बहुरि जिसविषै पहले पिछले समयनिके परिणाम समान न होंय, अपूर्व ही होंय, बहुरि जैसैं यहां अधःकरणवत् पहले समय होंय तैसैं कोई ही जीवकै द्वितीयादि समयनिविषै न होंय वधते ही होंय। तिस करणके परिणाम जैसैं जिन जीवनिकै करणका पहला समय ही होय,

तिन अनेक जीवनिकै परस्पर परिणाम समान भी होंय, अर अधिक हीन विशुद्धता लिए भी होंय, । परंतु यहां इतना विशेष भया, जो इसकी उत्कृष्टतातैं भी द्वितीयादि समयवालेका जघन्य परिणाम भी अनंतगुणी विशुद्धता लिए ही होय। ऐसैं ही जिनकौं करण मांडे द्वितीयादि समय भया होय, तिनकै तिस सययवालौंकै तौ परस्पर परिणाभ समान वा असमान होंय, । परंतु ऊपरले समयवालौंकै तिस समय समान सर्वथा न होंय अपूर्व ही होंय, ऐसैं अपूर्वकरण जानना । बहुरि जिसविषै समान समयवर्त्ती जीवनिकै परिणाम समान ही होंय, निवृत्ति कहिए परस्पर भेद ताकरि रहित होंय । जैसैं तिस करणका पहलै समय-विषैं सर्व जीवनिका परस्पर समान ही होय, ऐसैं ही द्वितीयादि समयनिविषै समानता परस्पर जाननी। बहुरि प्रथमादि समय-वालोंतैं द्वितीयादि समयवालोंकै अनंतगुणी विशुद्धता लिए होंय, ऐसैं अनिवृत्तिकरण जानना। ऐसैं ए तीन करण जानने। तहां पहलै अंतर्मुहूर्त्त कालपर्यंत अधःकरण होय, तहां च्यारि आवश्यक हो है । समय समय अनंतगुणी विशुद्धता होय, बहुरि एक अंतर्मुहूर्त्तकरि नवीनबंधकी स्थिति घटती होय, सो स्थितिबंधा-पसरण होय, बहुरि समय समय प्रशस्त प्रकृतिनिका अनंत गुणा अनुभाग बधै, बहुरि समय समय अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग-बंध अनंतवैं भाग होय, ऐसैं च्यारि आवश्यक होंय । तहां पीछैं अपूर्वकरण होय । ताका काल अधःकरणके कालकै संख्यातवैं भाग है। ताविषै ए आवश्यक और होंय । एक एक अंतर्मुहूर्त्तकरि

सत्ताभूत पूर्वकर्मकी स्थिति थी, ताकौं घटावै सो स्थितिकांडक घात होय। बहुरि तिसतैं स्तोक एक एक अंतर्मुहूर्त्तकरि पूर्व-कर्मका अनुभागकौं घटावै, सो अनुभागकांडक घात होय। बहुरि गुणश्रेणिका कालविषै क्रमतैं असंख्यातगुणा प्रमाण लिए कर्म नि-र्जरने योग्य करिए, सो गुणश्रेणीनिर्जरा होय। बहुरि गुणसंक्रमण यहां नाहीं हो है। अन्यत्र अपूर्वकरण हो है, तहां हो है। ऐसैं अपूर्वकरण भए पीछैं अनिवृत्तिकरण होय। ताका काल अपूर्वकरणकै भी संख्यातवैं भाग है। तिसविषै पूर्वोक्त आवश्यक सहित केता काल गए पीछैं अनिवृत्तिकरण करै है। अनिवृत्तिकर-णके काल पीछैं उदय आवने योग्य ऐसे मिथ्यात्वकर्म मुहूर्त्तमात्र निषेकनिका अभाव करै है, तिन परिणामनिकौं अन्य स्थितिरूप परिणमावै है। बहुरि अंतःकरणकरि पीछैं उपशमकरण करै है। अंतःकरणकरि अभावरूप किए निषेकनिके ऊपरि जो मिथ्यात्वके निषेक तिनकौं उदय आवनेकौं अयोग्य करै है। इत्यादिक क्रिया करि अनिवृत्तिकरणका अंतसमयकै अनंतर जिन निषेकनिका अभाव किया था, तिनका उदयकाल आया, तब निषेकनि विना उदय कौनका आवै। तातैं मिथ्यात्वका उदय न होनेतैं प्रथमो-पशम सम्यक्तकी प्राप्ति हो है। अनादि मिथ्यादृष्टीकै सम्यक्त मोहनीय मिश्रमोहनीयकी सत्ता नाहीं है। तातैं एक मिथ्यात्व-कर्महीकौ उपशमाय उपशमसम्यग्दृष्टी हो है। बहुरि कोई जीव सम्यक्त पाय पीछैं भ्रष्ट हो है, ताकी भी दशा अनादि मिथ्या-दृष्टीकी सी ही होय जाय है। यहां प्रश्न जो परीक्षाकरि तत्त्व-

श्रद्धान किया था, ताका अभाव कैसैं होय। ताका समाधान--

जैसैं किसी पुरुषकौं शिक्षा दई, ताकी परीक्षाकरि वाकै 'ऐसैं ही है' ऐसी प्रतीति भी आई थी, पीछैं अन्यथा कोई प्रकारकरि विचार भया, तातैं उस शिक्षाविषै संदेह भया। 'ऐसैं है कि ऐसैं हैं' अथवा 'न जानों कैसैं है,' अथवा तिस शिक्षाकौं झूठ जानि तिसतैं विपरीति भई, तब वाकै प्रतीति न भई। तब वाकै तिस शिक्षाकी प्रतीतिका अभाव होय, अथवा पूर्वैं तौ अन्यथा प्रतीति थी ही, बीचिमैं शिक्षाका विचारतैं यथार्थ प्रतीति भई थी, बहुरि तिस शिक्षाका विचार किए बहुतकाल होय गया, तब ताकौं भूलि जैसैं पूर्वैं अन्यथा प्रतीति थी, तैसैं ही स्वयमेव होय गई। तब तिस शिक्षाकी प्रतीतिका अभाव होय जाय। अथवा यथार्थ प्रतीति पहलैं तौ कीन्हीं, पीछै न तौ किछू अन्यथा विचार किया, न बहुत काल भया। परंतु तैसा ही कर्म उदयतैं होनहारकै अनुसार स्वयमेवही तिस प्रतीतिका अभाव होय, अन्यथापना भया। ऐसैं अनेक प्रकार तिस शिक्षाकी यथार्थ प्रतीतिका अभाव हो है। तैसैं जीवकै जिनदेवका तत्त्वादिरूप उपदेश भया, ताकी परीक्षाकरि वाकै 'ऐसैं ही है' ऐसा श्रद्धान भया, पीछै पूर्वैं जैसैं कहे तैसैं अनेक प्रकार तिस पदार्थश्रद्धानका अभाव हो है। सो यह कथन स्थूलपनैं दिखाया है। तारतम्यकरि केवलज्ञानविषै भासै है--इस समय श्रद्धान है, कि इस समय नाहीं है। जातैं यहां मूलकारण मिथ्यात्वकर्म है। ताका उदय होय तब तौ अन्य विचारादिक कारण मिलै वा न मिलै।

स्वयमेव सम्यक्श्रद्धानका अभाव हो है । बहुरि ताका उदय न होय, तब अन्य कारण मिलो वा मति मिलो स्वयमेव सम्यक्श्रद्धान होय जाय हैं । सो ऐसैं अंतरंग समयसंबंधी सूक्ष्मदशाका जानना छद्मस्थके होता नाहीं । तातैं अपनी मिथ्या सम्यक्रूप अवस्थाका तारतम्य याकौं निश्चय होय सकै नाहीं । केवलज्ञानविषै भासै है । तिस अपेक्षा गुणस्थाननिकी पलटनिकी शास्त्रविषैं कही है । या प्रकार जो सम्यक्त तैं भ्रष्ट होय, सो सादि मिथ्यादृष्टी कहिए। ताकै भी बहुरि सम्यक्त की प्राप्तिविषै पूर्वोक्त पांचलब्धि हो हैं । विशेष इतना यहां कोई जीवकै दर्शन मोहकी तीन. प्रकृतिकी सत्ता हो है । सो तिनिकौं उपशमाय प्रथमोपशमसम्यक्ती हो है । अथवा काहूकै सम्यक्तमोहनीयका उदय आवै है, दोय प्रकृतिनीका उदय न हो है, सो क्षयोपशमसम्यक्ती हो है । याकै गुणश्रेणी आदि क्रिया न हो है । वा अनिवृत्तिकरण न हो है । बहुरि काहूकै मिश्रमोहनीयका उदय आवै है । दोय प्रकृतिनिका उदय न हो है । सो मिश्रगुणस्थानकौं प्राप्त हो है । याकै करण न हो है । ऐसैं सादिमिथ्यादृष्टीकै मिथ्यात्व छूटैं दशा हो है । क्षायिकसम्यक्तकौं वेदकसम्यक्दृष्टीही पावै है । तातैं याका कथन यहां न किया है । ऐसैं सादि मिथ्यादृष्टीका जघन्य तैं मध्य अंतर्मुहूर्तमात्र उत्कृष्ट किंचिदून अर्द्धपुद्गल परिवर्तनमात्र काल जानना । देखो, परिणामनिकी विचित्रता कोई जीव तौ ग्यारवैं गुणस्थान यथाख्यातचारित्र पाय बहुरि मिथ्यादृष्टी होय, किंचित् ऊन अर्द्धपुद्गल परिवर्तन कालपर्यंत संसारमैं रुलै, अर कोई नित्य निगो-

दमैंसौं निकसि मनुष्य होय मिथ्यात्व छूटैं पीछैं अंतर्मुहूर्तमैं केवलज्ञान पावै । ऐसैं जानि अपने परिणाम बिगरनेका भय राखना । अर तिनके सुधारनेका उपाय करना । बहुरि इस सादिमिथ्यादृष्टीकैं थोरे काल मिथ्यात्वका उदय रहै, तौ बाह्य जैनपना नाहीं नष्ट हो है। वा तत्त्वनिका अश्रद्धान व्यक्त न हो है। वा विना विचार किंए ही वा स्तोक विचारहीतैं बहुरि सम्यक्तकी प्राप्ति होय जाय है । बहुरि बहुत काल मिथ्यात्वका उदय रहै, तौ जैसी अनादि मिथ्यादृष्टीकी दशा तैसी याकी दशा हो है । गृहीत मिथ्यात्वकौं भी ग्रहै है । निगोदादिविषै भी रुलै हैं । याका किछू प्रमाण नाहीं । बहुरि कोई जीव सम्यक्ततैं भ्रष्ट होय सासादन हो है । सो तहां जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण काल रहै है, सो याका परिणामकी दशा वचनकरि कहनेमैं आवती नाहीं । सूक्ष्ममात्र काल कोइ जातिके केवल-ज्ञानगम्य परिणाम हो हैं । तहां अनंतानुबंधीका तौ उदय हो है, मिथ्यात्वका उदय न हो है । सो आगम प्रमाणतैं याका स्वरूप जानना । बहुरि कोई जीव सम्यक्ततैं नष्ट होय, मिश्रगुणस्थानकौं प्राप्त हो है । तहां मिश्रमोहिनीयका उदय हो है । याका काल मध्य अंतर्मुहूर्त्तमात्र हैं । सो याका भी काल थोरा है, सो याकै भी परिणाम केवलज्ञानगम्य हैं । यहां इतना भासै है—जैसैं काहूकौं सीख दई, तिसकौं वह किछू सत्य किछू असत्य एकै काल मानै । तैसैं तत्त्वनिका श्रद्धान अश्रद्धान एकै काल होय, सो मिश्रदशा

है। केई कहै हैं—हमकौं तौ जिनदेव वा अन्य देव सर्व ही बंदने योग्य हैं। इत्यादि मिश्रश्रद्धानकौं मिश्रगुणस्थान कहै हैं, सो नाहीं। यह तौ प्रत्यक्ष मिथ्यत्वदशा है व्यवहाररूप देवादिकका श्रद्धान भए भी मिथ्यात्व रहै है, तौ याकै तौ देव कुदेवका किछू ठीक ही नाहीं। याकै तौ यह विना मिथ्यात्व प्रगट है। ऐसैं जानना। ऐसैं सम्यक्तके सन्मुख मिथ्यादृष्टीनिका कथन किया। प्रसंग पाय अन्य भी कथन किया है। या प्रकार जैनमतवाले मिथ्यादृष्टीनिका स्वरूप निरूपण किया। यहां नानाप्रकार मिथ्यादृष्टीनिका कथन किया है, ताका प्रयोजन यह जानना, जो इन प्रकारनिकौं पहचानि आपविषै ऐसा दोष होय, तौ ताकौं दूरिकरि सम्यक्श्रद्धानी होना। औरनिहीकै ऐसे दोष देखि कषायी न होना। जातैं अपना भला बुरा तौ अपने परिणामनितैं हो है। औरनिकौं रुचिवान् देखै, तो कछु उपदेश देय तिनका भी भला करै। जातैं अपने परिणाम सुधारनेका उपाय करना योग्य है। सर्वप्रकारके मिथ्यात्वभाव छोड़ि सम्यग्दृष्टी होना योग्य है। जातैं संसार मूल मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व समान अन्य पाप नाहीं है। एक मिथ्यात्व अर ताकै साथ अनंतानुबंधीका अभाव भए इकतालीस प्रकृतिनिका तौ बंध ही मिट जाय। स्थिति अन्तःकोटाकोटी सागरकी रह जाय। अनुभाग थोरा ही रह जाय। शीघ्र ही मोक्षपदकौं पावै। बहुरि मिथ्यात्वका सद्भाव रहैं अन्य अनेक उपाय किए भी मोक्ष न होय। तातैं जिस तिस

उपायकरि सर्व प्रकार मिथ्यात्वका नाश करना योग्य है।

इति मोक्षमार्गप्रकाशकनाम शास्त्रविषै जैनमतवाले मिथ्यादृष्टीनिका निरूपण जामैं ऐसा सातवाँ अधिकार संपूर्ण भया ॥ ७ ॥

अथ मिथ्यादृष्टी जीवनिकौं मोक्षमार्गका उपदेश देय तिनका उपकार करना यह ही उत्तम उपकार है। तीर्थंकर गणधरादि भी ऐसा ही उपाय करै हैं। तातैं इस शास्त्रविषै भी उनहीका उपदेशकै अनुसारि उपदेश दीजिए है। तहां उपदेशका स्वरूप जाननेकै अर्थ किछू व्याख्यान कीजिए है। जातैं उपदेशकौं यथावत् न पहिचानै, तौ अन्यथा मानि विपरीत प्रवर्तै, तातैं उपदेशका स्वरूप कहिए है—

जिनमतविषै उपदेश च्यारअनुयोगका दिया है। सो प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोग ए च्यार अनुयोग हैं। तहां तीर्थंकर चक्रवर्ती आदि महान् पुरुषनिके चरित्र जिसविषै निरूपण किए होंय, सो **प्रथमानुयोग** है। बहुरि गुणस्थान मार्गणादिकरूप जीवका वा कर्मनिका वा त्रिलोकादिका जाविषै निरूपण होय, सो **करणानुयोग** है। बहुरि गृहस्थ मुनिके धर्म आचरण करनेका जाविषै निरूपण होय, सो **चरणानुयोग** है। बहुरि षट् द्रव्य सप्त तत्वादिकका वा स्वपरभेद विज्ञानादिकका जाविषै निरूपण होय, सो **द्रव्यानुयोग** है। अब इनका प्रयोजन कहिये है—

प्रथमानुयोगविषै तौ संसारकी विचित्रता, पुण्य पापका फल;

महंतपुरुषनिकी प्रवृत्ति इत्यादि निरूपणकरि जीवनिकौं धर्मविषै लगाए है। जे जीव तुच्छबुद्धि होंय, ते भी तिसकरि धर्मसन्मुख हो हैं। जातैं वै जीव सूक्ष्मनिरूपणकौं पहिचानैं नाहीं। लौकिक वार्तानिकौं जानैं। तहां तिनका उपयोग लागै। बहुरि प्रथमानु-योगविषै लौकिक प्रवृत्तिरूप निरूपण होय, ताकौं ते नीकैं समझि-जाय। बहुरि लोकविषै तौ राजादिककी कथानिविषै पापका वा पुण्यका पोषण है, तहां महंत पुरुष राजादिक तिनकी कथा सुनै हैं। परंतु प्रयोजन जहां तहां पापकौं छांड़ि धर्मविषै लगावनेका प्रगट कहै हैं। तातैं ते जीव कथानिके लालचकरि तौ तिनकौं बांचैं सुनैं, पीछैं पापकौं बुरा धर्मकौं भला जानि धर्मविषै रुचिवंत हो हैं। ऐसैं तुच्छ बुद्धिनिके समझावनेकौं यह अनुयोगतैं 'प्रथम' कहिए 'अव्युत्पन्न मिथ्यादृष्टी' तिनके अर्थ जो अनुयोग सो प्रथमानुयोग है। ऐसा अर्थ गोमट्टसारकी टीकाविषै किया है। बहुरि जिन जीवनिकै तत्वज्ञान भया होय, पीछैं इस प्रथमानुयोगकौं बांचैं सुनैं, तौ तिनकौं यह तिनका उदाहरणरूप भासै है। जैसैं जीव अनादिनिधन है, शरीरादिक संयोगी पदार्थ हैं, ऐसै यह जानै था। बहुरि पुराणविषै जीवनिके भवांतर निरूपण किए, ते तिस जाननेके उदाहरण भए। बहुरि शुभ अशुभ शुद्धोपयोगकौं जानैं था, वा तिनके फलकौं जानैं था। बहुरि पुराणनिविषै तिन उपयोगनिकी प्रवृत्ति अर तिनका फल जीवनिकै भया, सो निरूपण किया। सो ही तिस जाननेका उदाहरण भया। ऐसैं ही अन्य जानना। यहां उदाहरणका अर्थ यह जो

जैसैं जांनै था, तैसैं ही कोई जीवकै अवस्था भई, तातैं तिस जाननेकी साखि भई। बहुरि जैसैं कोई सुभट है, सो सुभटनिकी प्रशंसा अर कायरनिकी निंदा जाविषै होय, ऐसी कोई पुराण पुरुषनिकी कथा सुननेकरि सुभटविषै अति उत्साहवान् हो है, तैसैं धर्मात्मा है, सो धर्मीनिकी प्रशंसा अर पापीनिकी निंदा जाविषै होय, ऐसे कोई पुराणपुरुषनिकी कथा सुननेकरि अति-उत्साहवान् हो है। ऐसैं यह प्रथमानुयोगका प्रयोजन जानना।

बहुरि करणानुयोगविषै जीवनिकी वा कर्मनिकी विशेषता वा त्रिलोकादिककी रचना निरूपणकरि जीवनिकौं धर्मविषै लगाए हैं। जे जीव धर्मविषै उपयोग लगाया चाहैं, ते जीवनिका गुणस्थान मार्गणा आदि विशेष अर कर्मनिका कारण अवस्था फल कौन कौनकैं कैसैं कैसैं पाइए, इत्यादि विशेष अर त्रिलोक-विषै नरक स्वर्गादिकके ठिकाने पहचानि पापतैं विमुख होय धर्मविषै लागै हैं। बहुरि ऐसे विचारविषै उपयोग रमि जाय, तब पापप्रवृत्ति छूटि स्वयमेव तत्काल धर्म उपजै है। तिस अभ्या-सकरि तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति हो है। बहुरि ऐसा सूक्ष्म यथार्थ कथन जिनमतविषै ही है, अन्यत्र नाहीं, ऐसैं महिमा जानि जिनमतका श्रद्धानी हो है। बहुरि जे जीव तत्त्वज्ञानी होय इस करणानु-योगकौं अभ्यासै हैं, तिनकौं यह तिसका विशेषणरूप भासै है। जो जीवादिक तत्त्व आप जानै है, तिनहीके विशेष करणानु योगविषै किए हैं। तहां केई विशेषण तौ यथावत् निश्चयरूप हैं, केई उपचार लिए व्यवहाररूप हैं। केई द्रव्य क्षेत्र काल भावा-

दिकका स्वरूप प्रमाणादिरूप हैं, केई निमित्त आश्रयादि अपेक्षा लिए हैं। इत्यादि अनेक प्रकारके विशेषण निरूपण किए हैं, तिनकौं जैसाका तैसा मानता, तिस करणानुयोगकौं अभ्यासै है। इस अभ्यासतैं तत्वज्ञान निर्मल हो है। जैसैं कोऊ यह तौ जानैं था, यह रत्न है। परंतु उस रत्नके विशेष घने जानें निर्मल रत्नका पारखी होय, तैसैं तत्वनिकौं जानै था, ए जीवादिक हैं, परंतु तिन तत्वनिके घने विशेष जानै, तौ निर्मल तत्वज्ञान होय। तत्वज्ञान निर्मल भए आप ही विशेष धर्मात्मा हो है। बहुरि अन्य ठिकाने उपयोगकौं लगाईए, तौ रागादिककी वृद्धि होय, छद्मस्थका एकाग्र निरंतर उपयोग रहै नाहीं। तातैं ज्ञानी इस कारणानुयोगका अभ्यासविषै उपयोगकौ लगावैं हैं। तिसकरि केवलज्ञानकरि देखे पदार्थनिका जानपना याकैं हो है। प्रत्यक्ष अप्रत्यक्षहीका भेद है। भासेंनेविषै विरुद्ध है नाहीं। ऐसैं यह करणानुयोगका प्रयोजन जानना। 'करण' कहिए गणितकार्यकौं कारण 'सूत्र' तिनका जाविषै 'अनुयोग' अधिकार होय, सो करणानुयोग है। इसविषैं गणीतवर्णनकी मुख्यता है, ऐसा जानना।

बहुरि चरणानुयोगविषै नानाप्रकार धर्मके साधन निरूपणकरि जीवनिकौं धर्मविषै लगाईए है। जे जीव हित अहितकौं जानैं नाहीं हिंसादि, कषाय कार्यनिविषै तत्पर होय रहे हैं, तिनकौं जैसैं वै पापकार्यनिकौं छोडि धर्मकार्यविषै लागैं, तैसैं उपदेश दिया। ताकौं जिनधर्म आचरण करनेकौं सन्मुख भए, ते जीव

गृहस्थधर्मका विधान सुनि आपतैं जैसा धर्म सधै; तैसा धर्म, साधनविषै लागै हैं। ऐसैं साधनतैं कषाय मंद हो है। ताके फलतैं इतना तौ हो है, जो कुगतिविषै दुख न पावै अर सुगति-विषै सुख पावै। बहुरि ऐसे साधनतैं जिनमतका निमित्त बन्या रहै। तहां तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति होनी होय, तौ होय जावै। बहुरि जीवतत्त्वके ज्ञानी होयकरि चरणानुयोगकौं अभ्यासै हैं, तिनकौं ए सर्व आचरण अपने वीतरागभावके अनुसारी भासै हैं। एकोदेश वा सर्वदेश वीतरागता भए ऐसी श्रावकदशा ऐसी मुनिदशा हो है। जातैं इनकै निमित्त नैमित्तिकपनो पाईए है। ऐसैं जानि श्रावक मुनिधर्मके विशेष पहचानि जैसा अपना वीतरागभाव भया होय, तैसा अपने योग्य धर्मकौं साधै है। तहां जेता अंशां वीतरागता हो है, ताकौं कार्यकारी जानै है, जेता अंशां राग रहै है, ताकौं हेय जानै है। संपूर्ण वीतरागताकौं परमधर्म मानै है। ऐसैं चरणानुयोगका प्रयोजन है।

बहुरि द्रव्यानुयोगविषै द्रव्यनिका वा तत्त्वनिका निरूपणकरि जीवनिकौं धर्मविषै लगाईए है। जे जीवादिक द्रव्यनिकौं पहिचानैं नाहीं, आपा परकौं भिन्न जानैं नाहीं, तिनकौं हेतु दृष्टांत युक्ति करि वा प्रमाणनयादिककरि तिनका स्वरूप ऐसैं दिखाया, जैसैं याकै प्रतीति होय जाय। ताके अभ्यासतैं अनादि अज्ञानता दूरि होय, अन्यमत कल्पित तत्त्वादिक झूठ भासैं, तब जिनमतकी प्रतीति होय। अर उनके भावका अभ्यास राखै, तौ शीघ्र ही तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति होय जाय। बहुरि जिनकै तत्वज्ञान भया

होय, ते जीव द्रव्यानुयोगकौं अभ्यासैं। तिनकौं अपने श्रद्धानके अनुसारि सो सर्व कथन प्रतिभासै है। जैसैं काहूनैं किसी विद्याकौं सीख लई। परंतु जो ताका अभ्यास किया करै तौ वह यादि रहै, न करै तौ भूलि जाय। तैसैं याकै तत्वज्ञान भया, परंतु जो द्रव्यानुयोग अभ्यास किया करै, तौ वह तत्वज्ञान रहै, न करै तौ भूलि जाय। अथवा संक्षेपपनैं तत्त्वज्ञान भया था, सो नानायुक्ति हेतु दृष्टांतादिककरि स्पष्ट होय जाय, तौ तिसविषै शिथिलता न होय सकै। बहुरि इस अभ्यासतैं रागादि घटनेतैं शीघ्र मोक्ष सधै। ऐसैं द्रव्यानुयोगका प्रयोजन जानना।

अब इन अनुयोगनिविषै किस प्रकार व्याख्यान है, सो कहिए है--

प्रथमानुयोगविषै जे मूलकथा हैं, ते तौ जैसी हैं तैसी ही निरूपत हैं। अर तिनविषै प्रसंग पाय व्याख्यान हो हैं, सो कोई तौ जैसाका तैसा हो है, कोई ग्रंथकर्त्ताका विचारकै अनुसार होय परंतु प्रयोजन अन्यथा न हो है।

ताका उदाहरण—जैसैं तीर्थंकर देवनिके कल्याणकनिविषै इंद्र आया, यह कथा तौ सत्य है। बहुरि इंद्र स्तुति करी ताका व्याख्यान किया, सो इंद्र तौ और ही प्रकार स्तुति कीनी थी अर यहां ग्रंथकर्ता और ही प्रकार स्तुति कीनी लिखी। परंतु स्तुतिरूप प्रयोजन अन्यथा न भया। बहुरि परस्पर किनिहूकै वचनालाप भया। तहां उनके और प्रकार अक्षर निकसे थे, यहां ग्रंथकर्ता अन्य प्रकार कहे। परंतु प्रयोजन एक ही दिखावै है।

बहुरि नगर, वन संग्रामादिकका नामादिक तौ यथावत् ही लिखै, अर वर्णन हीनाधिक भी प्रयोजनकौं पोषता निरूपै है। इत्यादि ऐसैं ही जानना। बहुरि प्रसंगरूप कथा भी ग्रंथकर्त्ता अपने विचार अनुसार कहै। जैसैं धर्मपरीक्षाविषै मूर्खनिकी कथा लिखी, सो ए ही कथा मनोवेग कही थी ऐसा नियम नाहीं। परंतु मूर्खपनाकौं ही पोषती कोई वार्त्ता कही, ऐसा अभिप्राय पोषै है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। यहां कोऊ कहै—अयथार्थ कहना तौ जैन शास्त्रनिविषै संभवै नाहीं। ताका उत्तर—

अन्यथा तौ वाका नाम है, जो प्रयोजन औरका और प्रगट करै। जैसैं काहूकौं कह्या तू ऐसैं कहियौ, वानैं वे ही अक्षर तौ न कहे, परंतु तिसही प्रयोजन लिए कह्या। ताकौं मिथ्यावादी न कहिए। ऐसैं जानना—जो जैसाका तैसा लिखनेकी संप्रदाय होय, तौ काहूनै बहुत प्रकार वैराग्य चिंतवन किया था, ताका वर्णन सब लिखे ग्रंथ बधि जाय, अर किछू न लिखै, तौ भाव भासै नाहीं। तातैं वैराग्यकै ठिकानैं थोरा बहुत अपना विचारकै अनुसार वैराग्य पोषता ही कथन करै सराग पोषता न करै। तहां प्रयोजन अन्यथा न भया, तातैं याकौं अयथार्थ न कहिए। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि प्रथमानुयोग विषै जाकी मुख्यता होय, ताकौं ही पोषै है। जैसैं काहूनै उपवास किया, ताका तौ फल स्तोक था बहुरि वाकै अन्यधर्म्म परिणतिकी विशेषता भई, तातैं विशेष उच्चपदकी प्राप्ति भई। तहां तिसकौं उपवासहीका फल निरूपण करै। ऐसैं ही अन्यत्र

जानना । बहुरि जैसैं काहूनैं शीलहीकी प्रतिज्ञा दृढ़ राखी वा नमस्कार मंत्र स्मरण किया, वा अन्यधर्म साधन किया, ताकै कष्ट दूरि भए अतिशय प्रगट भए, तहां तिनहीका जैसा फल न भया अर अन्य कोई कर्म उदयतैं वैसे कार्य भए तौ भी तिनकौ तिन शीलादिकका ही फल निरूपण करै। ऐसैं ही कोई पापकार्य किया, ताकैं तिसहीका तौ तैसा फल न भया अर अन्य कर्म उदयतैं नीचगतिकौं प्राप्त भया, वा कष्टादिक भए, ताकौं तिस ही पापका फल निरूपण करै । इत्यादि ऐसैं ही जानना । यहां कोऊ कहै—ऐसा झूठा फल दिखावना तौ योग्य नाहीं । ऐसे कथनकौं प्रमाण कैसैं कीजिए ताका समाधान—

जे अज्ञानी जीव बहुत फल दिखाए विना धर्मविषै न लागैं, वा पापतैं न डरैं, तिनका भला करनेकै अर्थ ऐसैं वर्णन करिए है । बहुरि झूठ तौ तब होय, जब धर्मका फलकौं पापका फल बतावैं, पापका फलकौं धर्मका फल बतावैं । सो तौ है नाहीं जैसैं दश पुरुष मिलि कोई कार्य करैं, तहां उपचारकरि एक पुरुष भी किया कहिए, तौ दोष नाहीं । अथवा जाके पितादिकनैं कोई कार्य किया होय, ताकौं एक जाति अपेक्षा उपचारकरि पुत्रादिक किया कहिए, तौ दोष नाहीं। तैसैं बहुत शुभ वा अशुभकार्यनिका फल भया, ताकौं उपचारकरि एक शुभ वा अशुभकार्यका फल कहिए, तौ दोष नाहीं । अथवा और शुभ वा अशुभकार्यका फल भया होय, ताकौं एक जाति अपेक्षा उपचारकरि कोई और ही शुभ वा अशुभकार्य का फल कहिए, तौ दोष नाहीं । उपदेशविषै

कहीं व्यवहार वर्णन है, कहीं निश्चय वर्णन है। यहां उपचाररूप व्यवहार वर्णन किया है, ऐसैं याकौं प्रमाण कीजिए है। याकौं तारतम्य न मानि लेना। तारतम्य करणानुयोगविषै निरूपण किया है, सो जानना। बहुरि प्रथमानुयोगविषै उपचाररूप कोई धर्मका अंग भए संपूर्ण धर्म भया कहिए है। जैसैं जीवनिकै शंका कांक्षादिक न भए, तिनकै सम्यक्त भया कहिए। सो एक कोई कार्यविषै शंका कांक्षा न किए ही तौ सम्यक्त न होय सम्यक्त तौ तत्वश्रद्धान भए हो है। परंतु निश्चय सम्यक्तका तौ व्यवहारविषै उपचार किया, बहुरि व्यहवार सम्यक्तका कोई एक अंगविषै संपूर्ण व्यवहार सम्यक्तका उपचार किया, ऐसैं उपचार-करि सम्यक्त भया कहिए। बहुरि कोई जैनशास्त्रका एक अंग जानें सम्यग्ज्ञान भया कहिए है, सो संशयादिरहित तत्वज्ञान भए सम्यग्ज्ञान होय, परंतु पूर्ववत् उपचारकरि कहिए। बहुरि कोई भला आचरण भए सम्यक्चारित्र भया कहिए है। तहां जानैं जैनधर्म्म अंगीकार किया होय, वा कोई छोटी मोटी प्रतिज्ञा गृही होय, ताकौं श्रावक कहिए, सो श्रावक तौ पंचमगुणस्थान-वर्त्ती भए हो हैं। परंतु पूर्ववत् उपचारकरि याकौं श्रावक कह्या है। उत्तरपुराणविषै श्रेणिककौं श्रावकोत्तम कह्या, सो वह तौ असंयत था। परंतु जैनी था, तातैं कह्या। ऐसै ही अन्यत्र जानना। बहुरि जो सम्यक्तरहित मुनिलिंग धारै, वा कोई द्रव्यां भी अतिचार लगावता होय, ताकौं मुनि कहिए। सो मुनि तौ षष्ठादि गुणस्थानवर्त्ती भए हो हैं। परंतु पूर्ववत् उपचारकरि मुनि

कहा है । समवसरणसभाविषै मुनिनिकी संख्या कही, तहां सर्व ही भावलिंगी मुनि न थे, परंतु मुनिलिंग धारनेतैं सबनिकौं मुनि कहे । ऐसैं ही सर्वत्र जानना । बहुरि प्रथमानुयोगविषै कोई धर्मबुद्धितैं अनुचित कार्य करै, ताकी भी प्रशंसा करिए है । जैसैं **विष्णुकुमार** मुनिनिका उपसर्ग दूरि किया, सो धर्म्मानुरागतैं किया, परंतु मुनिपद छोड़ि यह कार्य करना योग्य न था । जातैं ऐसा कार्य तौ गृहस्थधर्मविषै संभव अर गृहस्थधर्मतैं मुनिधर्म ऊंचा है । सो ऊंचा धर्मकौं छोड़ि नीचा धर्म अंगीकार किया, सो अयोग्य है। परंतु वात्सल्य अंगकी प्रधानताकरि विष्णुकुमारजीकी प्रशंसाकरी इस छलकरि औरनिकौं ऊंचा धर्म छोड़ि नीचा धर्म अंगीकार करना योग्य नाहीं । बहुरि जैसैं **गुवालियानैं** मुनिकौं अग्निकरि तपाया, सो करुणातैं यह कार्य किया । परंतु आया उपसर्गकौं तौ दूरि करैं सहजअवस्थाविषै जो शीतादिककी परीषह होय है, तिनकौं दूर भए रति मान लेनेका कारण हो है, सो तिनैं रति करनी नाहीं, तातैं उलटा उपसर्ग होय । यातैं विवेकी तिनकै उपचार करते नाहीं । गुवालिया अविवेकी था, करुणाकरि या कार्य किया, तातैं वाकी प्रशंसा करी । औरकौं धर्मपद्धतिविषै जो विरुद्ध होय, सो कार्य करना योग्य नाहीं । बहुरि जैसैं **वज्रकरण** राजा **सिंहोदर** राजाकौं नम्या नाहीं । मुद्रिकाविषै प्रतिमा राखी, सो बड़े बड़े सम्यग्दृष्टी राजादिककौं नमैं, याका दोष नाहीं; अर मुद्रिकाविषै प्रतिमा राखनेमैं अविनय होय यथावत् विधितैं ऐसी प्रतिमा न होय, तातैं इस कार्यविषै दोष

है। परंतु वाकैं ऐसा ज्ञान न था, धर्मानुरागतैं मैं औरकौ नमौं नाहीं, ऐसी बुद्धि भई, तातैं वाकी प्रशंसा करी। इस छलकरि और-निकौं ऐसे कार्य करने युक्त नाहीं। बहुरि केई पुरुषोंनैं पुत्रादि-ककी प्राप्तिकै अर्थ वा रोग कष्टादि दूरि करनेके अर्थ चैत्यालय पूजनादि कार्य किए, नमस्कार मंत्र स्मरण किया। सो ऐसैं किए तौ निकांक्षित गुणका अभाव होय निदानबंधनामा आर्त्तध्यान होय। पापहीका प्रयोजन अंतरंगविषै है, तातैं पापहीका बंध होय। परंतु मोहित होयकरि भी बहुत पापबंधका कारण कुदेवादिकका तौ पूजनादि न किया, इतना गुण ग्रहणकरि वाकी प्रशंसा करिए है। इस छलकरि औरनिकौं लौकिक कार्यनिके अर्थ धर्मसाधन करना युक्त नाहीं। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। ऐसैं ही प्रथमानुयोग विषै अन्य कथन भी होय, ताकौं यथासंभव जानि भ्रमरूप न होना।

अब करणानुयोगविषै किस प्रकार व्याख्यान है, सो कहिए है—जैसैं केवलज्ञानकरि जान्या तैसैं करणानुयोगविषै व्याख्यान है। बहुरि केवलज्ञानकरि तौ बहुत जान्या, परंतु जीवकौं कार्य-कारी जीव कर्मादिकका वा त्रिलोकादिकका ही याविषै निरूपण हो है। बहुरि तिनका भी स्वरूप सर्व निरूपण न होय सकै तातैं वचनगोचर होय छद्मस्थके ज्ञानविषैं उनका किछू भाव भासै, तैसैं संकोचन करि निरूपण करिए हैं।

यहां उदाहरण—जीवके भावनिकी अपेक्षा गुणस्थान कहे, ते भाव अनंतस्वरूप लिए वचनगोचर नाहीं। तहां बहुत भावनिकी

एक जातिकरि चौदह गुणस्थान कहे । बहुरि जीव जाननेके अनेक प्रकार हैं । तहां मुख्य चौदह मार्गणाका निरूपण किया बहुरि कर्मपरमाणू अनंतप्रकार शक्तियुक्त हैं, तिनविषै बहुत तिनिकी एक जाति करि आठ वा एकसौ अड़तालीस प्रकृति कही । बहुरि त्रिलोकविषै अनेक रचना हैं तहां मुख्य केतीक रचना निरूपण करिए है । बहुरि प्रमाणके अनंत भेद तहां संख्यातादि तीन भेद वा इनके इकईस भेद निरूपण किए, ऐसैं ही अन्यत्र जानना । बहुरि करणानुयोगविषै यद्यपि वस्तुके द्रव्य क्षेत्र काल भावादिक अखंडित हैं, तथापि छद्मस्थकौं हीनाधिक ज्ञान होनेके अर्थ प्रदेश समय अविभागप्रतिच्छेदादिककी कल्पनाकरि तिनका प्रमाण निरूपिए है । बहुरि एक वस्तुविषै जुदे जुदे गुणनिका वा पर्यायनिका भेदकरि निरूपण कीजिए है । बहुरि जीव पुद्गलादिक यद्यपि भिन्न भिन्न हैं, तथापि संबंधादिककरि वा द्रव्यकरि निपज्या गति जाति आदि भेद तिनकौं एक जीवके निरूपे हैं, इत्यादि व्यवहार नयकी प्रधानता लिए व्याख्यान जानना । जातैं व्यवहारविना विशेष जानि सकै नाहीं । बहुरि कहीं निश्चयवर्णन भी पाइए है । जैसैं जीवादिक द्रव्यनिका प्रमाण निरूपण किया, सो जुदे जुदे इतने ही द्रव्य हैं । सो यथासंभव जानि लेना । बहुरि करणानुयोगविषै कथन हैं, ते केई तौ छद्मस्थकै प्रत्यक्ष अनुमानादिगोचर होय, बहुरि जे न होय तिनकौं आज्ञा प्रमाणकरि ही मानने । जैसैं जीव पुद्गलके स्थूल बहुतकालस्थायी मनुष्यादि पर्याय वा घटादि पर्याय निरूपण

किए, तिनका तौ प्रत्यक्ष अनुमानादि होय सकै, बहुरि समय समयप्रति सूक्ष्म परिणमन अपेक्षा ज्ञानादिकके वा स्निग्ध सूक्ष्मादिकके अंश निरूपण किए, ते आज्ञाहीतैं प्रमाण हो हैं। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि करणानुयोगविषै छद्मस्थनिकी प्रवृत्तिकै अनुसार वर्णन नाहीं। केवलज्ञानगम्य पदार्थनिका निरूपण है। जैसैं केई जीव तौ द्रव्यादिकका विचार करै हैं, वा व्रतादिक पालै हैं, परंतु अंतरंग सम्यक्त चारित्रशक्ति नाहीं, तातैं उनकौं मिथ्यादृष्टि अव्रती कहिए है। बहुरि केई जीव द्रव्यादिकका वा व्रतादिकका विचार रहित हैं, अन्य कार्यनिविषै प्रवर्तैं हैं, वा निद्रादिकरि निर्विचार होय रहे हैं, परंतु उनकै सम्यक्तादि शक्तिका सद्भाव है तातैं उनकौं सम्यक्ती वा व्रती कहिए है। बहुरि कोई जीवकै कषायनिकी प्रवृत्ति तौ घनी है अर वाकै अंतरंग कषायशक्ति थोरी है, तौ वाकौं मंदकषाई कहिए है। अर कोई जीवकै कषायनिकी प्रवृत्ति तौ थोरी है, अर वाकै अंतरंग कषायशक्ति घनी है तौ वाकौं तीव्रकषायी कहिए है। जैसैं व्यंतरादिक देव कषायनितैं नगरनाशादि कार्य करैं, तौ भी तिनकै थोरी कषायशक्तितैं पीतलेश्या कही। बहुरि एकेंद्रियादि जीव कषायकार्य करते दीखैं नाहीं, तिनकै घनीशक्तितैं कृष्णादि लेश्या कहीं। बहुरि सर्वार्थसिद्धिके देव कषायरूप थोरे प्रवर्त्तैं, तिनकै बहुत कषायशक्तितैं असंयम कह्या, अर पंचम गुणस्थानी व्यापार अब्रह्मादि कषायकार्यरूप बहुत प्रवर्त्तैं, ताकै मंदकषायशक्तितैं देशसंयम कह्या। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कोई जीवकैं

मन वचन कायकी चेष्टा थोरी होती दीसै, तौ भी कर्माकर्षण शक्तिकी अपेक्षा बहुत योग कह्या। काहूकै चेष्टा बहुत दीखै, तौ भी शक्तिकी हीनतातैं स्तोकयोग कह्या। जैसैं केवली गमनादि-क्रियारहित भया, तहां भी ताकै योग बहुत कह्या। बेंद्रियादिक जीव गमनादि करैं हैं, तौ भी तिनकै योग स्तोक कहे, ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं जाकी व्यक्त तौ किछू न भासै, तौ भी सूक्ष्मशक्तिके सद्भावतैं ताका तहां अस्तित्व कह्या। जैसैं मुनिकै अब्रह्मकार्य किछू नाहीं, तौ भी नवम गुणस्थानपर्यंत मैथुनसंज्ञा कही। अहमिंद्रनिकै दुखका कारण व्यक्त नाहीं, तौ भी कदाचित् असाताका उदय कह्या। नारकीनिकै सुखका कारण व्यक्त नाहीं, तौ भी कदाचित् साताका उदय कह्या। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि करणानुयोग सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रादिक धर्मका निरूपण कर्मप्रकृतीनिका उपशमादिककी अपेक्षा लिए सूक्ष्मशक्ति जैसैं पाइए तैसैं गुणस्थानादिविषै निरूपणकरै है, वा सम्यग्दर्शनादिकके विषयभूत जीवादिक तिनका भी निरूपण सूक्ष्मभेदादि लिए करै है। यहां कोई करणानुयोगकै अनुसारि आप उद्यम करै, तौ होय सकै नाहीं। करणानुयोगविषै तौ यथार्थ पदार्थ जनावनेका मुख्य प्रयोजन है। आचरण करावनेकी मुख्यता नाहीं। तातैं यह तौ चरणानुयोगकै अनुसार प्रवर्तै, तिसतैं जो कार्य होना होय सो स्वयमेव ही हो है। जैसैं आप कर्मनिका उपशमादि किया चाहै, तौ कैसैं होय। आप तौ तत्वादिकका निश्चय करनेका उद्यम करै, तातैं स्वयमेव ही उप-

शमादिक सम्यक्त होय। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। एक अंतर्मु-हूर्त्तविषै ग्यारवां गुणस्थानसौं पड़ि क्रमतैं मिथ्यादृष्टी होय बहुरि चढ़िकरि केवलज्ञान उपजावै। सो ऐसैं सम्यक्तादिकके सूक्ष्मभाव बुद्धिगोचर आवते नाहीं, तातैं करणानुयोगकै अनुसारि जैसाका तैसा जानि तो ले, अर प्रवृत्ति बुद्धिगोचर जैसैं भला होय, तैसैं करैं। बहुरि करणानुयोगविषै भी कहीं उपदेशकी मुख्यता लिए व्याख्यान हो है, ताकौं सर्वथा तैसैं ही न मानना। जैसैं हिंसादि-कका उपायकौं कुमतिज्ञान कह्या, अन्य मतादिकके शास्त्रा-भ्यासकौं कुश्रुतज्ञान कह्या, बुरा दीसै भला न दीसै ताकौं विभंग-ज्ञान कह्या। सो इनकौं छोड़नेंकै अर्थ उपदेशकरि ऐसें कह्या। तारतम्यतैं मिथ्यादृष्टीकै सर्व ही ज्ञान कुज्ञान है, सम्यग्दृष्टीकै सर्व ही ज्ञान सुज्ञान है। ऐसें ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं स्थूलकथन किया होय, ताकौं तारतम्यरूप न जानना। जैसैं व्यासतैं तिगुणी परिधि कहिए, सूक्ष्मपनै किछू अधिक तिगुणी हो है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं मुख्यताकी अपेक्षा व्याख्यान होय, ताकौं सर्व प्रकार न जानना। जैसैं मिथ्यादृष्टी सासादन गुणस्थानवालैंकौं पापजीव कहे, असंयतादिक गुणस्था-नवालैंकौं पुण्यजीव कहे सो मुख्यपनैं ऐसैं कहे, तारतम्यतैं दोऊनिकैं पाप पुण्य यथासंभव पाईए है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। ऐसैं ही और भी नाना प्रकार पाईए है, ते यथासंभव जानने। ऐसैं करणानुयोगविषै व्याख्यानका विधान दिखाया।

अब चरणानुयोगविषै किस प्रकार व्याख्यान है, सो दिखाईए है—

चरणानुयोगविषै जैसें जीवनिकै अपनी बुद्धिगोचर धर्मका आचरण होय, सो उपदेश दिया है। तहां धर्म तौ निश्चयरूप मोक्षमार्ग है, सोई है। ताकै साधनादिक उपचारतैं धर्म है, सो व्यवहारनयकी प्रधानताकरि नाना प्रकार उपचारधर्मके भेदादिकका याविषै निरूपण करिए है। जातैं निश्चय धर्मविषै तौ किछू ग्रहण त्यागका विकल्प नाहीं अर याकै नीचली अवस्थाविषै विकल्प छूटता नाहीं, तातैं इस जीवकौं धर्मविरोधी कार्यनिकौं छुड़ावनेका धर्मसाधनादि कार्यनिके ग्रहण करावनेका उपदेश याविषै है। सो उपदेश दोय प्रकार करिए है। एक तौ व्यवहारहीका उपदेश दीजिए है, एक निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश दीजिए है। तहां जिन जीवनिकै निश्चयका ज्ञान नाहीं है, वा उपदेश दिए भी होता न दीसै ऐसे मिथ्यादृष्टी जीव किछू धर्मकौं सन्मुख भए तिनकौ व्यवहारहीका उपदेश दीजिये है। बहुरि जिन जीवनिकै निश्चय व्यवहारका ज्ञान है, वा उपदेश दिए तिनका ज्ञान होता दीसै है, ऐसे सम्यग्दृष्टी जीव वा सम्यक्तकौं सन्मुख मिथ्यादृष्टी जीव तिनकौं निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश दीजिए है। जातैं श्रीगुरु सर्व जीवनिके उपकारी हैं। सो असंज्ञी जीव तौ उपदेश ग्रहणे योग्य नाहीं, तिनका तौ उपकार इतना ही किया, और जीवनिकौं तिनकी दयाका उपदेश दिया। बहुरि जे जीव कर्मप्रबलतातैं निश्चयमार्गकौं प्राप्त होय सकैं नाहीं, तिनका इतना ही उपकार किया, जो उनकौं व्यवहार धर्मका उपदेश देय कुगतिके दुःखनिका कारण पापकार्य छुड़ाय

सुगतिके इंद्रियनिके सुखका कारण पुण्यकार्य तिसविषै लगाया। जेता दुख मिटया, तेता ही उपकार भया। बहुरि पापीकैं तौ पापवासना ही रहै, अर कुगतिविषै जाय तहां धर्मका निमित्त नाहीं। तातैं परंपराय दुखहीकौं पावौ करै। अर पुण्यवानकै धर्म-वासना रहै अर सुगति विषै जाय, तहां धर्मके निमित्त पाइए, तातैं परंपराय सुखकौं पावै। अथवा कर्मशक्ति हीन होय जाय, तौ मोक्षमार्गकौं भी प्राप्त होय जाय। तातैं व्यवहार उपदेशकरि पापतैं छुड़ाय पुण्यकार्यनिविषै लगाईए है। बहुरि जे जीव मोक्षमार्गकौं प्राप्त भए वा प्राप्ति होने योग्य हैं, तिनका ऐसा उप-कार किया जो उनकौं निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश देय मोक्षमार्गविषै प्रवर्ताए। श्रीगुरु तौ सर्वका ऐसा ही उपकार करैं। परंतु जिन जीवनिका ऐसा उपकार न बनैं; तौ श्रीगुरु कहा करै। जैसा बन्या तैसा ही उपकार किया। तातैं दोय प्रकार उपदेश दीजिए है। तहां व्यवहारविषै तो बाह्य क्रियानिहीकी प्रधानता है। तिनका तौ उपदेशतैं जीव पापक्रिया छोड़ि पुण्य-क्रियानिविषै प्रवर्तै। तहां क्रियानिकै अनुसार परिणाम भी तीव्रकषाय छोड़ि किछू मंदकषायी होय जांय। सो मुख्यपनैं तौ ऐसैं है। बहुरि काहूके न होय, तौ मति होइ। श्रीगुरु तौ परिणाम सुधारनेके अर्थ बाह्यक्रियानिकौं उपदेशै हैं। बहुरि निश्चयसहित व्यवहारका उपदेशविषै परिणामनिहीकी प्रधानता है। ताका उपदेशतैं तत्वज्ञानका अभ्यासकरि वा वैराग्यभावनाकरि परिणाम सुधारै, तहां परिणामकै अनुसारि बाह्यक्रिया भी सुधरि

जाय । परिणाम सुधरें बाह्यक्रिया भी सुधरै ही सुधरै । तातैं श्रीगुरु परिणाम सुधारनेकौं मुख्य उपदेशैं हैं । ऐसैं दोय प्रकार उपदेशविषै व्यवहारहीका उपदेश होय । तहां सम्यग्दर्शनके अर्थ अरहंत देव, निर्ग्रंथ गुरु, दया धर्मकौं ही मानना । बहुरि जीवादिक तत्वनिका व्यवहारस्वरूप कह्या है, ताका श्रद्धान करना, शंकादि पच्चीस दोष न लगावने, निःशंकितादिक अंग अथवा संवेगादिक गुण पालने, इत्यादिक उपदेश दीजिए है । बहुरि सम्यग्ज्ञानके अर्थ जिनमतके शास्त्रनिका अभ्यास करना, अर्थ व्यंजनादि अंगनिका साधन करना, इत्यादि उपदेश दीजिए है । बहुरि सम्यक्चारित्रके अर्थ एकोदेश सर्वोदेश हिंसादि पापनिका त्याग करना, व्रतादि अंगनिकौं पालने इत्यादि उपदेश दीजिए है । बहुरि कोई जीवकौं विशेष धर्मका साधन न होता जानि, एक आखड़ी आदिकका ही उपदेश दीजिए है । जैसैं भीलकौं कागलाका मांस छुड़ाया, गुवालियाकौं नमस्कार मंत्र जपनेका उपदेश दिया, गृहस्थकौं चैत्यालय पूजा प्रभावनादि कार्यका उपदेश दिया, इत्यादि जैसा जीव होय, ताकौं तैसा उपदेश दीजिए है । बहुरि जहां निश्चयसहित व्यवहारका उपदेश होय, तहां सम्यग्दर्शनके अर्थ यथार्थ तत्वनिका श्रद्धान कराईए है । तिनका जो निश्चय स्वरूप है, सो भूतार्थ हैं । व्यवहारस्वरूप है, सो उपचार है । ऐसा श्रद्धान लिए वा स्वपरकाभेदविज्ञानकरि परद्रव्यविषै रागादि छोड़नेका प्रयोजन लिए तिन तत्वनिका श्रद्धान करनेका उपदेश दीजिए है । ऐसे श्रद्धानतैं अरहंतादिविना अन्य देवादिक झूंठ

भासैं, तब स्वयमेव तिनका मानना छूटै है, ताका भी निरूपण करिए है। बहुरि सम्यग्ज्ञानके अर्थ संशयादिरहित तिनही तत्वनिका तैसैं ही जाननेका उपदेश दीजिए है, तिस जाननेकौं कारण जिनशास्त्रनिका अभ्यास है। तातैं तिस प्रयोजनकै अर्थ जिनशास्त्रनिका भी अभ्यास स्वयमेव हो है, ताका निरूपण करिए है। बहुरि सम्यक्चारित्रके अर्थ रागादि दूरि करनेका उपदेश, दीजिए है। तहां एकदेश वा सर्वदेश तीव्ररागादिकका अभाव भए तिनके निमित्ततैं होतीं जे एकदेश सर्वदेश पापक्रिया तातैं छूटै है। बहुरि मंदरागतैं श्रावकमुनिनिकै व्रतनिकी प्रवृत्ति हो है, बहुरि मंदरागादिकनिका भी अभाव भएं शुद्धोपयोगकी प्रवृत्ति हो है, ताका निरूपण करिए है। बहुरि यथार्थ श्रद्धान लिए सम्यग्दृष्टीनिकै जैसैं यथार्थ कोई आखड़ी हो है, वा भक्ति हो है, वा पूजा प्रभावनादि कार्य हो है, वा ध्यानादिक हो है। तिनका उपदेश दीजिए है। जैसा जिनमतविषै सांचा परंपराय मार्ग है, तैसा उपदेश दीजिए है। ऐसैं दोय प्रकार उपदेश चरणानुयोगविषै जानना।

बहुरि चरणानुयोगविषै तीव्रकषायनिका कार्य छुड़ाय मंद-कषायरूप कार्य करनेका उपदेश दीजिए है। यद्यपि कषाय करना बुरा ही है, तथापि सर्वकषाय न छूटते जानि जेता कषाय घटै तितना ही भला होगा, ऐसा प्रयोजन तहां जानना। जैसैं जिनि जीवनिकै आरंभादि करनेकी वा मंदिरादि बनावनेकी वा विषय सेवनेकी वा क्रोधादि करनेकी इच्छा सर्वथा दूरि न

होती जानै, तिनकौं पूजा प्रभावनादिकके करनेका वा चैत्यालयादि बनावेनका वा जिनदेवादिकके आगैं शोभादिक नृत्य गानादि-करनेका वा धर्मात्मा पुरुषनिकी सहायादि करनेका उपदेश दीजिए है। जातैं इनविषैं परंपराय कषायनिका पोषण न हो है। पापकार्यनिविषै परंपराय कषायपोषणा हो है, तातैं पापकार्यनितैं छुड़ाय इन कार्यनिविषै लगाईए है। वहुरि थोरा वहुत जेता छूटता जानै, तितना पापकार्य छुड़ाय सम्यक्त वा अणुव्रतादि पालनेका तिनकौं उपदेश दीजिए है। वहुरि जिन जीवनिकै सर्वथा आरंभादिककी इच्छा दूरि भई, तिनकौं पूर्वोक्त पूजनादिक कार्य वा सर्व पापकार्य छुड़ाय महाव्रतादि कार्यनिका उपदेश दीजिए है। वहुरि जिनकै किंचित् रागादिक छूटता न जानै, तिनकौं दया धर्मोपदेश प्रतिक्रमणादि कार्य करनेका उपदेश दीजिए है। जहां सर्वराग दूरि होय तहां किछू करनेका कार्य ही रह्या नाहीं। तातैं तिनकौं किछू उपदेश ही नाहीं। ऐसा क्रम जानाना।

वहुरि चरणानुयोगविषै कषायी जीवनिकौं कषाय उपजायकरि भी पापकौं छुड़ाईए है, अर धर्मविषै लगाईए है। जैसैं पापका फल नरकादिकके दुख दिखाय तिनकौं भय कषाय उपजाय पापकार्य छुड़ाईए है। वहुरि पुण्यका फल स्वर्गादिकके सुख दिखाय तिनकौं लोभकषाय उपजाय धर्मकार्यनिविषै लगाईए है। वहुरि यह जीव इंद्रियविषय शरीर पुत्र धनादिकके अनुरागतैं पाप करै है, धर्म पराङ्मुख रहै है, तातैं इंद्रियविषयनिकौं मरण

कलेशादिकके कारण दिखावनेकरि तिनविषै अरतिकषाय कराईए है। शरीरादिककौं अशुचि दिखावनेकरि तहां जुगुप्साकषाय कराईए है, पुत्रादिककौं धनादिकके ग्राहक दिखाय तहां द्वेष कराईए है, बहुरि धनादिककौं मरण कलेशादिकका कारण दिखाय, तहां अनिष्ट बुद्धि कराईए है। इत्यादि उपायतैं विषया-दिविषै तीव्रराग दूरि होनेकरि तिनकै पापक्रिया छूटि धर्मविषै प्रवृति हो है। बहुरि नामस्मरण स्तुतिकरण पूजा दान शीलादिकतैं इस लोकविषै दरिद्रकष्ट दूरि हो है, पुत्र धनादिककी प्राप्ति हो है, ऐसैं निरूपणकरि तिनकै लोभ उपजाय तिन धर्म कार्यनिविषै लगाईए है। ऐसैं ही अन्य उदाहरण जानने। यहां प्रश्न—जो कोई कषाय छुड़ाय कोई कषाय करावनेका प्रयोजन कहा? ताका समाधान—

जैसैं रोग तौ शीतांग भी है अर ज्वर भी है। परंतु कोईकै शीतांगतैं मरण होता जानैं, तहां वैद्य है सो वाकै ज्वर होनेका उपाय करै। ज्वर भए पीछैं वाकै जीवनेकी आशा होय, तब पीछैं ज्वरके भी मेंटनेका उपाय करै। तैसैं कषाय तौं सर्व ही हेय हैं, परंतु कोई जीवनिकै कषायनितैं पापकार्य होता जानैं, तहां श्रीगुरु हैं सो उनकै पुण्यकार्यकौं कारणभूत कषाय होनेका उपाय करैं, पीछैं वाकै सांची धर्मबुद्धि जानैं, तब पीछैं तिस कषाय मेटनेका उपाय करैं, ऐसा प्रयोजन जानना। बहुरि चरणा-नुयोगविषै जैसैं जीव पापकौं छोड़ि धर्मविषै लगै, तैसैं अभिप्राय लिये अनेक युक्तिकरि वर्णन करिए है। तहां लौकिक दृष्टांत

युक्तिकरि न्यायपद्धतिके द्वारा समझाइए है। बहुरि कहीं अन्यमतके भी उदाहरणादि दीजिए है। जैसें सूक्तमुक्तावली-विषै लक्ष्मीकौं कमलवासिनी कही, वा समुद्रविषै विष और लक्ष्मी उपजै हैं, तिस अपेक्षा विषकीं भगिनी कही। ऐसैं ही अन्यत्र कहिए है। तहां कोई उदाहरण झूठे हू हैं, परंतु सांच प्रयोजनकौं पोषैं हैं। तहां दोष नाहीं। यहां कोऊ कहै,—झूंठका तौ दोष लागै है। ताका समाधान—जो झूंठ है और सांचे प्रयोजनकौं पोषै है। तौ उसको झूंठ न कहिए है और जो सांचे भी हैं और झूंठे प्रयोजनकौं पोषैं तो वह झूठ ही हैं। ऐसैं अलंकारयुक्त नामादिकविषै वचन अपेक्षा झूंठ सांच नाहीं, प्रयोजन अपेक्षा झूंठ सांच है। जैसैं तुच्छशोभासहित नगरीकौं इंद्रपुरीकै समान कहिए है, सो झूंठ है। परंतु शोभाका प्रयोजनकौं पोषै है, तातैं झूंठ नाहीं। बहुरि "इस नगरीविषै छत्रहीकै दंड है, अन्यत्र नाहीं" ऐसा कह्या, सो झूंठ है। अन्यत्र भी दंड देना पाईए है, परंतु तहां अन्यायवान् थोरे हैं न्यायवानकौं दंड न दीजिए है, ऐसा प्रयोजनकौं पोषै है, तातैं झूंठ नाहीं। बहुरि बृहस्पतिका नाम 'सुरगुरु' लिखैं वा मंगलका नाम 'कुंज' लिखैं, सो ऐसे नाम अन्यमत अपेक्षा हैं। इनका अक्षरार्थ है, सो झूंठा है। परंतु वह नाम तिस पदार्थकौं प्रगट करै है, तातैं झूंठा नाहीं। ऐसैं अन्य मतादिकके उदाहरणादि दीजिए है, सो झूंठ हैं, परंतु उदाहरणादिकका तौ श्रद्धान करावना है नाहीं, श्रद्धान तौ प्रयोजनका करावना है, सो प्रयोजन

सांचा है, दोप है नाहीं। बहुरि चरणानुयोगविषै छद्मस्थकी बुद्धि-गोचर स्थूलपनाकी अपेक्षा लोकप्रवृत्तिकी मुख्यता लिए उपदेश दीजिए है,। बहुरि केवलज्ञानगोचर सूक्ष्मपनाकी अपेक्षा न दीजिए है। जातैं तिसका आचरण न होय सकै है। और यहां आ-चरण करावनेका प्रयोजन है। जैसैं अणुव्रतीकै त्रसहिंसाका त्याग कह्या, अर वाकै स्त्री सेवनादि कार्यविषै त्रसहिंसा हो है। यह भी जानै है--जिनवानी विषै यहां त्रस कहे हैं। परंतु याकै त्रस मारनेका अभिप्राय नाहीं, अर लोकविषै जाका नाम त्रसघात है, ताकौं करै नाहीं, तातैं तिस अपेक्षा वाकै त्रसहिंसाका त्याग है। बहुरि मुनिकै स्थावरहिंसाका भी त्याग कह्या, सो मुनि पृथ्वी जलादिविषै गमनादि करै है, तहां सर्वथा त्रसका भी अभाव नाहीं। जातैं त्रसजीवकी भी अवगाहना ऐसी छोटी हो है, जो दृष्टिगोचर न होवै। अर तिनकी स्थिति पृथ्वी जलादि विषै ही है, सो मुनि जिनवानीतैं जानै हैं वा कदाचित् अवधि ज्ञानादिकरि भी जानै हैं,। परंतु याकै प्रमादतैं स्थावर त्रस-हिंसाका अभिप्राय नाहीं। बहुरि लोकविषै भूमि खोदना अप्रासुक जलतैं क्रिया करनी इत्यादि प्रवृत्तिका नाम स्थावरहिंसा है, अर स्थूल त्रसनिकै पीड़नेका नाम त्रसहिंसा है, ताकौं न करै। तातैं मुनिकै सर्वथा हिंसाका त्याग कहिए है। बहुरि ऐसैं ही अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रहका त्याग कह्या। अर केवलज्ञानका जाननेकी अपेक्षा असत्यवचनयोग बारवां गुणस्थान पर्यंत कह्या अदत्त कर्मपरमाणु आदि परद्रव्यका ग्रहण तेरवां

गुणस्थान पर्यंत है, । वेदका उदय नवमागुणस्थानपर्यंत है । अंतरंगपरिग्रह दशमगुणस्थानपर्यंत है । बाह्यपरिग्रह समवसरणादि केवलीकै भी हो है । परंतु प्रमादतैं पापरूप अभिप्राय नाहीं, अर लोकप्रवृत्तिविषै तिन क्रियानिकरि यह झूठ बोलै है, चोरी करै है, कुशील सेवै है, परिग्रह राखै है, ऐसा नाम पावै, वै क्रिया इनकै हैं नाहीं। तातैं अनृतादिकका इनकै त्याग कहिए है । बहुरि जैसैं मुनिके मूलगुणनिविषै पंचइंद्रियनिके विषयका त्याग कह्या । सो जानना इंद्रियनिका मिटै नाहीं, अर विषयनिविषै रागद्वेष सर्वथा दूरि भया होय, तौ यथाख्यात चारित्र होय जाय, सो भया नाहीं । परंतु स्थूलपनैं विषयइच्छाका अभाव भया अर बाह्य विषय सामग्री मिलावनेकी प्रवृत्ति दूरि भई, तातैं याकै इंद्रियविषयका त्याग कह्या । ऐसैं ही अन्यत्र जानना । बहुरि व्रती जीव त्याग वा आचरण करै है, सो चरणानुयोगकी पद्धति अनुसारि वा लोकप्रवृत्तिकै अनुसारि करै है । जैसैं काहूनैं त्रसहिंसाका त्याग किया है, तहां चरणानुयोगविषै वा लोकविषै जाकौं त्रसहिंसा कहिए है, ताका त्याग किया, केवलज्ञानकरि जो त्रस देखिए है, तिनिका त्याग बनै नाहीं । तहां त्रसहिंसाका त्याग किया, तिसरूप मनका विकल्प न करना मनकरि त्याग है, वचन न बोलना सो वचनकरि त्याग है । कायकरि न प्रवर्त्तना, सो कायकरि त्याग है । ऐसैं अन्य त्याग वा ग्रहण हो है, सो ऐसी पद्धति लिए ही हो है, ऐसा जानना ।

यहां प्रश्न—जो करणानुयोगविषै केवलज्ञान अपेक्षा तारतम्य

कथन है, तहां छठे गुणस्थानवालेकै सर्वथा बारह अविरतिनिका अभाव कह्या, सो कैसैं कह्या। ताका उत्तर—

अविरति भी योगकषायविषै गर्भित थे, परंतु तहां भी चरणानुयोग अपेक्षा त्यागका अभाव तिसहीका नाम अविरति कह्या है। तातैं तहां तिनका अभाव है। मनअविरतिका अभाव कह्या, सो मुनिकै मनके विकल्प हो हैं, परंतु स्वेच्छाचारी मनका पापरूप प्रवृत्तिका अभावतैं मनअविरतिका अभाव कह्या ऐसा जानना। बहुरि चरणानुयोगविषै व्यवहार लोकप्रवृत्ति अपेक्षा ही नामादिक कहिए है। जैसैं सम्यक्तीकौं पात्र कह्या, मिथ्यातीकौं अपात्र कह्या। सो यहां जाकै जिनदेवादिकका श्रद्धान पाईए, सो तौ सम्यक्ती, जाकै तिनका श्रद्धान नाहीं, सो मिथ्याती जानना। जातैं दान देना चरणानुयोगविषै कह्या है, सो चरणानुयोगहीकी अपेक्षा सम्यक्त मिथ्यात्व ग्रहण करिए है। करणानुयोग अपेक्षा सम्यक्त मिथ्यात्व ग्रहैं वो ही जीव ग्यारवैं गुणस्थान अर वो ही अंतर्मुहूर्त्तमैं पहिले गुणस्थान आवै, तहां दातार पात्र अपात्रका कैसैं निर्णय करि सकै। बहुरि द्रव्यानुयोग अपेक्षा सम्यक्त मिथ्यात्व ग्रहैं मुनि संघविषै द्रव्यलिंगी भी हैं भावलिंगी भी हैं। सो प्रथम तौ तिनका ठीक होना कठिन है। जातैं बाह्यप्रवृत्ति समान है। अर जो कदाचित् सम्यक्तीकौं कोई चिह्नकरि ठीक पड़ै अर वह वाकी भक्ति न करै, तब औरनिकै संशय होय, जो याकी भक्ति क्यौं न करी। ऐसैं वाका मिथ्यादृष्टीपना प्रगट होय, तब संघविषै विरोध उपजै। तातैं यहां

व्यवहार सम्यक्त मिथ्यात्वकी अपेक्षा कथन जाननैं। यहां कोई प्रश्न करै—सम्यक्ती तौ द्रव्यलिंगीकौं आपतैं हीनगुणयुक्त मानै है, ताकी भक्ति कैसैं करै। ताका समाधान —

व्यवहारधर्मका साधन द्रव्यलिंगीकै बहुत है अर भक्ति करनी सो भी व्यवहार ही है। तातैं जैसैं कोई धनवान् होय परंतु जो कुलविषै बड़ा होय ताकौं कुल अपेक्षा बड़ा जानि ताका सत्कार करै, तैसैं आप सम्यक्तगुणसहित है, परंतु जो व्यवहारधर्मविषै प्रधान होय, ताकौं व्यवहारधर्म अपेक्षा गुणाधिक मानि ताकी भक्ति करै है। ऐसा जानना। बहुरि ऐसैं ही जो जीव बहुत उपवासादि करै ताकौं तपस्वी कहिए हैं। यद्यपि जो कोई ध्यान अध्ययनादि विशेष करै है, सो उत्कृष्ट तपस्वी है। तथापि चरणानुयोगविषै बाह्यतपहीकी प्रधानता है। तातैं तिसहीकौं तपस्वी कहिए है। याही प्रकार अन्य नामादिक जाननैं। ऐसैं ही अन्य अनेक प्रकार लिए चरणानुयोगविषै व्याख्यानका विधान जानना।

अब द्रव्यानुयोगविषै कहिए है—

जीवनिकै जीवादि द्रव्यनिका यथार्थ श्रद्धान जैसैं होय, तैसैं विशेष युक्ति हेतु दृष्टान्तादिकका यहां निरूपण कीजिए है। जातैं याविषै यथार्थ श्रद्धान करावनेका प्रयोजन है। तहां यद्यपि जीवादि वस्तु अभेद हैं, तथापि तिनविषै भेदकल्पनाकरि व्यवहारतैं द्रव्य गुण पर्यायादिकका भेद निरूपण कीजिए है। सो भी युक्त है। बहुरि प्रतीति अनावनेकै अर्थ अनेक युक्तिकरि

उपदेश दीजिए है, अथवा प्रमाणनयकरि उपदेश दीजिए है, बहुरि वस्तुका अनुमान प्रत्यभिज्ञानादिक करनेकौं हेतु दृष्टांतादिक दीजिए है। ऐसैं तहां वस्तुकी प्रतीति करावनेका उपदेश दीजिए है। बहुरि यहां मोक्षमार्गका श्रद्धान करावनेकै अर्थ जीवादि तत्त्वनिका विशेष युक्ति दृष्टांतादिकरि निरूपण कीजिए है। तहां स्वपरभेदविज्ञानादिक जैसैं होय, तैसैं जीव अजीवका निर्णय कीजिए है। बहुरि वीतरागभाव जैसैं होय, आस्रवादिकका स्वरूप दिखाईए है। बहुरि तहां मुख्यपनैं ज्ञान वैराग्यकौं कारण आत्मानुभवनादिक ताकी महिमा गाईए है बहुरि द्रव्यानुयोगविषै निश्चय अध्यात्म उपदेशकी प्रधानता होय, तहां व्यवहार धर्मका भी निषेध कीजिए है। जे जीव आत्मानुभवके उपायकौं न करै हैं, अर बाह्य क्रियाकांडविषै मग्न हैं, तिनकौं तहांतैं उदासकरि आत्मानुभवनादिविषै लगावनेकौं व्रत शील संयमादिकका हीनपना प्रगट कीजिए है। तहां ऐसा न जानि लेना, जो इनकौं छोड़ि पापविषै लगना। जातैं तिस उपदेशका प्रयोजन अशुभविषै लगावनेका नाहीं है। शुद्धोपयोगविषै लगावनेकौं शुभोपयोगका निषेध कीजिए है। यहां कोऊ कहै कि—अध्यात्मशास्त्रनिविषै पुण्य पाप समान कहे हैं, तातैं शुद्धोपयोग होय तौ भला ही है, न होय तौ पुण्यविषै लगो वा पापविषै लगो। ताका उत्तर—

जैसैं शूद्रजातिअपेक्षा जाट चांडाल समान कहे, परंतु चांडलतैं जाट किछू उत्तम है। यह अस्पृश्य है, वह स्पृश्य है। तैसैं

बंधकारण अपेक्षा पुण्य पाप समान हैं, परंतु पापतैं पुण्य किछू भला है। वह तीव्रकषायरूप है, यह मंदकषायरूप है। तातैं पुण्य छोड़ि पापविषै लगना युक्त नाहीं, ऐसा जानना। बहुरि जे जीव जिनबिम्बभक्त्यादि कार्यनिविषै ही मग्न हैं, तिनकौं आत्मश्रद्धानादि करावनेकौं "देहविषै देव है, देहुराविषै नाहीं" इत्यादि उपदेश दीजिए है। तहां ऐसा न जानि लेना, जो भक्ति छुड़ाय भोजनादिकतै आपकौं सुखी करना। जातैं तिस उपदेशका प्रयोजन ऐसा नाहीं है। ऐसैं ही अन्य व्यवहारका निषेध तहां किया होय, ताकौं जानि प्रमादी न होना! ऐसा जानना,-जे केवल व्यवहारविषै ही मग्न हैं, तिनकौं निश्चयरुचि करावनेकै अर्थ व्यवहारकौं हीन दिखाया है। बहुरि तिन ही शास्त्रनिविषै सम्यग्दृष्टीके विषय भोगादिककौं बंधकारण न कह्या, निर्ज्जराका कारण कह्या। सो यहां भोगनिका उपादेयपना न जानि लेना। तहां सम्यग्दृष्टीकी महिमा दिखावनेकौं जे तीव्रबंधके कारण भोगादिक प्रसिद्ध थे, तिन भोगादिककौं होतसंतै भी श्रद्धानशक्तिके बलतैं मंदबंध होने लगा, ताकौं तौ गिन्या नाहीं अर तिसही बलतैं निर्जरा विशेष होने लगी, तातैं उपचारतैं भोगनिकौं भी बंधका कारण न कह्या, निर्जराका कारण कह्या। विचार किए भोग निर्ज्जराके कारण होंय, तौ तिनकौं छोड़ि सम्यग्दृष्टी मुनिपदका ग्रहण काहेकौं करै। यहां इस कथनका इतना ही प्रयोजन है—देखो, सम्यक्तकी महिमा जाके बलतैं भोग भी अपने गुणकौं न करि सकैं हैं। या प्रकार और भी

कथन होंय, तौ ताका यथार्थपना जानि लेना। बहुरि द्रव्यानुयोगविषै भी चरणानुयोगवत् ग्रहण त्याग करावनेका प्रयोजन है। तातैं छद्मस्थके बुद्धिगोचर परिणामनिकी अपेक्षा ही तहां कथन कीजिए है। इतना विशेष है जो चरणानुयोविषै तौ बाह्य-क्रियाकी मुख्यताकरि वर्णन करिए है अर द्रव्यानुयोगविषै आत्म-परिणामनिकी मुख्यताकरि निरूपण कीजिए है--करणानुयोगवत् सूक्ष्मवर्णन न कीजिए है। ताके उदाहरण कहिए हैं —

उपयोगके शुभ अशुभ शुद्ध ऐसैं तीन भेद कहे। तहां धर्मानु-रागरूप परिणाम सो शुभोपयोग, पापानुराग वा द्वेषरूप परिणाम सो अशुभोपयोग, अर रागद्वेषरहित परिणाम सो शुद्धोपयोग, ऐसैं कह्या। सो इस छद्मस्थके परिणामनिकी अपेक्षा यह कथन है। करणानुयोगविषै कषायशक्ति गुणस्थानादिविषै संक्लेश विशुद्ध परिणाम निरूपण किया है, सो विवक्षा यहां नाहीं है। करणानुयोगविषै तौ रागादिरहित शुद्धोपयोग, यथाख्यातचारित्र भए होय, सो मोहका नाश भए स्वयमेव होगा। नीचली अवस्थावाला शुद्धोपयोग साधन कैसैं करै। अर द्रव्यानुयोगविषैं शुद्धोपयोग करनेहीका मुख्य उपदेश है, तातैं यहां छद्मस्थ जिस कालविषै बुद्धिगोचर भक्ति आदि वा हिंसा आदि कार्यरूप परिणामनिकौं छुड़ाय आत्मानुभवनादि कार्यविषै प्रवर्तैं, तिस काल ताकौं शुद्धोपयोगी कहिए। यद्यपि यहां केवलज्ञानगोचर सूक्ष्म रागादिक हैं, तथापि ताकी विवक्षा यहां न कही, अपनी बुद्धि-गोचर रागादिक छोड़ि तिस अपेक्षा याकौं शुद्धोपयोगी कह्या है।

ऐसैं ही स्वपरश्रद्धानादिक भए सम्यक्तादिक कहे, सो बुद्धिगोचर अपेक्षा निरूपण है। सूक्ष्म भावनिकी अपेक्षा गुणस्थानादिविषै सम्यक्तादिकका निरूपण करणानुयोगविषै पाईए है। ऐसैं ही अन्यत्र जाननैं। तातैं द्रव्यानुयोगके कथनकी करणानुयोगतैं विधि मिलाया चाहिए, सो कहीं तौ मिलै कहीं न मिलै। जैसैं यथाख्यातचारित्र भए, तौ दोऊ अपेक्षा शुद्धोपयोग है, बहुरि नीचली दशाविषै द्रव्यानुयोग अपेक्षा तौ कदाचित् शुद्धोपयोग होय अर करणानुयोग अपेक्षा सदा काल कषायअंशके सद्भावतैं शुद्धोपयोग नाहीं। ऐसैं ही अन्य कथन जानि लेना। बहुरि द्रव्यानुयोगविषै परमतविषै कहे तत्त्वादिक तिनकौं असत्य दिखावनेकैं अर्थ तिनका निषेध कीजिए है, तहां द्वेषबुद्धि न जाननी। तिनकौं असत्य दिखाय सत्य श्रद्धान करावनेका प्रयोजन जानना। ऐसैं ही और भी अनेक प्रकारकरि द्रव्यानुयोगविषै व्याख्यानका विधान किया है। या प्रकार च्यारौं अनुयोगके व्याख्यानका विधान कह्या, सो कोई ग्रंथविषै एक अनुयोगकी, कोई विषै दोयकी, कोई विषै तीनकी, कोई विषै च्यारौंकी प्रधानता लिए व्याख्यान हो है। सो जहां जैसा संभवै, तहां तैसा समझ लैना।

अब इन अनुयोगनिविषै कैसी पद्धतिकी मुख्यता पाईए हैं, सो कहिए है—

प्रथमानुयोगविषै तौ अलंकारशास्त्रनिकी वा काव्यादि शास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातैं अलंकारादितैं मन रंजायमान होय। सूधी बात कहैं ऐसा उपयोग लागै नाहीं, जैसा अलं-

कारादि युक्तिसहित कथनतैं उपयोग लागै। बहुरि परोक्ष बातकौं किछू अधिकताकरि निरूपण करिए, तौ वाका स्वरूप नीकैं भासै। बहुरि करणानुयोगविषै गणित आदि शास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातैं तहां द्रव्य क्षेत्र काल भावका प्रमाणादिक निरूपण कीजिए है। सो गणित ग्रंथनिकी आम्नायतैं ताका सुगम जानपना हो है। बहुरि चरणानुयोगविषै सुभाषित नीतिशास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातैं यहां आचरण करावना है, सो लोक प्रवृत्तिकै अनुसार नीतिमार्ग दिखाए वह आचरण करै। बहुरि द्रव्यानुयोगविषै न्यायशास्त्रनिकी पद्धति मुख्य है। जातैं यहां निर्णय करनेका प्रयोजन है अर न्यायशास्त्रनिविषै निर्णय करनेका मार्ग दिखाया है। ऐसैं इन अनुयोगनिविषै पद्धति मुख्य है। और भी अनेक पद्धति लिए व्याख्यान इनविषै पाईए है। यहां कोऊ कहै- अलंकार गणित नीति न्यायका तौ ज्ञान पंडितनिकै होय, तुच्छबुद्धि समझैं नाहीं, तातैं सूधा कथन क्यौं न किया। ताका उत्तर—

शास्त्र है सो मुख्यपनैं पंडित अर चतुरनिकै अभ्यास करने योग्य है। सो अलंकारादिक आम्नाय लिए कथन होय, तौ तिनका मन लागै। बहुरि जे तुच्छबुद्धि हैं, तिनकौं पंडित समझाय दे। अर जे न समझि सकैं, तौ तिनकौं मुखतैं सूधा ही कथन कहै। परंतु ग्रंथनिमैं सूधा कथन लिखें विशेषबुद्धि तिनका अभ्यासविषै न प्रवर्तै। तातैं अलंकारादि आम्नाय लिए कथन कीजिए है। ऐसैं इन च्यारि अनुयोगनिका निरूपण किया। बहुरि जिनमत

विषै घने शास्त्र तौ इन च्यारौं अनुयोगनिविषै गर्भित हैं। बहुरि व्याकरण न्याय छंद कोशादिक शास्त्र वा वैद्यक ज्योतिष व मंत्रादि शास्त्र भी जिनमतविषै पाईए है। तिनका कहा प्रयोजन है, सो सुनहु—

व्याकरण न्यायादिकका अभ्यास भए अनुयोगरूप शास्त्रनिका अभ्यास होय सकै है। तातैं व्याकरणादिक शास्त्र कहे हैं। कोऊ कहै,—भाषारूप सूधा निरूपण करते तौ व्याकरणादिकका कहा प्रयोजन था। ताका उत्तर—

भाषा तौ अपभ्रंशरूप अशुद्ध वाणी है। देश देशविषै और और है। सो महंतपुरुष शास्त्रनिविषै ऐसी रचना कैसैं करैं। बहुरि व्याकरण न्यायादिककरि जैसा यथार्थ सूक्ष्म अर्थ निरूपण हो है, तैसा सूधी भाषाविषै होय सकै नाहीं। तातैं व्याकरणादि आम्नायकरि वर्णन किया है। सो अपनी बुद्धिअनुसार थोरा बहुत इनका अभ्यासकरि अनुयोगरूप प्रयोजनभूत शास्त्रनिका अभ्यास करना। बहुरि वैद्यकादि चमत्कारतैं जिनमतकी प्रभावना होय वा औषधादिकतैं उपकार भी बनै, अथवा जे जीव लौकिक कार्यविषैं अनुरक्त हैं, ते वैद्यकादिक चमत्कारतैं जैनी होय पीछैं सांचा धर्म्म पाय अपना कल्याण करैं। इत्यादि प्रयोजन लिए वैद्यकादि शास्त्र कहे हैं। यहां इतना है—ए भी जिनशास्त्र हैं, ऐसा जानि इनका अभ्यासविषै बहुत लगना नाहीं। जो बहुत बुद्धितैं इनका सहज जानना होय, अर इनकौं जाने आपकै रागादिक विकार बधते न जानैं, तौ इनका भी जानना होहु।

अनुयोग शास्त्रवत् ए शास्त्र बहुत कार्यकारी नाहीं । तातैं इनका अभ्यासका विशेष उद्यम करना युक्त नाहीं । यहां प्रश्न-जो ऐसैं है, तौ गणधरादिक इनकी रचना काहेकौं करी । ताका उत्तर-

पूर्वोक्त किंचित् प्रयोजन जानि इनकी रचना करी । जैसैं बहुत धनवान् कदाचित् स्तोककार्यकारी वस्तुका भी संचय करै । बहुरि थोरा धनवान् उन वस्तुनिका संचय करे, तौ धन तौ तहां लगि जाय, बहुतकार्यकारी वस्तुका संग्रह काहेतैं करै । तैसैं बहुत बुद्धिमान् गणधरादिक कथंचित् स्तोकार्यकारी वैद्यकादि शास्त्रनिका भी संचय करैं । थोरा बुद्धिमान् उनका अभ्यासविषै लागै तौ बुद्धि तौ तहां लगि जाय, अर उत्कृष्ट कार्यकारी शास्त्रनिका अभ्यास कैसैं करै । बहुरि जैसै मंदरागी तौ पुराणादिविषै श्रृंगारादि निरूपण करै, तौ भी विकारी न होय । तीव्ररागी तैसैं श्रृंगारादि निरूपै तौ पाप ही बांधै । तैसैं मंदरागी गणधरादिक हैं, ते वैद्यकादि शास्त्र निरूपैं, तौ भी विकारी न होंय, अर तीव्ररागी तिनका अभ्यासविषै लगि जाय, तौ रागादिक बधाय पापकर्म्मकौं बांधै ऐसैं जानना । या प्रकार जैनमतके उपदेशका स्वरूप जानना ।

अब इनविषै दोषकल्पना कोई करै है, ताका निराकारण करिए है—

कोई जीव कहै है-प्रथमानुयोगविषै श्रृंगारादिकका वा संग्रामादिकका बहुत कथन करें, तिनके निमित्ततैं रागादिक

बधि जाय, तातैं ऐसा कथन न करना था। ऐसा कथन सुनना नाहीं। ताकौं कहिए है--कथा कहनी होय, तब तौ सर्व ही अवस्थाका कथन किया चाहिए। बहुरि जो अलंकारादिकरि बधाय कथन करै हैं, सो पंडितनिके वचन युक्ति लिएं ही निकसैं। अर जो तू कहैगा, संबंध मिलावनेंकौं सामान्य कथन किया होता, बधायकरि कथन काहेकौं किया। ताका उत्तर—

-जो परोक्षकथनकों बधाय कहे विना वाका स्वरूप भासै नाहीं। बहुरि पहलैं तौ भोग संग्रामादि ऐसैं किए, पीछैं सर्वका त्यागकरि मुनि भए, इत्यादि चमत्कार तब ही भासै, जब बधाय कथन कीजिए। बहुरि तू कहै है, ताके निमित्ततैं रागादिक बधि जांय, सो जैसैं कोऊ चैत्यालय बनावै, सो वाका तौ प्रयोजन तहां धर्मकार्य करावनेका है। अर कोई पापी तहां पापकार्य करै, तौ चैत्यालय बनावनेवालाका तौ दोष नाहीं। तैसैं श्रीगुरु पुराणादिविषै शृंगारादि वर्णन किए, तहां उनका प्रयोजन रागादि करावनेका तौ है नाहीं—धर्मविषै लगावनेका प्रयोजन है। अर कोई पापी धर्म न करै, अर रागादिक ही बधावै, तौ श्रीगुरुका कहा दोष हैं। बहुरि जो तू कहै—जो रागादिकका निमित्त होय, सो कथन ही न करना था। ताका उत्तर—

सरागी जीवनिका मन केवल वैराग्यकथनविषै लागै नाहीं, तातैं जैसैं बालककौं पतासाकै आश्रय औषधि दीजिए, तैसैं सरागीकौं भोगादिकथनकै आश्रय धर्मविषै रुचि कराईए है। बहुरि तू कहैगा—ऐसैं है, तौ विरागी पुरुषनिकौं तौ ऐसे ग्रंथनिका

अभ्यास करना युक्त नाहीं। ताका उत्तर—

जिनकै अंतरंगविषै रागभाव नाहीं, तिनकै श्रृंगारादि कथन सुनें रागादि उपजै ही नाहीं। यह जानै, ऐसैं ही यहां कथन करनेकी पद्धति है। बहुरि तू कहैगा—जिनकै श्रृंगारादि कथन सुनें रागादि होय आवें, तिनकौं तौ वैसा कथन सुनना योग्य नाहीं। ताका उत्तर—

जहां धर्महीका तौ प्रयोजन अर जहां तहां धर्मकौं पोषैं, ऐसे जैनपुराणादिकका तिनविषै प्रसंग पाय श्रृंगारादिकका कथन किया, ताकौं सुनें भी जो बहुत रागी भया, तौ वह अन्यत्र कहां विरागी होगा, पुराण सुनना छोड़ि और कार्य भी ऐसा ही करैगा, जहां बहुत रागादि होय। तातैं वाकै भी पुराण सुनें थोरा बहुत धर्मबुद्धि होय तौ होय और कार्यनितैं यह कार्य भला ही है। बहुरि कोई कहै—प्रथमानुयोगविषै अन्य जीवनिकी कहानी हैं, वातैं अपना कहा प्रयोजन सधै है। ताकौं कहिए है—

जैसैं कामीपुरुषनिकी कथा सुनें आपकै भी कामका प्रेम बधै है, तैसैं धर्मात्मा पुरुषनिकी कथा सुनें आपकै धर्मकी प्रीति विशेष बधै है। तातैं प्रथमानुयोगका अभ्यास करना योग्य है। बहुरि कोई जीव कहैं हैं—करणानुयोगविषै गुणस्थान मार्गणादिकका वा कर्मप्रकृतिनिका कथन किया, वा त्रिलोकादिकका कथन किया, सो तिनकौं जानि लिया 'यह ऐसैं है' 'यह ऐसैं है'-यामैं अपना कार्य कहा सिद्ध भया। कै तौ भक्ति करिए, कै व्रत दानादि करिए, कै आत्मानुभवन करिए, इनतैं

अपना भला होय। ताकौं कहिए है--

परमेश्वर तौ वीतराग हैं। भक्ति किंए प्रसन्न होयकारि किछू करते नाहीं। भक्ति करतैं मंदकषाय हो है, ताका स्वयमेव उत्तम फल हो है। सो करणानुयोगकै अभ्यासविषै तिसतैं भी अधिक मंद कषाय होय सकै है, तातैं याका फल उत्तम हो है। बहुरि व्रतदानादिक तौ कषाय घटावनेके बाह्य निमित्तका साधन हैं; अर चरणानुयोगका अभ्यास किएं तहां उपयोग लगि जाय, तब रागादिक दूरि होंय, सो यह अंतरंग निमित्तका साधन है। तातैं यह विशेष कार्यकारी है। व्रतादिक धारि अध्ययनादि कीजिए है। बहुरि आत्मानुभव सर्वोत्तम कार्य है। परंतु सामान्य अनुभवविषै उपयोग थँभै नाही, अर न थँभै तब अन्य विकल्प होय। तहां करणानुयोगका अभ्यास होय, तौ तिस विचारविषै उपयोगकौं लगावै। यह विचार वर्त्तमान भी रागादिक घटावै है। अर आगामी रागादिक घटावनेका कारण है। तातैं यहां उपयोग लगावना। जीव कर्मादिकके नाना प्रकार भेद जानैं, तिनविषै रागादिकरनेका प्रयोजन नाहीं, तातैं रागादि बधै नाहीं। वीतराग होनैंका प्रयोजन जहां तहां प्रगट है, तातैं रागादि मिटावनेकौं कारण है। यहां कोऊ कहै—कोई तौ कथन ऐसा ही है, परंतु द्वीप समुद्रादिकके योजनादि निरूपे, तिनमैं कहा सिद्धि है। ताका उत्तर—

तिनकौं जानें किछू तिनविषै इष्ट अनिष्ट बुद्धि न होय, तातैं पूर्वोक्त सिद्धि हो है। बहुरि वह कहै है,--ऐसैं है, तौ

जिसतैं किछू प्रयोजन नाहीं, ऐसा पाषाणादिककौं भी जानें तहां इष्ट अनिष्टपनो न मानिए है, सो भी कार्यकारी भया। ताका उत्तर—

सरागी जीव रागादि प्रयोजनविना काहूकौं जाननेका उद्यम न करै। जो स्वयमेव उनका जानना होय, तौ अंतरंग रागादिकका अभिप्रायके वशकरि तहांतैं उपयोगकौं छुड़ाया ही चाहै है। यहां उद्यमकरि द्वीप समुद्रादिककौं जानै है, तहां उपयोग लगावै है। सो रागादि घटे ऐसा कार्य होय। बहुरि पाषाणादिकविषै इस लोकका कोई प्रयोजन भासि जाय, तौ रागादिक होय आवैं। अर द्वीपादिकविषै इस लोकसंबंधी कार्य किछू नाहीं। तातैं रागादिकका कारण नाहीं। जो स्वर्गादिककी रचना सुनि तहां राग होय, तौ परलोकसंबंधी होय। ताका कारण पुण्यकौं जानै, तब पाप छोड़ि पुण्यविषै प्रवर्तै। इतना ही नफा होय। बहुरि द्वीपादिकके जानें यथावत् रचना भासै, तब अन्यमतादिकका कह्या झूंठ भासै, सत्य श्रद्धानी होय। बहुरि यथावत् रचना जाननैंकरि भ्रम मिटें उपयोगकी निर्मलता होय, तातैं यह अभ्यास कार्यकारी है। बहुरि केई कहै हैं-करणानुयोगविषै कठिनता घनी, तातैं ताका अभ्यासविषै खेद होय। ताकौं कहिए है

जो वस्तु शीघ्र जाननेमैं आवै, तहां उपयोग उलझै नाहीं अर जानी वस्तुकौं वारंवार जाननेका उत्साह होय नहीं, तब पापकार्यनिविषै उपयोग लगि जाय। तातैं अपनी बुद्धि अनुसार

कठिनताकरि भी जाका अभ्यास होता जानै, ताका अभ्यास करना। अर जाका अभ्यास होय ही सकै नाहीं ताका कैसैं करै। बहुरि तू कहै है--खेद होय, सो प्रमादी रहनेमैं तौ धर्म है नाहीं! प्रमादतैं सुखिया रहिए, तहां तौ पाप होय। तातैं धर्मकै अर्थ उद्यम करना ही युक्त है। या विचारि करणानुयोगका अभ्यास करना।

बहुरि केई जीव कहै हैं—चरणानुयोगविषै बाह्य व्रतादि साधनका उपदेश है, सो इनतैं किछू सिद्धि नाहीं। अपने परिणाम निर्मल चाहिए, बाह्य चाहो जैसैं प्रवर्त्तो। तातैं या उपदेशतैं पराङ्मुख रहै हैं। तिनिकौं कहिए है—आत्मपरिणामनिकैं और बाह्य प्रवृत्तिकै निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है। क्योंकि छद्मस्थकै क्रिया पारिणामपूर्वक हो है। कदाचित् विना परिणाम हू कोई क्रिया हो है, सो परवशतैं हो है। अपने उद्यमकरि कार्य करिए अर कहिए परिणाम इसरूप नाहीं है, सो यह भ्रम है। अथवा बाह्य पदार्थनिका आश्रय पाय परिणाम होय सकै हैं। तातैं परिणाम मेटनेकै अर्थ बाह्यवस्तुका निषेध करना समयसारादिविषै कह्या है। इस ही वास्तै रागादिभाव घटे बाह्य ऐसे अनुक्रमतैं श्रावक मुनिधर्म होय हैं। अथवा ऐसैं श्रावक मुनिधर्म अंगीकार किएं पंचम षष्ठम गुणस्थाननिविषै रागादि घटावनेरूप परिणामनिकी प्राप्ति होय है। ऐसा निरूपण चरणानुयोगविषै किया। बहुरि जो बाह्य संयमतैं किछू सिद्धि न होय, तौ सर्वार्थसिद्धिके वासी देव सम्यग्दृष्टी बहुतज्ञानी तिनकै तौ चौथा

गुणस्थान होय, अर गृहस्थ श्रावक मनुष्यकै पंचम गुणस्थान होय, सो कारण कहा। बहुरि तीर्थंकरादिक गृहस्थपद छोड़ि काहेकौं संयम ग्रहैं। तातैं यह नियम है--बाह्य संयम साधनविना परिणाम निर्मल न होय सकै हैं। तातैं बाह्य साधनका विधान जाननेकौं चरणानुयोगका अभ्यास अवश्य किया चाहिए।

बहुरि केई जीव कहैं हैं--जो द्रव्यानुयोगविषै व्रतसंयमादि व्यवहारधर्मका हीनपना प्रगट किया है। सम्यग्दृष्टीकै विषय भोगादिककौं निर्जराका कारण कह्या है। इत्यादि कथन सुनि जीव हैं, सो स्वच्छन्द होय पुण्य छोड़ि पापविषै प्रवर्तैंगे, तातैं इनका बाचना सुनना युक्त नाहीं। ताकौं कहिए है—जैसैं गर्दभ मिश्री खाएं मरै, तौ मनुष्य तौ मिश्री खाना न छोड़ै। तैसैं विपरीतबुद्धि अध्यात्मग्रंथ सुनि स्वच्छन्द होय, तौ विवेकी तौ अध्यात्मग्रंथनिका अभ्यास न छोड़ै। इतना करै-जाकौं स्वच्छन्द होता जानै, ताकौं जैसैं वह स्वच्छंद न होय, तैसैं उपदेश दे। बहुरि अध्यात्मग्रंथनिविषै भी स्वच्छन्द होनेका जहां तहां निषेध कीजिए है तातैं जो नीकैं तिनकौं सुनै, सो तौ स्वच्छन्द होता नाहीं। अर एक बात सुनि अपने अभिप्रायतैं कोऊ स्वच्छन्द होय, तौ ग्रंथका तौ दोष है नाहीं, उस जीवहीका दोष है। बहुरि जो झूंठा दोषकी कल्पनाकरि अध्यात्मशास्त्रका बाचना सुनना निषेधिए तौ मोक्षमार्गका मूल उपदेश तौ तहां ही है ताका निषेध किए मोक्षमार्गका निषेध होय। जैसैं मेघवर्षा भए बहुत जीवनिका कल्याण होय, अर काहूकै उलटा टोटा पड़ै तौ तिसकी मुख्य-

ताकरि मेघका तौ निषेध न करना। तैसैं सभाविषै अध्यात्म उपदेश भएं वहुत जीवनिकौं मोक्षमार्गकी प्राप्ति होय अर काहूकै उलटा पाप प्रवर्तै, तौ तिसकी मुख्यताकरि अध्यात्मशास्त्र-निका तौ निषेध न करना। वहुरि अध्यात्मग्रंथनितैं कोऊ स्वछंद होय, सो तौ पहलैं भी मिथ्यादृष्टी था, अब भी मिथ्या-दृष्टी ही रह्या। इतना ही टोटा पड़ै, जो सुगति न होय कुगति होय। अर अध्यात्म उपदेश नहीं भएं वहुत जीवनिकै मोक्षमा-र्गकी प्राप्तिका अभाव होय, सो यामैं घने जीवनिका घना बुरा होय। तातैं अध्यात्म उपदेशका निषेध न करना। वहुरि कोऊ कहै है--जो द्रव्यानुयोगरूप अध्यात्म उपदेश है, सो उत्कृष्ट है सो ऊंची दशाकौं प्राप्त होंय, तिनकौं कार्यकारी है, नीचली दशावालोंकौं तौ व्रत संयमादिकका ही उपदेश देना योग्य है। ताकौं कहिए है---जिनमतविषै तौ यह परिपाटी है, जो पहलैं सम्यक्त होय पीछै व्रत होय। सो सम्यक्त स्वपरका श्रद्धान भये होय अर सो श्रद्धान द्रव्यनुयोगका अभ्यास किए होय। तातैं पहलैं द्रव्यानुयोगकै अनुसार श्रद्धानकरि सम्यदृष्टी होय, पीछैं चरणानुयोगकै अनुसार व्रतादिक धारि व्रती होय। ऐसैं मुख्यपनै तौ नीचली दशाविषै ही द्रव्यानुयोग कार्यकारी है, गौणपनै जाकौं मोक्षमार्गकी प्राप्ति होती न जानिए, ताकौं पहलैं कोई व्रतादिकका उपदेश दीजिए, है। जातैं ऊंची दशवालैंकौं अध्यात्म उपदेश अभ्यास योग्य है ऐसा जानि नीचलीदशावालैंकौं तहांतैं पराङ्मुख होना योग्य नाहीं। वहुरि जो कहैगे, ऊंचा उपदेशका स्वरूप

नीचली दशावालोंकौं भासै नाहीं। ताका उत्तर—

और तौ अनेक प्रकार चतुराई जानैं अर यहां मूर्खपना प्रगट कीजिए, सो युक्त नाहीं। अभ्यास किएं स्वरूप नीकै भासै है। अपनी बुद्धि अनुसार थोरा बहुत भासै, परंतु सर्वथा निरुद्यमी होनेकौं पोषिए, सो तौ जिनमार्गका द्वेषी होना है। बहुरि जो कहोगे, अबार काल निकृष्ट है तातैं उत्कृष्ट, अध्यात्मका उपदेश-की मुख्यता न करी। ताकौं कहिए है, अबार काल साक्षात् मोक्ष होनेकी अपेक्षा निकृष्ट है, आत्मानुभवनादिककरि सम्यक्त्वा-दिकका होना अबार मानैं नाहीं। तातैं आत्मानुभवनादिकके अर्थ द्रव्यानुयोगका अवश्य अभ्यास करना। सोई षट्पाहुड़विषै (मोक्षपाहुड़मैं) कह्या है--

अज्जवि तिरयणसुद्धा अप्पाज्झाऊण जंति सुरलोये।
लोयंते देवत्तं तच्छ चुया णिव्वुदिं जंति ॥ ७७ ॥

याका अर्थ—अबहू त्रिकरणकरि शुद्ध जीव आत्माकौं ध्यायकरि स्वर्गलोकविषै प्राप्त हो हैं, वा लोकांतिकविषै देवपणो पावै हैं। तहांतैं च्युत होय मोक्ष जाय हैं। तातैं इस कालविषै भी द्रव्यानुयोगका उपदेश मुख्य चाहिए। बहुरि कोई कहै है-द्रव्यानुयोगविषै अध्यात्मशास्त्र हैं, तहां स्वपरभेद विज्ञानादिकका उपदेश दिया, सो तौ कार्यकारी भी घना अर समझिमैं भी शीघ्र आवै। परंतु द्रव्यगुणपर्यायादिकका वा अन्यमतके कहे तत्त्वा-दिकका निराकरणकरि कथन किया, सो तिनका अभ्यासतैं

1 "लहइ इंदत्तं" ऐसा भी पाठ है।

विकल्प विशेष होय। बहुत प्रयास किए जाननेमैं आवैं। तातैं इनका अभ्यास न करना। तिनकौं कहिए है—

सामान्य जाननेतैं विशेष जानना बलवान् है। ज्यौं ज्यौं विशेष जानै त्यौं त्यौं वस्तुस्वभाव निर्म्मल भासै, श्रद्धान दृढ होय, रागादि घटै, तातैं तिस अभ्यासविषै प्रवर्त्तना योग्य है। ऐसैं च्यारयौं अनुयोगनिविषै दोषकल्पना अभ्यासतैं पराङ्मुख होना योग्य नाहीं।

बहुरि व्याकरण न्यायादिक शास्त्र हैं, तिनका भी थोरा बहुत अभ्यास करना। जातैं इनका ज्ञानविना बड़े शास्त्रनिका अर्थ भासै नाहीं। बहुरि वस्तुका भी स्वरूप इनकी पद्धति जानें जैसा भासै, तैसा भाषादिककरि भासै नाहीं। तातैं परंपरा कार्यकारी जानि इनका भी अभ्यास करना। परंतु इनहीविषै फसि न जाना। किछू इनका अभ्यासकरि प्रयोजनभूत शास्त्रनिका अभ्यासविषै प्रवर्त्तना। बहुरि वैद्यकादि शास्त्र हैं, तिनतैं मोक्षमार्गविषै किछू प्रयोजन ही नाहीं। तातैं कोई व्यवहार धर्मका अभिप्रायतैं विनाखेद इनका अभ्यास होय जाय, तौ उपकारादि करना, पापरूप न प्रवर्त्तना। अर इनका अभ्यास न होय तौ मति होहु, बिगार किछू नाहीं। ऐसैं जिनमतके शास्त्र निर्दोष जानि तिनका उपदेश मानना।

अब शास्त्रनिविषै अपेक्षादिककौं न जानें परस्पर विरोध भासै, ताका निराकरण कीजिए है। प्रथमादि अनुयोगनिकी आम्नायकै अनुसारि जहां जैसैं कथन किया होय, तहां तैसैं जानि

लेना अर अनुयोगका कथनतैं अन्यथा जानि संदेह न करना। जैसैं कहीं तौ निर्मल सम्यग्दृष्टीहीकै शंका कांक्षा विचिकित्साका अभाव कह्या, कहीं भयका आठवां गुणस्थान पर्यंत, लोभका दशमा पर्यंत, जुगुप्साका आठवां पर्यंत उदय कह्या। तहां विरुद्ध न जानाना। श्रद्धानपूर्वक तीव्र शंकादिकका सम्यग्दृष्टीकैं अभाव भया, अथवा मुख्यपनैं सम्यग्दृष्टी शंकादि न करै, तिस अपेक्षा चरणानुयोगविषै शंकादिकका सम्यग्दृष्टीकै अभाव कह्या। बहुरि सूक्ष्मशक्ति अपेक्षा भयादिकका उदय अष्टमादि गुणस्थान पर्यंत पाइए है। तातैं करणानुयोगविषै तहां पर्यंत तिनका सद्भाव कह्या। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। पूर्वैं अनुयोगनिका उपदेशविधानविषै कैई उदाहरण कहे हैं, ते जानने अथवा अपनी बुद्धितैं समझि लैने। बहुरि एक ही अनुयोगविषै विविक्षाके वशतैं अनेकरूप कथन करिए है। जैसैं करणानुयोगविषै प्रमादनिका सप्तम गुणस्थानविषै अभाव कह्या, तहां कषाय प्रमादके भेद कहे। बहुरि तहां ही कषायादिकका सद्भाव दशमादि गुणस्थान पर्यंत कह्या, तहां विरुद्ध न जानना। जातैं यहां प्रमादनिविषै तौ जे शुभ अशुभ भावनिका अभिप्राय लिएं कषायादिक होंय, तिनका ग्रहण है। सो सप्तम गुणस्थानविषै ऐसा अभिप्राय दूरि भया, तातैं तिनका तहां अभाव कह्या। बहुरि सूक्ष्मादिभावनिकी अपेक्षा तिनहीका दशमादि गुणस्थान पर्यंत सद्भाव कह्या है। बहुरि चरणानुयोगविषै चोरी परस्त्री आदि सप्तव्यसनका त्याग प्रथम प्रतिमा-

विषै कह्या, बहुरि तहां ही तिनका त्याग द्वितीय प्रतिमाविषै कह्या। तहां विरुद्ध न जानना। जातैं सप्तव्यसनविषै तौ चोरी आदि कार्य ऐसैं ग्रहे हैं जिनकरि दंडादिक पावै, लोकविषै अतिनिंदा होय। बहुरि व्रतनिविषै चोरी आदि त्याग करनेयोग्य ऐसैं कहे हैं, जे गृहस्थधर्मविषै विरुद्ध होंय, वा किंचित् लोकनिंद्य होंय। ऐसा अर्थ जानना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि नाना भावनिकी सापेक्षतैं एक ही भावकौं अन्य अन्य प्रकार निरूपण कीजिए है। जैसैं कहीं तौ महाव्रतादिक चारित्रके भेद कहे, कहीं महाव्रतादि होतैं भी द्रव्यलिंगीकौं असंयमी कह्या, तहां विरुद्ध न जानना। जातैं सम्यग्ज्ञान–सहित महाव्रतादिक तौ चारित्र है, अर अज्ञानपूर्वक व्रतादिक भएं भी असंयमी ही है। बहुरि जैसैं पंच मिथ्यात्वनिविषै भी विनय कह्या, अर बारह प्रकार तपनिविषै भी विनय कह्या, तहां विरुद्ध न जानना। जातैं विनय करने योग्य नाहीं, तिनका भी विनयकरि धर्म मानना, सो तौ विनय मिथ्यात्व है अर धर्म्मपद्धतिकरि जे विनय करने योग्य हैं, तिनका यथा-योग्य विनय करना, सो विनय तप है। बहुरि जैसैं कहीं तौ अभिमानकी निंदा करी, कहीं प्रशंसा करी, तहां विरुद्ध न जानना। जातैं मानकषायतैं आपकौं ऊंचा मनावनेकै अर्थ विनयादि न करै, सो अभिमान तौ निंद्य ही है, अर निर्लोभपनातैं दीनता आदि न करै, सो अभिमान प्रशंसा योग्य है। बहुरि जैसैं कहीं चतुराईकी निंदा करी, कहीं प्रशंसा करी, तहां विरूद्ध न जानना।

जातैं मायाकषायतैं काहूका ठिगनेकै अर्थ चतुराई कीजिए, सो तौ निंद्य ही हैं अर विवेक लिएं यथासंभव कार्य करनेविषै जो चतुराई होय, सो श्लाघ्य ही है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि एक ही भावकी कहीं तौ उसतैं उत्कृष्टभावकी अपेक्षाकरि निंदा करी होय, अर कहीं तिसतैं हीनभावकी अपेक्षाकरि प्रशंसा करी होय, तहां विरुद्ध न जानना। जैसैं किसी शुभ-क्रियाकी जहां निंदा करी होय, तहां तौ तिसतैं ऊंची शुभ-क्रिया वा शुद्धभाव तिनकी अपेक्षा जाननी, अर जहां प्रशंसा करी होय, तहां तिसतैं नीची क्रिया वा अशुभक्रिया तिनकी अपेक्षा जाननी। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि ऐसैं ही काहू जीवकी ऊंचे जीवकी अपेक्षा निंदा करी होय, तहां सर्वथा निंदा न जाननी। काहूकी नीचे जीवकी अपेक्षा प्रशंसा करी होय, तौ सर्वथा प्रशंसा न जाननी। यथासंभव वाका गुण दोष जानि लैना। ऐसैं ही अन्य व्याख्यान जिस अपेक्षा लिएं किया होय, तिस अपेक्षा वाका अर्थ समझना। बहुरि एक ही शब्दका कहीं तौ कोई अर्थ हो है, कहीं कोई अर्थ हो है, तहां प्रकरण पहचानि वाका संभवता अर्थ जानना। जैसैं मोक्षमार्गविषै सम्यक्दर्शन कह्या। तहां दर्शन शब्दका अर्थ श्रद्धान है, अर उपयोगवर्णनविषै दर्शन शब्दका अर्थ सामान्य ग्रहण मात्र है, अर इंद्रियवर्णनविषै दर्शन शब्दका अर्थ नेत्रकरि देखने मात्र है। बहुरि जैसैं सूक्ष्मवादरका अर्थ वस्तुनिका प्रमाणादिक-कथनविषै छोटा प्रमाण लिए होय, ताका नाम सूक्ष्म अर बड़ा

प्रमाण लिएं होय, ताका नाम वादर, ऐसा अर्थ होय । अर पुद्गलस्कंधादिका कथनविषै इंद्रियगम्य न होय, सो सूक्ष्म, इंद्रिय गम्य होय सो वादर, ऐसा अर्थ है। जीवादिकका कथनविषै ऋद्धि आदिका निमित्तविना स्वयमेव रुकै नाहीं, ताका नाम सूक्ष्म, रुकै ताका नाम वादर ऐसा अर्थ है। वस्त्रादिकका कथन विषै महीनताका नाम सूक्ष्म, मोटाका नाम वादर ऐसा अर्थ है । करणानुयोगके कथनविषै पुद्गलस्कंधके निमित्ततैं रुकै नाहीं, ताका नाम सूक्ष्म है अर रुक जाय ताका नाम वादर है । बहुरि प्रत्यक्ष शब्दका अर्थ लोकव्यवहारविषै तौ इंद्रियनिकरि जाननेका नाम प्रत्यक्ष है, प्रमाणभेदनिविषै स्पष्ट व्यवहार प्रतिभासका नाम प्रत्यक्ष है, आत्मानुभवनादिविषै आपविषै अवस्था होय, ताका नाम प्रत्यक्ष है। बहुरि जैसैं मिथ्यादृष्टीकै अज्ञान कह्या, तहां सर्वथा ज्ञानका अभाव न जानना, सम्यग्ज्ञानके अभावतैं अज्ञान कह्या है। बहुरि जैसैं उदीरणा शब्दका अर्थ जहां देवादिककै उदीरणा न कही, तहां तौ अन्य निमित्ततैं मरण होय, ताका नाम उदीरणा है। अर दश करणनिका कथनविषै उदीरणा करण देवायुकै भी कह्या। तहां तौ ऊपरिके निषेकनिका द्रव्य उदयावलीविषै दीजिए, ताका नाम उदीरणा है । ऐसैं ही अन्यत्र यथासंभव अर्थ जानना। बहुरि एक ही शब्दका पूर्व शब्द जोड़ें अनेक प्रकार अर्थ हो है । वा उस ही शब्दके अनेक अर्थ हैं । तहां जैसा संभवै, तैसा अर्थ जानना। जैसैं 'जीतै' ताका नाम 'जिन' है। परंतु धर्मपद्धतिविषै कर्मशत्रुकौं जीतै, ताका नाम

'जिन' जानना। यहां कर्मशत्रु शब्दकौं पूर्व जोड़ें जो अर्थ होय, सो ग्रहण किया अन्य न किया। बहुरि जैसैं 'प्राण धारै' ताका नाम 'जीव' है। जहां जीवन मरणका व्यवहार अपेक्षा कथन होय, तहां तौ इंद्रियादि प्राण धारै, सो जीव है। बहुरि द्रव्यादिकका निश्चय अपेक्षा निरूपण होय, तहां चैतन्यप्राणकौं धारै सो जीव है। बहुरि जैसैं समय शब्दके अनेक अर्थ हैं। तहां आत्माका नाम समय है, सर्व पदार्थनिका नाम समय है, कालका नाम समय है, समयमात्र कालका नाम समय है, शास्त्रका नाम समय है, मतका नाम समय है। ऐसैं अनेक अर्थनिविषै जैसा जहां संभवै, तैसा तहां अर्थ जान लेना। बहुरि कहीं तौ अर्थ अपेक्षा नामादिक कहिए है, कहीं रूढिअपेक्षा नामादिक कहिए है। जहां रूढिअपेक्षा नाम लिख्या होय, तहां वाका शब्दार्थ न ग्रहण करना। वाका रूढिरूप अर्थ होय, सो ही ग्रहण करना। जैसैं सम्यक्त्वादिककौं धर्म कह्या। तहां तौ यह जीवकौं उत्तम-स्थानविषै धारै हैं, तातैं याका नाम सार्थक है। बहुरि धर्मद्रव्यका नाम धर्म कह्या, तहां रूढि नाम है। याका अक्षरार्थ न ग्रहणा। इस नाम धारक एक वस्तु है, ऐसा अर्थ ग्रहण करना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि कहीं जो शब्दका अर्थ होता हो, सो तौ न ग्रहण करना अर जहां जो प्रयोजनभूत अर्थ होय, सो ग्रहण करना। जैसैं कहीं किसीका अभाव कह्या होय, अर तहां किंचित् सद्भाव पाइए, तौ तहां सर्वथा अभाव न ग्रहण करना। किंचित् सद्भावकौं न गिणि अभाव कह्या है, ऐसा अर्थ

जानना। सम्यग्दृष्टीकैं रागादिकका अभाव कह्या, तहां ऐसैं अर्थ जानना। बहुरि नोकषाय अर्थ तौ यह,—'कषायका निषेध' सो तौ अर्थ न ग्रहण करना, अर यहां क्रोधादि सारिखे ए कषाय नाहीं, किंचित् कषाय हैं, तातैं नोकषाय हैं। ऐसा अर्थ ग्रहण करना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं कहीं कोई युक्तिकरि कथन किया होय, तहां प्रयोजन ग्रहण करना। समयसारका कलशाविषै यह कह्या—"धोबीका दृष्टांतवत् परभावका त्यागकी दृष्टि यावत् प्रवृत्तिकौं न प्राप्त भई, तावत् यह अनुभूति प्रगट भई" सो यहां यह प्रयोजन है–परभावका त्याग होतैं ही अनुभूति प्रगट हो है। लोकविषै काहूकौं आवतैं ही कोई कार्य भया होय, तहां ऐसै कहिए,—"जो यह आया ही नाहीं; अर यह कार्य होय गया।" ऐसा ही यहां प्रयोजन ग्रहण करना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं प्रमाणादिक किछू कह्या होय, सोई तहां न मानि लेना, तहां प्रयोजन होय सो जानना। ज्ञानार्णवविषै ऐसा कह्या है—"अबार दोय तीन सत्पुरुष हैं[1]।" सो नियमतैं इतने ही नाहीं। यहां 'थोरे हैं' ऐसा प्रयोजन जानना। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। इस ही रीति लिए और

---

१ दुःप्रज्ञाबललुप्तवस्तुनिचया विज्ञानशून्याशयाः
विद्यन्ते प्रतिमन्दिरं निजनिजस्वार्थोद्यता देहिनः।
आनन्दामृतसिन्धुशीकरचयैर्निर्वाप्य जन्मज्वरं
ये मुक्तेर्वदनेन्दुवीक्षणपरास्ते सन्ति द्वित्रा यदि॥ २४॥
[ज्ञानार्णव, पृष्ठ ८८।]

भी अनेक प्रकार शब्दनिके अर्थ हो हैं, तिनकौं यथासंभव जानने। विपरीत अर्थ न जानना। बहुरि जो उपदेश होय, ताकौं यथार्थ पहचानि जो अपने योग्य उपदेश होय, ताका अंगीकार करना। जैसैं वैद्यकशास्त्रनिविषै अनेक औषधि कही हैं, तिनकौं जानै, अर ग्रहण तिसहीका करै, जाकरि अपना रोग दूरि होय। आपकै शीतका रोग होय, तौ उष्ण औषधिका ही ग्रहण करै। शीतल औषधिका ग्रहण न करै। यह औरनिकौं कार्यकारी है, ऐसा जानै। तैसैं जैनशास्त्रनिविषै अनेक उपदेश हैं तिनकौं जानै, अर ग्रहण तिसहीका करै, जाकरि अपना विकार दूरि होय। आपकै जो विकार होय, ताका निषेध करनहारा उपदेशकौं ग्रहै, तिसका पोषक उपदेशकौं न ग्रहै। यह उपदेश औरनिकौं कार्यकारी है, ऐसा जानै। यहां उदाहरण कहिए है—जैसैं शास्त्रविषै कहीं निश्चयपोषक उपदेश है। कहीं व्यवहारपोषक उपदेश है। तहां आपकै व्यवहारका आधिक्य होय, तौ निश्चयपोषक उपदेशका ग्रहण करि यथावत् प्रवर्त्तै; अर आपकै निश्चयका आधिक्य होय, तौ व्यवहारपोषक उपदेशका ग्रहणकरि यथावत् प्रवर्त्तै। बहुरि पूर्वं तौ व्यवहारश्रद्धानतैं आत्मज्ञानतैं भ्रष्ट होय रह्या था, पीछैं व्यवहारउपदेशहीकी मुख्यताकरि आत्मज्ञानका उद्यम न करै, अथवा पूर्वं तौ निश्चयश्रद्धानतैं वैराग्यतैं भ्रष्ट होय स्वच्छन्द होय रह्या था, पीछैं निश्चय उपदेशहीकी मुख्यताकरि विषयकषाय पोषै। ऐसैं विपरीत उपदेश ग्रहैं बुरा ही होय। बहुरि जैसैं **आत्मानुशासनविषै**

ऐसा कह्या—जो तू गुणवान् होय, दोष क्यौं लगावै है। दोष-वान् होना था, तौ दोषमय ही क्यौं न भया[1] ।" सो जो जीव आप तौ गुणवान् होय अर कोई दोष लगाता होय, तहां दोष दूर करनेके अर्थ तिस उपदेशकौं अंगीकार करना। बहुरि आप तौ दोषवान् होय, अर इस उपदेशका ग्रहणकरि गुणवान् पुरुष-निकौं नीचा दिखावै, तौ बुरा ही होय। सर्व दोषमय होनेतैं तौ किंचित् दोषरूप होना बुरा नाहीं है। तातैं तुझतैं तौ भला है। बहुरि यहां यह कह्या—"तू दोषमय ही क्यौं न भया" सो यह तर्क करी है। किछू सर्व दोषमय होनेकै अर्थ यह उपदेश नाहीं है। बहुरि जो गुणवानकै किंचित् दोष भएं भी निंदा है, तौ सर्वदोषरहित तौ सिद्ध हैं, नीचली दशाविषै तौ कोई गुण कोई दोष ही होय। यहां कोऊ कहै-ऐसैं है, तौ "मुनिलिंग धारि किंचित् परिग्रह राखै, सो भी निगोद जाय[2] ।" ऐसा षट्पाहु-ड़विषै कैसें कह्या है? ताका उत्तर-

ऊंची पदवी धारि तिस पदविषै संभवता नीच कार्य करै तौ

१—हे चंद्रमः किमिति लाञ्छनवानभूस्त्वं
तद्वान् भवेः किमिति तन्मय एव नाभूः।
किं ज्योत्स्नयामलमलं तव घोषयन्त्या
स्वर्भानुवन्ननु तथा सति नाऽसि लक्ष्यः॥ १४१॥

२—जह जायरूवसरिसो तिलतुसमत्तं ण गहदि अत्थेसु।
जइ लेइ अप्पबहुअं तत्तो पुण जाइ णिग्गोयं॥ १८॥
[सूत्रपाहुड़]

प्रतिज्ञा भंगादि होनेतैं महादोष लागै है। अर नीची पदवीविषै तहां संभवता गुण दोष होय, तौ होय, तहां वाका दोष ग्रहण करना योग्य नाहीं। ऐसा जानना। बहुरि **उपदेशसिद्धांतरत्नमालविषै** कह्या—"आज्ञा अनुसार उपदेश देनेवालाका क्रोध भी क्षमाका भंडार है[1]।" सो यह उपदेश वक्ताका ग्रहवा योग्य नाहीं। इस उपदेशतैं वक्ता क्रोध किया करै, तौ बुरा ही होय। यह उपदेश श्रोतानिका ग्रहवा योग्य है। कदाचित् वक्ता क्रोधकरिकै भी सांचा उपदेश दे, तौ श्रोता गुण ही मानै। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं काहूकै अतिशीतांग रोग होय, ताकै अर्थ अति उष्ण रसादिक औषधि कही है। तिस औषधिकौं जाकै दाह होय, वा तुच्छ शीत होय, सो ग्रहण करै, तौ दुख ही पावै। तैसैं काहूकै कोई कार्यकी अतिमुख्यता होय, ताकै अर्थ तिसके निषेधका अति खींचकरि उपदेश दिया होय, ताकौं जाकै तिस कार्यकी मुख्यता न होय, वा थोरी मुख्यता होय, सो ग्रहण करै, तौ बुरा ही होय। यहां उदाहरण—जैसैं काहूकौं शास्त्राभ्यासकी अतिमुख्यता अर आत्मानुभवका उद्यम ही नाहीं, ताकै अर्थ बहुत शास्त्राभ्यासका निषेध किया। बहुरि जाकै शास्त्राभ्यास नाहीं, वा थोरा शास्त्राभ्यास है, सो जीव तिस उपदेशतैं शास्त्राभ्यास छोडै अर आत्मानुभवविषै उपयोग रहै नाहीं, तब वाका तौ बुरा ही होय। बहुरि जैसैं काहूकै यज्ञ

---

१ रोसोवि खमाकोसो सुत्तं भासंत जस्सणधणस्य (?)
उस्सूत्तेण खमाविय दोस महामोहआवासो ॥ १४ ॥

स्नानादिककरि हिंसातैं धर्म माननेकी मुख्यता है, ताके अर्थ "जो पृथ्वी उलटै, तौ भी हिंसा किएं पुण्यफल न होय," ऐसा उपदेश दिया। बहुरि जो जीव पूजनादि कार्यनिकरि किंचित् हिंसा लगावै, अर बहुत गुण उपजावै, सो जीव इस उपदेशतैं पूजनादि कार्य छोड़ै, अर हिंसारहित सामायिकादि धर्मविषै उपयोग लागै नाहीं, तब वाका तौ बुरा ही होय। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं कोई औषधि गुणकारी है। परंतु आपकै यावत् तिस औषधितैं हित होय तावत् तिसका ग्रहण करै। जो शीत मिटै भी उष्ण औषधिका सेवन किया ही करै, तौ उलटा रोग होय। तैसैं कोई कार्य है, परंतु आपकै यावत् तिस धर्मकार्यतैं हित होय, तावत् तिसका ग्रहण करै। जो ऊंची दशा होतैं नीची दशा-संबंधी धर्मका सेवनविषै लागै, तौ उलटा बिगार ही होय। यहां उदाहरण—जैसैं पाप मेटनेकै अर्थ प्रतिक्रमणादि धर्मकार्य कहे, बहुरि आत्मानुभव होतैं प्रतिक्रमणादिकका विकल्प करै, तौ उलटा विकार बधै, याहीतैं समयसारविषै प्रतिक्रमणादिकौं विष कह्या है। बहुरि जैसैं अव्रतीकै करने योग्य प्रभावनादि धर्मकार्य कहे; तिनकौं व्रती होयकरि करै, तौ पाप ही बांधै। व्यापारादि आरंभ छोड़ि चैत्यालयादि कार्यनिका अधिकारी होय, सो कैसैं बनै। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि जैसैं पाकादिक औषधि पुष्टकारी हैं, परन्तु ज्वरवान् ग्रहण करै, तौ महादोष उपजै। तैसै ऊंचा धर्म बहुत भला है, परंतु अपने विकारभाव दूरि न होंय, अर ऊंचा धर्म ग्रहै, तौ महादोष उपजै। यहां

उदाहरण–जैसैं अपना अशुभविकार न छूटया, अर निर्विकल्प दशाकौं अंगीकार करै तौ उलटा विकार बधै। जैसैं व्यापारादि करनेका विकार तौ न छूटया अर ध्यानका भेषरूप धर्म अंगीकार करै, तौ महादोष उपजै। बहुरि जैसैं भोजनादि विषयनिविषै आसक्त होय अर आरंभत्यागादि धर्मकौं अंगीकार करै, तौ बुरा ही होय। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। याही प्रकार और भी सांचा विचारतैं उपदेशकौं यथार्थ जानि अंगीकार करना। बहुरि विस्तार कहां ताईं करिए। अपनैं सम्यग्ज्ञान भए आपहीकौं यथार्थ भासै। उपदेश तौ वचनात्मक है। बहुरि वचनकरि अनेक अर्थ युगपत् कहे जाते नाहीं। तातैं उपदेश तौ एक ही अर्थकी मुख्यता लिएं हो है। बहुरि जिस अर्थका जहां वर्णन है, तहां तिसहीकी मुख्यता है। दूसरे अर्थकी तहां ही मुख्यता करै तौ दोऊ उदेश दृढ़ न होंय। तातैं उपदेशविषै एक अर्थकौं दृढ़ करै। परंतु सर्व जिनमतका चिन्ह स्याद्वाद है। सो 'स्यात्' पदका अर्थ 'कथंचित्' है। तातैं उपदेश होय ताकौं सर्वथा न जानि लेना। उपदेशका अर्थकौं जानि तहां इतना विचार करना, यह उपदेश किस प्रकार है, किस प्रयोजन लिएं है, किस जीवकौं कार्यकारी है। इत्यादि विचारकरि तिस अर्थका ग्रहण करै, पीछैं अपनी दशाविषै जो उपदेश जैसैं आपकौं कार्यकारी होय, तिसकौं तैसैं आप अंगीकार करै। अर जो उपदेश जानने योग्य ही होय, तौ ताकौं यथार्थ जानि ले। ऐसैं उपदेशका फलकौं पावै। यहां कोई कहै—जो तुच्छबुद्धि इतना

विचार न करि सकै, सो कहा करै। ताका उत्तर—

जैसैं व्यापारी अपनी बुद्धिकै अनुसारि जिसमैं समझै, सो थोरा वा बहुत व्यापार करै। परन्तु नफा टोटाका ज्ञान तौ अवश्य चाहिए। तैसैं विवेकी अपनी बुद्धिकै अनुसारि जिसमैं समझै, सो थोरा वा बहुत उपदेशकौं ग्रहै, परन्तु मुझकौं यह कार्यकारी है, यह कार्यकारी नाहीं, इतना तौ ज्ञान अवश्य चाहिए। सो कार्य तौ इतना है—यथार्थ श्रद्धानज्ञानकरि रागादि घटावना। सो यह कार्य अपनै सधै, सोई उपदेशका प्रयोजन ग्रहै। विशेष ज्ञान न होय, तौ प्रयोजनकौं तौ भूलै नाहीं। यह तौ सावधानी अवश्य चाहिए। जिसमैं अपना हितकी हानि होय, तैसैं उपदेशका अर्थ समझना योग्य नाहीं। या प्रकार स्याद्वादहृष्टि लिएं जैनशास्त्रनिका अभ्यास किंए अपना कल्याण हो है।

यहां कोई प्रश्न करै—जहां अन्य अन्य प्रकार न संभवै, तहां तौ स्याद्वाद संभवै। बहुरि एक ही प्रकारकरि शास्त्रनिविषै विरुद्ध भासै, तहा कहां करिए। जैसैं प्रथमानुयोगविषै एक तीर्थंकरकी साथि हजारौं मुक्ति गए बताए, करणानुयोग विषै छह महीना आठसमयविषै छसै आठ जीव मुक्ति जांय। ऐसा नियम किया। प्रथमानुयोगविषै ऐसा कथन किया—देव देवांगना उपजि पीछैं मरि साथि ही मनुष्यादि पर्यायविषै उपजे। करणानुयोगविषै देवका सागरों प्रमाण देवांगनाका पल्यों प्रमाण आयु कह्या। इत्यादि विधि कैसैं मिलै। ताका उत्तर—

करणानुयोगविषै कथन है, सो तौ तारतम्य लिएं है। अन्य

अनुयोगनिविषै कथन प्रयोजन अनुसारि है। तातैं करणानुयोगका कथन तौ जैसें किया है, तैसैं ही है। औरनिका कथनकी जैसैं विधि मिलै, तैसैं मिलाय लैनी। हजारौ मुनि तीर्थंकरकी साथि मुक्ति गए बताए, तहां यह जानना—एक ही काल इतने मुक्ति गए नाहीं। जहां तीर्थंकर गमनादि क्रिया मेटि स्थिर भए, तहां तिनकी साथ इतने मुनि तिष्ठे, बहुरि मुक्ति आगैं पीछैं गए। ऐसैं प्रथमानुयोगका करणानुयोगका विरोध दूरि हो है। बहुरि देव देवांगना साथि उपजे, पीछैं देवांगना चयकरि बीचमैं अन्य पर्याय धरै, तिनका प्रयोजन न जानि कथन किया। पीछै वह साथि मनुष्य पर्यायविषै उपजे, ऐसैं विधि मिलाएं विरोध दूरि हो है। ऐसैं ही अन्यत्र विधि मिलाय लैनी। बहुरि प्रश्न—जो ऐसैं कथननिविषै भी कोइ प्रकार विधि मिलै। परंतु कहीं नेमिनाथ स्वामीका सौरीपुरविषै कहीं द्वारावतीविषै जन्म कह्या, रामचंद्रादिककी कथा अन्य अन्य प्रकार लिखी। एकेन्द्रियादिककौं कही सासादन गुणस्थान लिख्या, कहीं न लिख्या. इत्यादि इन कथननिकी विधि कैसैं मिलै ताका उत्तर—

ऐसैं विरोध लिएं कथन कालदोषतैं भए हैं। इस कालविषैं प्रत्यक्ष ज्ञानी वा बहुश्रुतनिका तौ अभाव भया, अर स्तोकबुद्धि ग्रंथ करनेके अधिकारी भए। तिनकै भ्रमतैं कोई अर्थ अन्यथा भासै, ताकौं तैसैं लिखैं, अथवा इस कालविषै कैई जैनमतविषै भी कषायी भए हैं, सो तिननैं कोई कारण पाय अन्यथा कथन लिख्या है ऐसैं अन्यथा कथन भया, तातैं जैनशास्त्रनिविषै

विरोध भासने लागा। सो जहां विरोध भासै, तहां इतना करना कि, इस कथन करनेवाले बहुत प्रमाणीक हैं कि, इस कथन करनेवाले बहुत प्रमाणीक हैं। ऐसा विचारकरि वड़े आचार्यादिकनिका कह्या कथन प्रमाण करना। बहुरि जिनमतके बहुत शास्त्र हैं, तिनहीकी आम्नाय मिलावनी। जो परंपराआम्नायतैं मिलै, सो कथन प्रमाण करना। ऐसैं विचार किएं भी सत्य असत्यका निर्णय न होय सकै तौ जैसैं केवलीकौं भास्या है, तैसैं प्रमाण है, ऐसैं मान लेना। जातैं देवादिकका वा तत्वनिका निर्द्धार भए विना तौ मोक्षमार्ग होय नाहीं। तिनिका तौ निर्द्धार भी होय सकै है, सो कोई इनिका स्वरूप विरुद्ध कहै, तौ आपहीकौं भासि जाय। बहुरि अन्य कथनका निर्द्धार न होय, वा संशयादि रहै, वा अन्यथा जानपना होय जाय, अर केवलीका कह्या प्रमाण है, ऐसा **श्रद्धान** रहै, तौ मोक्षमार्गविषै विघ्न नाहीं, ऐसा जानना। इहां कोई तर्क करै—जैसैं नाना प्रकार कथन जिनमत-विषै कह्या, तैसैं अन्यमतविषै भी कथन पाइए है, सो तुम्हारे मतके कथनका तो तुम तिस जिस प्रकार स्थापन किया, अन्य मतविषै ऐसे कथनकौं तुम दोष लगावो हौ, सो यह तुम्हारै रागद्वेष है। ताका समाधान--

कथन तौ नाना प्रकार होय और प्रयोजन एकहीकौं पोषै तौ कोई दोष है नाहीं। अर कहीं कोई प्रयोजन पोषै, कहीं कोई प्रयोजन पोषै, तौ दोष ही है। सो जिनमतविषै तो एक प्रयोजन रागादि मेटनेका है, सो कहीं सर्व रागादि छुड़ाय थोरा रागादि

करावनेका प्रयोजन पोष्या है, कहीं सर्व रागादि छुड़ावनेका प्रयोजन पोष्या है। परन्तु रागादि वधावनेका प्रयोजन कहीं भी नाहीं। तातैं जिनमतका कथन सर्व निर्दोष है। अर अन्यमतविषै कहीं रागादि मिटावनेके प्रयोजन लिएं कथन करैं, कहीं रागादि वधावनेका प्रयोजन लिएं कथन करैं। ऐसैं ही और भी प्रयोजनकी विरुद्धता लिए कथन करै हैं। तातैं अन्यमतका कथन सदोष है। लोकविषै भी एक प्रयोजनको पोषते नाना वचन कहै, ताकौं प्रमाणीक कहिए है। अर प्रयोजन और और पोषती बात करै, ताकौं बावला कहिए है। बहुरि जिनमतविषै नाना प्रकार कथन है, सो जुदी जुदी अपेक्षा लिए है, तहां दोष नाहीं। अन्यमतविषै एक ही अपेक्षा लिए अन्य कथन करै, तहां दोष है। जैसैं जिनदेवके वीतरागभाव हैं, अर समवसरणादि विभूति पाइए है, तहां विरोध नाहीं। समवसरणादि विभूतिकी रचना इंद्रादिक करै हैं, इनकै तिसविषै रागादिक नाहीं, तातैं दोऊ बातैं संभवैं हैं। अर अन्यमतविषै ईश्वरकौं साक्षीभूत वीतराग भी कहैं, अर तिसहीकर किए काम क्रोधादि भाव निरूपण करैं, सो एक ही आत्माकै वीतरागपनौं अर काम क्रोधादि भाव कैसैं संभवैं। ऐसैं ही अन्य जानना। बहुरि काल दोषतैं जिनमतविषै एक ही प्रकारकरि कोई कथन विरुद्ध लिख्या है, सो यह तुच्छ बुद्धीनिकी भूलि है, किछू मतविषै दोष नाहीं। सो भी जिनमतका अतिशय इतना है कि, प्रमाणविरुद्ध कोई कथन कर सकै नाहीं, कहीं सौरीपुरविषै कहीं द्वारावतीविषै

नेमिनाथ स्वामीका जनम लिख्या है, सो कोठै ही होइ, परंतु नगर विषै जनम होना प्रमाणविरूद्ध नाहीं । अब भी होता दीसै है।

बहुरि अन्यमतविषै सर्वज्ञादि यथार्थ ज्ञानीके किए ग्रंथ बतावैं, बहुरि तिनिविषै परस्पर विरुद्ध भासै । कहीं तौ बाल-ब्रह्मचारीका प्रशंसा करैं, कहीं कहैं **"पुत्राविना गति ही होय नाहीं"** सो दोऊ सांचा कैसैं होय । सो ऐसे कथन तहां बहुत पाइए है । बहुरि प्रमाणविरुद्ध कथन तिनविषै पाइए है । जैसैं वीर्य मुखविषै पड़नेतैं मछलीकै पुत्र हूवो, सो ऐसैं अवार काहूकै होना दीसै नाहीं । अनुमानतैं मिलै नाहीं । ऐसे भी कथन बहुत पाइए है । यहां सर्वज्ञादिककी भूलि मानिए, सो तौ कैसैं भूलैं । अर विरुद्ध कथन माननेमैं आवै नाहीं । तातैं तिनिके मतविषै दोष ठहराइए है । ऐसा जानि एक जिनमतका ही उपदेश ग्रहण करने योग्य है । तहां प्रथमानुयोगादिकका अभ्यास करना । तहां पहिलै याका अभ्यास करना, पीछैं याका करना, ऐसा नियम नाहीं । अपने परिणानिकी अवस्था देखि जिसके अभ्यासतैं अपने धर्मविषै प्रवृत्ति होय, तिसहीका अभ्यास करना । अथवा कदाचित् किसी शास्त्रका अभ्यास करै, कदाचित् किसी शास्त्रका अभ्यास करै । बहुरि जैसैं रोजनामाविषै तौ अनेक रकम जहां तहां लिखी हैं, तिनिकौं खातेमैं ठीक खतावै, तौ लैना दैनाका निश्चय होय । तैसैं शास्त्रनिविषै तौ अनेक प्रकारका उपदेश जहां तहां दिया है, ताकौं सम्यग्ज्ञानविषै यथार्थ प्रयो-

जन लिंए पहिचानै, तौ हित अहितका निश्चय होय। तातैं स्यात्पदकी सापेक्ष लिंए सम्यग्ज्ञानकरि जे जीव जिनवचनविषै रमै हैं, ते जीव शीघ्र ही शुद्ध आत्मस्वरूपकौं प्राप्त हो हैं। मोक्षमार्गविषै पहिला उपाय आगमज्ञान कह्या है। आगमज्ञान विना और धर्मका साधन होय सकै नाहीं। तातैं तुमकौं भी यथार्थबुद्धिकरि आगम अभ्यास करना। तुम्हारा कल्याण होगा।

इति श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक नाम शास्त्रमध्ये उपदेशस्वरूप-प्रतिपादक नामा आठवां अधिकार पूरण भया।

अथ मोक्षमार्गका स्वरूप कहिए है—

दोहा।

शिवउपाय करतैं प्रथम. कारन मंगलरूप।
विघनविनाशक सुखकरन, नमौं शुद्ध शिवभूप॥ १ ॥

पहिलैं मोक्षमार्गके प्रतिपक्षी मिथ्यादर्शनादिक तिनिका स्वरूप दिखाया। तिनिकौं तो दुःखरूप दुःखका कारन जानि हेय मानि तिनिका त्याग करना। बहुरि बीचमैं उपदेशका स्वरूप दिखाया। ताकौं जानि उपदेशकौं यथार्थ समझना। अब मोक्षके मारग सम्यग्दर्शनादिक तिनिका स्वरूप दिखाइए हैं। इनकौं सुखरूप सुखका कारण जानि उपादेय मानि अंगीकार करना। जातैं आत्माका हित मोक्ष ही है। तिसहीका उपाय आत्माकौं कर्त्तव्य है। तातैं इसहीका उपदेश इहां दीजिए है। तहां आत्माका हित मोक्ष ही है और नाहीं। ऐसा निश्चय कैसैं होय, सो कहिए है—

आत्माके नाना प्रकार गुणपर्यायरूप अवस्था पाइए है। तिन- विषै और तौ कोई अवस्था होहू, किछू आत्माका बिगाड़ सुधार नाहीं। एक दुखसुखअवस्थातैं बिगाड़ सुधार है। सो इहां किछू हेतु दृष्टांत चाहिए नाहीं। प्रत्यक्ष ऐसैं ही प्रतिभासै है! लोक- विषै जेते आत्मा हैं, तिनिकै एक उपाय यह पाइए है।-दुख न होय सुख ही होय। वहुरि अन्य उपाय जेते करैं हैं, तेतें एक इस ही प्रयोजन लिएं करै हैं, दूसरा प्रयोजन नाहीं। जिनके निमित्ततैं दुख होता जानै, तिनकौं दूरकरनेका उपाय करै। अर जिनके निमित्ततैं सुख होता जानै, तिनिके होनेका उपाय करै है। वहुरि संकोच विस्तार आदिक अवस्था भी आत्माकै हो हैं, वा अनेक परद्रव्यका भी संयोग मिलै है। परंतु जिनतैं सुख दुख होता न जानै, तिनके दूर करनेका वा होनेका कुछ भी उपाय कोऊ करै नाहीं। सो इहां आत्मद्रव्यका ऐसा ही स्वभाव जानना। और तौ सर्व अवस्थाकौं सहि सकैं, एक दुखकौं सह सकता नाहीं। परवश दुख होय तौ यह कहा करै, ताकौं भोगवै, परन्तु स्ववशपनै तौ किंचित् भी दुःखकौं न सहै। अर संकोच विस्ता- रादि अवस्था जैसी होय, तैसी होय, तिसकौं स्ववशपनै भी भोगवै, सो स्वभावविषै तर्क नाहीं। आत्माका ऐसा ही स्वभाव जानना। देखो, दुखी होय तब सूता चाहै, सो सोवनेमैं ज्ञानादिक मंद हो जाय है, परन्तु जड़सारिखा भी होय दुखकौं दूरि किया चाहै है, वा मूआ चाहै। सो मरनेमैं अपना नाश मानै है, परन्तु अपना अस्तित्व खोकर भी दुख दूर किया चाहै

है। तातैं एक दुखरूप पर्यायका अभाव करना ही याका कर्तव्य है। बहुरि दुख न होय, सो ही सुख है। सो यह भी प्रत्यक्ष भासै है। बाह्य कोई सामग्रीका संयोग मिलें जाके अंतरंगविषै आकुलता है, सो दुखी ही है। जाकै आकुलता नाहीं, सो सुखी है। बहुरि आकुलता हो है, सो रागादिक कषायभाव भएं हो है। जातैं रागादि भावनिकरि यह तौ द्रव्यनकौं और भांति परिणमाया चाहै, अर वै द्रव्य और भांति परिणमैं, तब याकै आकुलता होय। तहां कै तौ आपकै रागादिक दूर होंय, कै आप चाहै तैसैं ही सर्वद्रव्य परिणमैं तौ आकुलता मिटै। सो सर्व द्रव्य तौ याकै आधीन नाहीं। कदाचित् कोई द्रव्य जैसी याकी इच्छा होय, तैसैं ही परिणमैं, तौ भी याकी सर्वथा आकुलता दूरि न होय। सर्व कार्य याका चाह्या ही होय, अन्यथा न होय, तब यह निराकुल रहै। सो यह तौ होय ही सकै नाहीं। जातैं कोई द्रव्यका परिणमन कोई द्रव्यके आधीन नाहीं। तातैं अपने रागदिक भाव दूरि भएं निराकुलता होय, सो यह कार्य बनि सकै है,। जातैं रागादिक भाव आत्माका स्वभाव भाव तौ है नाहीं। उपाधिक भाव हैं, परनिमित्ततैं भएं हैं, सो निमित्त मोहकर्मका उदय है। ताका अभाव भएं सर्व रागादिक विलय होय जांय, तब आकुलताका नाश भएं दुख दूरि होय, सुखकी प्राप्ति होय। तातैं मोहकर्मका नाश हितकारी है। बहुरि तिस आकुलताकौं सहकारी कारण ज्ञानावरणादिकका उदय है। ज्ञानावरण दर्शनावरणके उदयतैं ज्ञानदर्शन संपूर्ण न प्रगटै है-

तातैं याकै देखने जाननेकी आकुलता होय, अथवा यथार्थ संपूर्ण वस्तुका स्वभाव न जानै, तब रागादिरूप होय प्रवर्तै, तहां आकुलता होय । बहुरि अंतरंगके उदयतैं इच्छानुसार दानादि कार्य न बनैं, तब आकुलता होय । इनका उदय है, सो मोहका उदय होतैं आकुलताकौं सहकारी कारण है । मोहके उदयका नाश भएं इनिका बल नाहीं । अंतर्मुहूर्त्तकरि आपोआप नाशकौं प्राप्ति होय । परंतु सहकारी कारण भी दूरि होय जाय, तब प्रगटरूप निराकुल दशा भासै । तहां केवलज्ञानी भगवान् अनंत--सुखरूप दशाकौं आप्त कहिए । बहुरि अघाति कर्मनिका उदयके निमित्ततैं शरीरादिकका संयोग हो है, सो मोहकर्मका उदय होतैं शरीरादिकका संयोग आकुलताकौं बाह्य सहकारी कारण है । अंतरंग मोहका उदयतैं रागादिक होय अर बाह्य अघाति कर्मनिके उदयतैं रागादिककौं कारण शरीरादिकका संयोग होय, तब आकुलता उपजै हैं । बहुरि मोहका उदय नाश भएं भी अघाति-कर्मका उदय रहै है, सो किछू भी आकुलता उपजाय सकै नाहीं । परन्तु पूर्व आकुलताका सहकारि कारण था, तातैं अघाति कर्मनिका भी नाश आत्माकौं इष्ट ही है । सो केवलीकै इनिके होतैं किछू दुख नाहीं । तातैं इनका नाशका उद्यम भी नाहीं । परंतु मोहका नाश भएं ए कर्म आपै आप थोरे ही कालमैं सर्व नाशकौं प्राप्त होय जाय हैं । ऐसैं सर्व कर्मका नाश होना आत्माका हित है । बहुरि सर्व कर्मका नाशहीका नाम मोक्ष है । तातैं आत्माका हित एक मोक्ष ही है-और किछू नाहीं, ऐसा

निश्चय करना। इहां कोऊ कहै—संसार दशाविषै पुण्यकर्मका उदय होतैं भी जीव सुखी हो है, तातैं केवल मोक्ष ही हित है, ऐसा काहेकौं कहिए। ताका समाधान—

संसारदशाविषै सुख तो सर्वथा है ही नाहीं, दुख ही है। परंतु काहूकै कबहू बहुत दुख हो है, काहूकै कबहू थोरा दुख हो है। सो पूर्वै बहुत दुख था, वा अन्य जीवनिकै बहुत दुख पाइए है, तिस अपेक्षातैं थोरे दुखवालेकौं सुखी कहिए। बहुरि तिस ही अभिप्रायतैं थोरे दुखवाला आपकौं सुखी मानै है। परमार्थतैं सुख है नाहीं। बहुरि जो थोरा भी दुख सदा काल रहै है, तौ वाकौं भी हित ठहराइए, सो भी नाहीं। थोरे काल ही पुण्यका उदय रहै, तहां थोरा दुख हो है, पीछैं बहुत दुख हो जाय। तातैं संसारअवस्था हितरूप नाहीं। जैसैं काहूकैं विषम ज्वर है, ताकै कबहू असाता बहुत हो है, कबहू थोरी हो है। थोरी असाता होय, तब वह आपकौं नीका मानै। लोक भी कहैं—नीका है। परन्तु परमार्थतैं यावत् ज्वरका सद्भाव है, तावत् नीका नाहीं है। तैसैं संसारीकै मोहका उदय है। ताकै कबहू आकुलता बहुत हो है, कबहू थोरी हो है। थोरी आकुलता होय, तब वह आपकौं सुखी मानै, लोक भी कहैं—सुखी है। परमार्थतैं यावत् मोहका सद्भाव है, तावत् सुखी नाहीं। बहुरि संसार दशाविषै भी आकुलता घटें सुखी नाम पावै है। आकुलता बधे दुखी नाम पावै है। किछू बाह्य सामग्रीतैं सुख दुख नाहीं। जैसैं काहू दरिद्रीकै किंचित् धनकी प्राप्ति भई। तहां किछू

आकुलता घटनेतैं वाकौं सुखी कहिए, अर वह भी आपकौं सुखी मानै। बहुरि काहू बहुत धनवान्कै किंचित् धनकी हानि भई तहां किछू आकुलता बधनैतैं वाकौं दुखी कहिए। अर वह भी आपकौं दुखी मानै है। ऐसैं ही सर्वत्र जानना। बहुरि आकुलता घटना बधना भी बाह्य सामग्रीके अनुसार नाहीं। कषाय भावनिकै घटने बधनेकै अनुसार है। जैसैं काहूकै थोरा धन है अर वाकै संतोष है, तौ वाकैं आकुलता थोरी है। बहुरि काहूकै बहुत धन है, अर वाकै तृष्णा है, तौ वाकै आकुलता घनी है। बहुरि काहूकौं काहूनै बहुत बुरा कह्या, अर वाकै थोरा क्रोध न भया, तौ आकुलता न हो है। अर थोरी बातैं कहे ही क्रोध होय आवै, तौ वाकै आकुलता घनी हो है। बहुरि जैसैं गऊकै बछड़ेतैं किछू भी प्रयोजन नाहीं। परंतु मोह बहुत, तातैं वाकी रक्षा करनेकी बहुत आकुलता हो है। बहुरि सुभटकै शरीरादिकतैं घने कार्य सधै हैं, परंतु रणविषै मानादिककरि शरीरादिकतैं मोह घटि जाय, तब मरनेकी भी थोरी आकुलता हो है। तातैं ऐसा जानना—संसार अवस्थाविषै भी आकुलता घटने बधनेहीतैं सुखदुख मानिए है। बहुरि आकुलताका घटना बधना रागादि कषाय घटने बधनेके अनुसार है। बहुरि परद्रव्यरूप बाह्य सामग्रीके अनुसार सुख दुख नाहीं। कषायतैं याकै इच्छा उपजै, अर याकी इच्छा अनुसारि बाह्य सामग्री मिलै, तब याका किछू कषाय उपशमनेतैं आकुलता घटै, तब सुख मानै। अर इच्छा-नुसार सामग्री न मिलै, तब कषाय बधनेतैं आकुलता बधै, तब

दुख मानै। सो है तौ ऐसैं, अर यह जानै-मोकूं परद्रव्यके निमित्ततैं सुख दुख हो है। सो ऐसा जानना भ्रम ही है। तातैं इहां ऐसा विचार करना, जो संसार अवस्थाविषै किंचित् कषाय घटें सुख मानिए, ताकौं हित जानिए, तौ जहां सर्वथा कषाय दूर भएं वा कषायके कारण दूरि भएं परम निराकुलता होने करि अनंत सुख पाइए, ऐसी मोक्षअवस्थाकौं कैसैं हित न मानिए। बहुरि संसार अवस्थाविषै उच्च पदकौं पावै, तौ भी कै तौ विषय-सामग्री मिलावनेकी आकुलता होय, कै विषयसेवनेकी आकुलता होय, कै और कोई क्रोधादि कषायतैं इच्छा उपजै, ताकौं पूरण करनेकी आकुलता होय, कदाचित् सर्वथा निराकुल होय सकै नाहीं। अभिप्रायविषै तौ अनेकप्रकार आकुलता बनी ही रहै। अर बाह्य कोई आकुलता मेटनेके उपाय करै, सो प्रथम तौ कार्य सिद्ध होय नाहीं। अर जो भवितव्य योगतैं वह कार्य सिद्ध होय जाय, तौ तत्काल और आकुलता मेटनेका उपायविषै लागै। ऐसैं आकुलता मेटनेकी आकुलता निरंतर रह्या करै। जो ऐसी आकुलता न रहै, तो नये नये विषयसेवनादि कार्यविषै काहेकौं प्रवर्तै है। तातैं संसार अवस्थाविषै पुण्यका उदयतैं इंद्र अहमिंद्रादि पदकौं पावै, तौ भी निराकुलता न होय, दुःखी ही रहै। तातैं संसारअवस्था हितकारी नाहीं।

बहुरि मोक्ष अवस्थाविषै कोई प्रकारकी आकुलता रही नाहीं तातैं आकुलता मेटनेका उपाय करनेका भी प्रयोजन नाहीं। सदा काल शांतरसकरि सुखी रहै है। तातैं मोक्षअवस्था ही हितकारी

है। पूर्वं भी संसार अवस्थाका दुःखका अर मोक्ष अवस्थाका सुखका विशेष वर्णन किया है, सो इसही प्रयोजनके अर्थि किया है। ताकौं भी विचारि मोक्षका उपाय करना। सर्व उपदेशका तात्पर्य इतना है। इहां प्रश्न—जो मोक्षका उपाय काललब्धि आएं भवितव्यानुसारि बने है कि, मोहादिकका उपशमादि भएं बनै है, अथवा अपने पुरुषार्थतैं उद्यम किए बनै, सो कहौ। जो पहिले दोय कारण मिले बनै है, तौ हमकौं उपदेश काहेकौं दीजिए है। अर पुरुषार्थतैं बनै है, तौ उपदेश सर्व सुनि, तिनविषै कोई उपाय कर सकै, कोई न करि सकै, सो कारण कहा। ताका समाधान—

एक कार्य होनेविषै अनेक कारण मिलै हैं। सो मोक्षका उपाय बनै है, तहां तौ पूर्वोक्त तीनौं ही कारण मिलै हैं। अर न बनै है, तहां तीनौं ही कारण न मिलै हैं। पूर्वोक्त तीन करण कहे. तिनविषै काललब्धि वा होनहार तौ किछू वस्तु नाहीं। जिस कालविषै कार्य बनै, सोई काललब्धि और जो कार्य भया सोई होनहार। बहुरि कर्मका उपशमादि है, सो पुद्गलकी शक्ति है। ताका आत्मा कर्त्ता हर्त्ता नाहीं। बहुरि पुरुषार्थतैं उद्यम करिए है, सो यह आत्माका कार्य है। तातैं आत्माकौं पुरुषार्थकरि उद्यम करनेका उपदेश दीजिए है। तहां यह आत्मा जिस कारणतैं कार्यसिद्धि अवश्य होय तिसकारणरूप उद्यम करै, तहां तौ अन्य कारण मिलैं ही मिलैं, अर कार्यकी भी सिद्धि होय ही होय। बहुरि जिस कारणतैं कार्यसिद्धि होय,

अथवा नाहीं भी होय, तिस कारणरूप उद्यम करै, तहां अन्य कारण मिलैं तौ कार्यसिद्धि होय, न मिलैं तौ सिद्धि न होय। सो जिनमतविषै जो मोक्षका उपाय कह्या है, सो इसतैं मोक्ष होय ही होय। तातैं जो जीव पुरुषार्थकरि जिनेश्वरका उपदेश अनुसार मोक्षका उपाय करै है, ताकै काललब्धि वा होनहार भी भया। अर कर्मका उपशमादि भया है, तौ यह ऐसा उपाय करै है। तातैं जो पुरुषार्थकरि मोक्षका उपाय करै है, ताकै सर्व कारण मिलै हैं, ऐसा निश्चय करना। अर वाकै अवश्य मोक्षकी प्राप्ति हो है। बहुरि जो जीव पुरुषार्थकरि मोक्षका उपाय न करै, ताकै काललब्धि होनहार भी नाहीं। अर कर्मका उपशमादि न भया है, तौ यह उपाय न करै है। तातैं जो पुरुषार्थकरि मोक्षका उपाय न करै है, ताकै कोई कारण मिलै नाहीं, ऐसा निश्चय करना। अर वाकै मोक्षकी प्राप्ति न हो है। बहुरि तू कहै है—उपदेश तौ सर्व सुनै हैं, कोई मोक्षका उपाय कर सकै, कोई न करि सकै, सो कारण कहा। सो कारण यह है कि—जो उपदेश सुनिकरि पुरुषार्थ करै हैं, सो तौ मोक्षका उपाय करि सकै है अर पुरुषार्थ न करै, सो मोक्षका उपाय न कर सकै है। उपदेश तौ शिक्षामात्र है, फल जैसा पुरुषार्थ करै तैसा लागै। बहुरि प्रश्न—जो द्रव्यलिंगी मुनि मोक्षके अर्थि गृहस्थपनौ छोड़ि तपश्चरणादि करै हैं, तहां पुरुषार्थ तौ किया कार्य सिद्ध न भया, तातैं पुरुषार्थ किए तौ किछू सिद्धि नाहीं। ताका समाधान,—

अन्यथा पुरुषार्थ फल चाहै, तौ कैसैं सिद्धि होय।

तपश्चरणादि व्यवहार साधनविषै अनुरागी होय प्रवर्त्तै, ताका फल शास्त्रविषै तौ शुभबंध कह्या है, अर यह तिसतैं मोक्ष चाहै है, तौ कैसैं सिद्धि होय। यह तौ भ्रम है। बहुरि प्रश्न— जो भ्रमका भी तौ कारण कर्म ही है, पुरुषार्थ कहा करै। ताका उत्तर—

सांचा उपदेशतैं निर्णय किए भ्रम दूरि हो है। सो ऐसा पुरुषार्थ न करै है, तिसहीतैं भ्रम रहै है। निर्णय करनेका पुरुषार्थ करै, तौ भ्रमका कारण मोहकर्म ताका भी उपशमादि होय तब भ्रम दूरि हो जाय। जातैं निर्णय करतां परिणामनिकी विशुद्धता होय, तिसतैं मोहका स्थिति अनुभाग घटै है। बहुरि प्रश्न—जो निर्णय करनेविषै उपयोग न लगावै है, ताका भी तौ कारण कर्म है। ताका समाधान—

एकेंद्रियादिकके विचार करनेकी शक्ति नाहीं, तिनकै तौ कर्महीका कारण है। याकै तो ज्ञानावरणादिकका क्षयोपशमतैं निर्णय करनेकी शक्ति प्रगट भई है। जहां उपयोग लगावै, तिसहीका निर्णय होय सकै है। परंतु यह अन्य निर्णय करनेविषैं उपयोग लगावै, यहां उपयोग न लगावै। सो यह तौ याहीका दोष है, कर्मका तौ किछू प्रयोजन नाहीं। बहुरि प्रश्न—जो सम्यक्त्वचारित्रका तौ घातक मोह है। ताका अभाव भए विना मोक्षका उपाय कैसैं बनै। ताका समाधान—

तत्त्वनिर्णय करनेविषै उपयोग न लगावै, सो तो याहीका दोष है। बहुरि पुरुषार्थकरि तत्त्वनिर्णयविषै उपयोग लगावै, तब

स्वयमेव ही मोहका अभाव भएं सम्यक्त्वादिरूप मोक्षके उपायका पुरुषार्थ बनै है । सो मुख्यपनै तौ तत्त्वनिर्णयविषै उपयोग लगावनेका पुरुषार्थ करना । बहुरि उपदेश भी दीजिए है, सो इस ही पुरुषार्थ करावनेके अर्थि दीजिए है । बहुरि इस पुरुषार्थतैं मोक्षके उपायका पुरुषार्थ आपहीतैं सिद्ध होयगा । अर तत्त्वनिर्णय करनेविषै कोई कर्मका दोष है नाहीं । अर तू आप तौ महंत रह्या चाहै, अर अपना दोष कर्मादिककैं लगावै, सो जिनआज्ञा मानें तौ ऐसी अनीति संभवै नाहीं । तोकौं विषय कषायरूप ही रहना है, तातै झूंठ बोलै है । मोक्षको सांची अभिलाषा होय, तौ ऐसी युक्ति काहेकौं बनावै । संसारके कार्यनिविषै अपना पुरुषार्थतैं सिद्ध न होती जानै, तौ भी पुरुषार्थकरि उधम किया करै, यहां पुरुषार्थ खोई बैठै । सो जानिए है, मोक्षकौं देखादेखी उत्कृष्ट कहै हैं । याका स्वरूप पहचानि ताकौं हितरूप न जानै है । हित जानि जाका उधम बनै, सो न करै यह असंभव हैं । इहां प्रश्न—जो तुम कह्या सो सत्य, परंतु द्रव्य-कर्मके उदयतैं भावकर्म होय, भावकर्मतैं द्रव्यकर्मका बंध होय, बहुरि ताके उदयतैं भावकर्म होय, ऐसैं ही अनादितैं परंपराय हैं, तब मोक्षका उपाय कैसैं होय सकै ? ताका समाधान,—

कर्मका बंध वा उदय सदाकाल समान ही हुवा करै, तौ ऐसा ही है । परंतु परिणामनिके निमित्ततैं पूर्वबंधे कर्मका भी उत्कर्षण अपकर्षण संक्रमणादि होतैं तिनकी शक्ति हीन अधिक हो है । कर्मउदयके निमित्तकरि तिनका उदय भी तीव्र मंद हो

है। तिनके निमित्ततैं नवीन बंध भी तीव्र मंद हो है। तातैं संसारी जीवनिकै कबहू ज्ञानादिक घने प्रगट हो है, कबहू थोरे प्रगट हो हैं। कबहू रागादि मंद हो है कबहू तीव्र हो है। ऐसैं ही पुलटनि हूवा करै है। तहां कदाचित् संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त पर्याय पाया, तब मनकरि विचार करनेकी शक्ति भई। बहुरि याकै कबहू तीव्र रागादिक होय कबहू मंद होय। तहां रागादिकका तीव्र उदय होतैं तौ विषयकषायादिकके कार्यनिविषै ही प्रवृत्ति होय। बहुरि रागादिकका मंद उदय होतैं बाह्य उपदेशादिकका निमित्त बनै अर आप पुरुषार्थकरि तिन उपदेशादिकविषै उपयोगकौं लगावै, तौ धर्मकार्यविषै प्रवृत्ति होय। अर निमित्त बनै, वा आप पुरुषार्थ न करै, कोई अन्य कार्यनिविषै प्रवर्तै, परंतु मंदरागादि लिएं प्रवर्तै, ऐसे अवसरविषै उपदेश कार्यकारी है। विचारशक्तिरहित एकेंद्रियादिक हैं, तिनिकै तौ उपदेश समझनेका ज्ञान ही नाहीं। तीव्ररागादिसहित जीवनका उपदेशविषै उपयोग लागै नाहीं। तातैं जो जीव विचार शक्तिसहित होय, अर जिनकै रागादि मंद होय, तिनकौं उपदेशका निमित्ततैं धर्मकी प्राप्ति होय जाय, तौ ताका भला होय। बहुरि इस ही अवसरविषै पुरुषार्थ कार्यकारी है। एकेंद्रियादिक तौ धर्मकार्य करनेकौं समर्थ ही नाहीं, कैसैं पुरुषार्थ करैं। अर तीव्रकषायी पुरुषार्थ करै, सो पापहीको करै धर्मकार्यका पुरुषार्थ होय सकै नाहीं। तातैं विचारशक्ति-सहित होय, अर जिसकै रागादिक मंद होय, सो जीव पुरुषार्थ

करि उपदेशादिकके निमित्ततैं तत्त्वनिर्णयादि विषै उपयोग लगावै तौ याका उपयोग तहां लागै तब याका भला होय। जो इस अवसरविषै भी तत्त्वनिर्णय करनेका पुरुषार्थ न करै, प्रमादतैं काल गमावै। कै तौ मंदरागादि लिएं विषयकषायनिके कार्यनिहीविषै प्रवर्तै, कै व्यवहार धर्मकार्यनिविषै प्रवर्तै, तब अवसर तौ जाता रहै, संसारविषै ही भ्रमण होय। बहुरि इस अवसरविषै जे जीव पुरुषार्थकरि तत्त्वनिर्णयकरनेविषै उपयोग लगावनेका अभ्यास राखै, तिनिकै विशुद्धता बधै, ताकरि कर्मनकी शक्ति हीन होय। कितेक कालविषै आपोआप दर्शनमोहका उपशम होय, तब याकै तत्त्वनिविषै यथावत् प्रतीति आवै। सो याका तौ कर्त्तव्य तत्त्वनिर्णयका अभ्यास ही है। इसहीतैं दर्शनमोहका उपशम तौ स्वयमेव-ही होय। यामैं जीवका कर्त्तव्य किछू नाहीं। बहुरि ताकौं होतैं जीवकै स्वयमेव सम्यग्दर्शन होय। बहुरि सम्यग्दर्शन होतैं श्रद्धान तौ यह भया—मैं आत्मा हौं; मुझको रागादिक न करने। परंतु चारित्रमोहके उदयतैं रागादिक हो हैं। तहां तीव्र उदय होय, तब तौ विषयादिविषै प्रवर्तै है, अर मंद उदय होय, तब अपने पुरुषार्थतैं धर्मकार्यनिविषै वा वैराग्यादिभावनाविषै उपयोगकौं लगावै है। ताकै निमित्ततैं चारित्रमोह मंद होता जाय। ऐसैं होतैं देशचारित्र वा सकलचारित्र अंगीकार करनेका पुरुषार्थ प्रगट होय। बहुरि चारित्रको धारि अपना पुरुषार्थकरि धर्मविषै परिणतिकौं बधावै, तहां विशुद्धताकरि कर्मकी हीन शक्ति होय; तातैं विशुद्धता बधै,

ताकरि अधिक कर्मकी शक्ति हीन होय। ऐसैं क्रमतैं मोहका नाश करै, तब सर्वथा परिणाम विशुद्ध होंय, तिनकरि ज्ञानावरणादिका नाश होय, तब केवलज्ञान प्रगट होय। तहां पीछैं विना उपाय अघातिया कर्मका नाशकरि शुद्ध सिद्धपदकौं पावै। ऐसैं उपदेशका तौ निमित्त बनै, अर अपना पुरुषार्थ करै, तौ कर्मका नाश होय। बहुरि जब कर्मका उदय तीव्र होय, तब पुरुषार्थ न होय सकै है। ऊपरले गुणस्थाननितैं भी गिर जाय है। तहां तौ जैसा होनहार तैसा ही होय। परन्तु जहां मंद उदय होय, अर पुरुषार्थ होय सकै, तहां तौ प्रमादी न होना—सावधान होय अपना कार्य करना। जैसैं कोऊ पुरुष नदीका प्रवाहविषै पड्या वहै है। तहां पानीका जोर होय-तब तो वाका पुरुषार्थ किछू नाहीं। उपदेश भी कार्यकारी नाहीं। और पानीका जोर थोरा होय, तब तो पुरुषार्थकरि निकसना चाहैं, तो निकसि आवे तिसहीकौं निकसनेकी शिक्षा दीजिए है। और न निकसे तो होले २ बहे, पीछे पानीका जोर भएं बह्या चल्या जाय। तैसैं ही यह जीव संसारविषै भ्रमै है। तहां कर्मनिका तीव्र उदय होय, तब तौ याका पुरुषार्थ किछू नाहीं। ताकौं उपदेश भी कुछ कार्यकारी नाहीं। अर कर्मका मंद उदय होय, तब पुरुषार्थकरि मोक्षमार्गविषै प्रवर्त्तै, तौ मोक्ष पावै। तिसहीकौं मोक्षमार्गका उपदेश दीजिए है। अर वह मोक्षमार्गविषै न प्रवर्त्तै, तौ किंचित् विशुद्धता पाय पीछैं तीव्र उदय आएं निगोदादि पर्यायकौं पावै। तातैं अवसर चूकना योग्य नाहीं

अब सर्व प्रकार अवसर आया है, ऐसा अवसर पावना कठिन है। तातैं श्रीगुरु दयालु होय मोक्षमार्गकौं उपदेशैं, तिसविषै भव्य जीवनिकौं प्रवृत्ति करनी।

अब मोक्षमार्गका स्वरूप कहिए है—

जिनके निमित्ततैं आत्मा अशुद्ध दशाकौं धारि दुखी भया, ऐसे जो मोहादिक कर्म तिनिका सर्वथा नाश होतैं केवल आत्माकी जो सर्व प्रकार शुद्ध अवस्थाका होना, सो मोक्ष है। ताका जो उपाय-कारण, सो मोक्षमार्ग जानना। सो कारण तौ अनेक प्रकार हो है। कोई कारण तौ ऐसे हो हैं, जाकै भएं विना तो कार्य न होय, अर जाके भएं कार्य होय वा न भी होय। जैसैं मुनि लिंग धारे विना तौ मोक्ष न होय, परंतु मुनिलिंग धारे मोक्ष होय भी अर नाहीं भी होय। बहुरि केई कारण ऐसे हैं, जो मुख्यपनै तौ जाके भएं कार्य होय, अर काहूके विना भएं भी कार्य सिद्ध होय। जैसैं अनशनादि बाह्य तपका साधन किए मुख्यपनै मोक्ष पाइए है, परंतु भरतादिकके बाह्य तप किए विना ही मोक्षकी प्राप्ति भई। बहुरि केई कारण ऐसे हैं, जाके भए कार्य सिद्ध होय ही होय, और जाके न भए कार्य सिद्धि सर्वथा न होय। जैसैं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी एकता भए तौ मोक्ष होय ही होय, अर तिनके न भए सर्वथा मोक्ष न होय। ऐसैं ए कारण कहे, तिनविषै अतिशयकरि नियमतैं मोक्षका साधक जो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रका एकीभाव, सो मोक्षमार्ग जानना। इनि सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रनिविषै एक भी न होय, तौ

मोक्षमार्ग न होय । सोई तत्त्वार्थसूत्रविषै कह्या है—,

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥

इस सूत्रकी टीकाविषै कह्या है-जो यहां मोक्षमार्गः ऐसा एक वचन कह्या है ताका अर्थ है-यह जो तीनौं मिले एक मोक्षमार्ग है। जुदे २ तीन मार्ग नाहीं है । यहां प्रश्न-जो असंयत -सम्यग्दृष्टिकै तौ चरित्र नाहीं, वाकै मोक्षमार्ग भया है कि न भया है। ताका समाधान—

मोक्षमार्ग वाकै होसी, यह तौ नियम भया । तातैं उपचारतैं वाकै मोक्षमार्ग भया भी कहिए । परमार्थतैं सम्यक्चारित्र भए ही मोक्षमार्ग हो है । जैसैं कोई पुरुषकै किसी नगर चालनेका निश्चय भया । तातैं वाकै व्यवहारतैं ऐसा भी कहिए जो "यह तिस नगरकौं चल्या है।" परमार्थतैं मार्गविषै गमन किएं ही चलना होसी । तैसैं असंयत सम्यग्दृष्टीकै वीतरागभावरूप मोक्षमार्गका श्रद्धान भया, तातैं वाकौं उपचारतैं मोक्षमार्गी कहिए, परमार्थतैं वीतरागभावरूप परिणमै ही मोक्षमार्ग होसी । बहुरि प्रवचनसारविषैं भी तीनौंकी एकाग्रता भए ही मोक्षमार्ग कह्या है। तातैं यह जानना—तत्त्वश्रद्धान विना तौ रागादि घटाए मोक्षमार्ग नाहीं, अर रागादि घटाए विना तत्त्वश्रद्धानज्ञानतैं भी मोक्षमार्ग नाहीं । तीनैं मिले साक्षात् मोक्षमार्ग हो है

अब इनका निर्देश अर लक्षण निर्देश अर परीक्षाद्वारा निरूपण कीजिए हैं। तहां "सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र मोक्षमार्ग है," ऐसा नाम मात्र कथन सो तौ 'निर्देश' जानना । बहुरि

अतिव्याप्ति अव्याप्ति असंभवपनाकरि रहित होय, जाकरि इनकौं पहचानिए, सो 'लक्षण' जानना। ताका जो निर्देश कहिए, निरूपण सो 'लक्षण निर्देश' जानना। तहां जाकौं पहचानना होय ताका नाम लक्ष्य है। उस विना औरका नाम अलक्ष्य हैं। सो लक्ष्य वा अलक्ष्य दोऊविषै पाइए, ऐसा लक्षण जहां कहिए तहां अतिव्याप्तिपनौ जानना। जैसैं आत्माका लक्षण 'अमूर्त्तत्व' कह्या। सो अमूर्त्तत्व लक्षण है, सो लक्ष्य जो है आत्मा तिसविषै भी पाइए है अर अलक्ष्य जो हैं आकाशादिक तिनविषै भी पाइए। तातैं यह 'अतिव्याप्त' लक्षण है। याकरि आत्मा पहचानैं आकाशादिक भी आत्मा होय जाय, यह दोष लागै। बहुरि जो कोई लक्ष्यविषै तौ होय अर कोइविषै न होय, ऐसा लक्ष्यका एकदेशविषै पाइए ऐसा लक्षण जहां कहिए, तहां अव्याप्तिपना जानना। जैसैं—आत्माका लक्षण केवलज्ञान कहिए, सो केवलज्ञान कोई आत्माविषै तौ पाइए, कोईविषै न पाइए, तातैं यह 'अव्याप्त' लक्षण है। याकरि आत्मा पहचानैं, स्तोकज्ञानी आत्मा न होय, यह दोष लागै। बहुरि जो लक्ष्यविषै पाइए ही नाहीं, ऐसा लक्षण जहां कहिए, तहां असंभवपणा जानना। जैसैं आत्माका लक्षण जड़पना कहिए। सो प्रत्यक्षादि प्रमाणकरि यह विरुद्ध है। तातैं यह 'असंभव' लक्षण है। याकरि आत्मा मानैं पुद्गलादिक भी आत्मा होय जांय। अर आत्मा है, सो अनात्मा होय जाय, यह दोष लागै। ऐसैं अतिव्याप्त अव्याप्त असंभवी लक्षण होय, सो लक्षणाभास है। बहुरि लक्ष्यविषै तौ सर्वत्र

पाइए, अर अलक्ष्यविषै कहीं न पाइए, सो सांचा लक्षण है जैसैं आत्माका लक्षण चैतन्य है। सो यह लक्षण सर्व ही आत्मा विषै तौ पाइए है, अनात्माविषै कहीं न पाइए। तातैं यह सांचा लक्षण है। याकरि आत्मा मानें, आत्मा अनात्माका यथार्थ ज्ञान होय, किछू दोष लागै नाहीं। ऐसैं लक्षणका स्वरूप उदाहरण-मात्र कह्या।

अब सम्यग्दर्शनादिकका सांचा लक्षण कहिए है,—विपरीता-भिनिवेशरहित जीवादि तत्त्वार्थश्रद्धान सो सम्यग्दर्शनका लक्षण है। जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, ए सात तत्त्वार्थ हैं। इनका जो श्रद्धान 'ऐसैं ही है अन्यथा नाहीं' ऐसा प्रतीति भाव, सो तत्त्वार्थश्रद्धान है। बहुरि विपरीताभिनिवेश जो अन्यथा अभिप्राय ताकरि रहित सो सम्यग्दर्शन है। यहां विपरीताभिनिवेशका निराकरणके अर्थि 'सम्यक्' पद कह्या है। जातैं 'सम्यक्' ऐसा शब्द प्रशंसावाचक है। सो श्रद्धानविषै विपरीताभिनिवेशका अभाव भए ही प्रशंसा संभवै है, ऐसा जानना। यहां प्रश्न—जो 'तत्त्व' अर 'अर्थ' ए दोय पद कहे, तिनिका प्रयोजन कहा। ताका समाधान--

'तत्' शब्द है सो 'यत्' शब्दकी अपेक्षा लिए है। तातैं जाका प्रकरण होय, सो तत् कहिए, अर जाका जो भाव कहिए स्वरूप सो तत्त्व जानना। जातैं **'तस्य भावस्तत्त्वं'** ऐसा तत्त्व शब्दका समास होय है। बहुरि जो जाननेमैं आवै ऐसा 'द्रव्य' वा गुण पर्याय ताका नाम अर्थ है। बहुरि **'तत्त्वेन अर्थ-**

स्तत्त्वार्थः' तत्त्व कहिए अपना स्वरूप, ताकरि सहित पदार्थ तिनिका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। यहां जो 'तत्त्वश्रद्धान' ही कहते, तौ जाका यह भाव (तत्त्व) है, ताका श्रद्धान विना केवल भावहीका श्रद्धान कार्यकारी नाहीं। बहुरि जो 'अर्थ-श्रद्धान' ही कहते, ता भावका श्रद्धान विना पदार्थका श्रद्धान भी कार्यकारी नाहीं। जैसें कोईकै ज्ञान दर्शनादिक वा वर्णादिकका तौ श्रद्धान होय—यह जानपना है, यह श्वेतवर्ण है, इत्यादि। परंतु ज्ञान दर्शन आत्माका स्वभाव है, सो मैं आत्मा हौं। बहुरि वर्णादि पुद्गलका स्वभाव है। पुद्गल मोतैं भिन्न जुदा पदार्थ है। ऐसा पदार्थका श्रद्धान न होय, तौ भावका श्रद्धान मात्र कार्यकारी नाहीं। बहुरि जैसें 'मैं आत्मा हौं' ऐसैं श्रद्धान किया, परंतु आत्माका स्वरूप जैसा है, तैसा श्रद्धान न किया। तौ भावका श्रद्धान विना पदार्थका भी श्रद्धान कार्यकारी नाहीं। तातैं तत्वका अर्थका श्रद्धान हो है, सो ही कार्यकारी है। अथवा जीवादिककौं तत्व संज्ञा भी है, अर्थ संज्ञा भी है तातैं 'तत्त्वमेवार्थस्तत्वार्थः' जो तत्व सो ही अर्थ तिनका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। इस अर्थकरि कहीं तत्वश्रद्धानकौं सम्यग्दर्शन कहै, वा कहीं पदार्थ श्रद्धानकौं सम्यग्दर्शन कहै, तहां विरोध न जानना। ऐसैं तत्व और 'अर्थ' दोय पद कहनेका प्रयोजन है। यहां प्रश्न—जो तत्वार्थ तौ अनंते हैं। ते सामान्य अपेक्षाकरि जीव अजीवविषै सर्व गर्भित भए, तातैं दोय ही कहने थे आश्रवादिक तौ जीव अजीवहीके विशेष हैं, इनकौं जुदा जुदा कहनेका प्रयोजन कहा।

ताका समाधान—

जो यहां पदार्थश्रद्धानका ही प्रयोजन होता, तौ सामान्यकरि वा विशेषकरि जैसैं पदार्थनिका जानना होय, तैसैं ही कथन करते। सो तौ यहां प्रयोजन है नाहीं। यहां तौ मोक्षका प्रयोजन है। सो जिन सामान्य वा विशेष भावनिका श्रद्धान किए मोक्ष होय, अर जिनका श्रद्धान किए विना मोक्ष न होय, तिनहीका यहाँ निरूपण किया। सो जीव अजीव ए दोय तौ बहुत द्रव्यनकी एक जाति अपेक्षा सामान्यरूप तत्त्व कहे। सो ए दोय जाति जांनें जीवके आपापरका श्रद्धान होय। तब परतैं भिन्न आपकौं जानैं, अपना हितके अर्थि मोक्षका उपाय करै, अर आपतैं भिन्न परकौं जानै, तब परद्रव्यतैं उदासीन होय रागादिक त्यागि मोक्षमार्ग विषै प्रवर्तै। तातैं इन दोऊ जातिका श्रद्धान भए ही मोक्ष होय। अर दोऊ जाति जानें विना आपापरका श्रद्धान न होय, तब पर्यायबुद्धितैं संसारीक प्रयोजनहीका उपाय करै। परद्रव्यविषै रागद्वेषरूप होय प्रवर्तै, तब मोक्षमार्गविषै कैसैं प्रवर्तै। तातैं इन दोय जातीनिका श्रद्धान न भए मोक्ष न होय। ऐसैं ए दोय तो सामान्य तत्त्व अवश्य श्रद्धान करने योग्य कहे। बहुरि आस्रवादिक पांच कहे, ते जीव पुद्गलके पर्याय हैं। तातैं ए विशेषरूप तत्त्व हैं। इन पांच पर्यायनिकौं जानें मोक्षका उपाय करनेका श्रद्धान होय। तहां मोक्षकौं पहिचानै, तौ ताकौं हित मानि ताका उपाय करै। तातैं मोक्षका श्रद्धान करना। बहुरि मोक्षका उपाय संवर निर्जरा है। सो इनकौं पहिचानै तौ जैसैं संवर निर्जरा होय

तैसैं प्रवर्त्तै । तातैं संवर निर्जराका श्रद्धान करना । बहुरि संवर निर्जरा तौ अभाव लक्षण लिए हैं, सो जिनका अभाव किया चाहिए, तिनकौं पहचानना चाहिए । जैसैं क्रोधका अभाव भए क्षमा होय । सो क्रोधकौं पहचानना तौ ताका अभाव करि क्षमा रूप प्रवर्त्तै । तैसैं ही आश्रवका अभाव भए संवर होय अर बंधका एकदेश अभाव भए निर्जरा होय । सो आश्रव बंधकौं पहिचानैं, तौ तिनिका नाशकरि संवर निर्जरारूप प्रवर्त्तै । तातैं आस्रव बंधका श्रद्धान करना । ऐसैं इनि पांच पर्यायनिका श्रद्धान भए ही मोक्षमार्ग होय । इनिकौं न पहचानै, तौ मोक्षकी पहचान विना ताका उपाय काहेकौं करै । संवर निर्जराकी पहचान विना तिनिविषै कैसैं प्रवर्त्तै । आश्रव बंधकी पहचान विना तिनिकरि नाश कैसैं करै । ऐसैं इन पांच पर्यायनिका श्रद्धान न भए मोक्ष न होय । या प्रकार यद्यपि तत्त्वार्थ अनंते हैं, तिनिका सामान्य विशेषकरि अनेक प्रकार प्ररूपण होय । परंतु यहां मोक्षका प्रयोजन है, तातैं दोय तौ जातिअपेक्षा सामान्य तत्व अर पांच पर्यायरूप विशेष तत्व मिलाय सात ही तत्व कहे । इनिका यथार्थ श्रद्धानके आधीन मोक्षमार्ग है । इनि बिना औरनिका श्रद्धान होहु वा मति होहु वा अन्यथा श्रद्धान होहु, किसीके आधीन मोक्षमार्ग नाहीं । ऐसा जानना । बहुरि कहीं पुण्य पाप सहित नव पदार्थ कहे हैं । सो पुण्य पाप आस्रवादिकके ही विशेष हैं । तातैं साततत्वविषै गर्भित भए । अथवा पुण्यपापका श्रद्धान भए पुण्यकौं मोक्षमार्ग न मानै, वा स्वच्छंद होय पापरूप न प्रवर्तै, तातैं मोक्षमार्गविषै

इनिका श्रद्धान भी उपकारी जानि दोय तत्व विशेष मिलाय नव, तत्व कहे । वा समयसारादिविषै इनकौं नव तत्व भी कहे हैं । बहुरि प्रश्न—इनिका श्रद्धान सम्यग्दर्शन कह्या, सो दर्शन तौ सामान्य अवलोकन मात्र अर श्रद्धान प्रतीति मात्र, इनिकै एकार्थपनौं कैसै संभवै । ताका उत्तर—

प्रकरणके वशतैं धातुका अर्थ अन्यथा होय है। सो यहां प्रकरण मोक्षमार्गका है, तिसविषै 'दर्शन' शब्दका अर्थ सामान्य अवलोकन मात्र ग्रहण न करना । जातैं चक्षु अचक्षु दर्शनकरि सामान्य अवलोकन सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टीके समान होय है । कुछ याकरि मोक्षमार्गकी प्रवृत्ति होती नाहीं । बहुरि श्रद्धान हो है, सो सम्यदृष्टीकै हो है । याकरि मोक्षमार्गकी प्रवृत्ति हो है । तातैं 'दर्शन' शब्दका अर्थ भी यहां श्रद्धान मात्र ही ग्रहण करना । बहुरि प्रश्न—यहां विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान करना कह्या, सो प्रयोजन कहा । ताका समाधान—

अभिनिवेशनाम अभिप्रायका है । सो जैसा तत्वार्थश्रद्धानका अभिप्राय है, तैसा न होय अन्यथा अभिप्राय होय ताका नाम विपरीताभिनिवेश है । सो तत्वार्थश्रद्धान करनेका अभिप्राय केवल तिनिका निश्चय करना मात्र ही नाहीं है । तहां अभिप्राय ऐसा है—जीव अजीवकौं पहचानि आपकौं वा परकौं जैसाका तैसा मानै । बहुरि आस्रवकौं पहचानि ताकौं हेय मानै । बहुरि बंधकौं पहचानि ताकौं अहित मानैं । बहुरि संवरकौं पहचानि ताकौं उपादेय मानै । बहुरि निर्जराकौं पहचानि ताकौं हितका

कारण मानै। बहुरि मोक्षकौं पहचानि ताकौं अपना परमहित मानै। ऐसैं तत्त्वार्थश्रद्धानका अभिप्राय है। तिसतैं उलटा अभिप्रायका नाम विपरीताभिनिवेश है। सो सांचा तत्वार्थश्रद्धान भए ताका अभाव होय। तातैं तत्वार्थश्रद्धान है, सो विपरीताभिनिवेश रहित है। ऐसा यहां कह्या है। अथवा काहूकै अभ्यास मात्र तत्वार्थ श्रद्धान हो है। परंतु अभिप्रायविषै विपरीतपनौ नाहीं छूटै है। कोई प्रकारकरि पूर्वोक्त अभिप्रायतैं अन्यथा अभि प्राय अंतरंगविषै पाईए है, तौ वाकै सम्यग्दर्शन न होय। जैसैं द्रव्यलिंगी मुनि जिनवचनतैं तत्त्वनिकी प्रतीति करै। परंतु शरीराश्रित क्रियानिविषै अहंकार वा पुण्यास्रवविषै उपादेयपना आदि विपरीत अभिप्रायतैं मिथ्यादृष्टी ही रहै है। तातैं जो तत्त्वार्थश्रद्धान विपरीताभिनिवेशरहित है, सोई सम्यग्दर्शन है। ऐसैं विपरीताभिनिवेशरहित जीवादि तत्त्वनिका श्रद्धानपना तौ सम्यग्दर्शनका लक्षण है। सम्यग्दर्शन लक्ष्य है। सोई तत्त्वार्थसूत्रविषै कह्या है,—'**तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्**' ॥ २ ॥ तत्त्वार्थनिका श्रद्धान सोई सम्यग्दर्शन है। बहुरि सर्वार्थसिद्धि नामा सूत्रनिकी टीका है, तिसविषै तत्त्वादिक पदनिका अर्थ प्रगट लिख्या है, वा सात ही तत्व कैसैं कहे सो प्रयोजन लिख्या है, ताके अनुसारतैं इहां किछू कथन किया है, ऐसा जानना।

बहुरि पुरुषार्थसिद्ध्युपायके विषै ऐसैं ही कह्या है—

जीवाजीवादीनां तत्त्वार्थानां सदैव कर्त्तव्यम्।
श्रद्धानं विपरीताभिनिवेशविविक्तमात्मरूपं तत् ॥ २२॥

याका अर्थ—विपरीताभिनिवेशकरि रहित जीवअजीव आदि तत्वार्थनिका श्रद्धान सदाकाल करना योग्य है। सो यह श्रद्धान आत्माका स्वरूप है। दर्शनमोह उपाधि दूर भए प्रगट हो है, तातैं आत्माका स्वभाव है। चतुर्थादि गुणस्थानविषै प्रगट हो है। पीछैं सिद्ध अवस्थाविषै भी सदा काल याका सद्भाव रहै है ऐसा जानना। यहां प्रश्न उपजै है—जो तिर्यंचादि तुच्छज्ञानी केई जीव सात तत्वनिका नाम भी न जानि सकैं, तिनिकै भी सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति शास्त्रविषै कही है। तातैं तत्वार्थश्रद्धानपना तुम सम्यक्त्वका लक्षण कह्या, तिसविषै अव्याप्तिदूषण लागै है। ताका समाधान,--

जीव अजीवादिकका नामादिक जानौ वा मति जानौ, वा अन्यथा जानौ, उनका स्वरूप यथार्थ पहचानि श्रद्धान किए सम्यक्त्व हो है। तहां कोई सामान्यपनै स्वरूप पहचानि श्रद्धान करै, कोई विशेषपनै स्वरूप पहचानि श्रद्धान करै। तातैं तुच्छज्ञानी तिर्यंचादिक सम्यग्दृष्टी हैं, सो जीवादिकका नाम भी न जानै हैं, तथापि उनका सामान्यपनै स्वरूप पहिचानि श्रद्धान करै हैं। तातैं उनकौं सम्यक्त्वकी प्राप्ति हो है। जैसैं कोई तिर्यंच अपना वा औरनिका नामादिक तौ नाहीं जानै, परन्तु आपहीविषै आपौ मानै है, औरनिकौं पर मानै है। तैसैं तुच्छज्ञानी जीव अजीवका नाम न जानै, परन्तु ज्ञानादिकस्वरूप आत्मा है, तिसविषै आपौ मानै है। अर जो शरीरादिक हैं, तिनकौं पर मानै है। ऐसा श्रद्धान वाकै हो है, सो ही जीव अजीवका श्रद्धान है। बहुरि

जैसैं सोई तिर्यंच सुखादिकका नामादिक न जानै है, तथपि सुख अंवस्थाकौं पहचानि ताके अर्थि आगामी दुःखका कारणकौं पहिचानि ताका त्यागकौं किया चाहै है। बहुरि जो दुखका कारण बनि रह्या है, ताके अभावका उपाय करै है । तुच्छज्ञानी मोक्षदिकका नाम न जानै, तथापि सर्वथा सुखरूप मोक्ष अवस्थाकौं श्रद्धान करि ताके अर्थि आगामी बंधकारण रागादिक आस्रव ताके त्यागरूप संवरकौं किया चाहै है। बहुरि जो संसार दुःखका कारण है, ताकी शुद्धभावकरि निर्जरा किया चाहै है। ऐसैं आस्रवादिकका वाकै श्रद्धान है। या प्रकार वाकै भी सप्ततत्वका श्रद्धान पाइए है। जो ऐसा श्रद्धान न होय, तौ रागादि त्यागि शुद्ध भाव करनेकी चाह न होय। सोई कहिए है–जो जीवकी जाति न जानै, आपापरकौं न पहचानै, तौ परविषै रागादिक कैसैं न करै। रागादिककौं न पहचानै, तो तिनका त्याग कैसैं किया चाहै। सो रागादिक ही आस्रव हैं। रागादिकका फल बुरा न जानै, तौ काहेकौं रागादिक छोड्या चाहै। सो रागादिकका फल सोई बंध है। बहुरि रागादिक रहित परिणामकौं पहिचानै है, तौ तिसरूप हुवा चाहै है। सो रागादिकरहित परिणामका हीं नाम संवर है। बहुरि पूर्वै संसार अवस्थाका कारण कर्म है, ताकी हानिकौं पहिचानै है, तौ ताकै अर्थि तपश्चरणादिकरि शुद्ध भाव किया चाहै है। सो पूर्व संसारअवस्थाका कारण कर्म है, ताकी हानि सोई निर्जरा है। बहुरि संसार अवस्थाका अभाव कौं न पहिचानै, तौ संवर निर्जरारूप काहेकौं प्रवर्तै। संसार

अवस्थाका अभाव सो ही मोक्ष है। तातैं सातौं तत्वनिका श्रद्धान भए ही रागादिक छोड़ि शुद्ध भाव होनेकी इच्छा उपजै है। जो इनिविषै एक भी तत्व का श्रद्धान न होय, तौ ऐसी चाह न उपजै। बहुरि ऐसी चाह तुच्छज्ञानी तिर्यंचादि सम्यग्दृष्टीकै होय ही है, तातैं वाकै सप्ततत्वनिका श्रद्धान पाइए है। ऐसा निश्चय करना। ज्ञानावरणका क्षयोपशम थोरा होतैं विशेषपनै तत्वनिका ज्ञान न होवै, तथापि दर्शनमोहका उपशमादिकतैं सामान्यपनै तत्वश्रद्धानकी शक्ति प्रगट हो है। ऐसैं इस लक्षणविषै अव्याप्ति दूषण नाहीं है बहुरि प्रश्न—जिसकालविषै सम्यग्दृष्टी विषयकषायनिके कार्यनिविषै प्रवर्तै है, तिसकालविषै सप्त तत्वनिका विचार ही नाहीं, तहां श्रद्धान कैसैं संभवै। अर सम्यक्त्व रहै ही है, तातैं तिस लक्षणविषै अव्याप्ति दूषण आवै है। ताका समाधान, —

विचार है, सो तौ उपयोगके आधीन है। जहां उपयोग लागै, तिसहीका विचार है। बहुरि श्रद्धान है, सो प्रतीतिरूप है। तातैं अन्य ज्ञेयका विचार होतैं वा सोवना आदि क्रिया होतैं तत्वनिका विचार नाहीं, तथापि तिनकी प्रतीति बनी रहै है, नष्ट न हो है। तातैं वाकै सम्यक्त्वका सद्भाव है। जैसैं कोई रोगी पुरुषकै ऐसी प्रतीति है- मैं मनुष्य हौं, तिर्यंच नाहीं हौं मेरे इस कारणतैं रोग भया है। सो अब कारण मेटि रोगकौं घटाय निरोग होना। बहुरि वो ही मनुष्य प्रश्न विचारादिरूप प्रवर्त्तै है, तब वाकै ऐसा विचार न हो है। परंतु श्रद्धान ऐसैं ही

रह्या करै है । तैसैं इस आत्माकैं ऐसी प्रतीति है-मैं आत्मा हौं, पुद्गलादि नहीं हौं, मेरे आस्रवतैं बंध भया है, सो अब संवर-करि निर्जरा करि मोक्षरूप होना । बहुरि सोइ आत्मा अन्य विचारादिरूप प्रवर्त्तै है, तब वाकै ऐसा विचार न हो है । परंतु श्रद्धान ऐसा ही रह्या करै है । बहुरि प्रश्न—जो ऐसा श्रद्धान रहै है, तौ बंध होनेके कारणनिविषै कैसैं प्रवर्तै है । ताका उत्तर—

जैसैं कोई मनुष्य कोई कारणके वशतैं रोग बधनेके कारणनि-विषै भी प्रवर्तै । व्यापारादिक कार्य वा क्रोधादिक कार्य करै है, तथापि तिस श्रद्धानका वाकै नाश न हो है; तैसैं सो ही आत्मा कर्म उदय निमित्तेक वशतैं बंध होनेके कारणनिविषै भी प्रवर्त्तै है। विषयसेवनादि कार्य वा क्रोधादि कार्य करै है, तथापि तिस श्रद्धानका वाकै नाश न हो है। याका विशेष निर्णय आगैं करैंगे। ऐसा सप्ततत्वका विचार न होते भी श्रद्धानका सद्भाव पाइए है। तातैं तहां अव्याप्तिपना नाहीं है। बहुरि प्रश्न—ऊंची दशाविषै जहां निर्विकल्प आत्मानुभव हो है, तहां तौ सप्त तत्त्वादिकका विकल्प भी निषेध किया है। सो सम्यक्त्वके लक्ष-णका निषेध करना कैसै संभवै। अर तहां निषेध संभवै है तो अव्याप्ति दूषण आया। ताका उत्तर—

नीचली दशाविषै सप्त तत्वनिके विकल्पनिविषै उपयोग लगाया, ताकरि प्रतीतिकौं दृढ़ कीन्हीं, अर विषयादिकतैं उप-योग छुड़ाय रागादि घटाया, बहुरि कार्य सिद्ध भए कारणनिका

भी निषेध कीजिए है । तातैं जहां प्रतीति भी दृढ भई, अर रागादिक दूर भए, तहां उपयोग भ्रमावनेका खेद काहेकौं करिए । तातैं तहां तिनि विकल्पनिका निषेध किया है । बहुरि सम्यक्त्वका लक्षण तौ प्रतीति ही है । सो प्रतीतिका तौ निषेध न किया । जो प्रतीति छुड़ाई होय, तौ इस लक्षणका निषेध किया कहिए । सो तौ है नाहीं । सो तौ तत्त्वनिकी प्रतीति तहां भी बनी रहै है । तातैं यहां अव्याप्तिपना नाहीं है बहुरि प्रश्न— जो छद्मस्थकैं तौ प्रतीति अप्रतीति कहना संभवै है, तातैं तहां सप्त तत्त्वनिकी प्रतीति सम्यक्त्वका लक्षण कह्या सो हम मान्या, परन्तु केवली सिद्ध भगवानकै तौ सर्वका जानपना समान रूप है । तहां सप्ततत्वनिकी प्रतीति कहना संभवै नाहीं । अर तिनकै सम्यक्त्व गुण पाइए ही है, तातैं तहां तिस लक्षणका अव्याप्तिपना आया । ताका समाधान—

जैसैं छद्मस्थके श्रुतज्ञानके अनुसार प्रतीति पाइए है तैसैं केवली सिद्धभगवानके केवज्ञानके अनुसार ही प्रतीति पाइए है । जो सप्त तत्त्वनिका स्वरूप पहिले ठीक किया था, सो ही केवलज्ञानकरि जान्या । तहां प्रतीतिकौं परम अवगाढ़पनो भयो । याहीतैं परमअवगाढ़ सम्यक्त्व कह्या । जो पूर्व श्रद्धान किया था, ताकौं झूठ जान्या होता, तौ तहां अप्रतीति होती । सो तौ जैसा सप्त तत्त्वनिका श्रद्धान छद्मस्थके भया था, तैसा ही केवली सिद्धभगवानके पाइए है । तातैं ज्ञानादिककी हीनता अधिकता होतैं भी तिर्यंचादिक वा केवली सिद्ध भगवानकै सम्यक्त्व गुण

समान ही कह्या। बहुरि पूर्व अवस्थाविषै यह मानै था, संवर निर्जराकरि मोक्षका उपाय करना। पीछैं मुक्ति अवस्था भए ऐसैं माननें लगे, जो संवर निर्जराकरि हमारे मोक्ष भई। बहुरि पूर्वैं ज्ञानकी हीनताकरि जीवादिकके थोड़े विशेष जानै था, पीछैं केवलज्ञान भए तिनके सर्व विशेष जानै। परन्तु मूलभूत जीवादिकके स्वरूपका श्रद्धान जैसा छद्मस्थके पाइए है, तैसा ही केवलीकै पाइए है। बहुरि यद्यपि केवली सिद्ध भगवान् अन्यपदार्थनिकौं भी प्रतीति लिए जानै हैं, तथापि ते पदार्थ प्रयोजन-भूत नाहीं। तातैं सम्यक्त्वगुणविषै सप्त तत्त्वनिहीका श्रद्धान ग्रहण किया है। केवली सिद्धभगवान् रागादिरूप न परिणमैं हैं। संसार अवस्थाकौं न चाहै हैं। सो इस श्रद्धानका बल जानना। बहुरि प्रश्न—जो सम्यग्दर्शन तौ मोक्षमार्ग कह्या था मोक्षविषै याका सद्भाव कैसैं कहिए है। ताका उत्तर—कोई कारण ऐसा भी हो है, जो कार्य सिद्ध भए भी नष्ट न हो है। जैसैं काहू वृक्षकै कोई एक शाखाकरि अनेक शाखायुक्त अवस्था भई तिसकौं होतैं वह एक शाखा नष्ट न हो है। तैसैं काहू आत्माकै सम्यक्त्व गुणकरि अनेकगुणयुक्त मुक्त अवस्था भई, ताकौं होतैं सम्यक्त्व गुण नष्ट न हो हैं। ऐसैं केवली सिद्धभगवानकै भी तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षण ही सम्यक्त्व पाइए है। तातैं तहां अव्याप्तिपनौं नाहीं है। बहुरि प्रश्न—मिथ्यादृष्टीकै भी तत्त्वार्थश्रद्धान हो है, ऐसा शास्त्रविषै निरूपण है। प्रवचनसारविषै आत्मज्ञान-शून्य तत्त्वार्थश्रद्धान अकार्यकारी कह्या है। तातैं सम्यक्त्वका

लक्षण तत्वार्थश्रद्धान कह्या है, तिसविषै अतिव्याप्ति दूषण लागै है। ताका समाधान—

मिथ्यादृष्टीकै जो तत्त्वश्रद्धान कह्या है, सो नामनिक्षेपकरि कह्या है। जामैं तत्वश्रद्धानका गुण नाहीं, अर व्यवहारविषै जाका नाम तत्वश्रद्धान कहिए, सो मिथ्यादृष्टीकै हो है। अथवा आगमद्रव्यनिक्षेपकरि हो है। तत्वार्थश्रद्धानके प्रतिपादक शास्त्रनिकौं अभ्यास है, तिनिका स्वरूप निश्चय करनेविषै उपयोग नाहीं लगावै है, ऐसा जानना। बहुरि यहां सम्यक्त्वका लक्षण तत्वार्थश्रद्धान कह्या है, सो भावनिक्षेपकरि कह्या है। सो गुण सहित सांचा तत्वार्थश्रद्धान मिथ्यादृष्टीके कदाचित् न होय। बहुरि आत्मज्ञानशून्य तत्त्वार्थश्रद्धान कह्या है। तहां भी सोई अर्थ जानना। सांचा जीव अजीवादिकका जाकै श्रद्धान होय, ताकै आत्मज्ञान कैसैं न होय। होय ही होय। ऐसैं कोई मिथ्यादृष्टीकै सांचा तत्वार्थश्रद्धान सर्वथा न पाइए है, तातैं तिस लक्षणविषै अतिव्याप्ति दूषण न लागै है।

बहुरि जो यह तत्वार्थश्रद्धान लक्षण कह्या, सो असंभवी भी नाहीं है। जातैं सम्यक्त्वका प्रतिपक्षी मिथ्यात्व ही है। याका लक्षण इससे विपरीतता लिए है। ऐसैं अव्याप्ति अतिव्याप्ति असंभवीपनाकरि रहित सर्व सम्यग्दृष्टीनिविषै तौ पाइए, अर कोई मिथ्यादृष्टीनिविषै न पाइए, ऐसा सम्यग्दर्शनका सांचा लक्षण तत्त्वार्थश्रद्धान है। बहुरि प्रश्न उपजै है—जो यहां सातौं तत्त्वनिके श्रद्धानका नियम कहा है सो बनै नाहीं। जातैं कहीं परतैं

भिन्न आपका श्रद्धानहीकौं सम्यक्त्व कहै हैं । समयसारविषै "[1]एकत्वे नियतस्य" इत्यादि कलशा लिखा है, तिसविषै ऐसा कह्या है-जो इसका आत्माका परद्रव्यतैं भिन्न अवलोकन सो ही नियमतैं सम्यग्दर्शन है। तातैं नव तत्वनिकी संततिकौं छोडि हमारे यह एक आत्मा ही होहु । बहुरि कहीं एक आत्माके निश्चयहीकौं सम्यक्त्व कहै हैं । पुरुषार्थसिद्ध्युपायविषै "[2]दर्शनमात्मविनिश्चितिः" ऐसा पद है। सो याका यह ही अर्थ है। तातैं जीव अजीवहीका वा केवल जीवहीका श्रद्धान भए भी सम्यक्त्व हो है।-सातौं तत्वनिका श्रद्धानका नियम होता, तौ ऐसा काहेकौं लिखते। ताका समाधान,—

परतैं भिन्न आपका श्रद्धान हो है, सो आस्रवादिकका श्रद्धानकरि रहित हो है कि सहित हो है, । जो रहित हो है तौ मोक्षका श्रद्धान विना किस प्रयोजनके अर्थि ऐसा उपाय करै है। संवर निर्जराका श्रद्धान विना रागादिकरहित होय स्वरूपविषै उपयोग लगावनेका काहेकौं उद्यम राखै है। आस्रव बंधका श्रद्धान विना पूर्व अवस्थाकौं काहेकौं छांड़ै है । तातैं आस्रवादिकका श्रद्धान-

---

१ एकत्वे नियतस्य शुद्धनयतो व्याप्तुर्यदस्यात्मनः
पूर्णज्ञानघनस्य दर्शनमिह द्रव्यान्तरेभ्यः पृथक् ।
सम्यग्दर्शनमेतदेव नियमादात्मा च तावानयम्
तन्मुक्त्वा नवतत्वसन्ततिमिमामात्मायमेकोऽस्तु नः ॥ ६ ॥

२ दर्शनमात्मविनिश्चितिरात्मपरिज्ञानमिष्यते बोधः ।
स्थितिरात्मनि चारित्रं कुत एतेभ्यो भवति बन्धः ॥ २१६ ॥

रहित आपापरका श्रद्धान करना संभवै नाहीं। बहुरि जो आस्रवादिकका श्रद्धानसहित हो है, तौ स्वयमेव सातौं तत्त्वनिके श्रद्धानका नियम भया। बहुरि केवल आत्माका निश्चय है, सो परका पररूप श्रद्धान भए विना आत्माका श्रद्धान न होय, तातैं अजीवका श्रद्धान भए ही जीवका श्रद्धान होय। बहुरि पूर्ववत् आस्रवादिकका भी श्रद्धान होय ही होय। तातैं यहां भी सातौं तत्त्वनिके ही श्रद्धानका नियम जानना। बहुरि आस्रवादिकका श्रद्धान विना आपापरका श्रद्धान वा केवल आत्माका श्रद्धान सांचा होता नाहीं। जातैं आत्मा द्रव्य है, सो तौ शुद्ध अशुद्ध पर्याय लिए है। जैसैं तंतु अवलोकन विना पटका अवलोकन न होय, तैसैं शुद्ध अशुद्ध पर्याय पहचाने विना आत्मद्रव्यका श्रद्धान न होय। सो शुद्ध अशुद्ध अवस्थाकी पहचानि आस्रवादिककी पहचानतैं हो है। बहुरि आस्रवादिकका श्रद्धान विना आपापर-का श्रद्धान वा केवल आत्माका श्रद्धान कार्यकारी भी नाहीं। जातैं श्रद्धान करो वा मति करो, आप है सो आप ही है, पर है सो पर ही है। बहुरि आस्रवादिकका श्रद्धान होय, तौ आस्रवबंधका अभावकरि संवर निर्जरारूप उपायतैं मोक्षपदकौं पावै। बहुरि जो आपापरका भी श्रद्धान कराइए है, सो तिस ही प्रयोजनके अर्थि कराइए है। तातैं आस्रवादिकका श्रद्धानसहित आपापरका जानना वा आपका जानना कार्यकारी है। यहां प्रश्न—जो ऐसैं है, । तौ शास्त्रनिविषै आपापरका श्रद्धान वा केवल आत्माका श्रद्धानहीकौं सम्यक्त्व कह्या, वा कार्यकारी कह्या। बहुरि नव

तत्वकी संतति छोड़ि हमारे एक आत्मा ही होहु, ऐसा कह्या। सो कैसैं कह्या -ताका समाधान —

जाका सांचा आपापरका वा आत्माका श्रद्धान होय, ताकै सातौं तत्वनिका श्रद्धान होय ही होय। बहुरि जाकै सांचा सात तत्वनिका श्रद्धान होय, ताकै आपापरका वा आत्माका श्रद्धान होय ही होय। ऐसा परस्पर अविनाभावीपना जानि आपापरका श्रद्धानकौं वा आत्मश्रद्धान होनेकौं सम्यक्त्व कह्या है। बहुरि इस छलकरि कोई सामान्यपनै आपापरकौं जानि व आत्माकौं जानि कृतकृत्यपनौ मानै, तौ वाकै भ्रम है। जातैं ऐसा कह्या है- **'निर्विशेषो हि सामान्यो भवेत्खरविषाणवत्'** याका अर्थ यह, जो विशेषरहित सामान्य है सो गधेके सींगके समान है। तातैं प्रयोजनभूत आस्रवादिक विशेषनिसहित आपा-परका वा आत्माका श्रद्धान करना योग्य है। अथवा सातौं तत्त्वार्थ-निका श्रद्धानकरि रागादिक मेटनेके अर्थि परद्रव्यनिकौं भिन्न भावै है, वा अपने आत्माहीकौं भावै है। ताकै प्रयोजनकी सिद्धि हो है। तातैं मुख्यताकरि भेदविज्ञानकौं वा आत्मज्ञानकौं कार्यकारी कह्या है। बहुरि तत्वार्थश्रद्धान किए विना सर्व जानना कार्यकरी नाहीं। जातैं प्रयोजन तौ रागादि मेटनेका है। सो आस्रवादिकका श्रद्धानविना यह प्रयोजन भासै नाहीं। तब केवल जाननेहीतैं मानकौ बधावै, रागादिक छांडै नाहीं, तब वाका कार्य कैसैं सिद्ध होय। बहुरि नवतत्त्वसंततिका छोड़ना कह्या है। सो पूर्वे नवतत्वके विचार करि सम्यग्दर्शन भया, पीछैं निर्विकल्पदशा

होनेके अर्थि नवतत्वनिका भी विकल्प छोड़नेकी चाहि करी।
वहुरि जाकै पहिलै ही नवतत्त्वनिका विचार नाहीं, ताकै तिस विकल्प छोड़नेका कहा प्रयोजन है। अन्य अनेक विकल्प आपकै पाइए है, तिनहीका त्याग करौ। ऐसैं आपापरका श्रद्धानविषै वा आत्मश्रद्धानविषै नवतत्त्व श्रद्धानविषै सप्ततत्त्वनिका श्रद्धानकी सापेक्षा पाइए है। तातैं तत्वार्थश्रद्धान सम्यक्त्वका लक्षण है।
वहुरि प्रश्न-- जो कहीं शास्त्रनिविषै अरहंतदेव निर्ग्रंथ गुरु हिंसा-रहित धर्मका श्रद्धानकौं सम्यक्त्व कह्या है, सो कैसैं है। ताका समाधान,—

अरहंत देवादिकका श्रद्धान होनेतैं वा कुदेवादिकका श्रद्धान दूर होनेकरि गृहीत मिथ्यात्वका अभाव हो है। तिस अपेक्षा याकौं सम्यक्त्वी कह्या है। सर्वथा सम्यक्त्वका लक्षण यह नाहीं। जातैं द्रव्यलिंगी मुनि आदि व्यवहार धर्मके धारक मिथ्यादृष्टी तिनिकै भी ऐसा श्रद्धान हो है। अथवा जैसैं अणुव्रत महाव्रत होतैं देशचारित्र सकलचारित्र होय, वा न होय। परंतु अणुव्रत भए विना देशचारित्र कदाचित् न होय अर महाव्रत धारे विना सकलचारित्र कदाचित् न होय। तातैं इनि व्रतनिकौं अन्वयरूप कारण जानि कारणविषै कार्यका उपचारकरि इनकौं चारित्र कह्या तैसैं अरहंत देवादिकका श्रद्धान होतैं, तौ सम्यक्त्व होय वा न होय। परंतु अरहंतादिकका श्रद्धान भए विना तत्वार्थश्रद्धान-रूप सम्यक्त्व कदाचित् न होय। तातैं अरहंतादिकके श्रद्धान-कौं अन्वयरूप कारण जानि कारणविषै कार्यका उपचारकरि इस

श्रद्धानकौं सम्यक्त्व कह्या है। याहीतैं याका नाम व्यवहारसम्यक्त्व है। अथवा जाकै तत्वार्थश्रद्धान होय, ताकै सांचा अरहंतादिकके स्वरूपका श्रद्धान होय ही होय। तत्वार्थश्रद्धान विना पक्षकरि अरहंतादिकका श्रद्धान करै, परंतु यथावत् स्वरूपकी पहचानलिये श्रद्धान होय नाहीं। बहुरि जाकै सांचा अरहंतादिकके स्वरूपका श्रद्धान होय, ताकै तत्वार्थ श्रद्धान होय ही होय। जाकै अरहंतादिकका स्वरूप पहचानें जीव अजीव आस्रवादिककी पहचान हो है। ऐसैं इनकौं परस्पर अविनाभावी जानि कहीं अरहंतादिकके श्रद्धानकौं सम्यक्त्व कह्या है। यहां प्रश्न—जो नारकादिक जीवनिकै देवकुदेवादिकका व्यवहार नाहीं, अर तिनिकै सम्यक्त्व पाइए है। तातैं सम्यक्त्व होतैं अरहंतादिकका श्रद्धान होय ही होय, ऐसा नियम संभवै नाहीं। ताका समाधान,—

सप्त तत्वनिका श्रद्धानविषै अरहंतादिकका श्रद्धान गर्भित है। जातैं तत्वश्रद्धानविषै मोक्षतत्वकौं सर्वोत्कृष्ट मानै है सो मोक्षतत्व तौ अरहंतसिद्धका लक्षण है। जो लक्षणकौं उत्कृष्ट मानै, सो ताकै लक्ष्यको उत्कृष्ट मानै ही मानै। तातैं उनकौं भी सर्वोत्कृष्ट मान्या औरकौं न मान्या सो ही देवका श्रद्धान भया। बहुरि मोक्षका कारण संवर निर्जरा है तातैं इनकौं भी उत्कृष्ट मानै है। सो संवर निर्जराके धारक मुख्यपनै मुनि हैं। तातैं मुनिकौं उत्तम मानैं है औरकौं न मानै है, सोई गुरुका श्रद्धान भया। और रागादिकरहित भावका नाम अहिंसा है, ताहीकौं उपादेय मानै है औरकौं न मानै है सोई धर्मका श्रद्धान भया। ऐसैं तत्वार्थ-

श्रद्धानविषै अरहंतदेवादिकका भी श्रद्धान गर्भित है। अथवा जिस निमित्ततैं इनके तत्वार्थ श्रद्धान हो है, तिस निमित्ततैं अरहंतदेवादिकका भी श्रद्धान हो है। तातैं सम्यक्त्वविषै देवादिकके श्रद्धानका नियम है। बहुरि प्रश्न—जो केई जीव अरहंतादिकका श्रद्धान करै हैं, तिनके गुण पहिचानै हैं, अर उनकै तत्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्व न हो है। तातैं जाकै सांचा अरहंतादिकका श्रद्धान होय, ताकै तत्वश्रद्धान होय ही होय, ऐसा नियम संभवै नाहीं। ताका समाधान,—

तत्वश्रद्धान विना अरहंतादिकके छियालीसादि गुण जानै है, सो पर्यायाश्रित गुण जानना भी न हो है। जातैं जीव अजीवकी जाति पहचाने विना अरहंतादिकके आत्माश्रित गुणनिकौं वा शरीराश्रित गुणनिकौं भिन्न भिन्न न जानै। जो जानै, तौ अपने आत्माकौं परद्रव्यतैं भिन्न कैसैं न मानै। तातैं प्रवचनसारविषै ऐसा कह्या है,—

जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं।
जो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं ॥१॥

याका अर्थ—यह जो अरहंतकौं द्रव्यत्व गुणत्व पर्यायत्वकरि जानै है, सो आत्माकौं जानै है। ताका मोह विलयकौं प्राप्त हो है। तातैं जाकै जीवादिक तत्वनिका श्रद्धान नाहीं, ताकै अरहंतादिकका भी सांचा श्रद्धान नाहीं। बहुरि मोक्षादिक तत्वनिका श्रद्धानविना अरहंतादिकका माहात्म्य यथार्थ न जानै। लौकिक अतिशयादिककरि अरहंतका तपश्चरणादिकरि गुणका अर

परजीवनिकी अहिंसादिकरि धर्मकी महिमा जानै, सो ए पर्यायाश्रित भाव हैं। बहुरि आत्माश्रित भावनिकरि अरहंतादिकका स्वरूप तत्वश्रद्धान भए ही जानिए हैं। तातैं जाकै सांचा अरहंतादिकका श्रद्धान होय, ताकै तत्वश्रद्धान होय ही होय, ऐसा नियम जानना। या प्रकार सम्यक्त्वका लक्षण निर्देश किया। यहां प्रश्न--जो सांचा तत्वार्थश्रद्धान वा आपापरका श्रद्धान वा आत्मश्रद्धान वा देवधर्मगुरुका श्रद्धान सम्यक्त्वका लक्षण कह्या। बहुरि इन सर्व लक्षणनिकी परस्पर एकता भी दिखाई, सो जानी। परंतु अन्य अन्य प्रकार लक्षण करनेका प्रयोजन कहा ताका उत्तर-

ए चार लक्षण कहे, तिनविषै सांची दृष्टिकरि एक लक्षण ग्रहण किए चारों लक्षणोंका ग्रहण हो है। तथापि मुख्य प्रयोजन जुदा जुदा विचारि अन्यअन्य प्रकार लक्षण कहे हैं। जहां तत्वार्थ श्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां तौ यह प्रयोजन है जो इन तत्वनिकौं पहिचानै, तौ यथार्थ वस्तुके स्वरूप वा अपने हित अहितका श्रद्धान करै तब मोक्षमार्गविषै प्रवर्तै। बहुरि जहां आपापरका भिन्न श्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां तत्वार्थश्रद्धानका प्रयोजन जाकरि सिद्ध होय, तिस श्रद्धानकौं मुख्य लक्षण कह्या है। जीव अजीवके श्रद्धानका प्रयोजन आपापरका भिन्न श्रद्धान करना है। बहुरि आश्रवादिकके श्रद्धानका प्रयोजन रागादि छोड़ना है। सो अपापरका भिन्न श्रद्धान भए परद्रव्यविषैं रागादि न करनेका श्रद्धान हो है। ऐसै तत्वार्थश्रद्धानका प्रयोजन अपापरकेभिन्न श्रद्धानतैं सिद्ध होना जानि इस लक्षणकौं कह्या है। बहुरि जहां

आत्मश्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां आपापरका भिन्नश्रद्धानका प्रयोजन इतना ही है—आपकौं आप जानना। आपकौं आप जानैं परका भी विकल्प कार्यकारी नाहीं। ऐसा मूलभूत प्रयोजनकी प्रधानता जानि आत्मश्रद्धानकौं मुख्य लक्षण कह्या है। बहुरि जहां देवगुरुधर्मका श्रद्धान लक्षण कह्या है, तहां बाह्य साधनकी प्रधानता करी है। जातैं अरहंतदेवादिकका श्रद्धान सांचा तत्त्वार्थश्रद्धानकौं कारण है। अर कुदेवादिकका श्रद्धान कल्पित अतत्त्वश्रद्धानका कारण है। सो बाह्य कारणकी प्रधानताकरि कुदेवादिकका श्रद्धान न करावनेके अर्थि देवगुरुधर्मका श्रद्धानकौं मुख्य लक्षण कह्या है। ऐसैं जुदे जुदे प्रयोजननिकरि मुख्यता करि जुदे जुदे लक्षण कहे हैं। इहां प्रश्न—जो ए च्यार लक्षण कहे, तिनविषै यह जीव किस लक्षणकौं अंगीकार करै। ताका समाधान,—

मिथ्यात्वकर्मका उपशमादि होतैं विपरीताभिनिवेशका अभाव हो है। तहां च्यारौं लक्षण युगपत् पाइए है। बहुरि विचार अपेक्षा मुख्यपनैं तत्वार्थनिकौं विचारै है। कै आपापरका भेदविज्ञान करै है। कै आत्मस्वरूपहीकौं संभारै है। कै देवादिकका स्वरूप विचारै है। ऐसैं ज्ञानविषै तौ नाना प्रकार विचार होय परंतु श्रद्धानविषै सर्वत्र परस्पर सापेक्षपना पाइए है। तत्वविचार करै है, तौ भेदविज्ञानादिकका अभिप्राय लिए करै है। ऐसैं ही अन्यत्र भी परस्पर सापेक्षपणौ है। तातैं सम्यग्दृष्टीकै श्रद्धानविषै च्यारौं ही लक्षणनिका अंगीकार है। बहुरि जाकै मिथ्यात्वका

उदय है, ताकै विपरीताभिनिवेश पाइए है । ताकै ए लक्षण आभास मात्र होंय, सांचे न होंय । जिनमतके जीवादिकतत्त्वनिकौं मानै, औरकौं न मानै, तिनके नाम भेदादिककौं सीखै हैं, ऐसैं तत्वार्थश्रद्धान होय है । परंतु तिनका यथार्थ भावका श्रद्धान न होय, बहुरि आपापरका भिन्नपनाकी बातैं करै, अर वस्त्रादिकविषै परबुद्धिकौं चिंतवन करै परंतु जैसें पर्यायविषै अहंबुद्धि है, अर वस्त्रादिकविषै परबुद्धि है, तैसैं आत्मविषै अहंबुद्धि शरीरविषै परबुद्धि न हो है। बहुरि आत्माकौं जिनवचनानुसार चिंतवै, परंतु प्रतीतिरूप आपकौं आप श्रद्धान न करै है । बहुरि अरहंतादिक विना और कुदेवादिककौं न मानै है । परंतु तिनके स्वरूपकौं यथार्थ पहचानि श्रद्धान न करै है । ऐसैं ए लक्षणाभास मिथ्यादृष्टिकै हो हैं । इनविषै कोई होय, कोई न होय। यहां इनकै भिन्नपनो भी न संभवै हैं । बहुरि इन लक्षणाभासनिविषैं इतना विशेष है--जो पहिलै तौ देवादिकका श्रद्धान होय, पीछैं तत्त्वनिका विचार होय, पीछैं आपापरका चिंतवन करै, पीछैं केवल आत्माकौं चिंतवै । इस अनुक्रमतैं साधन करै, तौ परंपराय सांचा मोक्षमार्गकौं पाय कोई जीव सिद्धपदकौं भी पावै । बहुरि इस अनुक्रमका उलंघन करै, वाकै देवादिक माननेका कछू ठीक नाहीं । अर बुद्धिकी तीव्रतातैं तत्वातत्त्वविचारादिविषै प्रवर्त्तै है । तातैं आपकौं ज्ञानी जानैं है । अथवा तत्त्वविचारविषै भी उपयोग न लगावै है । अर आपापरका भेदविज्ञानी हुवा विचारै है । अथवा आपापरका भी ठीक न करै

है अर आपकौं आत्मज्ञानी मानै है। सो ए सर्व चतुराईकी बातें हैं। मानादिक कषायनिके साधन हैं किछू भी कार्यकारी नाहीं। तातैं जो जीव अपना भला करया चाहै, तिसकौं यावत् सांचा श्रद्धान दर्शनकी प्राप्ति न होय, तावत् इनकौं भी अनुक्रमतैं अंगीकार करना। सो ही कहिए हैं—

पहलै तौ आज्ञादिककरि वा कोई परीक्षाकरि कुदेवादिकका मानना छोड़ि अरहंतदेवादिकका श्रद्धान करना। जातैं ऐसा श्रद्धान भए गृहीतमिथ्यात्वका तौ अभाव हो है। बहुरि मोक्ष-मार्गके विघ्न करनहारे कुदेवादिकका निमित्त दूर हो है। मोक्ष-मार्गका सहाई अरहंतदेवादिकका निमित्त मिलै है, तातैं पहिलैं देवादिकका श्रद्धान करना। बहुरि पीछैं जिनमतविषै कहे जीवा-दिक तत्त्वनिका विचार करना। नाम लक्षणादिक सीखने। जातैं इस अभ्यासतैं तत्त्वार्थश्रद्धानकी प्राप्ति होय। पीछैं आपापरका भिन्नपना जैसैं भासै तैसैं विचार किया करै जातैं इस अभ्यासतैं भेदविज्ञान होय। बहुरि पीछैं आपविषै आपो माननेके अर्थि स्वरूपका विचार किया करै। जातैं इस अभ्यासतैं आत्मानुभवकी प्राप्ति हो है। बहुरि ऐसैं अनुक्रमतैं इनकौं अंगीकार करि पीछैं इनहीविषै कबहू देवादिकका विचारविषै कबहू तत्त्वविचार-विषै, कबहू आपापरका विचारविषै, कबहू आत्मविचारविषै उप-योग लगावै। ऐसे अभ्यासतैं दर्शनमोह मंद होता जाय, तब कदाचित् सांचे सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति हो है। जातैं ऐसा नियम तौ है नाहीं। कोई जीवकै कोई विपरीत कारण प्रबल बीचिमैं

होय जाय, तौ सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति नाहीं भी होय। परंतु मुख्य-पनें घने जीवनिकै तौ इस ही अनुक्रमतैं कार्यसिद्धि हो है। तातैं इनकौं ऐसैं ही अंगीकार करना। जैसैं पुत्रका अर्थी विवाहादि कारणनिकौं मिलावै, पीछै घने पुरुषनिकै तौ पुत्रकी प्राप्ति होय ही है। काहूकै न होय, तौ नाहीं भी होय। परंतु याकौं तौ उपाय करना ही। तैसैं सम्यक्त्वका अर्थी इन कारणनिकौं मिलावै पीछै घने जीवनिकै तौ सम्यक्त्वकी प्राप्ति होइ ही है। काहूकै न होय, तौ नाहीं भी होय। परंतु याकौं तौ जातैं कार्य बनै, सोई उपाय करना। ऐसैं सम्यक्त्वका लक्षण निर्देश किया। यहां प्रश्न— जो सम्यक्त्वके लक्षण तौ अनेक प्रकार कहे, तिनविषै तुम तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षणकौं मुख्य कह्या, सो कारण कहा। ताका समाधान,—

तुच्छबुद्धीनकौ अन्य लक्षणनिविषै प्रयोजन प्रगट भासै नाहीं, वा भ्रम उपजै। अर इस तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षणविषै प्रगट प्रयोजन भासै है, किछू भ्रम उपजै नाहीं। तातैं इस लक्षणकौं मुख्य किया है। सोई दिखाइए है--देवगुरुधर्मका श्रद्धानविषै तुच्छ-बुद्धीनिकौं यह भासै—अरहंतदेवादिककौं मानना, औरकौं न मानना। इतना ही सम्यक्त्व है। तहां जीव अजीवका बंधमोक्षके कारणकार्यका स्वरूप न भासै, तब मोक्षमार्ग प्रयोजनकी सिद्धि न होय। वा जीवादिकका श्रद्धान भए विना इस ही श्रद्धानविषै संतुष्ट होय आपकौं सम्यक्ती मानै। एक कुदेवादिकतैं द्वेष तौ राखै, अन्य रागादि छोड़नेका उद्यम न करै, ऐसा भ्रम उपजै।

बहुरि आपापरका श्रद्धानविषै तुच्छबुद्धीनिकौं यह भासै कि, आपपरका ही जानना कार्यकारी है। इसतैं ही सम्यक्त्व हो है। तहां आस्रवादिकका स्वरूप न भासै। तब मोक्षमार्ग प्रयोजनकी सिद्धि न होय। वा आस्रवादिकका श्रद्धान भए विना इतना ही जाननेविषै संतुष्ट होय, आपकौं सम्यक्ती मान स्वच्छंद होय रागादि छोड़नेका उद्यम न करै। ऐसा भ्रम उपजै। बहुरि आत्मश्रद्धान लक्षणविषै तुच्छबुद्धीनिकौं यह भासै कि, आत्माहीका विचार कार्यकारी है। इसहीतैं सम्यक्त्व हो है। तहां जीव अजीवादिकका विशेष वा आस्रवादिकका स्वरूप न भासै, तब मोक्षमार्ग प्रयोजनकी सिद्धि न होय। वा जीवादिकका विशेष वा आस्रवादिकके स्वरूपका श्रद्धान भए विना इतने ही विचारतैं आपकौं सम्यक्ती मानि स्वच्छन्द होय रागादि छोड़नेका उद्यम न करै है। याकै ऐसा भ्रम उपजै है। ऐसा जान इन लक्षणनिकौं मुख्य न किए। बहुरि तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षणविषै जीव अजीवादिकका वा आस्रवादिकका श्रद्धान होय। तहां सर्वका स्वरूप नीकै भासै तब मोक्षमार्गका प्रयोजनकी सिद्धि होय। बहुरि इस श्रद्धानके भए सम्यक्त होय। परन्तु यह संतुष्ट न हो है। आस्रवादिकका श्रद्धान होनेतैं रागादि छोड़ मोक्षका उद्यम राखै है। याकै भ्रम न उपजै है। तातैं तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षणकौं मुख्य किया है। अथवा तत्वार्थश्रद्धान लक्षण विषै तौ देवादिकका श्रद्धान वा आपापरका श्रद्धान वा आत्मश्रद्धान गर्भित हो है। सो तो तुच्छ बुद्धिनकौं भी भासै। बहुरि अन्य लक्षणनिविषै तत्त्वार्थश्रद्धानका गर्भितपनो विशेष बुद्धिमान

होंय तिनहीकौं भासै । तुच्छबुद्धीनिकौं न भासै । तातैं तत्त्वार्थ श्रद्धान लक्षणकौं मुख्य किया है । अथवा मिथ्यादृष्टीकै आभास मात्र ए होय । तहां तत्त्वार्थनिका विचार तो शीघ्रपनै विपरी-ताभिनिवेश दूर करनेकौं कारण हो है । अन्य लक्षण शीघ्र कारण नाहीं होंय । वा विपरीताभिनिवेशका भी कारण होय जाय । तातैं यहां सर्व प्रकार प्रसिद्ध जानि **विपरीताभिनिवेश रहित जीवादि तत्त्वार्थनिका श्रद्धान सो ही सम्यक्त्वका लक्षण है,** ऐसा निर्देश किया । ऐसैं लक्षणनिर्देशका निरूपण किया । ऐसा लक्षण जिस आत्माका स्वभावविषै पाइए है । सो ही सम्यक्त्वी जानना ।

अब इस सम्यक्त्वके भेद दिखाइए है, तहां प्रथम निश्चय व्यवहारका भेद दिखाइए है,—विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान-रूप आत्मपरिणाम सो तौ निश्चय सम्यक्त्व है । जातैं यह सत्यार्थ सम्यक्त्वका स्वरूप है । सत्यार्थहीका नाम निश्चय है । बहुरि विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धानकौं कारणभूत श्रद्धान सो व्यवहार सम्यक्त्व है । जातैं कारणविषै कार्यका उपचार किया है । सो उपचारहीका नाम व्यवहार है । तहां सम्यग्दृष्टी जीवकै देवगुरु धर्मादिकका सांचा श्रद्धान है । तिसही निमित्ततैं याकै श्रद्धानविषै विपरीताभिनिवेशका अभाव है । सो यहां विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान सो तो निश्चय सम्यक्त्व है, अर देवगुरुधर्मादिकका श्रद्धान है, सो व्यवहार सम्यक्त्व है । ऐसैं एक ही कालविषै दोऊ सम्यक्त्व पाइए है । बहुरि मिथ्यादृष्टी जीवकै देवगुरुधर्मादिकका

श्रद्धान आभास मात्र हो है । अर याकै श्रद्धानविषैं विपरीताभिनिवेशका अभाव न हो है । जातैं यहां निश्चय सम्यक्त्व तौ है नाहीं, अर व्यवहार सम्यक्त्व भी आभासमात्र है । जातैं याकै देवगुरुधर्मादिकका श्रद्धान है, सो विपरीताभिनिवेशके अभावकौं साक्षात् कारण भया नाहीं । कारण भए विना उपचार संभवै नाहीं । तातैं साक्षात् कारण अपेक्षा व्यवहार सम्यक्त्व भी याकैं न संभवै है । अथवा याकै देवगुरुधर्मादिकका श्रद्धान नियमरूप हो है । सो विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धानकौं परंपरा कारणभूत है । यद्यपि नियमरूप कारण नाहीं, तथापि मुख्यपनै कारण है । बहुरि कारणविषै कार्यका उपचार संभवै है । तातैं मुख्यरूप परंपरा कारण अपेक्षा मिथ्यादृष्टीकै भी व्यवहार सम्यक्त्व कहिए है । यहां प्रश्न—जो केई शास्त्रनिविषै देवगुरुधर्मका श्रद्धानकौं वा तत्त्वश्रद्धानकौं तो व्यवहार सम्यक्त्व कह्या है, अर आपापरका श्रद्धानकौं वा केवल आत्माके श्रद्धानकौं निश्चय सम्यक्त्व कह्या है सो कैसैं हैं । ताका समाधान,—

देवगुरुधर्मका श्रद्धानविषै प्रवृत्तिकी मुख्यता है । जो प्रवृत्ति-विषैं अरहंतादिककौं देवादिक मानै, औरकौं न मानैं, सो देवादि-कका श्रद्धानी कहिए हैं । अर तत्त्वश्रद्धानविषै तिनके विचार-की मुख्यता है । जो ज्ञानविषै जीवादितत्त्वनिकौं विचारै, ताकौं तत्त्वश्रद्धानी कहिए है । ऐसैं मुख्यता पाइए है । सो ए दोऊ काहू जीवकै सम्यक्त्वकौ कारण तौ होंय, परंतु इनका सद्भाव मिथ्यादृष्टीकै भी संभवै है । तातैं इनकौं व्यवहार सम्यक्त्व कह्या

है । बहुरि आपापरका श्रद्धानविषै वा आत्मश्रद्धानविषै विपरी-ताभिनिवेशरहितपना की मुख्यता है । जो आपापरका भेद-विज्ञान करै, वा अपने आत्माकौं अनुभवै, ताकै मुख्यपनै विपरी-ताभिनिवेश न होय । तातैं भेदविज्ञानीकौं वा आत्मज्ञानीकौं सम्यग्दृष्टी कहिए है । ऐसैं मुख्यताकरि आपापरका श्रद्धान व आत्मश्रद्धान सम्यग्दृष्टीहीकै पाइए है । तातैं इनकौं निश्चय सम्यक्त्व कह्या, सो ऐसा कथन मुख्यताकी अपेक्षा है । तारतम्यपनैं ए चारौं आभासमात्र मिथ्यादृष्टीकै होय, सांचे सम्यग्दृष्टीकै होंय । तहां आभासमात्र हैं, सो नियम बिना परंपरा कारण हैं । अर ए सांचे हैं, सो नियमरूप साक्षात् कारण हैं । तातैं इनकौं व्यवहाररूप कहिए । इनके निमित्ततैं जो विपरीताभिनिवेश-रहित श्रद्धान भया, सो निश्चय सम्यक्त्व है ऐसा जानना । बहुरि प्रश्न—केई शास्त्रनिविषै लिखै हैं—आत्मा है, सो ही निश्चय सम्यक्त्व है, और सर्व व्यवहार है । सो कैसैं है । ताका समाधान,-

विपरीताभिनिवेशरहित श्रद्धान भया, सो आत्माहीका स्वरूप है । तहां अभेदबुद्धिकरि आत्मा अर सम्यक्त्वविषै भिन्नता नाहीं । तातैं निश्चयकरि आत्माहीकौं सम्यक्त्व कह्या । और सर्व सम्यक्त्व तौ निमित्तमात्र है । वा भेदकल्पना किए आत्मा अर सम्यक्त्वकै दोय भेद हो हैं । अर अन्य निमित्तादिककी अपेक्षा आज्ञा-सम्यक्त्वादि सम्यक्त्वके दश भेद कहे हैं, सो **आत्मानुशासन** विषै कहा है,—

आज्ञामार्गसमुद्भवमुपदेशात्सूत्रबीजसंक्षेपात्।
विस्तारार्थाभ्यां भवमवगाढपरमावगाढे च ॥११॥

याका अर्थ—जिनआज्ञातैं तत्त्वश्रद्धान भया होय, सो आज्ञा सम्यक्त्व है। यहां इतना जानना—"मोकौं जिनआज्ञा प्रमाण है" इतना ही श्रद्धान सम्यक्त्व नाहीं है। आज्ञा मानना, तौ कारणभूत है। याहीतैं यहां आज्ञातैं उपज्या कह्या है। तातैं पूर्वैं जिनआज्ञा माननैतैं पीछैं जो तत्त्वश्रद्धान भया, सो **आज्ञा—सम्यक्त्व** है। ऐसैं ही निर्ग्रन्थमार्गके अवलोकनतैं तत्त्वश्रद्धान भया होय, सो **मार्गसम्यक्त्व** है। बहुरि उत्कृष्ट पुरुष तीर्थंकरा—दिक तिनके पुराणनिका उपदेशतैं जो उपज्या सम्यग्ज्ञान ताकरि उत्पन्न आगमसमुद्रविषै प्रवीणपुरुषनिकरि उपदेश आदितैं भई जो उपदेशकदृष्टि सो **उपदेशसम्यक्त्व** है। मुनिके आचरणका विधानकौं प्रतिपादन करता जो आचारसूत्र ताहि सुनकर श्रद्धान करना जो होय, सो सूत्रदृष्टि भलेप्रकार कही है। यह **सूत्रसम्यक्त्व** है। बहुरि बीज जे गणितज्ञानकौं कारण तिनकरि अनुपम दर्शनमोहका उपशमके बलतैं दुष्कर है जाननेकी गति जाकी ऐसा पदार्थनिका समूह ताकी भई है उपलब्धि श्रद्धान-रूप परणति जाकै, ऐसा करणानुयोगका ज्ञानी भया, ताकै बीजदृष्टी हो है। यह **बीजसम्यक्त्व** जानना। बहुरि पदार्थनिकौं संक्षेपपनेतैं जानकरि जो श्रद्धान भया, सो भली संक्षेपदृष्टि है। यह **संक्षेपसम्यक्त्व** जानना। जो द्वादशांगबानीकौं सुन कीन्हीं जो रुचि श्रद्धान, ताहि विस्तारदृष्टी हे भव्य तू जानि। यह

विस्तारसम्यक्त्व है। बहुरि जैनशास्त्रके वचनविना कोई अर्थका निमित्ततैं भई सो अर्थदृष्टि है। यह अर्थसम्यक्त्व जानना। बहुरि अंग अर अंगबाह्यसहित जैनशास्त्र ताकौं अवगाह करि जो निपजी, सो अवगाढ़दृष्टि है। यह अवगाढसम्यक्त्व जानना। ऐसैं आठ भेद तौ कारण अपेक्षा किए हैं। बहुरि श्रुतकेवलीके जो तत्त्वश्रद्धान है, ताकौ अवगाढ़सम्यक्त्व कहिए है। केवलज्ञानीकै जो तत्त्वश्रद्धान है, ताकौं परमावगाढसम्यक्त्व कहिए है। ऐसै दोय भेद ज्ञानका सहकारीपनाकी अपेक्षा किए हैं। या प्रकार दशभेद सम्यक्त्वके किए। तहां सर्वत्र सम्यक्त्वका स्वरूप तत्वार्थश्रद्धान ही जानना। बहुरि सम्यक्त्वके तीन भेद किए हैं। १ औपशमिक, २ क्षायोपशमिक, ३ क्षायिक। ए तीन भेद दर्शनमोहकी अपेक्षा किए हैं। तहां उपशमसम्यक्त्वके दोय भेद हैं। एक प्रथमोपशम सम्यक्त्व, दूसरा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व। तहां मिथ्यात्वगुणस्थानविषै करणकरि दर्शनमोहकौं उपशमाय सम्यक्त्व उपजै, ताकौं प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिए है। तहां इतना विशेष है—अनादि मिथ्यादृष्टीकै तो एक मिथ्यात्वप्रकृतिहीका उपशम होय है। जातैं याकै मिश्रमोहिनी अर सम्यक्त्वमोहिनीकी सत्ता है नाहीं। जब जीव उपशमसम्यक्त्वकौं प्राप्त होय, तिस सम्यक्त्वके कालविषै मिथ्यात्वके परमाणूनिकौं मिश्रमोहिनीरूप वा सम्यक्त्वमोहिनीरूप परिणमावै है, तब तीन प्रकृतीनकी सत्ता हो है। तातैं अनादि मिथ्यादृष्टीकै एक मिथ्यात्वप्रकृतिकी ही सत्ता है। तिसहीका उपशम हो है।

बहुरि सादिमिथ्यादृष्टीकै काहूकै तीन प्रकृतीनिकी सत्ता है, काहूकै एकहीकी सत्ता है। जाकै सम्यक्त्वकालविषै तीनकी सत्ता भई थी, सो सत्ता पाइए ताकै तीनकी सत्ता है। अर जाकै मिश्रमोहिनी सम्यक्त्वमोहिनीकी उद्वेलना होय गई होय, उनके परमाणु मिथ्यात्वरूप परिणम गए होंय, ताकै एक मिथ्यात्वकी सत्ता है। तातैं सादि मिथ्यादृष्टीकै तीन प्रकृतीनिका वा एक प्रकृतीका उपशम हो है। उपशम कहा? कहिए है-अनिवृत्तिकरणविषै किया अंतःकरणविधानतैं जे सम्यक्त्वकालविषै उदय आवनेयोग्य निषेक थे, तिनिका तौ अभाव किया, तिनिके परमाणु अन्यकालविषै उदय आवनेयोग्य निषेकरूप किए। बहुरि अनिवृत्तकरणहीविषै किया उपशमविधानतैं जे तिसकालविषै उदय आवनेयोग्य निषेक, ते उदीरणारूप होय इस कालविषै उदय न आ सकैं ऐसे किए। ऐसैं जहां सत्ता तौ पाइए, अर उदय न पाइए, ताका नाम उपशम है सो यह मिथ्यात्वतैं भया प्रथमोपशम सम्यक्त्व, सो चतुर्थादि सप्तमगुणस्थान पर्यंत पाइए, है। बहुरि उपशम श्रेणीकौं सन्मुख होतैं सप्तमगुणस्थानविषै क्षयोपशम-सम्यक्त्वतैं जो उपशम सम्यक्त्व होय, ताका नाम द्वितीयोपशम-सम्यक्त्व है। यहां करणकरि तीन ही प्रकृतीनिका उपशम हो है। जातैं यातैं तीनहीका सत्ता पाइए यहां भी अंतःकरणविधानतैं वा उपशमविधानतैं तिनिके उदयका अभाव करै है। सोही उपशम है। सो यह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सप्तमादि ग्यारवां गुणस्थान-पर्यंत हो है। पड़ता हुवा कोई छठै पांचवैं चौथे गुणस्थान भी रहै

है, ऐसा जानना। ऐसैं उपशम सम्यक्त्व दोय प्रकार है। सो यह सम्यक्त्व वर्तमानकालविषै क्षायिकवत् निर्मल है। याका प्रतिपक्षी कर्मकी सत्ता पाइए है, तातैं अन्तर्मुहूर्त कालमात्र यह सम्यक्त्व रहै है। पीछैं दर्शनमोहका उदय आवै है, ऐसा जानना। ऐसैं उपशम सम्यक्त्वका स्वरूप कह्या। बहुरि जहां दर्शनमोहकी तीन प्रकृतिनिविषै सम्यक्त्वमोहनीका उदय पाइए है, ऐसी दशा जहां होय, सो क्षयोपशम है। जातैं समलतत्त्वार्थ श्रद्धान होय, सो क्षयोपशम सम्यक्त है। अन्य दोय प्रकारका उदय न होय, तहां क्षयोपशम सम्यक्त्व हो हैं, सो उपशम सम्यक्त्वका काल पूर्ण भए यह सम्यक्त्व हो है। वा सादि मिथ्यादृष्टीकै मिथ्यात्वगुण-स्थानतैं वा मिश्रगुणस्थानतैं भी याकी प्राप्ति हो है। क्षयोपशम कहा-सो कहिए है,—

दर्शनमोहकी तीन प्रकृतीनिविषै जो मिथ्यात्वका अनुभाग है, ताके अनंतवैं भाग मिश्रमोहनीका है। ताके अनंतवै भाग सम्यक्त्वमोहनीका है। सो इनविषै सम्यक्त्वमोहिनी प्रकृति देशघातिक है। याका उदय होतैं भी सम्यक्त्वका घात न होय। किंचित् मलीनता करै, मूलघात न कर सकै। ताहीका नाम देश-घाति है। सो जहां मिथ्यात्व वा मिश्रमिथ्यात्वका वर्त्तमानकाल-विषै उदय आवनेयोग्य निषेक तिनिका उदय हुए विना ही निर्जरा होना, सो तौ क्षय जानना। और इनहीका आगामि-कालविषै उदय आवने योग्य निषेकनिकी सत्ता पाइए है, सो ही उपशम है। और सम्यक्त्व मोहिनीका उदय पाइए है, ऐसी दशा

जहां होय सो क्षयोपशम है तातैं समलतत्त्वार्थश्रद्धान होय, सो क्षयोपशम सम्यक्त्व है। यहां जो मल लागै हैं, ताका तारतम्य स्वरूप तौ केवली जानै है, उदारण दिखावने के अर्थि चलमलिन अगाढ़पना कह्या है हैं। तहां व्यवहारमात्र देवादिककी प्रतीति तौ होय, परंतु अरहंतदेवादिविषै यह मेरा है, यह अन्यका है; इत्यादि भाव सो चलपना है। शंकादि मल लागै है, सो मलीन-पना है। यह शांतिनाथ शांतिका कर्त्ता है, इत्यादि भाव सो अगाढ़पना है। सो ऐसा उदाहरण व्यवहारमात्र दिखाए। परंतु नियमरूप नाहीं। क्षयोपशम सम्यक्त्वविषै जो नियमरूप कोई मल लागै है, सो केवली जानै है। इतना जानना-याके तत्त्वार्थ-श्रद्धानविषै कोई प्रकार करि समलपनो हो है। तातैं यह सम्यक्त्व निर्मल नाहीं है। इस क्षयोपशम सम्यक्त्वका एक ही प्रकार है। याविषै कछू भेद नाहीं है। इतना विशेष है-जो क्षायिक सम्वक्त्वकौं सन्मुख होतैं, अंतर्मुहूर्तकाल मात्र जहां मिथ्यात्वकी प्रकृतिका लोप करै हैं, तहां दोय ही प्रकृतीनिकी सत्ता रहै है। पीछैं मिश्रमोहिनीका भी क्षय करै हैं। तहां सम्यक्त्वमोहिनीकी ही सत्ता रहै है। पीछैं सम्यक्त्वमोहिनीकी कांडकघातादि क्रिया न करै है। तहां कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टी नाम पावै है, ऐसा जानना। बहुरि इस क्षयोपशमसम्यक्त्वहीका नाम वेदकसम्यक्त्व है। जहां मिथ्यात्वमिश्रमोहिनीकी मुख्यता करि कहिए, तहां क्षयो-पशमसम्यक्त्व नाम पावै है। सम्यक्त्व मोहिनीकी मुख्यताकरि, कहिए तहां वेदक नाम पावै है। सो कहने मात्र दोय नाम हैं

स्वरूपविषैं भेद है नाहीं । बहुरि यह क्षयोपशम सम्यक्त्व चतुर्थादि सप्तम गुणस्थान पर्यंत पाइए है । ऐसैं क्षयोपशम सम्यक्त्वका स्वरूप कह्या--

बहुरि तीनौं प्रकृतीनिके सर्वथा सर्व निषेकनिका नाश भए अत्यंत निर्मल तत्वार्थश्रद्धान होय, सो क्षायिक सम्यक्त्व है। सो चतुर्थादि चार गुणस्थानविषै कहीं क्षयोपशम सम्यग्दृष्टीकै याकी प्राप्ति हो है। कैसैं हो है, सो कहिए है—प्रथम तीन करणकरि मिथ्यात्वके परमणूनिकौं मिश्रमोहिनीरूप परिणमावै वा सम्यक्त्व मोहिनीरूप परिणमावै, वा निर्जरा करै। ऐसैं मिथ्यात्वकी सत्ता नाश करै। बहुरि मिश्र आदि मोहिनीके परमाणूनिकौं सम्यक्त्व-मोहिनीरूप परिणमावै वा निर्जरा करै, ऐसैं मिश्रमोहिनीका नाश करै। बहुरि सम्यक्त्वमोहिनीका निषेक उदय आय खिरैं, वाकी बहुत स्थिति होय, तौ ताकौं स्थितिकांडादिकरि घटावै। जहां अंतर्मुहूर्तस्थिति रहै, तब कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टी होय। बहुरि अनुक्रमतैं इन निषेकनिका नाश करि क्षायिक सम्यग्दृष्टी हो है। सो यह प्रतिपक्षी कर्मके अभावतैं निर्मल है, वा मिथ्यात्वरूपी रज ताके अभावतैं वीतराग है। याका नाश न होय। जहांतैं उपजै तहांतैं सिद्ध अवस्था पर्यंत याका सद्भाव है। ऐसैं क्षायिक सम्यक्त्वका स्वरूप कह्या। ऐसैं तीन भेद सम्यक्त्वके कहे। बहुरि अनंतानुबंधी कषाय होतैं सम्यक्त्वकी दोय अवस्था हो हैं। कै तो अप्रशस्त उपशम हो है, कै विसंयोजन होहै। तहां जो करणकरि उपशम विधानतैं उपशम हो है, ताका नाम प्रशस्त उपशम है।

उदयका अभाव ताका नाम अप्रशस्त उपशम है। सो अनंतानुबंधी-का प्रशस्त तौ उपशम होय नाहीं, अन्य मोहकी प्रकृतिनका हो है। बहुरि इसका अप्रशस्त उपशम हो है। बहुरि जो तीन करण करि अनंतानुबंधीनिके परमाणुनिकौं अन्य चारित्रमोहिनीकी प्रकृतिरूप परिणमाई, तिसका सत्ता नाश करिए, ताका नाम विसंयोजन है। जो इनविषै प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषै तौ अनंतानुबंधीका अप्रशस्त उपशम ही है। बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति पहिलै अनंतानुबंधीका विसंयोजन भए ही होय, ऐसा नियम कोई आचार्य लिखै हैं। कोई नियम नाहीं लिखै हैं। बहुरि क्षयोपशम सम्यक्त्वविषै कोई जीवकै अप्रशस्त उपशम हो है, वा कोईकै विसंयोजन हो है। बहुरि क्षायक सम्यक्त्व है, सो पहलै अनंतानुबंधीका विसंयोजन भए ही हो है, ऐसा जानना। यहां यह विशेष है—जो उपशम क्षयोपशम सम्यत्वीके अनंतानुबंधीके विसंयोजनतैं सत्ता नाश भया था। बहुरि वह मिथ्यात्वविषै आवै, तौ अनंतानुबंधीका बंधकौ अर तहां वाकी सत्ताका सद्भाव हो है। बहुरि क्षायिकसम्यग्दृष्टी मिथ्यात्वविषै आवै नाहीं। तातैं वाकै अनंतानुबंधीकी सत्ता कदाचित् न होय। यहां प्रश्न—जो अनंतानुबंधी तौ चारित्रमोहकी प्रकृति है। सो संवै निमित्त चारित्रहीकौं घातै है। याकरि सम्यक्त्व घात कैसैं संभवै। ताका समाधान—

अनंतानुबंधीके उदयतैं क्रोधादिकरूप परिणाम हो हैं। कुछ अतत्त्वश्रद्धान होता नाहीं। तातैं अनन्तानुबंधी चारित्रहीकौं

घातै हैं । सम्यक्त्वकौं नाहीं घातै है। सो परमार्थतैं है तौ ऐसैं ही परंतु अनंतानुबंधीके उदयतैं जैसैं क्रोधादिक हो हैं, तैसैं क्रोधादिक सम्यक्त्व होतैं न होय। ऐसा निमित्त नैमात्तिकपना पाइए है। जैसैं त्रसपनाकी घातक तौ स्थावरप्रकृति ही है। परंतु त्रसपना होतैं एकेन्द्रिय जाति प्रकृतिका भी उदय न होय, तातैं उपचारकरि एकेन्द्रिय प्रकृतिकौं भी त्रसपनाकी घातक कहिए, तौ दोष नाहीं। तैसैं सम्यक्त्वका घातक तौ दर्शनमोह है। परंतु सम्यक्त्व होतैं अनंतानुबंधी कषायनिका भी उदय न होय, तातैं उपचारकरि अनंतानुबंधीकै भी सम्यक्त्वका घातकपना कहिए, तौ दोष नाहीं। बहुरि यहां प्रश्न—जो अनंतानुबंधी चारित्रकौं घातै है, तौ याकै गए किछू चारित्र भया। असंयत गुणस्थानविषै असंयम काहेकौं कह्रो हो। ताका समाधान—

अनंतानुबंधी आदि भेद हैं ते तीव्र मंदकषायकी अपेक्षा नाहीं हैं। जातैं मिथ्यादृष्टीकै तीव्रकषाय होतैं वा मंदकषाय होतैं अनंतानुबंधी आदि च्यारोंका उदय युगपत् हो है। तहां च्यारौंके उत्कृष्ट स्पर्द्धक समान कहे हैं। इतना विशेष है-जो अनंतानुबंधीके साथ जैसा तीव्र उदय अप्रत्याख्यानादिकका होय, तैसा ताके गए न होय। ऐसैं ही अप्रत्याख्यानकी साथ प्रत्याख्यान संज्वलनका उदय होय, तैसा ताके गए न होय। बहुरि जैसा प्रत्याख्यानकी साथि संज्वलनका उदय होय, तैसा केवल संज्वलनका उदय न होय। तातैं अनंतानुबंधीके गए किछू कषायनिकी मंदता तौ हो है, परंतु ऐसी मंदता न होय जाकरि

कोई चारित्र नाम पावै । जातैं कषायनिके असंख्यात लोकप्रमाण स्थान हैं । तिनिविषै सर्वत्र पूर्वस्थानतैं उत्तरस्थानविषै मंदता पाइए। परंतु व्यवहारकरि तिनि स्थाननिविषै तीन मर्यादा करीं । आदिके बहुत स्थान तौ असंयमरूप कहे, पीछैं केतेक देश-संयमरूप कहे, पीछैं केतेक सकलसंयमरूप कहे । तिनिविषै प्रथम गुणस्थानतैं लगाय चतुर्थ गुणस्थान पर्यंत जे कषायके स्थान हो हैं, सर्व असंयमहीके हो हैं । तातैं कषायनिकी मंदता होतैं भी चरित्र नाम न पावै हैं । यद्यपि परमार्थतैं कषायका घटना चारित्रका अंश है, तथापि व्यवहारतैं जहां ऐसा कषायनिका घटना होय, जाकरि श्रावकधर्म वा मुनिधर्मका अंगीकार होय तहां ही चारित्र नाम पावै है । सो असंयमविषैं ऐसे कषाय घटैं नाहीं । तातैं यहां असंयम कहा है । कषायनिका अधिक हीनपना होतैं भी जैसैं प्रमत्तादिगुणस्थाननिविषै सर्वत्र सकलसंयम ही नाम पावै है, तैसैं मिथ्यात्वादि असंयतपर्यंत गुणस्थाननिविषै असंयम नाम पावै है । सर्वत्र असंयमकी समानता न जाननी । बहुरि यहां प्रश्न--जो अनंतानुबंधी सम्यक्त्वकौं न घातै है, तौ याकै उदय होतैं सम्यक्त्वतैं भ्रष्ट होय सासादन गुणस्थानकौं कैसैं पावै है । ताका समाधान,--

जैसैं कोई मनुष्यकै मनुष्यपर्याय नाशका कारण तीव्ररोग प्रगट भया होय, ताकौं मनुष्यपर्यायका छोड़नहारा कहिए । बहुरि मनुष्यपना दूर भए देवादिपर्याय होय, सो तौ रोग अवस्थाविषै न भया । वहां तौ मनुष्यहीका आयु है । तैसैं सम्यक्त्वीकै

सम्यक्त्वका नाशका कारण अनंतानुबंधीका उदय प्रगट भया ताकौं सम्यक्त्वका विरोधक सासादन कह्या । बहुरि सम्यक्त्वका अभाव भए मिथ्यात्व होय सो तौ सासादनविषै न भया । यहां उपशमसम्यक्त्वका ही काल है, ऐसा जानना । ऐसैं अनंतानुबंधी चतुष्ककी सम्यक्त्व होतैं अवस्था हो है । तातैं सातप्रकृतिनिकै उपशमादिकतैं भी सम्यक्त्वकी प्राप्ति कहिए है । बहुरि प्रश्न—सम्यक्त्वमार्गणाके छह भेद किए सो कैसैं हैं । ताका समाधान—

सम्यक्त्वके तो भेद तीन ही हैं । सम्यक्त्वका अभावरूप मिथ्यात्व है । दोऊनिका मिश्रभाव सो मिश्र है । सम्यक्त्वका घातकभाव सो सासादन है । ऐसैं सम्यक्त्व मार्गणाकरि जीवका विचार किए छह भेद कहै हैं । यहां कोई कहै कि, सम्यक्त्वतैं भ्रष्ट होय मिथ्यात्वविषै आया होय ताकौं मिथ्यात्वसम्यक्त्व कहिए । सो यह असत्य है जातैं अभव्यकै भी तिसका सद्भाव पाइए है । बहुरि मिथ्यात्वसम्यक्त्व कहना ही अशुद्ध है । जैसैं संयममार्गणाविषै असंयम कह्या भव्यमार्गणाविषै अभव्य कह्या, तैसैं ही सम्यक्त्वमार्गणाविषैं मिथ्यात्व कह्या है । मिथ्यात्वकौं सम्यक्त्वका भेद न जानना । सम्यक्त्व अपेक्षा विचार करते केई जीवनिकै सम्यक्त्वका अभावतैं ही मिथ्यात्व पाइए है । ऐसा अर्थ प्रकट करनेके अर्थि सम्यक्त्वमार्गणाविषै मिथ्यात्व कह्या है । ऐसैं ही सासादन मिश्र भी सम्यक्त्वके भेद नाहीं हैं । सम्यक्त्वके भेद तीन ही हैं, ऐसा जानना । यहां कर्मके उपशमादिकतैं

उपशमादिक सम्यक्त्व कहे, सो कर्मका उपशमादिक याका किया होता नाहीं। यह तौ तत्त्वश्रद्धान करनेका उद्यम करै, ताके निमित्ततैं स्वयमेव कर्मका उपशमादिक हो है। तब याकै तत्त्व-श्रद्धानकी प्राप्ति हो है। ऐसा जानना। याप्रकार सम्यक्त्वके भेद जानने। ऐसैं सम्यग्दर्शनका स्वरूप कह्या।

बहुरि सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे हैं। निःशंकित्व निःकांक्षित्व, निर्विचिकित्सित्व अमूढदृष्टित्व, उपबृंहण, स्थितिकरण, प्रभावना, वात्सल्य। तहां भयका अभाव अथवा तत्वनिविषै संशयका अभाव सो निःशंकित्व है। बहुरि परद्रव्यविषै रागरूप वांछाका अभाव, सो निःकांक्षित्व है। बहुरि परद्रव्यादिविषै द्वेषरूप ग्लानिका अभाव सो निर्विचिकित्सित्व है। बहुरि तत्त्वनिविषै देवादिकविषै अन्यथा प्रतीतिरूप मोहका अभाव, सो अमूढदृष्टित्व है। बहुरि आत्मधर्म वा जिनधर्मका बधावना, ताका नाम उपबृंहण है। इसही अंगका नाम उपगूहन भी कहिए है। तहां धर्मात्मा जीवनिका दोष ढांकना ऐसैं ताका अर्थ जानना। बहुरि अपने स्वभावविषै वा जिनधर्म विषै आपकौं वा परकौं स्थापन करना, सो स्थितिकरण अंग है। बहुरि अपने स्वरूपकी वा जिनधर्मकी महिमा प्रगट करनी सो प्रभावना है। बहुरि स्वरूपविषै वा जिनधर्मविषै धर्मात्मा जीव-निविषै प्रीतिभाव सो वात्सल्य है। ऐसैं आठ अंग जानने। जैसैं मनुष्यशरीरके हस्तपादादिक अंग हैं, तैसैं ए सम्यक्त्वके अंग हैं यहां प्रश्न--जो केई सम्यक्त्वी जीवनिकै भी भय इच्छा ग्लानि आदि पाइए है, अर केई मिथ्यादृष्टीके न पाइए है। तातैं

निःशंकितादि अंग सम्यक्त्वके कैसैं कहो हो। ताका समाधान,-

जैसैं मनुष्य शरीरके हस्तपादादि अंग कहिए है। तहां कोई मनुष्य ऐसा भी होय है, जाकै हस्तपादविषै कोई अंग न होय। तहां याकै मनुष्यशरीर तौ कहिए है, परंतु तिनि अंगनि विना वह शोभायमान सकल कार्यकारी न होय। तैसैं सम्यक्त्वके निःशंकितादिअंग कहिए है। तहां कोई सम्यक्ती ऐसा भी होय, जाकै निःशंकितादिविषै कोई अंग न होय। ताकै सम्यक्त्व तौ कहिए, परन्तु तिनिका अंगनिविना यह निर्मल सकल कार्यकारी न होय। बहुरि जैसैं बांदरेकैं भी हस्तपादादि अंग हो हैं। परन्तु जैसैं मनुष्यकै होंय, तैसैं न हो हैं। तैसैं मिथ्यादृष्टीकै भी व्यवहाररूप निःशंकितादिक अंग हो हैं। परन्तु जैसैं निश्चयकी सापेक्षा लिए सम्यक्त्वीकै होय, तैसैं न हो हैं। बहुरि सम्यक्त्वविषै पचीस मल कहे हैं,--आठ शंकादिक, आठ मद, तीन मूढता, षट् अनायतन, सो ए सम्यक्त्वीकै न होंय। कदाचित काहूकै मल लागैं सम्यक्त्वका नाश न हो है, तहां सम्यक्त्व मलिन ही हो है, ऐसा जानना।
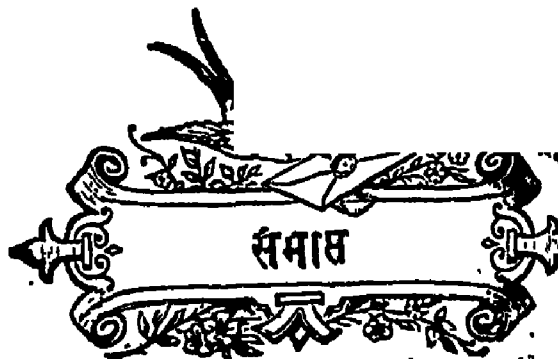
मुनिश्रीअनंतकीर्ति दि० जैनग्रन्थमाला

पूर्वप्रकाशित ग्रंथोंकी सूची।

१ **मूलाचार**—आचार्यवट्टकेरस्वामीकृत मूल गाथायें और स्वर्गीय पं० मनोहरलालजी शास्त्रीकृत संस्कृतच्छाया और हिन्दी भाषाटीका। (अप्राप्य)

२ **अमितगतिश्रावकाचार**—श्रीमद्अमितगतिआचार्यकृत संस्कृत मूल श्लोक और स्वर्गीय पं० भागचन्द्रजीकृत पुरानी भाषावचनिका सहित। श्रावकाचारका उत्तम ग्रंथ है, हरेक विषयका विस्तारसे वर्णन है। मू० १॥=)

३ **प्रमेयरत्नमाला**—आचार्य माणिक्यनंदिप्रणीत परीक्षामुख सूत्रकी अनन्तवीर्यसूरिकृत संस्कृतटीकाकी स्व०पण्डितप्रवर जयचन्द्रजीकृत भाषावचनिका। मू० १)

४ **आप्तमीमांसा**—अपर नाम देवागम। स्वामिसमन्तभद्रविरचित मूल और स्व० पं० जयचन्द्रजीकृत भाषावचनिका। इसमें स्वामीजीने भगवान्की स्तुतिमें न्यायका सब विषय गर्भित कर दिया है। इस स्तुतिकी टीकायें अष्टशती अष्टसहस्री आदि महान् ग्रंथ हैं। मूल्य ॥-)

५ **अष्टपाहुड़**—श्रीकुन्दकुन्दाचार्य प्रणीत मूल गाथा और पण्डितप्रवर जयचन्द्रजीकृत संस्कृतछाया और भाषावचनिका। इसमें दर्शन पाहुड़, सूत्र पाहुड़ आदि आठ पाहुड़ हैं। पृष्ठसंख्या ४५८। मूल्य १॥=)

६ **सामायिकपाठ**—स्वर्गीय पं० जयचन्द्रजी छाबड़ा द्वारा संग्रहीत। मूल और भाषावचनिका सहित। पृष्ठ ८४। मूल्य।-)

७ **जैनसिद्धान्तदर्पण**—स्व० पं० गोपालदासजी वरैयाकृत। मूल्य।॥)

८ **भगवतीआराधना**—श्रीशिवकोटिआचार्यप्रणीत मूल गाथा और स्व० पं० सदासुखजी कृत भाषावचनिका। यह मुनिधर्मप्रतिपादक उच्च कोटिका ग्रंथ है। पृष्ठसंख्या ७२५। शास्त्राकार। मू० ३॥)